CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उत्तर प्रदेश के सामाजिक शैक्षणिक विकास में आर्यसमाज का योगदान

## (1875 से 1947)

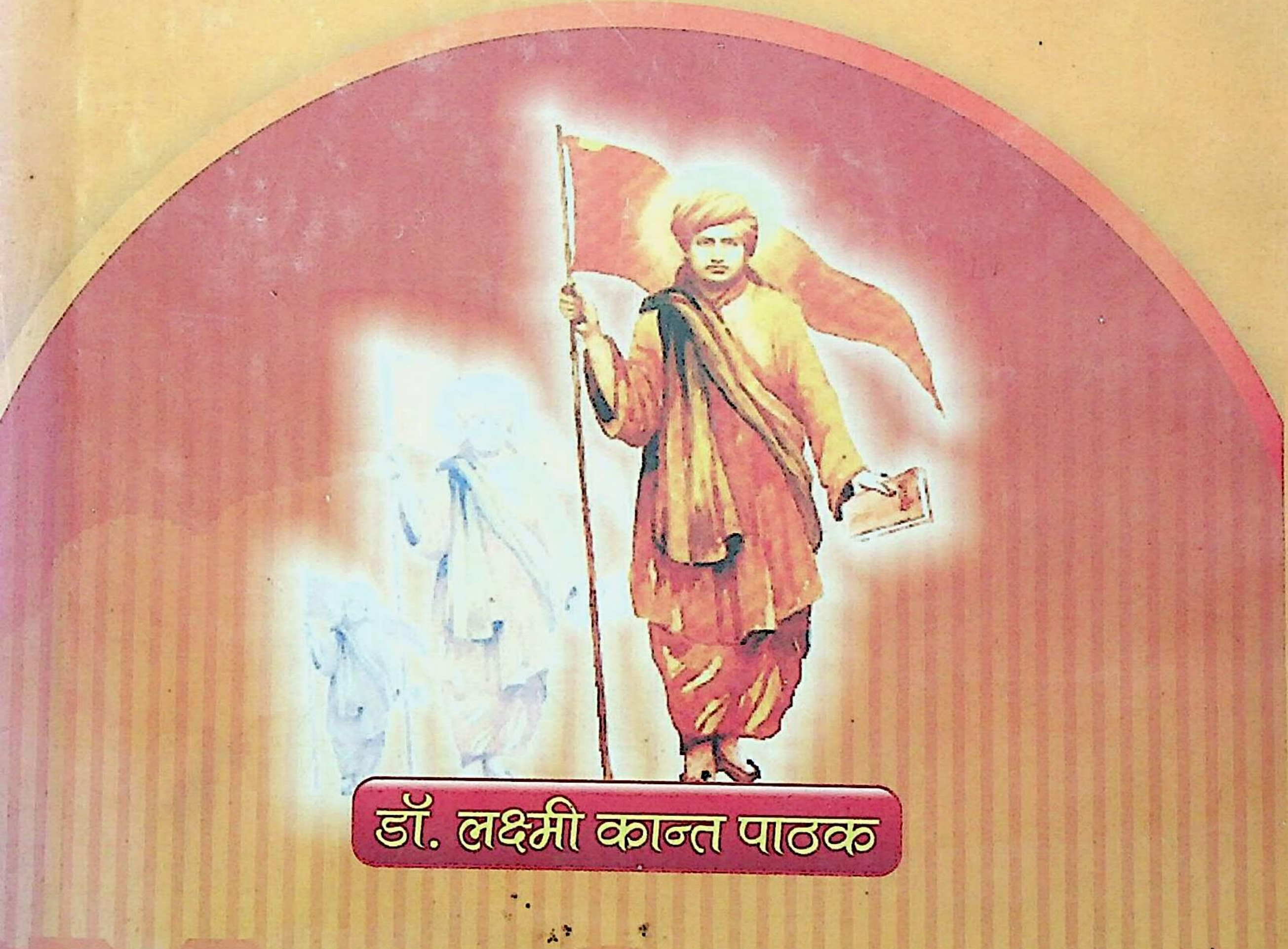

डॉ. लक्ष्मी कान्त पाठक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्री प्रमोद कुमार दीक्षित जी को
सादर सप्रेम भेंट
लक्ष्मीकान्त पाठक
3.01.2015

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उत्तर प्रदेश के सामाजिक शैक्षणिक विकास में आर्यसमाज का योगदान (1875 से 1947)

लेखक
**डॉ० लक्ष्मीकान्त पाठक**
वरिष्ठ व्याख्याता, इतिहास विभाग
रानीपद्मावतीतारायोगतन्त्रआदर्शसंस्कृतमहाविद्यालय
इन्द्रपुर-शिवपुर, वाराणसी (उ०प्र०)
राष्ट्रीयसंस्कृतसंस्थान, नई-दिल्ली

प्रकाशक
**संस्कृति : शोध एवं प्रकाशन**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकाशक
संस्कृति : शोध एवं प्रकाशन
सा 10 /81 सी-1, अशोक मार्ग
सारनाथ, वाराणसी-221002

© डॉ० लक्ष्मीकान्त पाठक
ISBN : 978-81-9091-65-3-7

प्रथम संस्करण : 2012
प्रतियाँ - 1000

मूल्य : रु 725/-

प्रमुख वितरक : श्रीमती आरती पाठक
B.2/135, A-2, भदैनी,
पो0 - शिवाला, वाराणसी (उ0प्र0)
पिनकोड - 221001
मो0 नं0 - 9839906276

मुद्रक : आदर्श ऑफसेट
धर्मसंघ, करपात्री स्टेट कॉम्प्लेक्स
दुर्गाकुण्ड, वाराणसी-221005
मो0 नं0 - 9839633939

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# निवेदन

प्रस्तुत पुस्तक उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज द्वारा अपने स्थापना काल से लेकर स्वतन्त्रता प्राप्ति तक सामाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में किए गए योगदान से सम्बन्धित है। हालांकि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व उत्तर प्रदेश को 'संयुक्त-प्रान्त, आगरा और अवध' के नाम से जाना जाता था। आज के सन्दर्भ में इसके वर्तमान नाम उत्तर प्रदेश का प्रयोग इस पुस्तक में है। भारत में आर्यसमाज आन्दोलन का प्रादुर्भाव देश के इतिहास की सांस्कृतिक संक्रमण काल में हुआ था। ऐसे काल में जहाँ आधुनिक-पाश्चात्य संस्कृति के संघात ने भारतीय समाज में नवजीवन का संचार किया। जिसके फलस्वरूप इस देश में युगान्तरकारी परिवर्तनों का सिलसिला राष्ट्रीय आन्दोलनों के माध्यम से शुरू हुआ। इन आन्दोलनों में ब्रह्मसमाज आन्दोलन के बाद देश में उदित होने वाला दूसरा जनप्रिय राष्ट्रीय आन्दोलन आर्यसमाज था। इसके संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती थे, उन्होंने अनुभव किया कि सामाजिक धार्मिक पुनरूत्थान केवल व्यक्तिगत संघर्ष से नहीं किया जा सकता, इसके लिए एक संगठन का होना नितान्त आवश्यक है। उन्होंने इसी उद्देश्य से आर्यसमाज की स्थापना सन्-1875 ई0 में की।

आर्यसमाज का उद्देश्य 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' वैदिक उद्घोष पर आधारित था। इसे दृष्टिगत रखते हुए आर्यसमाज ने वैदिक चिन्तन के शाश्वत मूल्यों को जीवन के सन्दर्भो में प्रस्तुत कर जन-जागृति पैदा करने का अभूतपूर्व एवं प्रशंसनीय कार्य इस देश में किया। इस पुस्तक में आर्यसमाज की स्थापना एवं उसके संगठनात्मक प्रणाली को दर्शाते हुए उत्तर प्रदेश में उसके क्रमवत विस्तार तथा सामाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में उसके द्वारा किए गए कार्यो की ब्योरेवार समीक्षा के साथ उन सभी तथ्यों, प्रसंगों एवं समसामयिक सामाजिक शैक्षणिक परिवर्तनों का विवरण है। इस दृष्टि से यह पुस्तक पाँच अध्यायों में विभाजित है।

प्रथम अध्याय में आर्यसमाज के उद्भव की पृष्ठभूमि को दर्शाया गया है। इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम भारतीय नवजागरण काल के पूर्व की स्थिति एवं नवजागरण काल का उल्लेख है। इसी क्रम में आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द का संक्षिप्त जीवन परिचय, ब्रह्मसमाज का प्रादुर्भाव और उसके महान नेताओं से दयानन्द के सम्पर्क एवं उसके कारण आर्यसमाज का आविर्भाव तथा उसके निर्मित नियमों का विवरण प्रस्तुत है।

द्वितीय अध्याय में आर्यसमाज के प्रचार और प्रसार का विवरण है। इसमें उत्तर प्रदेश का दिग्दर्शन कराते हुए आर्यसमाज के विकास क्रमों को डिवीजन के अनुसार विविध नगरों में स्थापित प्रमुख आर्यसमाजों को दर्शाया गया है। आर्यसमाजों की स्वायत्तता पर नियन्त्रण रखने के ध्येय से निर्मित संगठनों की स्थापना एवं उसकी नियमावली के साथ ही आयोजित हुई आर्य सम्मेलनों के विवरण को यथास्थान समाहित किया गया है।

तृतीय अध्याय में आर्यसमाज द्वारा सामाजिक सुधार विषयक कार्यक्रमों का विवरण है। वेद प्रणीत धर्म की पुनः स्थापना के ध्येय से आर्यसमाज ने शुद्धि-आन्दोलन, नारी-जागरण, ज़ात-पाँत विरोध तथा अछुतोद्धार, गोरक्षा, आर्यभाषा का प्रचार, मांसभक्षण व मद्यपान का विरोध एवं अन्य जनहितकारी कार्यक्रमों के लिए उत्तर प्रदेश में पूरे साहस के साथ आक्रामक शैली में आन्दोलन चलाया। जिसके फलस्वरूप समाज में एक नई क्रान्ति का जन्म हुआ और नए परिवर्तनोन्मुख समाज के निर्माण की रूपरेखा तैयार हुई। इन विषयों का विशद् विवरण है।

चतुर्थ अध्याय में उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्धकाल में शिक्षा की दशा के चित्रण के साथ स्वामी दयानन्द के शिक्षा विषयक सिद्धान्तों एवं आर्ष पाठविधि का उल्लेख है। इसी क्रम में आर्यसमाज द्वारा एक नवीन शिक्षा प्रणाली की योजना को प्रान्त में स्थापित करने का प्रयत्न किया गया। वह डी.ए.वी. एवं गुरूकुल आन्दोलन था, जिसके फलस्वरूप इस देश में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का जन्म हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



प्रस्तुत अध्याय में डी.ए.वी. आन्दोलन का विशद् विवेचन किया गया है। इसके अन्तर्गत डी.ए.वी. स्कूल की पृष्ठभूमि, उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. आन्दोलन, पाठविधि व डिवीजन के अनुसार इसके स्कूल एवं कॉलेजों को दर्शाया गया है।

पंचम अध्याय में आर्यसमाज और परम्परागत गुरूकुल प्रणाली की योजनाओं का विवरण है। डी.ए.वी. की योजनाओं के प्रति आर्यसमाज के नेताओं में मतभेद के कारण गुरूकुल आन्दोलन का जन्म हुआ। इस आन्दोलन के नेता स्वामी श्रद्धानन्द थे। शिक्षा के वैदिक आदर्शों को सच्चे स्वरूप में प्रस्तुत करने के ध्येय से उत्तर प्रदेश के विविध नगरों में बालक-बालिकाओं के लिए अलग-अलग गुरूकुलों का निर्माण हुआ। प्रस्तुत अध्यायों में गुरूकुल की योजना की पृष्ठभूमि, उसकी नियमावली, प्रदेश में स्थापित कुछ प्रमुख गुरूकुलों के विकास, पाठविधि एवं समाज में नवीन शिक्षा प्रणाली के प्रति उत्पन्न हुई अभूतपूर्व जागृति का विवरण है।

प्रस्तुत कृति को ऐतिहासिक साक्ष्यों के आलोक में विषय का वैज्ञानिक अध्ययन एवं अनुशीलन के साथ पूर्ण करने का मैंने प्रयास किया है। विषय को तथ्यपरक एवं ऐतिहासिकता प्रदान करने के लिए हमने सामयिक मौलिक स्रोतों, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय अभिलेखागारों में सुरक्षित संयुक्त प्रान्तीय सरकार के अप्रकाशित प्रकाशित गोपनीय अभिलेख, आर्यसमाज की पाण्डुलिपियाँ, मूल-स्मारिकाएँ, सामयिक पत्र-पत्रिकाएँ, ट्रैक्ट्स, सरकार के गोपनीय नोट्स तथा आर्यसमाज आन्दोलन से जुड़े अनुभवी कार्यकर्ताओं के साक्षात्कार आदि का यथास्थान समुचित उपयोग किया है।

प्रस्तुत पुस्तक को पूर्ण करने में हमें आर्यसमाज के विद्वतजनों, संस्थाओं और कर्मठ कार्यकर्ताओं का अपेक्षित सहयोग प्राप्त हुआ है। मैं सभी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ क्योंकि बिना इनके सहयोग के सम्बन्धित दुरूह सामग्रियों को खोज निकालना अत्यन्त दुष्कर कार्य था। इस पुस्तक की रचना का एक मात्र श्रेय पूज्य गुरुवर प्रो0 जे.पी. मिश्र जी (भूतपूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग, काशीहिन्दूविश्वविद्यालय) को है। उन्होंने न केवल विषय में मेरी अभिरूचि का सृजन किया बल्कि इसके प्रति निरन्तर सतर्क रहने एवं तथ्यपरख बनाने की मुझे प्रेरणा दी। मैं अपने गुरू के प्रति हृदय से आभारी और श्रद्धानत हूँ।

इस अनुसन्धान कृति को पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने की प्रेरणा मुझे सर्वप्रथम पूज्य गुरूदेव प्रो0 वाचस्पतिउपाध्याय जी (भूतपूर्व कुलपति, लालबहादुरशास्त्रीकेन्द्रीयविद्यापीठ, नई-दिल्ली, गुरूकुल कांगड़ी के समकुलपति) ने दी। अब वह इस जगत में नहीं हैं। मैं उनके प्रति हृदय से अपनी श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ। पुस्तक की रचना में मेरी पत्नी आरती पुत्र राघवेन्द्र एवं आशीष, पुत्री उपासना का विशेष योगदान रहा है। मैं इनके प्रति अपना स्नेह प्रकट करता हूँ जिन्होंने इस पुस्तक को मूर्तरूप देने में परिश्रम के साथ अनेक कार्य किए हैं। मैं अग्रज के सदृश पं. महेश मधुकर मंगरुलकर के प्रति हृदय से आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने अपेक्षित सहयोग के साथ इस पुस्तक के प्रणयन में मेरा उत्साहवर्धन किया है। साथ ही मैं अपने महाविद्यालय के शुभचिन्तक मित्रों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ। जिनके आग्रह ने मुझे जागरूक बनाए रखा। इस पुस्तक के प्रकाशक प्रो0 दीनबन्धु पाण्डेय जी 'संस्कृति एवं शोध प्रकाशन के निदेशक' के प्रति विशेष आभारी हूँ जिन्होंने न केवल इस पुस्तक के प्रकाशन प्रस्ताव को स्वीकार किया बल्कि इसे उपयोगी बनाने में अपेक्षित सहयोग प्रदान किया। अन्त में मैं इस पुस्तक के मुद्रण के लिए आदर्श ऑफसेट के श्री मङ्गलेश्वरधर द्विवेदी जी को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने इस कार्य को समय से पूर्ण किया है।

हमें आशा है कि यह पुस्तक समाज के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। साथ ही पुस्तक की विषयवस्तु एवं प्रस्तुतीकरण के विषय में सार्थक आलोचना एवं सुझावों का सदैव ही स्वागत किया जाएगा।

**लक्ष्मीकान्त पाठक**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# भूमिका

प्रसन्नता का विषय है कि डा० लक्ष्मी कान्त पाठक की यह पुस्तक प्रकाशित हो रही है। विद्वान लेखक का यह मानना है कि आधुनिक भारत में आर्यसमाज का लम्बे समय तक और सबसे अधिक प्रभाव भारतीयों पर पड़ा। इस धार्मिक-सामाजिक-सांस्कृतिक आन्दोलन ने उन्नीसवीं सदी के अन्तिम दशकों से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक जितनी और जिस प्रकार भारतीय जनमानस पर छाप छोड़ी उसकी ब्योरेवार और संतुलित समीक्षा इस पुस्तक में प्रस्तुत की जा रही है। व्यापक संदर्भ का विवेचन करते हुए इस कृति में मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज की गतिविधियों का निरूपण किया जा रहा है।

आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द के व्यावहारिक ज्ञान का अनुसरण करते हुए उनके यशस्वी अनुयायियों ने अनेक पीढ़ियों तक इस समाज के सिद्धान्तों और आदर्शों को बड़े उत्साह के साथ समकालीन आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला। इसी कारण अन्य समाज सुधार आन्दोलनों की तुलना में आर्यसमाज लगातार सशक्त बना रहा और अपनी प्रभावी भूमिका निभाता रहा। स्वामी दयानन्द ने १८७७ में लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना करते समय जिन दस सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया था वे इसके भावी कार्यकलाप का लगातार आधार बने और इन्हीं से इसके धार्मिक-सामाजिक दर्शन की अभिव्यक्ति भी हुई। इन सिद्धान्तों की विशेषता यह थी कि स्वामी दयानन्द के दुरूह और विवादास्पद दर्शनशास्त्र पर जोर देने के बजाय इसके अनुयायियों के सम्मुख एक ऐसा सुस्पष्ट और लचीला मार्ग निर्धारित किया गया जिसे कोई भी अपना सकता था। स्वामीजी के सिद्धान्तों की सरल शब्दों में की गयी इस व्याख्या से आर्यसमाज को लोकाप्रिय बनाया जा सका। लाहौर से आर्यसमाज आन्दोलन पंजाब, उत्तर प्रदेश और उत्तर भारत के अन्य क्षेत्रों में तेजी से फैला।

इस पुस्तक में उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज की हजारों शाखाओं की स्थापना और इनके विस्तार की चर्चा की गयी है और यह दर्शाया गया है कि प्रान्तीय, क्षेत्रीय, शहरी और स्थानीय क्षेत्रों में आर्यसमाज का विशाल संगठन किस प्रकार खड़ा किया गया और संचालित होता रहा। लेखक ने आर्यसमाज की गतिविधियों का विंवरण देते हुए प्रान्त को अध्ययन का केन्द्र बिन्दु बनाया है। लगभग सत्तर वर्षो के आर्यसमाज के कार्यकलापों का विवेचन करने के लिए उत्तरं प्रदेश को चुना जाना सर्वथा न्यायसंगत है।

डा० पाठक ने सामाजिक और शैक्षणिक विकास में आर्यसमाज की भूमिका की विस्तृत चर्चा की है। उन्नीसवीं शताब्दी के समाप्ति तक दो प्रमुख विचारधाराएँ, आर्यसमाज में उभरीं। डी.ए.वी कॉलेज की स्थापना लाहौर में की गयी और कुछ समय बाद अन्य प्रान्तों में भी ऐसे ही कॉलेजों की स्थापना होने लगी। इन कॉलेजों की विशेषता यह थी की स्वामीजी के सिद्धान्तों और आदर्शों के प्रति उचित सम्मान देते हुए समकालीन आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा प्रणाली अपनायी गयी। इन कॉलेजों में अंग्रेजी भाषा की शिक्षा देने के साथ-साथ विज्ञान और तकनीक के पश्चिमी ज्ञान को भी स्वीकारा गया। इस प्रकार पश्चिमी शिक्षा व्यवस्था को अपनाते हुए आर्यसमाज ने नए वातावरण के अनुरूप आधुनिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार का जो कार्य प्रारम्भ किया । वह बहुत अधिक सफल रहा। उत्तर प्रदेश में ऐसे कॉलेजों के गठन संचालन और स्वरूप का ब्योरेवार विवेचन इस कृति में उपलब्ध कराया गया है। आर्यसमाज के इन उदारवादी अनुयायियों के अलावा परम्परावादी विचारधारा वाले लोगों ने गुरूकुल शिक्षा प्रणाली अपनाने पर जोर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



दिया। परिणामस्वरूप उत्तर प्रदेश के अनेक नगरों और जिलों में गुरूकुल विद्यालय खोले गए। गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की हरिद्वार में स्थापना की सविस्तार समीक्षा यहाँ उपलब्ध है।

सामाजिक प्रश्नों के बारे में आर्यसमाज ने प्रगतिशील और उदारवादी विचारधारा का समर्थन किया। लेखक ने इसे स्पष्ट करते हुए तत्कालीन सामाजिक सुधारों के क्षेत्र में इसके योगदान का उल्लेख किया है। स्वामी दयानन्द ने हिन्दू समाज में प्रचलित जातिप्रथा का विरोध किया था और ऊँच-नीच की भावना की भर्त्सना की थी। उनके विचारों के अनुरूप, आर्यसमाज आन्दोलनकर्ताओं ने जातिप्रथा का विरोध किया। इसी प्रकार महिलाओं में पर्दा प्रथा का विरोध, स्त्री-शिक्षा को बढ़ावा देना, देहज-प्रथा की निन्दा आदि प्रशंसनीय कार्यों का विवरण यहाँ उपलब्ध कराया गया है। उत्तर प्रदेश में महिलाओं को शिक्षित करने और उन्हें जागृत करने के उपायों का लेखक ने सविस्तार उल्लेख किया है।

डॉ. पाठक का यह कथन सर्वथा उचित है कि आर्यसमाज ने भारतीयों में आत्मविश्वास जगाया और उन्हें यह विश्वास दिलाया कि राष्ट्रीय उत्थान के बीज इसी देश की संस्कृति और सामाजिक व्यवस्था में विद्यमान थे। राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति के लिए एकीकरण अपेक्षित था। भारतीय समाज में एकता लाने का कार्य आर्यसमाज ने उत्साहपूर्वक किया।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक सर्वथा उपयोगी सिद्ध होगी और विद्वत समाज इसका स्वागत करेगा।

वाराणसी
१६ अप्रैल, २०१२

प्रो. जगन्नाथ प्रसाद मिश्र
भू०पू० अध्यक्ष, इतिहास विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# विषय-सूची

## (Contents)


लेखक का निवेदन iii-iv

भूमिका : प्रो. जे.पी. मिश्र v-vi

विषय सूची vii-viii

**अध्याय** **पृ.सं.**

**प्रथम-** आर्यसमाज के उद्भव की पृष्ठभूमि १-६३

भारतीय नवजागरण काल के पूर्व की दशा, भारतीय नवजागरण काल , स्वामी दयानन्द का आविर्भाव, प्रारम्भिक जीवन, प्रारम्भिक शिक्षा, महाशिवरात्रि पर्व और मूलशंकर में वैचारिक परिवर्तन, वैराग्योन्मुख एवं गृहत्याग, सद्गुरु की तलाश एवं ज्ञानोदय, स्वामी दयानन्द का प्रचार कार्य, ब्रह्मसमाज के सम्पर्क से संगठन निर्माण की प्रेरणा, आर्यसमाज संगठन निर्माण की ओर अग्रसर, आर्यसमाज का उदय एवं विचारधारा, स्वामी दयानन्द सरस्वती के परिवार की नामावली (परिशिष्ट-१), स्वहस्तलिखित आत्मकथा (परिशिष्ट-२) उत्तर प्रदेश में स्वामी दयानन्द द्वारा किए गए प्रसिद्ध शास्त्रार्थ (परिशिष्ट-३), महर्षि दयानन्द द्वारा रचित प्रसिद्ध ग्रन्थ और पुस्तिकाएँ (परिशिष्ट-४), आर्यसमाज की स्थापना के समय निर्धारित २८ नियम (परिशिष्ट-५), आर्यसमाज के सिद्धान्त (परिशिष्ट-६), ऋषि दयानन्द का व्यक्तित्व महापुरुषों की दृष्टि में (परिशिष्ट-७)।

**द्वितीय-** आर्यसमाज का प्रचार और प्रसार ६४-१११

उत्तर-प्रदेश दिग्दर्शन, आर्यसमाज का प्रसार (१८७५-१८८३), मिर्जापुर आर्यसमाज, मेरठ आर्यसमाज, फर्रुखाबाद आर्यसमाज, आगरा आर्यसमाज, लखनऊ आर्यसमाज, बिजनौर आर्यसमाज, मुरादाबाद आर्यसमाज, बदायूँ आर्यसमाज, बरेली आर्यसमाज , सहारनपुर और मथुरा आर्यसमाज, प्रयाग आर्यसमाज, कानपुर आर्यसमाज, काशी आर्यसमाज, परोपकारिणी सभा, आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार (१८८३-१९१२),उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा, सार्वदेशिक् आर्यप्रतिनिधिसभा, मेरठ डिवीजन, आगरा डिवीजन, रूहेलखण्ड डिवीजन, आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार (१९१२-१९४७), संयुक्त प्रान्त (आगरा और अवध) के डिवीजन और उसमें सम्मिलित शहरों की सूची- (परिशिष्ट-१), मेरठ आर्यसमाज (बुढ़ाना गेट) की स्थापना (सन् १८७८) के समय चयनित सभासदों का विवरण (परिशिष्ट-२), वसीयतनामा- स्वामी दयानन्द सरस्वती परोपकारिणी सभा- स्वीकार पत्र (परिशिष्ट-३),उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा के प्रधान एवं सभामंत्री का सूची विवरण (१८८७-१९४७) (परिशिष्ट-४),सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा के प्रधान एवं मंत्री की सूची विवरण (परिशिष्ट -५)।

**तृतीय-** **आर्यसमाज की सामाजिक सुधार में भूमिका** ११२-१६४

शुद्धि आन्दोलन, महिलाओं की स्थिति में क्रमिक परिवर्तन , नायक जाति में सुधार कार्य, दहेज प्रथा के विरूद्ध प्रचार-प्रसार कार्य , जातपॉत विरोध तथा अछूतोद्धार, सामूहिक सहभोज, सम्मेलन-सभा व समारोह, ट्रैक्ट्स एवं गढ़वाल में अछूतोद्धार, आर्यसमाज और


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अन्य समाज हितकारी कार्य, आर्यसमाज और गोरक्षा, आर्यसमाज और आर्यभाषा (हिन्दी), मांसभक्षण एवं मद्यपान का विरोध, आर्यसमाज व प्राकृतिक विपदा, ट्रैक्टमाला (परिशिष्ट-१), विवाह एवं शुद्धि प्रमाणपत्र (परिशिष्ट-२), आर्यवीरदल शिक्षण प्रमाणपत्र (परिशिष्ट-३)

**चतुर्थ- शिक्षा के प्रसार में आर्यसमाज का योगदान** १६५-२०८

आर्यसमाज के पूर्व शैक्षणिक स्थिति, स्वामी दयानन्द के शिक्षा सम्बन्धी विचार आर्षपाठविधि प्रान्त में स्वामी दयानन्द के बाद आर्यसमाज और शिक्षा, लाहौर में स्थापित डी.ए.वी. स्कूल की पृष्ठभूमि, उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. आन्दोलन - पाठ्यक्रम, प्रान्त में स्थापित डी.ए.वी. विद्यालय डिवीजन के अनुसार, आर्यडिबेटिंग क्लब, आर्यसमाज और स्त्री शिक्षा कन्या विद्यालय का प्रादुर्भाव, उत्तर प्रदेश में आर्यकन्या शिक्षण संस्थाएँ डिवीजन के अनुसार, डी.ए.वी. कॉलिज कमेटी की प्रथम नियमावली, (परिशिष्ट-१), दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूल की शैक्षिक योजना, (कक्षा-१ से १० तक परिशिष्ट-२)

**पंचम- आर्यसमाज और परम्परागत गुरुकुल प्रणाली** २०९-२४०

गुरुकुल योजना की पृष्ठभूमि, गुरुकुल की प्रथम नियमावली, गुरुकुल काँगड़ी का विकास, गुरुकुल वृन्दावन विश्वविद्यालय, गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर, हरिद्वार, श्री निःशुल्क गुरुकुल महाविद्यालय अयोध्या, दयानन्द महाविद्यालय डौरली, मेरठ, आर्यसमाज और कन्या गुरुकुल - कन्या गुरुकुल हाथरस, अलीगढ़, कन्या गुरुकुल देहरादून, कन्या गुरुकुल हरिद्वार, कनखल।

**निष्कर्ष :** गुरुकुल महाविद्यालय वृन्दावन की पाठविधि सन् १९२१-२२ ई. तक (परिशिष्ट-१), अयोध्या निःशुल्क गुरुकुल महाविद्यालय का प्रमाण-पत्र, (परिशिष्ट-२)

**उपसंहार-** २४१-२४८

**ग्रन्थानुक्रमणिका** २४९-२५९

**परिशिष्ट** २६०-२६१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

## प्रथम अध्याय

# आर्यसमाज के उद्भव की पृष्ठभूमि

भारतीय इतिहास में उन्नीसवीं शताब्दी का काल धार्मिक एवं सामाजिक नवजागरण की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस शताब्दी में ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन एवं थियोसॉफिकल सोसायटी आदि महत्त्वपूर्ण आन्दोलनों के आविर्भाव के फलस्वरूप एक नवीन भारत का प्रादुर्भाव हुआ। इन आन्दोलनों में से, ब्रह्मसमाज आन्दोलन के बाद, देश में उदित होने वाला दूसरा महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन 'आर्यसमाज' था।[1] यह उन्नीसवीं सदी का सबसे जनप्रिय आन्दोलन एवं नवोत्थान की दिशा में ब्रह्मसमाज से आगे उठा हुआ कदम था।[2] इस आन्दोलन के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती थे, जिन्होंने धर्म, समाज, शिक्षा, संस्कृति तथा राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में नवचेतना का संचार किया। दयानन्द एक प्रखर बुद्धिवादी तथा राष्ट्रवादी सुधारक थे, जिनका मुख्य उद्देश्य था भारतीयों में आत्मविश्वास जगाना। उन्होंने देशवासियों में व्याप्त निराशा, पराधीनता, हीनभावना तथा पराजय के भावों को दूर कर स्वामी दयानन्द ने उनमें आत्मगौरव एवं स्वाभिमान को जागृत किया। भारतीय तत्त्वचिन्तन तथा पुरातन वैदिक दर्शन के आधार पर उन्होंने नवजागरण के उस आन्दोलन का नेतृत्व किया जो भारत की राष्ट्रीयता अस्मिता के उद्दीपन का कारण बना।[3]

आर्यावर्त्त के विगत गौरव तथा आर्य संस्कृति के प्रति अटूट आस्था रखने के कारण आर्यसमाज ने वैदिक चिन्तन के शाश्वत मूल्यों को जीवन के सन्दर्भों में प्रस्तुत कर भारतीय समाज में स्थापित करने का अथक प्रयास किया और देश की सांस्कृतिक विरासत और धर्म जिसके प्रतीक 'वेद' थे उसमें सदैव दृढ़ आस्था बनाए रखी। इसके साथ ही साथ, यूरोप की विशिष्टतओं 'जिसमें बुद्धिवाद, तर्कवाद, अन्वेषण, विज्ञान की प्रधानता, प्रवृत्तिमार्गी जीवन विषयक दृष्टिकोण आदि प्रमुख थे' के साथ सामंजस्य भी बैठाया। आर्यसमाज द्वारा उत्तर प्रदेश के सामाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में किए गए योगदान विषयक विमर्श करने के पूर्व इन तथ्यों पर संक्षेप में अध्ययन करना आवश्यक है कि आर्यसमाज आन्दोलन के प्रादुर्भाव के पूर्व देश की क्या परिस्थितियाँ थी और इस आन्दोलन का जन्म किन परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप हुआ?

इन तथ्यों पर अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि शताब्दियों की राजनैतिक पराधीनता के कारण भारतवासियों को आत्मदुर्बलता, हीन-भावना, दरिद्रता के साथ-साथ अशिक्षा तथा सामाजिक कुरीतियाँ आदि ने ग्रसित कर रखा था। जनसाधारण में अन्धविश्वास और परम्परानिष्ठता के लक्षण व्याप्त हो गए थे। स्वतन्त्र मानसिक प्रक्रिया में व्यापक अवरोध के साथ ही वैज्ञानिक तथा आलोचनात्मक मस्तिष्क सुषुप्त हो गया था, सृजनात्मक अन्तर्ज्ञान की शक्ति भी क्षीर्ण हो चुकी थी।

इस प्रकार शताब्दियों की राजनैतिक पराधीनता के फलस्वरूप उत्पन्न पराजय भाव ने भारतीय समाज के सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों को अपूरणीय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



क्षति पहुँचाई। जिसके कारण सामाजिक व्यवस्था में बहुत सी कुरीतियों ने अपना घर कर लिया था। इस समय जितनी भी विकृतियाँ भारतीय समाज में उत्पन्न हुई थीं सब आक्रान्ता समूहों तथा धर्म के स्वार्थवादी विवेचन का परिणाम रहीं। इसी सन्दर्भ में भारतीय नवजागरण काल के पूर्व की स्थिति का अध्ययन आवश्यक है जिसके फलस्वरूप ही आर्यसमाज द्वारा सामाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में किए गए कार्यों के परिणामस्वरूप भारतीय समाज में हुए व्यापक परिवर्तनों का स्पष्ट आकलन किया जा सकता है।

**भारतीय नवजागरण काल के पूर्व की दशा–** अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध काल तक हमारे देश में धर्मान्धता, अन्धविश्वास, अस्पृश्यता, सामाजिक रूढ़ियाँ, कुप्रथाएँ आदि अन्य कई दोष उत्पन्न हो गए थे। जिसके फलस्वरूप हमारे सामाजिक जीवन की जीवनी-शक्ति क्षीर्ण हो गयी थी।[४] साथ ही साथ हमारे नवसृजन की शक्ति एकदम शिथिल व निश्चेष्ट हो गयी थी। हम एक अभूतपूर्व सांस्कृतिक संकट की चिंताजनक दशा में से गुजर रहे थे[५] जिसके कारण भारतीय समाज की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गयी थी।[६]

धार्मिक क्षेत्रों में कर्मकाण्ड एवं पशुबलि की प्रथा का प्रचलन था तथा विभिन्न धार्मिक मत-मतान्तर प्रचलित थे। धर्म के वास्तविक स्वरूप को भूलकर, धार्मिक क्षेत्र के छोटे-छोटे भेदों के आधार पर एक-दूसरे के साथ संघर्ष करना इस समय, सामान्य विषय था। इसके साथ ही धर्म की प्रेरिका शक्ति जाती रही।[७] बौद्ध, जैन, वैष्णव, शाक्त आदि मुख्य सम्प्रदायों के भी बहुत से भेद-उपभेद प्रचलित थे।[८] ईसाइयत और इस्लाम में भी कई मत-मतान्तर व सम्प्रदाय प्रचलित थे।[९] पर उनमें विविध मतों के होते हुए भी एक प्रकार की सुदृढ़ एकता थी। सब ईसाई चाहें वे रोमन कैथोलिक हों या प्रोटेस्टेन्ट, बाईबिल को अपना धर्मग्रन्थ मानते थे और जीसस क्राइस्ट को ईश्वर।[१०] शिया, सुन्नी, बहाबी आदि विभिन्न मुस्लिम सम्प्रदायों के अनुयायी कुरान को ईश्वरीय ज्ञान मानते थे और हजरत मुहम्मद को पैगम्बर।[११] इस प्रकार भारतीय समाज में जो विभिन्न मत-मतान्तर प्रचलित हो गए थे, उसके कारण इनमें एकता की भावना सर्वथा नष्ट हो गयी थी। इसका प्रमुख कारण धर्म का स्वार्थवादी विवेचन तथा आक्रान्ता समूहों का परिणाम था।[१२] धर्म के नाम पर थोथा कर्मकाण्ड, नैतिकता के नाम पर अन्धविश्वास का प्रचलन तथा सुसंगत एवं उदार सामाजिक विधान के स्थान पर कठोर आवर्जनाओं एवं विवर्जनाओं से नियन्त्रित श्रृंखलाबद्ध मूढ़ रूढ़ियों का अनुपालन इस युग का सामान्य चरित्र था, सर्वत्र संकीर्णता, अनुदारता तथा जड़ता व्याप्त थी।[१३]

भारतीय समाज की तत्कालीन गतिहीन, रूढ़िवादी परम्परा ने जिन सामाजिक बुराईयों को जन्म दिया उनमें बाल-विवाह, बहु-विवाह, वृद्ध-विवाह, पर्दा-प्रथा, दासी-प्रथा, दहेज-प्रथा, विधवाओं पर अत्याचार, सती-प्रथा, भ्रूण-हत्या, शिशु-हत्या, मद्यपान, मांसाहार, जूआँ, वेश्यागमन, ऊँच-नीच की भावना पर आधारित स्पृश्यास्पृश्य का भाव तथा दलित व निम्नवर्ग पर अकल्पनीय अत्याचार आदि उल्लेखनीय हैं।[१४] इन सामाजिक कुप्रथाओं ने भारतीय समाज को अध:पतन के गर्त में पहुँचा दिया था। इसका प्रमुख कारण अशिक्षा एवं भाग्यवाद था।[१५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



दूसरी ओर इस्लाम और ईसाइयत भारत में हिन्दूवाद का प्रतिद्वन्दी था और दोनों अपने धर्म का प्रचार करते हुए धर्म परिवर्तन का कार्य तीव्र गति से यहाँ कर रहे थे।[१६] भारतीय धर्म, सभ्यता एवं संस्कृति की आलोचना इनका मुख्य ध्येय था। भारतीय समाज की तत्कालीन परिस्थितियों का चित्रण करते हुए समसामयिक चिन्तक एवं 'ब्रह्मसमाज' के संस्थापक राजाराममोहनराय ने कहा है कि "मुझे खेद के साथ कहना पड़ रहा है कि धर्म के वर्तमान ढाँचे ने हिन्दुओं को इस बुरी तरह जकड़ा हुआ है कि जातिभेद और जातीय अभिमान ने अनगिनत वर्गों व उपवर्गों में बाँट दिया है, जिससे उनमें देश-प्रेम की भावना ही पूरी तरह खत्म हो गई है। सैंकड़ों तरह के धार्मिक रीति-रिवाज, धार्मिक समारोहों और शुद्धिकरण के नियमों ने उन्हें इस कदर बाँध रक्खा है कि कोई जोखिम का काम हाथ में लेने लायक रह ही नहीं गए हैं।[१७] इस परिस्थिति को और स्पष्ट करते हुए मैक्सबेवर ने कहा है कि 'हिन्दू-धर्म दरअसल जादू, अन्धविश्वास और अध्यात्मवाद की खिचड़ी बनकर रह गया था। ईश्वर पूजा की जगह पशुबलि और शारीरिक यातना जैसी जघन्य प्रथाओं का सिलसिला शुरु हो गया था।'[१८]

'नवविधानसमाज' के संस्थापक केशवचन्द्र सेन ने तत्कालीन समाज का चित्रण करते हुए कहा है कि आज हम चारों ओर जो देखते हैं, वह गिरा हुआ राष्ट्र है जिसकी प्राचीन महानता खण्डहरों में गड़ी हुई पड़ी है। उसका राष्ट्रीय साहित्य और विज्ञान, उसका अध्यात्म ज्ञान व दर्शन, उसका उद्योग और वाणिज्य उसकी सामाजिक समृद्धि और गार्हस्थिक सादगी और मधुरता ऐसी थी कि जिनकी गिनती अतीत की वस्तुओं में की जाती है। आज हम चारों ओर आध्यात्मिक, सामाजिक और बौद्धिक दृष्टि से उजड़े हुए भारत का शोकयुक्त और उदासीन दृश्य देखते हैं।[१९]

इस काल में भारतीय समाज में पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता का तेजी के साथ प्रवेश हो रहा था। पुर्तगाली, डच और फ्रेंच के बाद अंग्रेजी शासन में ईसाई-धर्म का प्रचार-प्रसार तेजी से बढ़ा। इसमें सन्-१८१३ का चार्टर एक्ट अत्यधिक सहायक सिद्ध हुआ, क्योंकि इस ऐक्ट के अनुसार ईसाई पादरियों को भारत आने और धर्म प्रचार करने की अनुमति दी गयी।[२०] इसके पूर्व संन्-१७९३ ई. के चार्टर एक्ट में इंगलैण्ड के ईसाई मिशनरियों को भारत आने की अनुमति नहीं थी[२१] और धर्म प्रचार करने की छूट नहीं दी गयी थी। सन् १८१३ ई. के चार्टर एक्ट के अनुसार क्रिश्चियन मिशनरी अच्छी-बड़ी संख्या में इंगलैण्ड से भारत आने लगे, फिर तो सारा उत्तरी भारतवर्ष ईसाइयत के प्रहारों के लक्ष्य में आ गया। कैरी, डफ और विल्सन के नेतृत्व में सारा धर्म प्रचारक समुदाय हिन्दू समाज पर टूटा पड़ा।[२२] इन्होंने बड़े उत्साह के साथ भारतीयों को ईसाई बनाने का प्रयत्न प्रारंभ कर दिया। इस समय बाईबिल के उपदेश और सड़कों तथा गलियों में भाषण, यह आम बात हो गयी थी।[२३] धीरे-धीरे ईसाई पादरी प्रत्येक स्थान पर दिखाई पड़ने लगे थे, जैसे-स्कूलों, अस्पतालों, जेलों और बाजारों में, मण्डियों, मेलों और पेठों में जाकर अपने धर्म का प्रचार करते और भारतीय धर्मों की निन्दा करते घूमते थे। ये हिन्दू देवी-देवताओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



की हँसी उड़ाते तथा उनकी धार्मिक मान्यताओं और परम्पराओं को व्यर्थ एवं महत्वहीन बतलाया करते थे।[२४] इसी काल में मिशनरियों ने अनेक स्कूल-कालेजों की स्थापना भी की क्योंकि अंग्रेजी शिक्षा से कदाचित, उन्हें कुछ विशेष आशा हो चली थी।[२५]

इस प्रकार ईसाई शिक्षा की स्थापना और ईसाई धर्म के प्रसार की तीव्र गति के कारण भारतीय समाज में प्राचीन काल से चली आ रही अपनी सभ्यता व संस्कृति के प्रति हेयता की भावना फैलती जा रही थी। अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव हिन्दुत्व के लिए घातक होता जा रहा था। ऐसी स्थिति को देखकर बड़े आत्मविश्वास के साथ डॉ. डफ ने सन्-१८३५ में घोषणा किया था कि 'जिस-जिस दिशा में पाश्चात्य शिक्षा प्रगति करेगी; उस-उस दिशा में हिन्दुत्व के अंग टूटते जायेंगे और अन्त में जाकर ऐसा होगा कि हिन्दुत्व का कोई भी अंग साबित नहीं रहेगा।[२६]

तत्कालीन परिस्थिति से भारतीय समाज का कुछ वर्ग अत्यधिक चिन्तित व व्यग्र था किन्तु खुलकर इसका विरोध नहीं कर सकता था। इसका कारण इन मिशनरियों को अंग्रेजी सरकार का संरक्षण प्राप्त था।[२७] अंग्रेजी प्रभुत्व व ईसाई धर्म प्रचार के कारण भारतीय धर्म तथा संस्कृति पर जो आक्रमण हुआ वह अत्यन्त ही शक्तिशाली था [२८] क्योंकि अंग्रेज भारत में अपने साथ ऐसी सभ्यता व संस्कृति लाए थे जो विज्ञान पर आधारित[२९] एवं अर्थ पर अवलम्बित थी।[३०] यह पाश्चात्यवादी विचारधारा पूर्णत: भौतिकवादी चिन्तन पर आधारित था। इसीलिए ईसाई धर्म प्रचारकों ने अपने धर्म के प्रचार के लिए शिक्षा, दान, अस्पताल, सेना आदि का उपयोग किया।[३१] इस कार्य में त्याग, दया, परोपकार की भावना कम और अपने धर्म के प्रति भारतीयों के मन-मस्तिष्क में आस्था जगाना था। ईसाई धर्म प्रचार के संबंध में ईसाईयों की प्रचार-प्रणाली[३२] नामक पुस्तक से उदधृत कुछ अंश इस प्रकार है, "भारत के विभिन्न प्रदेशों में ईसाई लोग भारतवासियों को ईसाई बनाने का घोर प्रयत्न कर रहे हैं, जिसके लिए भारतीय समाज की कमजोरियों से पूरा लाभ उठा रहे हैं। ईसाई मत का प्रचार इतना वेग से क्यों हो रहा है? इसके गहराई में जाने पर पता चलता है कि ये ईसाई मिशन का प्रचार कार्य थोड़े सूद पर कर्ज, भारतीय संस्कृति की आलोचना, स्कूलों, अस्पतालों, पुस्तकालयों आदि में व्यवस्था, अशिक्षितों को शिक्षा, ईसाई धर्म ग्रहण करने के बाद नौकरी, मद्य-मांस की व्यवस्था, विवाह का प्रलोभन आदि बातें सम्मिलित थीं।"

इस सम्बन्ध में रामधारी सिंह 'दिनकर' ने कहा है कि, "ईसाई मिशनरीज में शिक्षा प्राप्त किया हुआ हिन्दू नवयुवकों का पूरा-पूरा दल एकदम बहक गया और बड़ी निर्ममता के साथ ठीक उसी प्रकार हिन्दुत्व की निन्दा करने लगा जिस प्रकार ईसाई मिशनरी कर रहे थे।"[३३] इन नवयुवकों का मस्तिष्क बुद्धिवादी तर्कों से भरा हुआ था।[३४] जिसके कारण अपने पूर्वजों के धार्मिक असबाबों (वस्तु या आवश्यक सामग्री) पर उनकी कोई श्रद्धा नहीं रह गयी थी। इनमें से विचारवान युवकों ने यह घोषणा कर दी थी कि हिन्दुत्व के नवीन और प्राचीन वैदिक और पौराणिक साकारवादी और निराकारवादी सभी रूप व्यर्थ हैं।[३५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि इस समय भारत की सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक स्थिति अत्यधिक शोचनीय एवं दयनीय थी। यह सामाजिक और सांस्कृतिक अवनति का काल था। सामाजिक-धार्मिक व अन्य क्षेत्रों में प्रविष्ट कर गयी कुसंस्कारों, कुप्रथाओं एवं कुरीतियों के कारण ही अठारहवीं सदी के समय हिन्दू समाज पतन के कगार पर था।[३६] ऐसे सांस्कृतिक संक्रमण काल में भारतीय नवजागरण का प्रादुर्भाव इस देश में हुआ। जिसके फलस्वरूप भारतीय समाज में समन्वयवादी विचारधारा के साथ नयी चेतना का जन्म हुआ।

**भारतीय नवजागरण काल–** अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध काल की जिस विशिष्ट पृष्ठभूमि के फलस्वरूप एक नवीन भारत का प्रादुर्भाव हुआ, वह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इस समय धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक, बौद्धिक, वैज्ञानिक और आर्थिक क्षेत्रों में असाधारण जागृति और प्रगति हुई। इसी को भारतीय नवजागरण कहा जाता है।[३७] भारत के सौभाग्य से इसी समय धार्मिक क्षेत्रों में राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी रामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द तथा अन्य अनेक सुधारकों का जन्म हुआ। जिन्होंने धर्म-सुधार, सामाजिक परिवर्तन व पुरातन संस्कृति के पुनरुद्धार का बीड़ा उठाया। इन महामानवों द्वारा ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, रामकृष्ण मिशन जैसे सुधारवादी आन्दोलनों को जन्म दिया गया। जिसका मुख्य ध्येय धर्म-सुधार, सामाजिक कुरीतियों की समाप्ति और आर्य-संस्कृति की रक्षा करना था।[३८]

आधुनिक भारत में नवयुग की ज्योति सर्वप्रथम धार्मिक आन्दोलनों के रूप में प्रकट हुई। इस समय भारत में जो जागृति दिखाई देती है, इसका सूत्रपात इन्हीं सुधारकों से हुआ है। इन धार्मिक आन्दोलनों से भारत को सर्वप्रथम अपनी शोचनीय आधुनिक स्थिति का बोध हुआ, अपने स्वर्णिम अतीत का ज्ञान हुआ तथा उज्जवल भविष्य में विश्वास उत्पन्न करने की शक्ति जागृत हुई। इन्होंने आलोचनात्मक दृष्टि से प्राचीन धर्मशास्त्रों के अध्ययन पर बल दिया। अन्धविश्वासों और रूढ़िवाद के स्थान पर तर्क और बुद्धिवाद को प्रधानता दी।[३९]

भारतीय नवजागरण का प्रधान लक्षण अतीत के आधार पर समन्वयवादी विकास था।[४०] प्राचीन भारतीय संस्कृति ने ही वह मूलाधार प्रदान किया था जिस पर वर्तमान नवाभ्युत्थानोन्मुख भारत ने अपने भव्य भवन का निर्माण उस समय किया था।[४१] इस समय के नवजागरण ने राष्ट्र के विकास की माँग के साथ-साथ भारतीय धर्म, समाज और संस्कृति में विलक्षण परिवर्तन कर दिया था।[४२] वास्तव में इस समय धर्म, समाज, शिक्षा, साहित्य, कला, विज्ञान एवं राजनीति में नवीनता आदि का विकास हुआ था। भारतीय नवजागरण के आन्दोलनों में से आर्यसमाज आन्दोलन का एक अपना ऐतिहासिक महत्व है। आर्यसमाज द्वारा सामाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में जो योगदान किया गया उसके उन्नायक एवं आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन, कार्य और विचारों पर प्रकाश डालना आवश्यक है क्योंकि इन्हीं के सिद्धान्तों के आधार पर आगे चलकर आर्यसमाज आन्दोलन एक सशक्त एवं सार्वभौम आन्दोलन का स्वरूप प्राप्त कर सका।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**स्वामी दयानन्द का आविर्भाव–** वर्षों की पराधीनता के कारण धार्मिक रूढ़िवादिता, साम्प्रदायिक कट्टरता तथा सामाजिक अत्याचारों से त्रस्त, अभिशप्त एवं पीड़ित समाज के सम्मुख वैदिक चिन्तन के शाश्वत मूल्यों को जीवन के संदर्भों में प्रस्तुत कर, बुद्धिवाद एवं विवेक के आधार पर स्वकर्त्तव्यों के निर्धारण का संदेश देने वाले दयानन्द भारतीय इतिहास में अपने युग के अद्वितीय महापुरुष थे। ऐसे युगप्रवर्तक महापुरुष के जीवनवृत्त का अध्ययन मानव जाति के लिए प्रेरणादायी है।

**प्रारम्भिक जीवन–** दयानन्द सरस्वती का जन्म कठियावाड़ (सौराष्ट्र) जो भारतीय राज्य मौरवी रियासत में स्थित था और जिसमें अनेकानेक नगर अन्तर्विष्ट थे, उनमें से एक नगर के टंकारा मुहल्ला जीवापुरा में एक सामवेदी औदीच्य ब्राह्मण परिवार में सन् १८२४ ई. में हुआ था।[४३] अपने जन्म के विषय में स्वामी दयानन्द ने कलकत्ते में एक उपदेश सम्भाषण में कहा था कि मेरा जन्म दक्षिण गुजरात प्रान्त देश काठियावाड़ (सौराष्ट्र) का मजोकठा देश मौर्वी राज्य में डेमी नदी के किनारे अवस्थित एक नगर में संवत १८८१ (सन् -१८२४ ई.), औदीच्य ब्राह्मण कुल में हुआ था।[४४]

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने चार स्थानों पर स्वयं अपनी जीवनी का उल्लेख किया है- पूना में (सन् -१८७५), कलकत्ता में (सन् -१८७३), बम्बई में अंग्रेजी के थियोसोफिस्ट मासिक पत्र (अक्टूबर-१८७९, दिसम्बर-१८७९, नवम्बर-१८८०) के अंक में यह थियोसॉफिकल सोसायटी, कमच्छा, वाराणसी के तिबित्स (T.IBBITS) मेमोरियल पुस्तकालय में उपलब्ध है। हाल ही में परोपकारिणी सभा के पुस्तकालय से प्राप्त स्वयं महर्षि दयानन्द का हस्तलेख है, जो सन्-1983 ई. में महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी संस्करण आर्य-प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली द्वारा एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित है । इन चार में से सबसे अधिक विस्तृत वर्णन कलकत्ते में निहित है । इसे स्वयं स्वामी दयानन्द दस दिन तक संस्कृत में बोलकर लिखवाते रहे और ब्रह्मसमाज के नेता देवेन्द्रनाथ ठाकुर, केशवचन्द्र सेन और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के द्वारा नियुक्त लेखक उस विवरण को बंगला में लिखता रहा।

नवभारत टाइम्स के सम्पादक अक्षयकुमार जैन ने स्पष्ट किया कि भारत के पश्चिमी भाग में सौराष्ट्र नामक प्रदेश है उसे काठियावाड़ कहा जाता है। स्वराज्य से पहले गुजरात प्रदेश में मौरवी नामक एक देशी राज्य था जिसके टंकारा नगर के जीवापुर मुहल्ले में महर्षि दयानन्द का जन्म हुआ।[४५] देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय कृत दयानन्द चरित जिसे पं. घासीराम ने बंगला से हिन्दी में अनुवाद किया था, उसमें दयानन्द के जन्म के विषय में इस प्रकार उल्लेख मिलता है- मैंने मौरवी में जन्म ग्रहण किया, मौरवी एक नगर है, वह गुजरात के अन्तर्गत दुर्गान्धरा राज्य का सीमान्तवर्ती है। मैं उदीच्य श्रेणी का ब्राह्मण हूँ।[४६]

इस प्रकार उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म भारत के पश्चिमी भाग में स्थित दक्षिण गुजरात प्रान्त के काठियावाड़ (सौराष्ट्र) के अन्तर्गत मौर्वी भारतीय राज्य में डेमी नदी के किनारे अवस्थित टंकारा नामक नगर के जीवापुर मुहल्ले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



में आश्विन बाद संवत्-१८८१ (तदनुसार सन् १८२४) में एक औदीच्य ब्राह्मण परिवार में हुआ था।

ये उदीच्य या औदीच्य ब्राह्मण कौन थे? ये कहाँ से यहाँ आए? इस सन्दर्भ में श्री हरविलास शारदा ने कहा है कि "दसवीं शताब्दी में इन्हलवाड़ा पाटन के राजा मूलराज सोलंकी ने एक हजार शिक्षित, सच्चरित्रवान ब्राह्मणों को विभिन्न स्थानों से बुलाया और उनको गुजरात में विभिन्न स्थानों पर बसाया जिसके परिणामस्वरूप ये ब्राह्मण पूरे गुजरात में फैल गए।[४७] उदीचि (उत्तर) दिशा से आकर गुजरात में बस जाने वाले ब्राह्मणों को औदीच्य-ब्राह्मण नाम से अभिहित किया गया। ये ब्राह्मण-गांधार, कुरुक्षेत्र, कान्यकुब्ज आदि उत्तरापथ के विभिन्न प्रान्तों से आए।"[४८] स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस संबंध में कहा है कि सौराष्ट्र को वेद भ्रष्टता के पाप से बचाने के लिए लगभग आठ सौ वर्ष पूर्व वहाँ के धर्मभीरु राजा मूलराज ने उत्तर-भारत से करीब एक हजार वेदज्ञ-ब्राह्मणों को लाकर सौराष्ट्र देश में बसाया था। सारे गुजरात प्रान्त में ये लोग फैल गए थे। मैंने उन्हीं में से एक ब्राह्मण कुल में जन्म लिया था।[४९] इस विषय में उल्लेख है कि दसवीं शताब्दी (सन् ९१५-९९७ई.) में राजा मूलराज के आमंत्रण पर उत्तर प्रदेश से ब्राह्मण जाकर गुजरात में बस गए।[५०] इन्हीं औदीच्य सामवेदी ब्राह्मणों के परिवारों में से एक स्वामी दयानन्द सरस्वती का परिवार था। इस प्रकार उपर्युक्त प्रमाण इस बात का संकेत करते हैं कि स्वामी दयानन्द का परिवार उत्तर भारत से जाकर गुजरात में बस गया था। इसी कारण उस परिवार को सामवेदी औदीच्य ब्राह्मण परिवार कहा गया और उसमें जन्मे स्वामी दयानन्द को औदीच्य ब्राह्मण माना गया।

स्वामी दयानन्द का परिवार एक प्रतिष्ठित, घनाढ्य औदीच्य ब्राह्मण परिवार था। इनके पिताजी का नाम कर्षणजी लालजी तिवारी था।[५१] कर्षणजी तिवारी एक जमींदार, साहूकार और कौशिया ग्राम के बहुत बड़े भाग के मालिक[५२] तथा तत्काल प्रशासन से सम्बद्ध एक उच्च कर्मचारी थे।[५३] कर्षणजी तिवारी के पिता लालजी तिवारी पहले सिद्धपुर में रहते थे, उसको छोड़कर वे जामनगर राज्य के कौशी ग्राम में पूर्णरूप से आकर बस गए थे।[५४] कर्षणजी इस क्षेत्र में स्थायी रूप में रहने लगे थे और बाद में एक बहुत बड़े भू-भाग के मालिए हुए।

स्वामी दयानन्द सरस्वती स्वयं इस सम्बन्ध में कहते हैं कि मेरे पिताजी धनाढ्य जमींदार, कुसीदजीवी सरकार के राजस्व अदायकारी और प्रभावशाली कट्टर शैव ब्राह्मण थे।[५५] यह राजस्व अदायकारी उस समय एक मजिस्ट्रेट का पद था।[५६] कट्टर शैव मतावलम्बी होने के कारण भगवान् शिव उनके भगवान् थे और कर्षणजी शिव के उपासक थे।[५७] उनकी धर्म के प्रति अटूट आस्था एवं दृढ़ धारणा थी और वे अपने कर्त्तव्य के अनुपालन में अत्यधिक संयमी थे।[५८] धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा एवं शिव भक्ति के कारण ही उन्होंने टंकारा में एक कुबेरनाथ महादेव का मंदिर बनवाया था।[५९]

इस प्रकार उनके पिता कर्षणजी तिवारी कट्टर शैव भक्त थे तो दूसरी ओर उनकी माता अमृतबेन (अमूबा)[६०] वैष्णव मत की अनुगामिनी थीं।[६१] वह अतिसरल, अमायिक (छल-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



कप रहित) दयावती,[६२] अतिमधुर मनोवृत्तियुक्त एवं व्यवहारकुशल महिला थीं।[६३] वे वैष्णव मतावलम्बी होने के कारण विष्णु की उपासक थीं। इस संदर्भ में लाला लाजपत राय ने कहा है कि स्वामी दयानन्द को अपने पिता से दृढ संकल्प शक्ति तथा माता से उदार स्वभाव विरासत में प्राप्त करने का द्विविध लाभ मिला।[६४] शैव व वैष्णव धर्म के मतावलम्बी होने के कारण ही स्वामी दयानन्द सरस्वती के बचपन का प्रारंभिक नाम मूलशंकर (मूलजी) और दयाराम (दयालजी)[६५] रखा गया। जिसमें से पहला शिव और दूसरा विष्णु नाम का द्योतक है क्योंकि पौराणिक जगत् में राम को विष्णु का अवतार माना गया है।[६६]

साप्ताहिक आर्य-सन्देश और वैदिक तत्त्वज्ञान और धर्म का प्रचारक आर्यपत्र में उल्लेख है कि स्वामी दयानन्द के जन्म का नाम मूलशंकर था,[६७] बाद में यही मूलशंकर दयानन्द के नाम से विख्यात हुए।[६८]

**प्रारम्भिक शिक्षा–** पाँच वर्ष की आयु से मूलशंकर दयानन्द की प्रारम्भिक शिक्षा आरम्भ होती है। इस अवस्था से अक्षर-अभ्यास, कुलधर्म, रीति-नीति तथा मन्त्र-श्लोकादि की शिक्षा देने का कार्य परिवार द्वारा प्रारम्भ किया गया था। इसमें देवनागरी अक्षर का ज्ञान कराया एवं सिखाया गया जिसके कारण बालक मूलशंकर ने देवनागरी अक्षर पढ़ना आरम्भ कर दिया था। स्वामी दयानन्द ने इस विषय में कहा है कि, संवत् १८८५ विक्रमी में मैंने पाँच वर्ष की अवस्था होने से पूर्व ही देवनागरी अक्षर पढ़ना आरम्भ कर दिया था और तब से ही मेरे माता-पितादि, वृद्ध लोग मुझको कुलधर्म और उसकी रीति-नीति सिखलाने लगे और मुझको बड़े-बड़े स्तोत्र, मंत्र, श्लोक तथा उनकी टीकाएँ कण्ठस्थ कराया करते थे।[६९]

इस सन्दर्भ में बम्बई से निकलने वाला मासिक पत्र थियोसोफिस्ट के एक अंक में उल्लेख है- अभी मैं मुश्किल से पाँच वर्ष का हुआ था कि मैं देवनागरी स्वरूप का अध्ययन करने लगा।[७०] इस प्रकार बालक मूलशंकर को कुलधर्म रीति-नीति का ज्ञान पाँच वर्ष की अवस्था से ही कराया जाने लगा था। आठवें वर्ष की अवस्था में स्वामी दयानन्द का यज्ञोपवीत संस्कार होता है। थियोसोफिस्ट पत्र में स्वामी दयानन्द का विचार इस प्रकार है- "जब मैं आठ वर्ष का था तब मेरा ब्राह्मण धर्म के अनुसार यज्ञोपवीत संस्कार हुआ और उसी समय गायत्री सन्ध्योपासना करने की विधि सिखलाई गयी और प्रथम रुद्राध्याय के बाद यजुर्वेद संहिता पढ़ने का अभ्यास मैंने प्रारम्भ किया। इनके पढ़ाने वाले पिताजी थे।[७१] मेरा परिवार शैवमत से सम्बन्धित था जिससे उसका महान् उद्देश्य शैवमत के रहस्यवादी विचारधाराओं को मुझमें संस्कारित करना था।[७२]

इस प्रकार पिता के शैवमतानुयायी होने के कारण यजुर्वेद के पठन-पाठन की प्रणाली उनके कुल में प्रचलित थी। यजुर्वेद का १७वाँ अध्याय ही प्रसिद्ध रुद्राध्याय है। जिसका शैव लोग अत्यन्त आस्थाभाव से पाठ करते हैं। स्वामी दयानन्द ने भी शैशव अवस्था पार करते-करते रुद्राध्याय को पढ़ डाला था। १४ वर्ष की अवस्था आते-आते उसने सम्पूर्ण यजुर्वेद को कण्ठस्थ किया तथा अन्य वेदों का भी स्वल्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अभ्यास किया।[७३] बालक मूलशंकर के पिता स्वयं वेदों के महान् विद्वान् थे। जिन्होंने उन्हें वैदिक वाङ्मय न्यायदर्शन इत्यादि का ज्ञान कराया था।[७४] इसं संदर्भ में स्वामी दयानन्द ने पूना के एक प्रवचन में कहा था कि मेरे पिताजी ने मुझको बचपन में रुद्र (रुद्राध्याय) आदि सिखाकर (कण्ठस्थ कराकर) शुक्ल यजुर्वेद पढ़ाना आरम्भं किया और शिवार्चन करने में लगा दिया था और इस दस वर्ष की अवस्था से मैं पार्थिव पूजन करने लगा था।[७५]

इस प्रकार वेदपाठ और वेदाभ्यास के बचपन में पड़े हुए संस्कार आगे चलकर स्वामी दयानन्द में प्रखरता से उद्‌बुद्ध हुए जबकि वेद प्रचार को आगे उन्होंने अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य बनाया और वैदिक शिक्षाओं के आधार पर ही स्वधर्म, स्वदेश तथा स्वराज्य को पुनरुज्जीवित करने का भव्य संकल्प लिया था।[७६] बालक मूलशंकर ने अपने पिताजी से धर्म के प्रति निष्ठा, स्वामिभक्ति, राजभक्ति सीखा था और अपनी माताजी से विपत्तियों के समय धैर्यता और सहनशीलता का पाठ सीखां।[७७] लाला लाजपत राय ने कहा है कि इस प्रकार स्वामी दयानन्द को विरासत में दो समन्वयात्मक विचारधाराओं का द्विविध लाभ मिला।[७८]

**महाशिवरात्रि पर्व और मूलशंकर में वैचारिक परिवर्तन–** शैवधर्म में शिवरात्रि पर्व के व्रत का बहुत माहात्म्य है।[७९] प्राचीन सत्य सनातन वैदिकधर्म परम्परा में महाशिवरात्रि पर्व फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी तिथि[८०] में मनाया जाता है। शैव मतावलम्बी होने के कारण कर्षणजी महाशिवरात्रि पर्व धूमधाम से मानते थे। इसमें रात्रि जागरण, पूजा अर्चन, व्रत, उपवास आदि कार्य का महत्व है। इस पर्व पर एक ऐसी अद्‌भुत घटना घटित हुई कि बालक मूलशंकर के मन मस्तिष्क में एक विराट् परिवर्तन आया। इस घटना का विवरण थियोसोफिस्ट को भेजे गए स्वामी दयानन्द के आत्मवृत्त लेख में इस प्रकार प्रस्तुत है ''जब शिवरात्रि आयी तब त्रयोदशी के दिन कंथा का माहात्म्य सुना के शिवरात्रि के व्रत करने का निश्चय करा दिया। परन्तु माता ने मने भी किया था कि इससे व्रत नहीं रहा जाएगा। तथापि पिताजी ने व्रत करा दिया और जब चतुर्दशी की शाम हुई तब बड़े-बड़े बस्ती के रईस अपने पुत्रों सहित मन्दिरों में जागरण करने को गए। वहाँ भी अपने पिता के साथ गया और प्रथम प्रहर की पूजा की। दूसरे प्रहर की पूजा करके पुजारी लोग बाहर निकलकर सो गए। मैंने प्रथम सुन रक्खा था कि सोने से शिवरात्रि का फल प्राप्त नहीं होता है। इसलिए अपनी आँखों में जल के छींटे मारकर जागता रहा और पिताजी भी सो गए। तभी मुझको शंका हुई कि मैंने कथा सुनी थी वही यह महादेव है या अन्य कोई क्योंकि वह मनुष्य की माफिक वह देवता है, वह बैल पर चढ़ता, चलता-फिरता, खाता-पीता शूल हाथ में रखता, डमरू बजाता, वरदान और शाप देता और कैलाश-पर्वत का मालिक है इत्यादि। तब पिताजी को जगाकर मैंने पूछा कि यह कथा महादेव की है या कोई दूसरे की तब पिता ने कहा क्यों पूछता है? तब मैंने कहा कि कथा का महादेव तो चेतन है वह अपने ऊपर चूहों को क्यों चढ़ने देगा? और इसके ऊपर चूहे तो फिरते हैं। तब पिताजी ने कहा कि कैलाश पर जो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



महादेव रहते हैं, उनकी मूर्ति बना और आवाहन करके पूजा किया करते हैं। अब कलियुग में शिव का साक्षात् दर्शन नहीं होता। इसलिए पाषाणादि की मूर्ति बनाके महादेव की भावना रखकर पूजन करने से कैलाश के महादेव प्रसन्न हो जाते हैं।[८१] यह बात मूलशंकर को भ्रम में डाल दिया। वह समझ नहीं सके और उनके दिमाग में यह बात आयी कि यह कथा का महादेव नहीं है इसकी पूजा मैं क्यों करूँ? मन में तो श्रद्धा ही नहीं।[८२] उसी समय मूलशंकर के हृदय में सच्चे शिव को पाने की लालसा जागी और सच्चे शिव के दर्शन पाने का संकल्प करके घर आकर व्रत तोड़ दिया।[८३] संवत् १८९४ सन् (१८३७ ई.) में शिवरात्रि के प्रसिद्ध रात्रि जागरण में शिवलिंग पर मूसक लीला देखकर उन्हें मूर्तिपूजा पर अनास्था हुई।[८४] वस्तुतः मूलशंकर का उस रात का जागरण एक ऐसा अद्भुत और अनोखा जागरण था जो उसे सदा-सदा के लिए जगा गया।

इस घटना के संदर्भ में निम्न पत्र पत्रिकाओं एवं विचारकों के विचार इस प्रकार मिलते हैं-

लाला लाजपत राय किसने सोचा था कि दयानन्द के पिता का अपने चौदह वर्षीय पुत्र का शिवरात्रि का व्रत रखकर धार्मिक विशिष्टता प्राप्त करने का यह आग्रह, दयानन्द के मन-मस्तिष्क में एक विराट् परिवर्तन ले आएगा, जो उसे अपने युग का मूर्ति-पूजा का कट्टर एवं सफल विरोधी बना देगा।[८५] इसी घटना से यह भी सिद्ध हुआ कि यही व्यक्ति भविष्य में धार्मिक पूर्वाग्रहों और अन्धविश्वासों की उन शृंखलाओं को तोड़ डालेगा जिन्होंने उसके देशवासियों के मस्तिष्कों को बन्दी बना रखा है तथा जिनके चरित्र विकास में ये चीजें बाधक बनी हुई है।[८६]

साप्ताहिक आर्य मर्यादा- ऋषि का जागरण एक नए प्रभातं का सन्देश लेकर आया था।[८७] यह घटना जो देखने में साधारण सी प्रतीत होती थी वस्तुतः उस धार्मिक क्रान्ति '१९वीं शताब्दी के धार्मिक सामाजिक आन्दोलन' का पूर्वरूप थी।[८८] यह घटना युगान्तकारी सिद्ध हुई।[८९]

लाहौर से निकलने वाला वैदिक तत्त्वज्ञान और धर्म का प्रचारक आर्यपत्र में उल्लेख है कि बालक मूलशंकर के पवित्र सरल हृदय में शिवरात्रि की कल्याणकारी रजनी में जिस पवित्र महत्त्वपूर्ण ज्ञान का उदय हुआ वह सच्चे शिव की उपासना का था। इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता।[९०] इस घटना ने मूलशंकर को दयानन्द बना दिया।[९१]

साप्ताहिक आर्य-मर्यादा जालन्धर- चूहे की घटना से बोध पाकर मूलशंकर से दयानन्द बन गए।[९२] इसी घटना से शिवरात्रि पर्व को आर्यसमाजी ऋषि बोधोत्सव के रूप में मनाते हैं। ऋषि बोधोत्सव का दिन स्वामी दयानन्द के स्मृति दिबसों में से एक प्रमुख दिवस है।[९३]

**वैराग्योन्मुख एवं गृहत्याग–** मूलशंकर के जीवन में शिवरात्रि की घटना से उत्पन्न अन्तर्द्वन्द्व का समाधान अभी हुआ ही नहीं था कि एक दुःखात्मक घटना उनकी चौदह वर्षीया बहन की हैजा से हुई मृत्यु की घटी।[९४] इस सन्दर्भ में स्वामी दयानन्द ने कहा कि इससे मेरे हृदय को पहले दर्जे का धक्का लगा और मुझे बहुत डर लगा। इस समय मेरे चित्त में वैराग्य की जड़ जम गई।[९५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इसके कुछ दिनों बाद ही दूसरी घटना १९ वर्ष की अवस्था जब मूलशंकर की थी तो उससमय उनके चाचा की हैजे से मृत्यु हो गयी। स्वामीजी ने इस घटना का वर्णन पूना-प्रवचन में इस प्रकार से किया है- जब मेरी अवस्था १९ वर्ष की हुई तब जो मुझसे अतिप्रेम करने वाले बड़े धर्मात्मा, विद्वान् मेरे चाचा थे उनकी मृत्यु होने से अत्यन्त वैराग्य हुआ कि संसार में कुछ भी नहीं है।[९६]

साप्ताहिक आर्य मर्यादा जालन्धर के एक लेख में प्रकाशित है कि अभी सच्चे शिव की खोज की उत्कृष्ट अभिलाषा का समाधान हो ही नहीं पाया था कि उनकी प्राणों से प्रिय बहिन तथा प्रिय चाचा की मृत्यु ने बालक को उद्वेलित कर दिया तथा वह सच्चे शिव की खोज में घर को त्याग कर चल दिए।[९७] आर्य-सन्देश के एक लेख में उल्लेख है कि बहन और चाचा की मृत्यु ने मूलशंकर के ज्ञान और वैराग्य को और भी दृढ़ कर दिया।[९८] पंचमहायज्ञविधि में इस घटना के सन्दर्भ में विवरण है- एक दिन उनकी (स्वामी दयानन्द) भगिनी (बहन) की मृत्यु हो गई उनके भीतर-भीतर सुलग रहा वैराग्य इतना तीव्र हुआ कि उनका नेत्र जल भी सूख गया। थोड़े ही दिनों के पश्चात् स्नेहसागर चाचा भी करालकाल की गाल में बिला गए। इससे दयालजी का वैराग्य तीव्रतर हो गया। इससे दयालजी के कोमल चित्त को इतनी चोट लगी कि उनके नेत्रों से जल का स्रोत बह निकला, मानों हृदय में वैराग्य-वृद्धि के प्रदीप्त होने से सभी जल उबलकर नेत्रों के मार्ग से बाहर उमड़ आया।[९९]

इस दुःखात्मक घटना के फलस्वरूप मूलशंकर में दार्शनिक विचार उद्भुत हुए, जैसे- इस मृत्यु रूपी व्याधि से कैसे छुटकारा मिल सकता है? अमर जीवन के लिए कौन से उपायों का सहारा लिया जाए? मुक्ति मार्ग में किसका भरोसा किया जाए, आदि प्रश्न उन्हें व्याकुल किए रहते थे।[१००] ऐसी स्थिति को देखकर, वैराग्य से विचलित करने के ध्येय से, मूलशंकर के विवाह का प्रस्ताव उनके माता-पिता द्वारा लाया गया। आत्मवृत्त में उल्लेख है कि- माता-पिता ने विचारा कि इसका (दयानन्द का) विवाह शीघ्र कर देना चाहिए।[१०१]

इस प्रस्ताव के कारण मूलशंकर को और भी अधिक मानसिक अशान्ति हुई। उन्होंने अपने पिता से कहा "मुझे काशी भेज दीजिए जहाँ मैं व्याकरण, ज्योतिष और वैद्यक आदि के ग्रन्थ पढ़ आऊँ।[१०२] यह इच्छा मूलशंकर की पूर्ण नहीं हुई लेकिन घर से तीन कोस पर स्थित एक ग्राम में माता-पिता की आज्ञानुसार प्रशंसित पंडित के यहाँ जाकर वे पढ़ने लगे थे। कलकत्ता कथन में स्वामी दयानन्द ने इस सन्दर्भ में कहा कि "मैंने पिताजी से आग्रह किया कि तीन कोस पर अमुक ग्राम में जो बड़े वृद्ध और अपनी जाति के भारी विद्वान् रहते हैं और वहाँ हमारे घर की जमींदारी भी है, उनके पास जाकर पढ़ा करूँ- माँ-बाप ने स्वीकार कर लिया और मैं वहाँ प्रशंसित पंडित के पास कुछ समय तक अच्छी प्रकार पढ़ता रहा।"[१०३]

अध्ययनकाल में उससमय मूलशंकर का ध्यान निरन्तर वैराग्य की ओर उन्मुख था एवं विवाह से प्रबल घृणा उनमें विद्यमान थी। ऐसी स्थिति की जानकारी होने पर प्रशंसित पंडित के यहाँ से बुलाकर उनके पिता ने विवाह की तैयारी प्रारम्भ कर दी। स्वामी दयानन्द की अवस्था इस समय तक २१ वर्ष की पूर्ण हो गयी थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आत्मवृत्त में उल्लेख है कि- एक प्रसंग में पंडित के सामने मुझे इस बात को स्वीकार करना पड़ा कि मुझको विवाह से प्रबल घृणा है जो मेरे मन से किसी प्रकार दूर नहीं हो सकती। जब पिताजी को यह सूचना मिली, उन्होंने वहाँ से मुझे उसी क्षण बुला लिया और विवाह की तैयारी आरम्भ कर दी। इधर मेरी अवस्था २१ वर्ष की पूरी हो गयी थी।[१०४] मूलशंकर विवाह की तैयारी से बहुत अधिक विचलित हुए और जब उन्हें यह निश्चित बोध हो गया कि माता-पिता बिना विवाह के कदाचित न छोड़ेंगे तो उन्होंने अन्तत: मन में उद्‌भूत हुए दार्शनिक बोध के निमित्त गृहत्याग कर सद्‌गुरु की खोज में प्रस्थान किए। इस समय उनकी अवस्था २२ वर्ष की थी।

पूना कथन से उद्‌धृत स्वामी दयानन्द का विचार जब मैंने निश्चित जाना कि अब विवाह किए बिना कदाचित न छोड़ेंगे। फिर गुपचुप संवत् १९०३ के वर्ष में घर छोड़ के सन्ध्या के समय भाग उठा।[१०५] इस समय संवत् १९०३ में (तदनुसार सन्-१८४६) उनकी अवस्था का २२ वाँ वर्ष प्रारम्भ हो गया था।[१०६]

**सद्‌गुरु की तलाश एवं ज्ञानोदय–** गृहत्याग के उपरान्त चौदह वर्ष (१८४६-१८६०) तक उत्तर, दक्षिण, पूरब और पश्चिम, करीब-करीब पूरे भारतवर्ष में सत्य और ज्ञान की खोज करते रहे।[१०७] सच्चे शिव की तलाश में उन्होंने साधुओं और योगियों का संग किया, आश्रमों और मठों में निवास किया।[१०८] इस यात्रा में सर्वप्रथम मूलशंकर ने सायला ग्राम को ही अपना प्रथम गन्तव्य स्थान बनाया।[१०९] यहाँ मूलशंकर को लाला भगत ने ब्रह्मचारी की दीक्षा दिया था और उन्होंने ही उनका नाम शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी रखा।[११०]

सायले- यह ग्राम अहमदाबाद, मौरवी, रेलवे स्टेशन मौली से चार कोस और आर्यसमाज कस्बा रानपुर से ग्यारह कोस है। इसे शैलानगर नाम से भी जाना जाता है। शैला रामचन्द्र के मन्दिर के कारण प्रसिद्ध है जिसे लाला भगत ने बनवाया था। लाला भगत मौरवी के ख्यातानामा जीवा मेहता के वंशज थे।[१११]

आत्मवृत्तान्त से- सायले में एक ब्रह्मचारी मिला उसने मुझसे कहा कि तुम नैष्ठिक ब्रह्मचारी हो जाओ उसने मुझको ब्रह्मचारी की दीक्षा दी और शुद्ध चैतन्य मेरा नाम रखा तथा काषाय-वस्त्र भी धारण करा दिए।[११२] शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी और काषाय वस्त्र धारण करने के उपरांत मूलशंकर सिद्धपुर के मेले "तीर्थयात्रियों का धार्मिक एकत्रीकरण[११३]" में साधु-संन्यासी, योगी के सत्संग में रहते थे।

आत्मवृत्तान्त से- मैं वहाँ से चलकर सिद्धपुर में आके नीलकण्ठ महादेव की जगह ठहरा जहाँ दण्डी स्वामी और ब्रह्मचारी ठहरा करते थे। उनका सत्संग किया और जो-जो कोई महात्मा वा पण्डित मेले में सुन पड़ा उन सबके पास गया और उनका सत्संग किया।[११४] यहाँ सिद्धपुर के मेले में मूलशंकर अपने पिता द्वारा पकड़ लिए जाते हैं लेकिन पुन: उनके पकड़ से बाहर हो गए। आर्यसमाज का इतिहास में उल्लेख है कि- एक बार उनके पिता मूलशंकर को पकड़ पाने में सफल भीं हो गए, पर उसे घर वापस नहीं ले जा सके।[११५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी मूलशंकर अपने पिता के पकड़ से बाहर होकर बड़ौदा शहर में आकर रहने लगे थे और वहाँ चेतनमठ में ब्रह्मानन्द आदि ब्रह्मचारी और संन्यासियों से वेदान्त विषय पर विचार-विमर्श करते रहे।

पं. घासीराम के लेख से बड़ौदा के चेतनमठ नामक मन्दिर में ब्रह्मानन्द और अन्यान्य ब्रह्मचारी संन्यासियों के साथ वेदान्त विषय में मूलशंकर का विचार-विमर्श हुआ।[११६] यहाँ मूलशंकर को जीव और ब्रह्म एक है, इसका ज्ञान ब्रह्मानन्द ने करा दिया था। वेदान्त पढ़ने से यह ज्ञान उनमें दृढ़ हो गया था।[११७]

बड़ौदे में ही एक बनारसी बाई वैरागी के स्थान में जाकर मूलशंकर को वहाँ एक सच्चिदानन्द परमहंस से भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।[११८] स्वामी दयानन्द का इस सन्दर्भ में विचार- ये उच्च कोटि के विद्वान थे उनसे विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक, तात्त्विक और आध्यात्मिक विषय पर मेरी बातचीत हुई।[११९]

स्वामी सच्चिदानन्द ने मूलशंकर को चाणोद कन्याली "जो नर्मदा नदी के तट पर स्थित था जहाँ उन्नतचरित्र संन्यासी और ब्रह्मचारी रहते थे"[१२०] जाने की प्रेरणा दी। चाणोद कन्याली एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान, जहाँ सात तीर्थ महत्त्वपूर्ण थे इस समय इसे दक्षिणी काशी कहा जाता था।[१२१] ब्रह्मचारी से संन्यासाश्रम में प्रवेश करने की उत्कृष्ट अभिलाषा मूलशंकर को यहाँ जागृत हुई। जिसके फलस्वरूप स्वामी पूर्णानिन्द सरस्वती के दर्शन का सौभाग्य उनको प्राप्त हुआ।

आत्मकथा से- ये श्रृंगेरी मठ से आके द्वारिका की ओर जाते थे उनका नाम पूर्णानिन्द सरस्वती था।[१२२] ये पूर्णानिन्द सरस्वती ने ही ब्रह्मचारी मूलशंकर को संन्यासी की दीक्षा दिया और इनका नाम दयानन्द सरस्वती रखा।

कलकत्ता प्रवचन से उद्धृत स्वामी दयानन्द के विचार- बहुत विचार के पश्चात् स्वामी पूर्णानन्द ने मुझे संन्यासाश्रम में अनुष्ठानिक रूप से दीक्षित कर दिया। तब से मेरा नाम "दयानन्द सरस्वती' हो गया।[१२३]

पं. लेखराम कृत पुस्तक से-, स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से मेरे मित्र ने आग्रह किया और अन्ततः मुझको तीसरे दिन श्राद्धादि कराकर चौबीस वर्ष की अवस्था में सन्यास दे, दण्ड ग्रहण कराया और मेरा नाम दयानन्द सरस्वती रखा।[१२४] संन्यास सम्प्रदाय में दीक्षित होने के बाद चाणोद में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने स्वामी ज्वालापुरी और शिवानन्द गिरि से योग सीखा।[१२५]

आत्मचरित से- पहले स्वामी ज्वालानन्द ने मुझे क्रियात्मक रूप से हठयोग की शिक्षा दी थी और स्वामी शिवानन्द ने मुझे क्रियात्मक रूप से राजयोग की शिक्षा दी थी। हठयोग-पाठ के अन्तर्गत धौति-क्रिया, नेति, वस्ति, श्वास-परिवर्तन, आतप-स्नान, जल-स्नान, नास-पान, जल-पान, कुम्भक-योग, त्राटक-योग, आसन और मुद्रा आदि क्रियायें आती हैं। राजयोग से यम, नियम, आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान, समाधि आदि क्रियायें आती है।[१२६]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


इन योगियों से योग विद्या प्राप्त करने के पूर्व स्वामी दयानन्द व्यासाश्रम के योगी योगानन्द से योगाभ्यास की क्रिया सीख चुके थे। स्वामी योगानन्द ने क्षुधा पर विजय लाभ, श्वास और दीर्घ जीवन, आसन-शिक्षा, प्राणायाम-शिक्षा, नाड़ी शुद्धि, त्रिदेव तत्त्व-वायु, पित्त और श्लेष्मा-तत्त्व आदि यौगिक क्रियाओं की शिक्षा दिया था।

इस प्रकार योग विधाओं में छ: वर्ष (संवत् वि. १९०५ से १९११ वि. पर्यन्त) व्यतीत कर १२७ आबू आदि का पर्यटन कर संवत् १९११ वि. (तद्नुसार सन् १८५५) हरिद्वार कुम्भ के अवसर पर सद्‌गुरु की खोज में स्वामी दयानन्द सरस्वती उत्तरभारत आए।[१२८] आगे कुछ समय तक वे ऋषिकेश, टिहरी (गढ़वाल), रुद्रप्रयाग, गुप्तकाशी, त्रियुगी नारायण, ओखीमठ, केदारनाथ, जोशीमठ, बदरीनाथ आदि उत्तराखण्ड के प्रसिद्ध एवं दुर्गम तीर्थों में साधना एवं ज्ञान संचय करते रहे। सन्-१८५६ ई. में स्वामी दयानन्द कानपुर, बनारस आदि गए और उसके बाद वे मध्यप्रदेश के विन्ध्याचल पर्वत एवं नर्मदा की घाटी में पर्यटन करते रहे।[१२९]

सन्-१८५७, ५८, ५९- इन तीन वर्षों में स्वामी दयानन्द की गतिविधि का कोई विवरण प्राप्त नहीं है। महर्षि ने स्वयं बस इतना ही लिखा है कि मैं इन तीन वर्षों में नर्मदा के तट पर घूमता रहा।[१३०] रामविलास शर्मा ने यह संभावना व्यक्त किया है कि उन तीन वर्षों में स्वामी दयानन्द नर्मदा क्षेत्र में स्वाधीनता संग्राम के लिए जनता को संगठित करने के काम में लगे रहे होंगे। संग्राम में सफलता न मिलने पर उन्होंने धर्म और समाज को सुधारने में सारी शक्ति लगा दी हो यह सम्भव है।[१३१]

सन्-१८६० में, चौदह वर्ष की खोज के अनन्तर, मथुरा में उन्हें दण्डी स्वामी श्री विरजानन्दजी का शिष्यत्व प्राप्त करने का सौभाग्य मिला ।[१३२] गंगाप्रसाद उपाध्याय ने कहा कि स्वामी दयानन्द खोज के अनन्तर अन्य संन्यासी विराजानन्द से मिले।[१३३]

पूना प्रवचन में स्वामी दयानन्द ने कहा-तीन वर्ष नर्मदा भ्रमण के पश्चात् संवत् १९१७ को मैं मथुरा आया। वहाँ मुझे एक संन्यासी सत्पुरुष मिले। उनका नाम विरजानन्द था। वे पहले अलवर में रहते थे । उनका वय उस समय ८१ वर्ष का था। उनकी वेद शास्त्रादि आर्ष ग्रन्थों में अधिक अभिरुचि थी। वे दोनों आँखों से अन्धे थे और उन्हें पेटशूल का रोग था। उनको आधुनिक कौमुदी-शेखरादिक ग्रन्थ अच्छे नहीं लगते थे। भागवतादि पुराणों का तो बहुत ही तिरस्कार करते थे। समस्त आर्ष ग्रन्थों पर उनकी अत्यधिक भक्ति थी।[१३४]

स्वामी विरजानन्द दशनामी संन्यासी थे और उनका सम्बन्ध शंकराचार्य द्वारा स्थापित संन्यासी सम्प्रदाय के साथ था।[१३५] स्वामी विरजानन्द के गुरु पूर्णानन्द भी शंकर मतावलम्बी रहे होंगे।[१३६] पहले पूर्णानन्दजी से स्वामी दयानन्द ने संन्यास की दीक्षा लिया था। इनके शिष्य प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द व्याकरण के धुरन्धर विद्वान् थे।[१३७] गुरु विरजानन्द ने दयानन्द के अन्धकारमय हृदय में एक ऐसी ज्योति जलाई जो जीवन भर साथ रही। दयानन्द ने स्वामी विरजानन्द के विद्यालय में "कार्तिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शुक्ल पक्ष १९१७ से अश्विन संवत् १९२१ विक्रमी. पर्यन्त'' रहकर जो कुछ शास्त्राध्ययन किया। इसमें उन्होंने अष्टाध्यायी, महाभाष्य, दर्शन, ब्राह्मण ग्रन्थों एवं वेदों का अध्ययन किया।[१३८] इससे उनके बौद्धिक और वैचारिक क्षितिज का तो विस्तार हुआ ही, एक सर्वथा अभिनव दृष्टि भी उन्हें मिली।[१३९] गुरु विरजानन्द ने गुरु दक्षिणा के रूप में दयानन्द से माँगा कि- भारत देश में दीन-हीन जन अनेकाविधि दु:ख पा रहे हैं। जाओ उनका उद्धार करो। मत-मतान्तरों के कारण जो अनेक कुरीतियाँ प्रचलित हो गई हैं, उनका निदान करो। आर्य जनता की बिगड़ी दशा को सुधारो। कुसंस्कारों और अन्धविश्वासों को दूर करके आर्य सन्तानों को उबारो। पठन-पाठन की आर्ष शैली प्रचलित करके वैदिक और आर्ष ग्रन्थों के पढ़ने-पढ़ाने को प्रवृत्ति करो। गंगा-यमुना के निरन्तर गतिशील प्रवाह की भाँति लोकहित कामना से क्रियात्मक जीवन व्यतीत करो।[१४०]

गुरु विरजानन्द से सामाजिक क्षेत्रों में प्रवेश कर गयी कुरीतियों से भारतीय जनता को त्राण देने तथा वैदिक और आर्ष ग्रन्थों के पठन-पाठन की प्रणाली समाज में प्रचलित करने के निमित्त प्रेरणा प्राप्त कर, स्वामी दयानन्द लोकाद्धार के लिए संकल्पित हुए।

गुरु-शिष्य के सन्दर्भ में सार्वदेशिक के श्रावणी अंक में उल्लेख है- धन्य था वह गुरु और धन्य था वह शिष्य जिन्होंने वैदिकधर्म की डूबती हुई नौका को थाम लिया। जिन्होंने इस निराश्रय नौका को भंवर से निकाल दिया।[१४१]

पञ्चमहायज्ञविधि के भाषा भाष्यकार वेदानन्द सरस्वती ने अपनी भूमिका में कहा है कि ''यह घटना संसार के इतिहास में क्रान्तिकारिणी है। इसी घटना ने भारत के अज्ञानान्धकार के संहार करने का उपक्रम किया और परतन्त्रतापाश से मुक्त करने की युक्ति का बीजारोपण किया ।[१४२]

इस प्रकार गुरु विरजानन्द द्वारा वैदिक आदर्शों के अनुरूप जीवन में कार्य करने की प्रेरणा प्राप्त कर स्वामी दयानन्द लोकोपकार के लिए कार्यरूप में परिणित होते हैं।

स्वामी दयानन्द का प्रचार कार्य-गुरु विरजानन्द द्वारा दिए गए अन्तिम दीक्षा के पश्चात् स्वामी दयानन्द धर्म प्रचार और समाज सुधार के कार्यों में निरन्तर संलग्न थे। इसके लिए उन्होंने उत्तर भारत के अनेक भागों का दौरा कर विविध स्थानों पर शास्त्रार्थ किए और वैदिक ज्ञान को समाज में स्थापित करने का अथक प्रयास करते रहे।

कलकत्ता कथन में स्वामी दयानन्द के इस सन्दर्भ में विचार-गुरुदक्षिणा प्रदानार्थ ही मैंने उत्तर भारत (आगरे) से लेकर कलकत्ता तक साठ से ऊपर स्थानों में लगभग नव वर्षों तक परिभ्रमण किया, शास्त्रार्थ किए और वैदिक ज्ञान का प्रचार किया है।[१४३]

स्वामी दयानन्द ने अपने प्रचार कार्य में धर्म को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया था। वह मूल रूप से महान् दार्शनिक और धार्मिक व्यक्ति थे। धर्म ही उनकी विचारधारा का केन्द्र बिन्दु था। उनकी यह मान्यता थी कि धार्मिक सुधारों के द्वारा ही भारतीय समाज में जागृति आ सकती है और राष्ट्रीय विकास का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।[१४४]

उन्नीसवीं सदी का जनमानस पूरी तरह धर्म से अनुप्राणित था। धर्म की व्यापक मान्यताएँ समाज के सभी अंगों का स्पर्श करती थीं। इसीलिए धर्म को भारत की जीवनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


शक्ति माना जाता था।[१४५] स्वामी दयानन्द का मानना था कि धर्म के द्वारा समाज से कुरीतियों, रूढ़ियों व आडम्बरों को दूर किया जा सकता है। इसीलिए दयानन्द को धर्म सुधारक माना गया।[१४६]

दयानन्द ने धर्म सुधार और समाज सुधार का कार्य वेदों के आधार पर किया। वैदिक धर्म और संस्कृति को पुनर्जीवित करना उनका एकमात्र ध्येय था।[१४७] उन्होंने ही सर्वप्रथम 'वेदों की ओर लौटो'[१४८] और 'हिन्दू धर्म ग्रन्थों में केवल वेद ही मान्य है, का नारा दिया।[१४९] उनका कथन था कि वेद ही सत्य विधाओं की पुस्तक हैं।[१५०] वे संसार भर से वेद विरुद्ध मतों को जड़ से उखाड़ना चाहते थे और संसार भर को वैदिक संसार बनाना चाहते थे।[१५१] सत्य अर्थों में वेद एक पोथी मात्र न होकर जीवन और सृष्टि के रहस्यों को खोलने वाला व्यापक विश्वकोष है।[१५२] वेद-नित्य, निखिल-ज्ञान के अमूल्य भाण्डागार है।[१५३]

इसीलिए स्वामी दयानन्द ने अपना प्रचार कार्य प्रारम्भ करने के साथ ही वेदों का समग्र रूप से अनुशीलन करने का यत्न प्रारम्भ कर दिया था। सन्-१८६४ ई. में वेद की पुस्तक की खोज में वे आगरा से धौलपुर गए थे।[१५४]

इस सन्दर्भ में रॉबसन ने कहा है कि अजमेर में जब स्वामी दयानन्द से भेंट हुई थी, तब वे केवल यजुर्वेद से परिचित थे। मैक्समूलर के ऋग्वेद का संस्करण उन्होंने तब प्रथम बार देखा था।[१५५]

सन्-१८६६ तक स्वामी दयानन्द ने वेद भी प्राप्त कर लिए और उनका सुचारु रूप से अनुशीलन भी करना प्रारम्भ कर दिया था। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप वे उन मन्तव्यों व सिद्धान्तों पर पहुँचने में समर्थ हुए, जिनका निरूपण उन्होंने सत्यार्थ-प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका आदि ग्रन्थों में किया है और जिनके प्रचार-प्रसार के लिए उन्होंने बाद में आर्यसमाज की स्थापना की।[१५६] वेदों की पुस्तक हस्तगत हो जाने पर सत्यासत्य के निर्णय करने की शक्ति स्वामी दयानन्द में जागृत हुई। कौन सी बातें वेदों के अनुकूल हैं और कौन सी वेद विरुद्ध? आदि तथ्यों का ज्ञान भी उन्हें हुआ।

अपने प्रचार कार्य के प्रारम्भिक वर्ष में १२ मार्च सन् १८६७ को वे हरिद्वार पहुँचे।[१५७] सन्-१८६७ के अप्रैल मास में हरिद्वार का कुम्भ मेला लगा था।[१५८] यहाँ स्वामी दयानन्द ने अपने निवास पर "पाखण्ड-खण्डिनी पताका" गाड़ी।[१५९] इसका उद्देश्य हिन्दू धर्म में फैले पाखण्ड की आलोचना करना था। इसमें उन्होंने पाखण्डों का दोषारोपण किया। इस कार्य में स्वामी दयानन्द के साथ पन्द्रह या सोलह संन्यासी ब्राह्मण भी थे। वहाँ स्वामी दयानन्द ने मूर्तिपूजा, अवतारवाद, तीर्थयात्रा, माथा पर तिलक, कण्ठीमाला, भागवतादि का सार्वजनिक रूप से विरोध करना प्रारम्भ किया।[१६०]

वस्तुतः महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा भारत में नवजागरण एवं सुधार के जिस महान् क्रान्तिकारी आन्दोलन का सूत्रपात किया गया था उसका वास्तविक रूप से श्रीगणेश हरिद्वार के पाखण्ड-खण्डिनी पताका" के साथ ही हुआ था। यहाँ "भागवत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



खण्डन'' नाम की पुस्तिका, हजारों की संख्या में, हरिद्वार के मेले में स्वामी दयानन्द ने बँटवायी। यह पुस्तक संस्कृत में है और इसमें भागवत को वेद विरुद्ध और अशुद्ध बताते हुए ''प्रमत्तगीत'' तक कहा गया है, और पाषाण आदि मूर्तियों की पूजा को ''पाषण्डिमत'' (पाखण्ड) की संज्ञा दी गई।[१६१] स्वामी दयानन्द ने संवत्-१९२४ से १९३० तक उत्तर प्रदेश में ही पाखण्ड खण्डन, वैदिकधर्म प्रचार, संस्कृत विद्यालयों की स्थापना, शास्त्रार्थ आदि में विशेष रूप से व्यतीत किए, केवल इस बीच में वे दो बार बिहार एवं बंगाल में कुछ काल के लिए प्रचारार्थ गए। इसी समय उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश की रचना कर उसे प्रकाशित कराया।[१६२]

इस अवधि में स्वामी दयानन्द के विचार अत्यन्त युक्तियुक्त तथा प्रगतिशील थे। अपने प्रगतिशील विचारों के कारण ही वे जात-पाँत के कट्टर विरोधी थे। वे वर्ण-व्यवस्था को मानते थे, पर जन्म के आधार पर नहीं। कोई मनुष्य अपने गुण, कर्म और स्वभाव के कारण ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र कहाता है, यह उनका मन्तव्य था।[१६३] हरिद्वार में स्वामी विशुद्धानन्द के साथ शास्त्रार्थ में उन्होंने ''ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः' यजुर्वेद के पुरुष सूक्त के इस मन्त्र की व्याख्या की थी कि समाज रूपी शरीर में ब्राह्मण मुख स्थानीय है और क्षत्रिय भुजा स्थानीय, वैश्य उरू के सदृश हैं और शूद्र पैरों के समान।[१६४] उनका कथन था कि समाज में जिसे नीच या अछूत समझा जाता है वे अपने गुण कर्मो के अनुसार ऊँची स्थिति प्राप्त कर सकते हैं। वे गुण कर्मानुसार वर्ण-व्यवस्था का प्रतिपादन करते थे। हिन्दू धर्म का परित्याग कर जिन लोगों ने इस्लाम व ईसाई मत को अपना लिया था स्वामी दयानन्द उन्हें भी शुद्ध करके अपने समाज में सम्मिलित कर लेने के पक्ष में थे।[१६५]

स्वामी दयानन्द के प्रगतिशील मन्तव्यों का अगले अध्यायों में समाजिक शैक्षणिक विकास में आर्यसमाज के योगदान विषयक अध्ययन में यथास्थान उल्लेख किया जाएगा। वे अपने सुधार कार्यों को करते हुए बहुधा शास्त्रार्थों का आश्रय लिया करते थे। उनके द्वारा किए गए शास्त्रार्थों में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण काशीशास्त्रार्थ था, जो संवत्-१९२६ में स्वामी दयानन्द सरस्वती और काशी के स्वामी विशुद्धानन्द, बालशास्त्री आदि पण्डितों के बीच दुर्गाकुण्ड के समीप आनन्दबाग में हुआ था।[१६६] इस संवाद में स्वामीजी का पक्ष पाषाण मूर्ति पूजनादि-खण्डन विषय और काशीवासी पण्डितजनों का मण्डन विषय था।[१६७] इसके निर्णय के विषय में ''आज'' दैनिक समाचार पत्र में एक उल्लेख है कि-शाास्त्रार्थ के मध्यस्थ महाराज ईश्वरीनारायण सिंह ने अपना निर्णय सुना दिया-पराजितो दयानन्दः विजेता विशुद्धानन्दः।[१६८]

काशीशास्त्रार्थ के कारण स्वामी दयानन्द के पाण्डित्य की सर्वत्र धूम मच गयी।[१६९] काशी के अतिरिक्त भी स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन काल में, उत्तर प्रदेश के विविध नगरों में अनेक शास्त्रार्थ किए जिसका तिथि क्रमित उल्लेख एक परिशिष्ट में दिया गया है। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा रचित प्रसिद्ध ग्रन्थ और पुस्तिकाओं के विवरण को भी एक अलग परिशिष्ट में दर्शाया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


इस प्रकार सन्-१८६७ से १८७२ के काल में स्वामी दयानन्द के कार्यकलाप एवं प्रचार कार्य से यह स्पष्ट होता है कि कुछ ही समय में सुधारक व सद्धर्म-प्रवर्त्तक का उनका स्वरूप निखरने लग गया था, और वे सम्पूर्ण मानव समाज के कल्याणार्थ एक संगठन स्थापित करना आवश्यक समझते थे क्योंकि सामाजिक-धार्मिक पुनरुत्थान केवल व्यक्तिगत संघर्ष से नहीं किया जा सकता बल्कि निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संगठन की आवश्यकता अपरिहार्य है। इसी उद्देश्य से स्वामी दयानन्द ने आगे आर्यसमाज की स्थापना की।

**ब्रह्मसमाज के सम्पर्क से संगठन निर्माण की प्रेरणा–** अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अन्धकारमय स्थिति, धार्मिक-सामाजिक अवनति, ईसाइयत का प्रचार व प्रसार, ईसाई पादरियों द्वारा भारतीय धर्मों की निरन्तर निन्दा, यूरोप के क्रान्तिकारी बुद्धिवादी तार्किक विचारधारा और अंग्रेजी पढ़े-लिखे हिन्दुओं द्वारा हिन्दुत्व की भर्त्सना, ये कुछ कारण उससमय विद्यमान थे, जिसके फलस्वरूप हिन्दुत्व की नींद टूटी। उसकी पहली अंगड़ाई ब्रह्मसमाज में प्रकट हुई।[१७०] २० अगस्त सन् १८२८ ई. को राजा राममोहन राय ने ब्रह्मसमाज की स्थापना कलकत्ते में की।[१७१] उनका जन्म सन् १७७४ ई. में, बंगाल में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था।[१७२] वह अपने समय के एक महान् भारतीय थे, जो अंग्रेजी, संस्कृत, फारसी, अरबी, ग्रीक, हिब्रू, भाषाएँ जानते थे।[१७३] इस समाज का रूप, निर्विवाद रूप से भारतीय था और भारतीय परम्परा में कहें तो कह सकते हैं कि यह अद्वैतवादी हिन्दुओं की संस्था थी।[१७४] इस संस्था का मुख्य उद्देश्य भारतीय धर्म तथा समाज में सुधार लाना था।[१७५] १९वीं शताब्दी का यह प्रथम धार्मिक तथा सामाजिक आन्दोलन था जो भारतीय सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र में पुनर्जागरण का प्रतीक था।[१७६]

राजा राममोहन राय भारतीय नवजागरण के अग्रदूत थे।[१७७] सूफी और मौतजली सम्प्रदाय[१७८] एवं ईसाई धर्म का काफी प्रभाव उन पर पड़ा।[१७९] सूफीवाद रहस्यवादी मुस्लिम विचारधारा है जिसका विकास कट्टरवादी इस्लाम धर्म से उत्पन्न बुराइयों के निराकरण के लिए हुआ जो आज भी मुस्लिम समाज सुधार का आधार बना हुआ है। सूफीवाद के विश्वासों, जीवन के प्रति दृष्टिकोण और धार्मिक विधि-विधानों पर हिन्दू विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव है। मुहम्मद साहब ने जिस इस्लाम धर्म का प्रतिपादन किया उसमें व्यक्ति को ईश्वर से पृथक माना गया है। लेकिन सूफीवाद में हिन्दू दर्शन के अनुसार ही ईश्वर और जीवन को एक-दूसरे का प्रतिरूप माना गया है। इसके अतिरिक्त सूफीवाद में इच्छाओं को नियन्त्रण में रखना, स्वयं को ईश्वर के अधीन मानना, निस्सार संसार को त्याग कर सत्य में लीन हो जाना और इन्द्रियों का दमन करना ये विशेषताएँ हैं जो पूर्णतया हिन्दू अध्यात्मवाद से प्रभावित हैं।[१८०]

यद्यपि राजाराममोहन राय प्राचीन ग्रन्थों, दर्शन पर विश्वास करते थे परन्तु वास्तव में मानव तर्क बुद्धि पर विश्वास करते थे।[१८१] उनका विचार था कि किसी प्रकार का सिद्धान्त, धर्म, कानून, दर्शन आदि यदि तर्कशक्ति के माध्यम से समाज के या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अपने स्वयं के लिए उपयोगी सिद्ध न हो तो मनुष्य को उसको त्यागने में लेशमात्र भी संकोच नहीं करना चाहिए।[१८२] उनके द्वारा किए गए धर्म सुधार कार्यों में तर्क और बुद्धि का स्थान सर्वोपरि था। उन्होंने मूर्तिपूजा, अवतारवाद व अन्य हिन्दू धर्म से जुड़े श्रद्धा और विश्वास की आलोचना की।[१८३] सामाजिक क्षेत्र में हिन्दू समाज की कुरीतियाँ–सती प्रथा, बहुपत्नी प्रथा, वेश्यागमन, जातिवाद इत्यादि का विरोध किया। उन्होंने विधवा पुनर्विवाह का भी समर्थन किया। इस प्रकार उन्होंने पूरब और पश्चिम के बीच एक समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया।[१८४]

सन्-१८२९ में उनके अथक प्रयास के फलस्वरूप ही सती प्रथा जैसी अमानुषी प्रथा लार्ड विलियम बैन्टिक द्वारा सरकारी आदेश से बन्द कर दी गयी।[१८५] इस सफलता से वे समाज में अत्यधिक लोकप्रिय हुए। बंगाल में ब्रह्मसमाज आन्दोलन धार्मिक-सामाजिक क्षेत्रों में, अभी राजा राममोहन राय के नेतृत्व में कार्य प्रारम्भ किया ही था या यों कहें कि वह अपने शैशवकाल में ही था कि सन्-१८३३ ई. में उनका देहावसान हो गया।[१८६]

उनके द्वारा स्थापित ब्रह्मसमाज आन्दोलन ने हिन्दू धर्म को ईसाई धर्म का आहार बनने से बचाया। सती प्रथा का अन्त, स्त्रियों का उद्धार और अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार, इस संस्था के प्रयत्नों का ही परिणाम था।[१८७] उनकी मृत्यु के बाद इस संस्था में नया जीवन फूँकने और इसे एक ईश्वरवादी आन्दोलन के रूप में आगे बढ़ाने का श्रेय महर्षि देवेन्द्रनाथ टैगोर (१८१८-१९०५) को था।[१८८] ब्रह्मसमाज में आने के पूर्व महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के पास एक तत्त्वबोधिनी सभा थी जो बाद में सन्-१८४२ में ब्रह्मसमाज में मिला दी गयी और उसके सभी अनुयायी इस समाज में सम्मिलित हो गए थे।[१८९] देवेन्द्रनाथ ठाकुर भी अपने धर्म का बुद्धि सम्मतरूप राजा राममोहन राय की भाँति संसार के सामने रखना चाहते थे।[१९०] उनका मानना था कि वेद के उपदेश भी वहीं तक मान्य हैं, जहाँ तक वे हमारी बुद्धि से मेल खाते हैं।[१९१]

ईसाई धर्म के प्रबल समर्थक केशवचन्द्र सेन (एक वैश्यजातीय, अंग्रेजी शिक्षा सम्पन्न, अत्यधिक भावुक तथा वाग्मी युवक) का सन्-१८५७ में, ब्रह्मसमाज में आगमन हुआ।[१९२] ये ईसा के परम भक्त और हिन्दू धर्म को भी ईसाइयत की दिशा में ले जाना चाहते थे।[१९३] तथा उन्होंने अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन किया।[१९४] सन्-१८६६ ई. में महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर और केशवचन्द्र सेन में मतभेद हो जाने के कारण, दो अलग समाज ब्रह्मसमाज और आदि ब्रह्मसमाज स्थापित हो गए।[१९५] आदि ब्रह्मसमाज में और सुधारों के अतिरिक्त स्त्रियों की मुक्ति, विद्या प्रसार, सस्ते साहित्य का बाँटना, मद्य-निषेध तथा दान देने पर अधिक बल था।[१९६]

१९ मार्च सन्-१८७२ ई. में केशवचन्द्र सेन के प्रयास से ब्रह्म विवाह कानून पास हुआ।[१९७] तो इस ब्रह्मसमाज का जो थोड़ा बहुत हिन्दू समाज से सम्बन्ध था, इस स्पेशल मैरिज एक्ट से टूट गया।[१९८] इस कानून के तहत भारत सरकार ने हिन्दू-समाज में जात-पाँत तोड़कर किए जाने वाले विवाहों को वैध माना।[१९९]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



रामधारी सिंह 'दिनकर' ने ब्रह्मसमाज के विषय में कहा है कि महर्षि देवेन्द्रनाथ के समय में आकर ब्रह्मसमाज अपनी जड़ (हिन्दुत्व) से दूर जाने लगा और केशवचन्द्र सेन के समय में तो वह हिन्दुत्व से इतना अलग और ईसाइयत के इतना समीप जा पहुँचा कि लोगों को सात्त्विक भ्रम हो गया कि यह और कुछ नहीं, सम्पूर्ण हिन्दू समाज को एक साथ ईसाइयत में दीक्षित करने का आयोजन मात्र है।[२००] इसके विषय में आगे दिनकर ने कहा है कि यह समाज हिन्दुत्व के समग्र रूप-पुनर्जन्मवाद, अवतारवाद, तीर्थ-मन्दिर और मूर्ति-पूजा आदि का समर्थन करने का साहस नहीं कर सका।[२०१] हिन्दुत्व का जो रूप उन्होंने लिया, वह ईसाइयत और इस्लाम से अधिक भिन्न नहीं था। यह ईसाइयत और हिन्दुत्व के युद्ध का पहला मोर्चा था, जिसमें हिन्दुत्व कुछ लजाया हुआ और प्रतिपक्षी की प्रबलता से आतंकित था।[२०२] इस समाज ने हिन्दू धर्म से जुड़े श्रद्धा और विश्वास की आलोचना धार्मिक क्षेत्रों में किया। जिसके फलस्वरूप हिन्दू जनता का अत्यन्त विशाल भाग उनकी ओर उत्साह से नहीं दौड़ा और इस देश में इनके पाँव भी जम नहीं पाए।[२०३] इस आन्दोलन का मुख्य प्रभाव बंगाल में ही हुआ।[२०४]

लेकिन अन्ततः ब्रह्मसमाज ने भारतीय पुनर्जागरण में एक बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। एच.ई.सी. जकारियाज ने कहा है कि-राजा राममोहन राय और उनका ब्रह्मसमाज, भारत में सभी प्रकार के आन्दोलनों चाहे वह हिन्दू धर्म, समाज अथवा राजनीति के थे- सभी के आरम्भिक बिन्दु थे। ईसाई प्रचार से प्रभावित मन जो हिन्दू धर्म से अपना बन्धन लगभग तोड़ चुका था, उसने ब्रह्मसमाज में शरण ली।[२०५] ब्रह्मसमाज के सिद्धान्तों के अनुरूप ही केशवचन्द्र सेन ने सन्-१८६७ ई. में महाराष्ट्र में 'प्रार्थना समाज' की स्थापना की। इस समाज के प्रमुख नेता महादेव गोविन्द रानाडे (१८४२-१९०१ई.), डॉ० आत्माराम पाण्डुरंग (१८२३-१८९८ई.) और एन.जी. चन्द्रावरकर (१८५५-१९२३ई.) थे। समाज सुधार की प्रवृत्तियों का संचालन ही इस समाज का मुख्य उद्देश्य था।[२०६] ब्रह्मसमाज आन्दोलन व इसके महान् सक्रिय नेताओं के सम्पर्क से स्वामी दयानन्द में संगठन निर्माण करने की प्रेरणा जागृत हुई। इसके बाद ही आर्यसमाज जैसे विश्वव्यापी सर्वभौम संगठन का निर्माण इस भारतवर्ष में हुआ।

**आर्यसमाज संगठन निर्माण की ओर अग्रसर-** सन्-१८६७ से सन्-१८७२ तक गंगा के तटवर्ती विभिन्न नगरों, कस्बों और ग्रामों में स्वामी दयानन्द ने अनेक व्याख्यान दिए, प्रसिद्ध शास्त्रार्थ किए और पाखण्ड खण्डिनी पताका की स्थापना की जिसका उद्देश्य आर्य धर्म का प्रचार तथा समाज में प्रचलित कुप्रथाओं व कुरीतियों का निवारण करना था। इस काल में स्वामी दयानन्द ईसाई और मुसलमानों के भी सम्पर्क में आए, और इन सम्प्रदायों के पादरी और मौलवियों के साथ उन्होंने विचार-विनिमय किया।[२०७] इस समय उन्होंने इन मतों और सम्प्रदायों का खण्डन कर वैदिकधर्म को स्थापित करने का निश्चय भी किया।[२०८]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



वस्तुत: स्वामी दयानन्द के सुधार कार्यों पर विचार करने पर स्पष्ट हो जाता है कि इस समय सुधारक व सद्धर्म-प्रवर्त्तक का उनका स्वरूप निखरने लग गया था, और वे उस मार्ग पर निरन्तर अग्रसर होते जाते थे, जिस पर कि वे न केवल हिन्दुओं को अपितु सम्पूर्ण मानव समाज को ले जाना चाहते थे।[२०९] पाखण्ड-खण्डिनी पताका की स्थापना व इसके अनुयायियों की संख्या में वृद्धि देखकर उनमें संगठन निर्माण करने की भावना जागृत हुई।

आर्यसमाज जैसे सार्वभौम संगठन के निर्माण करने की मूल प्रेरणा स्वामी दयानन्द को ब्रह्मसमाज के नेताओं के संपर्क में आने के कारण ही प्राप्त हुई। इस विषय का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि चन्द्रशेखर सेन ब्रह्मसमाज के अनुयायी थे। इन्होंने स्वामी दयानन्द से काशीशास्त्रार्थ के समय भेंट की थी तथा उन्हें कलकत्ता आने के लिए कहा था।[२१०] सम्भवत: इनके निमन्त्रण पर ही स्वामी दयानन्द सरस्वती १६ दिसम्बर-१८७२ को कलकत्ता पहुँचे।[२११] कलकत्ता उस समय भारत की राजधानी और आधुनिकता का केन्द्र थी।[२१२]

स्वागतार्थ हावड़ा स्टेशन पर स्वामीजी को आमंत्रित करने वाले चन्द्रशेखर सेन (कलकत्ता के प्रसिद्ध बैरिस्टर) व उनके साथ पं. सत्यव्रत सामश्रयी तथा व्योमेशचन्द्र बनर्जी भी थे।[२१३] सामश्रयीजी तो काशीशास्त्रार्थ में उभयपक्ष सम्मत लेखक के रूप में विद्यमान थे। व्योमेशचन्द्र बनर्जी महाशय भारतीय ईसाई थे जो अखिल भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के सन्-१८८५ ई. में सम्पन्न हुए प्रथम अधिवेशन के सभापति बने थे।[२१४]

कलकत्ते में ब्रह्मसमाज के प्रसिद्ध नेता देवेन्द्रनाथ ठाकुर और केशवचन्द्र सेन ने स्वामी दयानन्द का बड़ा सत्कार किया।[२१५] इसके पहले देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने प्रयाग में स्वामी दयानन्द से कलकत्ते आने का आग्रह किया था।[२१६] ब्रह्मसमाज के नेताओं की कार्यशैली से प्रभावित होकर ही स्वामी दयानन्द कलकत्ते गए थे। कलकत्ता-कथन में स्वामी दयानन्द का विचार इस प्रकार है- राजा राममोहन राय का मूर्तिपूजा विरोधी आन्दोलन, ईसाई धर्म विरोधी आन्दोलन, सतीदाह निषेध आन्दोलन, जनसाधारण के अन्दर आर्य धर्म प्रचार के लिए महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के तत्त्वबोधिनी पत्र का संस्थापन, स्त्री शिक्षा के लिए विद्यालय स्थापनादि का कार्य और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के द्वारा ऋग्वेद का बंगानुवाद प्रकाशन (सन्-१८४१) आदि सर्वतोन्मुखी संस्कारादि के कारण बंगाल के प्रति मेरा आकर्षण हो गया था।[२१७] और देवेन्द्रनाथ ठाकुर के अनुरोध से ही १६ दिसम्बर १८७२ को मैं कलकत्ता पहुँचा था।

इस समय बंगाल अंग्रेजों द्वारा प्रचारित नवीन शिक्षा तथा नवजागरण के आन्दोलन का प्रमुख केन्द्र था। भारत में ब्रिटिश शासन का सूत्रपात बंगाल से ही हुआ था। सबसे पहले बंगाल में ही नवीन शिक्षा का प्रारम्भ हुआ था। जिसके कारण बहुत से बंगाली नवयुवक अंग्रेजी भाषा में निष्णात हो गए थे, और ग्रेट-ब्रिटेन तथा पश्चिमी यूरोप में विकसित हो रहे नए ज्ञान-विज्ञानं से उन्हें परिचय भी प्राप्त हो गया था।[२१८] यहाँ महर्षि दयानन्द का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सम्पर्क उन लोगों से हुआ जो आधुनिक विचारधारा में प्रमुख चिन्तनशील और पाश्चात्य-सभ्यता से प्रभावित नवीन समाज के अग्रणी थे।[२१९]

ब्रह्मसमाज के नेताओं से सम्पर्क के कारण स्वामी दयानन्द में कुछ परिवर्तन आए थे जैसे संस्कृत भाषा के स्थान पर हिन्दी भाषा में व्याख्यानों का प्रयोग[२२०] एवं वस्त्र धारण, केशवचन्द्र की प्रेरणा[२२१] से ऐसा परिवर्तन उनमें आया। इसके पहले स्वामी दयानन्द का व्याख्यान व शास्त्रार्थ संस्कृत भाषा में ही हुआ करता था जो जनसामान्य को समझ में नहीं आता था। अब तक स्वामी दयानन्द नग्न रहा करते थे और एक कौपीन के अतिरिक्त उनके शरीर पर कोई वस्त्र नहीं रहता था।[२२२]

यहाँ ब्रह्मसमाज के नेता, विद्वान् व कार्यकर्ताओं से मिलने के साथ ही उन सुधार कार्यों व संस्थानों का स्वामी दयानन्द ने अवलोकन भी किया, जिनका सम्पादन व संचालन केशवचन्द्र सेन के नेतृत्व में ब्रह्मसमाज द्वारा किया जा रहा था।[२२३] ब्रह्मसमाज द्वारा स्त्री-शिक्षा के लिए स्थापित विद्यालय तथा अपने विचारों को प्रसारित करने के लिए स्थापित मुद्रणालय और छात्रों तथा छात्राओं के लिए स्थापित छात्रावासों का अवलोकन कर[२२४] संगठन निर्माण करने का स्वामीदयानन्द ने अनुभव किया। यही अनुभूति बाद में आर्यसमाज रूपी महान् संगठन के निर्माण में प्रेरणादायक सिद्ध हुई।

इस प्रकार ब्रह्मसमाज के नेताओं के सम्पर्क से स्वामी दयानन्द में संगठन निर्माण करने की प्रवृत्ति जागृत हुई व इसके साथ ही कुछ मूलभूत परिवर्तन भी उनमें हुए। लेकिन कुछ दिनों उपरान्त ही वे इन नेताओं से शीघ्र ही अलग हो गए; क्योंकि वे उनके वेदों पर आधारभूत विश्वास तथा आत्मा के पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर एकमत नहीं हो सके। सन्-१८७४ में, वे प्रार्थना समाज के नेताओं से मिले, किन्तु उनके साथ भी वे अधिक दिनों तक नहीं चल सके।[२२५] और अन्त में आर्यसमाज संगठन की स्थापना उन्होंने की।

**आर्यसमाज का उदय एवं विचारधारा-** आर्यसमाज की स्थापना की पृष्ठभूमि में स्वामी दयानन्द द्वारा किए गए वैदिक प्रचार के निमित्त देश भ्रमण, स्वयं किए गए सभा की स्थापना, प्रसिद्ध संस्थाओं के महान् नेताओं से सम्पर्क, शास्त्रार्थ, प्रवचन एवं विद्यालय स्थापना आदि महत्त्वपूर्ण थे। साथ ही आर्यों के प्राचीन गौरव सत्य सनातन वैदिक धर्म में अडिग निष्ठा रखने के कारण वे संसार भर का हित देखना चाहते थे और अतीतकालीन भारतीय संस्कृति को पुन: समाज में स्थापित करना उनका ध्येय था। इसी ध्येय को सन्मुख रखकर वे निरन्तर आर्यों के प्राचीन गौरव वैदिक वाङ्मय का अनुशीलन किया करते थे।

आर्यों की सभ्यता एवं संस्कृति किसी धर्म देश काल से बँधे हुए नहीं हैं। वे तो ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की नीति पर बने हुए हैं। वे संसार भर की हित दृष्टि से हैं। इससे स्पष्ट है कि यह संस्कृति कितनी अपूर्व, कितनी व्यापक है जिसमें संकुचित राष्ट्रीयता का नाम नहीं, जिसमें प्रत्येक बात समाज की दृष्टि से है, विश्वबन्धुत्व की दृष्टि से है, विश्वप्रेम की दृष्टि से है।[२२६] इसी ''वसुधैव कुटम्बकम्'' को ध्यान में रखकर, सम्पूर्ण संसार की सर्वतोन्मुखी उन्नति के लिए ही महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज नाम से एक संगठन का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



निर्माण किया था। उनका चरम लक्ष्य यह था कि संसार के सब निवासी आर्य या श्रेष्ठ होकर एक विश्वव्यापी संगठित हो जाएँ।[२२७] उनका मन्तव्य था कि भारत संसार का सर्वश्रेष्ठ देश है और यही वह सच्चा पारसमणि है जिसके सम्पर्क से लौहरूप अन्य देश स्वर्ण बन जाते हैं। प्राचीन समय में चिरकाल तक भारत और उसके निवासी आर्य-लोग राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में विश्व का नेतृत्व करते रहे क्योंकि वे श्रेष्ठ थे, उनका सामाजिक जीवन आदर्शमय था और वे वेदों द्वारा प्रतिपादित सदाचरण के नियमों का अविकल रूप से पालन करते थे।[२२८]

वेदों द्वारा प्रतिपादित नियमों के पालन, वैदिक-धर्म को उसके प्राचीन विशुद्ध स्वरूप में पुनरुज्जीवित और विश्व भर में उसका प्रचार स्वामी दयानन्द करना चाहते थे।[२२९] अजमेर से प्रकाशित 'टंकारा' पत्रिका में आर्यसमाज के विषय में स्वामी दयानन्द का ध्येय मानव समाज के कल्याण के लिए, वेदव्यापी प्रचार के लिए, मानव समाज का जीवन वेदोक्त बनाने के लिए, धर्म अर्थ काम मोक्ष की सिद्धि के दिग्दर्शन के लिए, नवजीवन एवं नवचेतना को जागृत करने के लिए तथा वैदिक युग के नवनिर्माण के लिए विधिवत् नियमादि निर्धारित कर[२३०] प्रथम आर्यसमाजं की स्थापना चैत्र शुक्ल. ५ सं० १९३२ विक्रमी. तदनुसार १० अप्रैल सन्-१८७५ ई. को गिरगाँवरोड में डॉ. माणिकजी की बागबाड़ी में सायं ५ बजे की गई।[२३१] हरविलास शारदा ने भी आर्यसमाज की स्थापना तिथि संवत् १९३२ को शाम के समय ५:३० बजे का उल्लेख अपने पुस्तक में किया है।[२३२] आर्यपथिक लेखराम द्वारा संग्रहीत दयानन्द का जीवनचरित पुस्तक में इस तिथि (१० अप्रैल १८७५) को मान्य किया गया है। इसके साथ ही उल्लेख है कि-मोहल्ला गिरगाँव में डॉ. मानकजी के बगीचे में श्री गिरिधरलाल दयालदास कोठारी बी.ए., एल.एल.बी. की प्रधानता में एक सार्वजनिक सभा की गई और उसी दिन आर्यसमाज की स्थापना हो गयी।[२३३]

आर्यसमाज क्या है? ट्रैक्ट में जो आर्यसमाज चौक, प्रयाग से प्रकाशित है उसमें आर्यसमाज को महर्षि दयानन्द ने १० अप्रैल १८७५ ई. अर्थात् चैतसुदी ५ संवत् १९३२ विक्रमी. को बम्बई में खोला था उल्लेख है।[२३४] यह ट्रैक्ट समाज में बहुत अधिक संख्या में आर्यसमाज की ओर से वितरण होता था।

पं. देवेन्द्रनाथ मुखर्जी ने भी आर्यसमाज की स्थापना तिथि १० अप्रैल १८७५, को स्वीकार किया है।[२३५]

आर्यसमाज की स्थापना तिथि के विषय में दूसरी तिथि ७ अप्रैल १८७५ का उल्लेख मिलता है। आर्यसमाज (काकड़वाड़ी) बम्बई स्थापना शताब्दी स्मृति ग्रन्थ (१८७५-१९७५) में चैत्र-शुक्ल-प्रतिपदा, बुधवार संवत् १९३१ तारीख ७ अप्रैल १८७५ का उल्लेख है।[२३६]

बम्बई आर्यसमाज के शिलालेख में आर्यसमाज की स्थापना तिथि ७ अप्रैल १८७५ बुधवार को दर्शाया गया है।[२३७] आर्यसमाज के स्वस्थान (मन्दिर) के लिए जो जमींन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


खरीदी गयी और उसका जो सर्वप्रथम ट्रस्ट डीड बना उसके दस्तावेज पर समाज की स्थापना तारीख ७ अप्रैल १८७५ ई. लिखा है।[२३८] आर्यसमाज की स्थापना तिथि के सम्बन्ध में प्राचीन दस्तावेजों प्रमाणिक इतिहास एवं लेखकों के आधार पर १० अप्रैल १८७५ को स्वीकार किया गया है। ७ अप्रैल १८७५ जो आर्यसमाज की तिथि को दर्शाया गया है उस सम्बन्ध में बम्बई प्रान्त और उत्तर भारत में हिन्दी माह के विषय में इन्द्र विद्यावाचस्पति द्वारा स्पष्ट किया गया है कि गुर्जर और बम्बई प्रान्त में नवीन वर्ष कार्तिक प्रतिपदा से प्रारम्भ होता है और उत्तरी भारत में वर्ष का प्रारम्भ चैत्र प्रतिपदा से होता है। तदनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि गुर्जर प्रान्त में संवत् १९३१ की चैत्र शुक्ला प्रतिपदा उत्तरी भारत में संवत् १९३२ की चैत्र शुक्ल प्रतिपदा होगा।[२३९]

इस सन्दर्भ में पूना प्रवचन में स्वामी दयानन्द के विचार इस प्रकार हैं- गत वर्ष मैं मुम्बई आया मुम्बई में गोसाई महाराज के मत की छानबीन की और मुम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की। मुम्बई आर्यसमाज की स्थापना चैत्र शुक्ला ५ संवत् १९३२ वि. (गुजराती सं.१९३१) शनिवार १० अप्रैल १८७५ को हुई।[२४०]

इस प्रकार उक्त तथ्यों के आधार पर प्रमाणिक है कि आर्यसमाज की स्थापना बम्बई में १० अप्रैल १८७५ को स्वामी दयानन्द द्वारा किया गया । यद्यपि इस समाज की स्थापना के पूर्व राजकोट में आर्यसमाज (प्रार्थनासमाज को ही आर्यसमाज में परिवर्तित कर दिया गया था) की स्थापना हो चुकी थी पर वह ६ मास तक भी कायम न रह सका और ब्रिटिश दबाव के कारण बन्द हो गया।[२४१] यह भारत में पहला आर्यसमाज स्थापित हुआ था।[२४२] इन्द्र विद्यावाचस्पति की पुस्तक में उल्लेख है कि आर्यसमाज की सबसे पहले स्थापना राजकोट में हुई बम्बई में नहीं।[२४३]

डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकर ने इसे और भी स्पष्ट किया है कि स्वामीजी ३१ दिसम्बर, १८७४ को अहमदाबाद से राजकोट पहुँचे थे। राजकोट काठियावाड़ में है, जो स्वामीजी का प्रदेश था। दो साल पूर्व वहाँ प्रार्थनासमाज की स्थापना हो चुकी थी, और अनेक सुशिक्षित व्यक्ति उसकी सदस्यता स्वीकार कर चुके थे। ये सब लोग प्रगतिशील विचारों के थे। स्वामीजी ने प्रस्ताव किया कि राजकोट में आर्यसमाज स्थापित किया जाए और प्रार्थनासमाज को ही आर्यसमाज में परिवर्तित कर दिया जाए।[२४४] प्रार्थनासमाज के सब सदस्य इससे सहमत हो गए और इस प्रकार आर्यसमाज की स्थापना हुई। इसकी सदस्य संख्या तीस थी। श्री मणिशंकर जटाशंकर उसके प्रधान नियत हुए और हरगोविन्ददास द्वारकादास मंत्री। इस समय स्वामीजी ने आर्यसमाज के नियम भी बनाए। यह समाज देर तक कायम न रह सका। छः मास पूरे होने से पूर्व ही इसका अन्त हो गया।[२४५]

बम्बई में स्थापित आर्यसमाज ही जन चेतना का आधार बिंदु बना। जिसके फलस्वरूप आर्यसमाज की स्थापना का तीव्रगति से विस्तार होता गया। बम्बई आर्यसमाज के संगठन में श्री गिरधरलाल दयालदास कोठारी समाज के प्रधान और श्री पानाचंद आनन्दजी पारेख मंत्री चुने गए । उक्त दोनों महानुभावों को इस नवजात आर्यसमाज के सर्वप्रथम प्रधान और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मंत्री बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।[२४६] बम्बई आर्यसमाज की स्थापना के समय शुरू में जो व्यक्ति उसके सदस्य बने थे, उनकी संख्या एक सौ के लगभग थी। सदस्यों की सूची में स्वामीजी का भी नाम था।[२४७] प्रारम्भ में आर्यसमाज के २८ नियम निर्धारित किए गए थे।[२४८] जिनमें धार्मिक सिद्धान्तों के साथ-साथ समाज संचालन के व्यावहारिक विधान को भी सम्मिलित कर लिया गया था। स्वयं दयानन्द ने इन नियमों की व्याख्या हिन्दी में की थी।[२४९] २८ नियमों की व्याख्या श्री सेठ दामोदर सुन्दरदास द्वारा लिखित "मुम्बई आर्यसमाजनो इतिहास" नामक पुस्तक में गुजराती लिपि और आर्यभाषा हिन्दी में छपा है वैसा ही आर्यसमाज स्मृतिग्रन्थ काकड़वाड़ी बम्बई-४, में पृष्ठ ३९ से ४४ पर अंकित है। श्री दामोदर के ग्रन्थ में पृ. १० से २१ उद्धृत है।[२५०] इन नियमों के लिए अलग से परिशिष्ट देखा जा सकता है।

बम्बई के नियमों में, सिद्धान्त सम्बन्धी नियम स्वयं महर्षि ने और विधान सम्बन्धी रावसाहब दादोबा पाण्डुरंग तरखड़कर, श्री पानाचंद आनन्दजी पारेख, श्री सेवकलाल कृष्णदास आदि मिलकर तैयार किए और बम्बई हाईकोर्ट के वकील श्री गिरधरलाल दयालदास कोठारी को दिखाकर व्यवस्थित कर लिए गए थे।[२५१] इन नियमों में अनेकविध विषयों का समावेश था जैसे आर्यसमाज का उद्देश्य, संगठन की रूपरेखा, सदस्य कौन हो सकते हैं, साप्ताहिक अधिवेशन की कार्य प्रणाली, समाचार पत्र का प्रकाशन व आर्य विद्यालय की आवश्यकता, नैतिक कर्त्तव्य, बालक-बालिकाओं के लिए अलग-अलग विद्यालय खोलने की आवश्यकता, आर्य विद्यालय में पाठ्यक्रम, शुद्धि उपदेशक की व्यवस्था, न्यायोचित कार्य करने का व्यवहार, लोकतन्त्रात्मक पद्धति आदि।

डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार ने इस संदर्भ में कहा है कि इन नियमों में जहाँ आर्यसमाज के संगठन की रूपरेखा दी गई है, वहाँ साथ ही उन सिद्धांतों व मन्तव्यों का भी समावेश किया गया है जिनको मानना और जिनके अनुसार आचरण करना आर्यों व आर्यसमाज के सदस्यों के लिए आवश्यक है। आर्यसमाज का जो संगठन स्वामीजी की कल्पना में था, उसमें दो प्रकार के समाजों को रखा गया था, स्थानीय आर्यसमाजें और प्रादेशिक केन्द्रीय संगठन।[२५२] आर्यसमाज के संगठन को एक अलग अध्याय में आगे दर्शाया गया है। सत्यकेतु विद्याशंकर ने इन नियमों में स्वामी दयानन्द के ध्येय को, अभिप्राय सहित विवरण दिया है।[२५३]

इस प्रकार आर्यसमाज की जो नियमावली स्वामी दयानन्द ने बनायी थी, वह पूर्णतया लोकतन्त्रवाद के अनुकूल है। उसके अनुसार प्रधान और मन्त्री सदृश पदाधिकारी की नियुक्ति सभासदों द्वारा की जाती है। समाज में किसी को भी गुरु की स्थिति प्राप्त नहीं थी।[२५४] इसके साथ ही स्वामी दयानन्द ने आर्यसमाज नामक जो संगठन बनाया था उसके नाम से आपत्ति नहीं हो सकता है क्योंकि आर्य और समाज की व्याख्या से स्पष्ट है कि आर्य का अभिप्राय- श्रेष्ठ, कुलीन और सदाचारी मनुष्य, समाज- मनुष्यों के समूह और सभा।[२५५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


इस नामकरण व अभिप्राय के आधार पर किसी को आर्यसमाज का सदस्य होने में सन्देह नहीं हो सकता है। शेक्सपीयर ने भी कहा है कि ''देअर इन मच नेम''[२५६] अर्थात् आर्यसमाज नाम रखकर स्वामी दयानन्द ने सार्वभौम शक्तिशाली संगठन की कल्पना कर ली थी। इस प्रकार आर्य शब्द किसी नस्ल या जाति का बोधक नहीं है और न ही किसी देश विशेष के व्यक्तियों के लिए ही इसका प्रयोग होता है। किसी भी देश में, किसी भी वर्ग में स्त्री-पुरुष आर्य हो सकते हैं।

''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' आर्यसमाज का उद्देश्य था, इसका अर्थ है सारे संसार को आर्य बनाओ। इस महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वामी दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना की।[२५७] यह ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' वेदघोष है[२५८] जिसे आर्यसमाज ने अपने संगठन का आधार बिन्दु बनाया। इस प्रकार आर्यसमाज का उद्देश्य सबका, मनुष्य मात्र का, सम्पूर्ण संसार का हित-सुख एवं कल्याण सम्पादित करना था।[२५९]

बम्बई आर्यसमाज की स्थापना के बाद २४ जून १८७७ ई. में, लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना हुई।[२६०] स्थापना के समय नए नियम बनाए गए थे, जो संख्या में दस हैं, जो आज तक सभी आर्यसमाजों के लिए मान्य हैं।[२६१] ये नियम निम्नलिखित हैं-

१- सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२- ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना करने योग्य है।

३- वेद सब सत्य विधाओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४- सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५- सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करना चाहिए।

६- संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७- सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

८- अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९- प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०- सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।[२६२]

इन दस नियमों की व्याख्या को रघुनाथ प्रसाद ठाकुर ने एक छोटी पुस्तक 'आर्यसमाज के दस नियमों की व्याख्या' में पूर्ण रूप से स्पष्ट किया है। इन नियमों को देखने से ज्ञात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



होता है कि- (१) ईश्वर एक है। (२) वेद ईश्वर का ज्ञान है इसलिए आर्यों को वेदपाठ अवश्य करना चाहिए। (३) यदि कभी मालूम हो जाए कि जो बात हम मानते या करते हैं वह असत्य है तो उसे छोड़ देना चाहिए, पक्षपात न करना चाहिए। (४) समाज की भलाई के लिए हर एक को कोशिश करना चाहिए।[२६३]

इन १० नियमों में केवल प्रथम तीन ऐसे थे जिनमें वेद और उनके प्रति आस्था आवश्यक थी। बाकी सातों नियम इतने उदार और सर्वग्राही थे कि जिन्हें किसी भी-धर्म, जाति और देश के व्यक्ति नि:संकोच स्वीकार कर सकते हैं।[२६४] इस प्रकार दस नियमों में तीन का सम्बन्ध सिद्धान्तों के साथ है, शेष सात नियम वृत्ति व भावना के परिचायक हैं।[२६५] इसके अतिरिक्त आर्यसमाज के सिद्धान्तों-ईश्वर-विषयक, जीव-विषयक, प्रकृति-विषयक, वेद-शास्त्र, मनुष्य-समाज के विषय में, यज्ञ, संस्कार, विवाह आदि को एक अलग परिशिष्ट-६ में दिया गया है।

इन नियमों और सिद्धान्तों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि आर्यसमाज एक वर्ग, एक देश या काल विशेष तक सीमित नहीं बल्कि यह सार्वदेशिक है,[२६६] सशक्त सार्वभौम जन आन्दोलन है।[२६७] भारत में यह सामाजिक धार्मिक सांस्कृतिक आन्दोलन उन्नीसवीं शताब्दी का अन्तिम दशक था।[२६८] यह सामाजिक धार्मिक सुधार आन्दोलनों में महत्त्वपूर्ण आन्दोलन था। इसका झुकाव राष्ट्रीयता और सामाजिक धार्मिक पुनर्निर्माण की ओर था।[२६९] इस आन्दोलन के पूर्व ब्रह्मसमाज आन्दोलन बंगाल में सामाजिक धार्मिक क्षेत्रों में सुधार कार्य कर रहा था और इस समय पुनर्जागरण जोरों पर था। ब्रह्मसमाज आन्दोलन यूरोपीय संस्कृति, ईसाई धर्म से अत्यधिक प्रभावित था। इसके कारण ही इस आन्दोलन का प्रभाव क्षेत्र सीमित रहा।[२७०] यह आन्दोलन हिन्दुत्व के समग्र रूप का जैसे पुनर्जन्म, अवतारवाद, तीर्थ, मन्दिर और मूर्तिपूजा आदि का समर्थन करने की हिम्मत नहीं कर सका।[२७१]

ब्रह्मसमाज की ही भाँति आर्यसमाज धार्मिक क्षेत्रों में हिन्दुत्व के समग्र भाग का समर्थन नहीं कर सका, लेकिन यह आन्दोलन पाश्चात्य संस्कृति से प्रेरणा न लेकर आर्यों के अतीतकालीन गौरव से प्रेरणा लिया था जिसका आधार बिन्दु वेद था। यद्यपि ब्रह्मसमाज की भाँति यह भी प्रधानत: एक सामाजिक तथा धार्मिक आन्दोलन था जो हिन्दू धर्म से सम्बन्धित था, किन्तु आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज और प्रार्थनासमाज की तुलना में अधिक राष्ट्रवादी और विदेशी धर्मों के प्रति अधिक आक्रमणशीलता का रूख रंखने वाला समाज था जिसे क्रान्तिकारी समाज कहा जा सकता है।[२७२]

धर्म में अडिग निष्ठा रखने के कारण, यह विदेशी धर्मों अर्थात् इस्लाम और ईसाई धर्म से समझौता करने को तैयार नहीं था।[२७३] इस आन्दोलन का मूल उद्देश्य दोहरा था-
१. हिन्दू धर्म को इस्लाम और ईसाई धर्म के आक्रमण से बचाना, विशेषत: पहले से, और
२. वैदिक काल के मूल हिन्दू धर्म को पुनर्जीवित करके पौराणिक युग के विकृत हिन्दू धर्म में सुधार करना।[२७४]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


डॉ. धनपति पाण्डेय ने कहा है कि यह आर्यसमाज उस व्यक्ति द्वारा स्थापित किया गया था जो पाश्चात्य शिक्षा एवं अंग्रेजी से प्रभावित नहीं था बल्कि वह संस्कृत का विद्वान् एवं भारतीय पारम्परिकता से सम्बन्धित था।[२७५] स्वामी दयानन्द के व्यक्तित्व के सन्दर्भ में साप्ताहिक आर्यमर्यादा के एक लेख से उद्धृत अंश प्रस्तुत है-स्वामी दयानन्द गुणों के खान थे, वह समाज सुधारक, राजनीतिक, परोपकारी, दयालु, ब्रह्मचारी, तपस्वी एवं ईश्वर-भक्त थे, उनमें सभी गुण होने के कारण ही उन्हें गुणों का खान कहा गया गया।[२७६] उन्होंने भारत की खोई आत्मा को ढूँढ़ लिया और उसे राष्ट्रीय जीवन की प्रमुख शक्ति बना दिया और यूरोपियन विचारों में पागल बनी भारतीय जनता को अतीत का गौरव दिखाकर और हिन्दू धर्म को सर्वोत्तम बताकर उनमें अपूर्व आत्मविश्वास भर दिया।[२७७] दयानन्द के व्यक्तित्व में दुर्लभ प्रतिभा का समुच्चय था-वे महान् चिन्तक, प्रतिक्रियावादी और कुशल प्रतिभायुक्त नेतृत्वकर्ता थे-वह इलियड अथवा गीता के प्रमुख नायक के समान थे। उनमें हरकुलिज की सी शक्ति थी।[२७८] वस्तुत: शंकराचार्य के बाद वैदिकधर्म का प्रचारक एवं पुन:जीवितकर्ता दयानन्द सरस्वती ही थे।[२७९] स्वामी दयानन्द का व्यक्तित्व के संदर्भ में परिशिष्ट-७ देखा जा सकता है।

इस प्रकार स्वामी दयानन्द के महान् व्यक्तित्व के फलस्वरूप आर्यसमाज की स्थापना और उसके निर्मित सार्वभौम शक्तिशाली नियम व अटल विश्वास के कारण ही आर्यसमाज का प्रभाव "कुछ ही समय में, पंजाब, राजस्थान, बिहार और उत्तर प्रदेश में" कायम हो गया। इसका प्रभाव अन्य प्रदेशों की तुलना में उत्तर भारत पर अधिक पड़ा।[२८०] रामधारी सिंह 'दिनकर' ने कहा कि सच पूछिए तो उत्तर भारत में हिन्दुओं को जगाकर उन्हें प्रगतिशील करने का सारा श्रेय आर्यसमाज को ही है।[२८१]

पूर्व में आर्यसमाज के दोहरे उद्देश्य का उल्लेख किया जा चुका है जिसमें कहा गया है कि हिन्दू धर्म को इस्लाम और ईसाइयत के आक्रमणों से बचाना और वैदिककाल के मूल हिन्दू धर्म को पुनर्जीवित करना। पहले उद्देश्य की पूर्ति के लिए "समाज" ने शुद्धि (शुद्ध करने का वह संस्कार जिससे अहिन्दुओं को हिन्दू बनाया जाता था या उन हिन्दुओं को, जो पहले मुसलमान या ईसाई बन चुके थे, पुन: हिन्दू धर्म में लाया जाता था) और संगठन (आत्मरक्षा की ऐसी व्यवस्था जिसमें शत्रु से न केवल बचाव के लिए लड़ा जाता था बल्कि उस पर; उसके गढ़ में, आक्रमण किया जाता था कि दोहरी आक्रमण नीति के कारण ही आर्यसमाज को "हिन्दू धर्म के आक्रामक गिरजाघर" के नाम से सम्बोधित किया गया।[२८२] दूसरे उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक नवीन शिक्षा प्रणाली को आवश्यक समझा गया। आर्यसमाज के विद्वान् यह जानते थे कि वैदिक परम्पराओं को केवल भाषाओं और प्रचार से ही पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता बल्कि उसके लिए एक अधिक सकारात्मक योजना की आवश्यकता थी।[२८३] इसी कारण आर्यसमाज ने नवीन शिक्षा प्रणाली को जन्म दिया। जो बाद में डी.ए.वी. व गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के रूप में जन्म लिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इस प्रकार धार्मिक क्षेत्रों में आर्यसमाज आन्दोलन ने ब्रह्मसमाज आन्दोलन की भाँति ही कार्य किया। इस संदर्भ में राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने कहा है कि ब्रह्मसमाजियों का संशोधित हिन्दुत्व ईसाइयत का भारतीय संस्करण हो गया था। उसी प्रकार आर्यसमाज भी प्रचलित हिन्दुत्व से ईषत् पृथक् दीखता था।[२८४] यही कारण हुआ कि यद्यपि दयानन्द और राममोहन राय ने हिन्दू विचारों की दिशा में महान् क्रांति उपस्थित की, किन्तु हिन्दू जनता का अत्यन्त विशाल भाग उनकी ओर उत्साह से नहीं दौड़ा।[२८५]

लेकिन आर्यसमाज द्वारा समाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में किए गए कार्य प्रशंसनीय और भारत के नवजागरण आन्दोलनों में प्रमुख हैं। वैदिक तत्त्वज्ञान और धर्म का प्रचारक आर्यपत्र में इसका उल्लेख है कि आर्यसमाज के समाज सुधार सम्बन्धी कार्यों और शिक्षा सेवा विषयक कार्यों का अभिनन्दन करते हुए भी बहुत से सज्जन इस बात को बिल्कुल पसन्द नहीं करते कि मूर्तिपूजा का खण्डन किया जाए।[२८६]

पुस्तक में आर्यसमाज द्वारा विशेषकर उत्तर प्रदेश में किए गए समाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में योगदान का विवरण देने का प्रयास किया गया है। आगे के अध्यायों में दयानन्द के विचारों एवं कार्यों को उनके देहावसान (सन् १८८३) तक और सामाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में किए गए उनके प्रमुख कार्यों का उल्लेख करते हुए सन्-१९४७ तक, आर्यसमाज द्वारा किए गए विविध क्षेत्रों में अभूतपूर्व कार्यों का विवरण दिया गया है।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


## सन्दर्भ


१. शम्भूशरण दीक्षित, राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. ५७
२. जे. पी. मिश्र, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ. ४५४
३. भवानीलाल भारतीय, नवजागरण के पुरोधा - दयानन्द सरस्वती, कवर पृष्ठ
४. बी. एन. लूनिया, भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास, पृ. ४१०
५. वही, पृ. ४३२
६. सत्यकेतु विद्यालंकार, आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. १५६
७. इन्द्र विद्यावाचस्पति, आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. ५८
८. कल्याण, हिन्दू संस्कृति अंक, २४वें वर्ष का विशेषांक, पृ. १५९, इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ५७-५८
९. कल्याण, पूर्वोद्धृत, पृ. १४७
१०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १४८
११. वही
१२. गोपालकृष्ण अग्रवाल, भारतीय सामाजिक संस्थाएँ, पृ. १
१३. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १०
१४. वही
१५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, सातवाँ भाग, पृ. ३२
१६. लाला लाजपत राय, दि आर्यसमाज, पृ. २५२
१७. विपिनचन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ. ४८
१८. वही
१९. धनपति पाण्डेय, आधुनिक भारत का इतिहास; खण्ड २ (सन् १८५७ से १९८० तक), पृ. ८
२०. जे. पी. मिश्र, पूर्वोद्धृत, पृ. ४०६-४०७
२१. एम. एस. जैन, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ. ११७
२२. रामधारी सिंह 'दिनकर', संस्कृति के चार अध्याय, पृ. ५२३
२३. वही
२४. सीताराम शर्मा, उन्नीसवीं सदी में भारतीय धार्मिक तथा सामाजिक जागरण, पृ. ७०
२५. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५२३
२६. वही, पृ. ५२४
२७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १५३
२८. वही, पृ. ११९
२९. वही, पृ. ११८
३०. कल्याण, पूर्वोद्धृत, पृ. १६१
३१. सुधाकुमार, भारतीय संस्कृति की झलक, पृ. २४९
३२. रघुबीर शास्त्री, ईसाईयों की प्रचार प्रणाली, पृ. १-१६
३३. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५२५
३४. वही, पृ. ५२४
३५. वही, पृ. ५२५
३६. धनपति पाण्डेय, दि आर्य समाज एण्ड इण्डियन नेशनलिज्म, पृ. ७३
३७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १५९


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2




३८. पुखराज जैन, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन तथा भारतीय संविधान, पृ.१०-११
३९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१५९
४०. जे. पी. मिश्र, पूर्वोद्धृत, पृ. ४३४
४१. बी. एन. लूनिया, पूर्वोद्धृत, पृ. ३५५
४२. वही, पृ. ३५५
४३. हरविलास शारदा, लाईफ ऑफ दयानन्द सरस्वती, पृ. १
४४. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, महर्षि दयानन्द सरस्वती - अपना जीवन चरित, पृ. २,३
४५. आर्यसेवक, अप्रैल १९७५, आर्यसमाज स्थापना शताब्दी विशेषांक, पृ. ७
४६. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, दयानन्द चरित, अनु० घासीराम, कलकत्ता, १९३२, पृ. ५७
४७. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. १
४८. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. ३
४९. आदित्य पाल सिंह एवं वेदव्रत, पूर्वोद्धृत, पृ. ४
५०. 'दि चालुक्य रूलर्स आफ अन्हिलवारा', के. एम. मुंशी, ग्लोरी दैट वाज गुर्जरदेश, भाग १,पृ. २१४-१५; आर्य समाज मूभमेंट इन इण्डिया, गुलशन स्वरूप सक्सेना, पृ. ३५
५१. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. १
५२. वही, पृ. २
५३. दयानन्द सरस्वती, पंचमहायज्ञविधि, भाषा भाष्यकार, स्वामी वेदानन्द सरस्वती, पृ. १
५४. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. १;देखें-दयानन्द के वंशज की नामावली, परिशिष्ट-१
५५. दि थियोसॉफिस्ट, अक्टूबर १८७९, पृ. १०
५६. आर्यसन्देश, ९ मई १९९३, पृ. २
५७. बाबा अर्जुन सिंह, स्वामी दयानन्द सरस्वती - फाउण्डर आफ आर्यसमाज, पृ. २
५८. वही, पृ. १-२
५९. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. २
६०. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १४
६१. वही। आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत, पूर्वोद्धृत, पृ. ४
६२. वही
६३. बावा अर्जुन सिंह, पूर्वोद्धृत, पृ. २
६४. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. २
६५. विश्वप्रकाश, लाईफ एण्ड टीचिंग ऑफ स्वामी दयानन्द, पृ. ५; देखें- भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १४
६६. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. ६-७
६७. आर्यसन्देश, रविवार ७ अप्रैल, १९९६, पृ. १७
६८. आर्यपत्र, फरवरी १९३३, पृ. ४४२
६९. विश्वप्रकाश, पूर्वोद्धृत, पृ. ८; देखें- लेखराम, महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित, अनु० रघुनन्दन सिंह, पृ. २२
७०. दि थियोसोफिस्ट, पूर्वोद्धृत, अक्टूबर, १८७९ पृ. ९
७१. लेखराम, पूर्वोद्धृत, पृ. २२ दि थियोसोफिस्ट, अक्टूबर १८७९, पृ. १०
७२. वही
७३. आर्यसन्देश, ९ मई १९९३, पृ. २


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


७४. बी. एल. ग्रोवर एवं यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास - एक नवीन मूल्यांकन, पृ. ३७२
७५. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत, पूर्वोद्धृत, पृ. १०
७६. आर्यसन्देश, ९ मई १९९३, पृ. २
७७. बाबा अर्जुन सिंह, पूर्वोद्धृत, पृ. २
७८. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. २
७९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १९२
८०. ऋषीकेशोपाध्याय, श्री काशीविश्वनाथ पंचांगम्, ऋषीकेश पंचांग, सन् १९९४-९५, श्री संवत् २०५१, शक संवत् १९१६
८१. दि थियोसोफिस्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. १० भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १५
८२. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. १२
८३. आर्यमर्यादा, शिवरात्रि विशेषांक, ८ मार्च १९९२, पृ. १३
८४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १७१
८५. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. ५
८६. वही, पृ. ९
८७. आर्यमर्यादा, ८ मार्च १९९२, पृ. ४३
८८. आर्यपत्र, फरवरी १९३३, पृ. ४४९
८९. आर्यमर्यादा, ८ मार्च १९९२, पृ. ४३
९०. आर्यपत्र, फरवरी १९३३, पृ. ४४८
९१. आर्यसन्देश, ७ अप्रैल १९९६, पृ. १८
९२. आर्यमर्यादा, ८ मार्च १९९२, पृ. २०
९३. आर्यपत्र, पूर्वोद्धृत, पृ. ४७७
९४. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. २१
९५. लेखराम, पूर्वोद्धृत, पृ. ४८
९६. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. २२;
इन्द्र विद्या वाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ४४
९७. आर्यमर्यादा, १ तथा ८ मार्च, १९९२, पृ. ४५
९८. आर्यसन्देश, ७ अप्रैल, १९९६, पृ. १८
९९. पंचमहायज्ञविधि महर्षि दयानन्द सरस्वती, पूर्वोद्धृत, पृ. ४
१००. आर्यसन्देश, रविवार ७ अप्रैल १९९६, पृ. १८
१०१. आत्मकथा दयानन्द सरस्वती, महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी संस्करण, मूल से पृ. ३; परिशिष्ट-२, स्वहस्तलिखित आत्मकथा।
१०२. लेखराम, पूर्वोद्धृत, पृ. २६
१०३. वही
१०४. वही
१०५. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. २९;
हर विलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ८;
दि थियोसाफिस्ट, अक्टूबर १८७९, पृ. ११
१०६. महेशप्रसाद, महर्षि दयानन्द कब और कहाँ, पृ. १
१०७. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. २५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2




१०८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १९४
१०९. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. २१
११०. दि थियोसॉफिस्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. ११
१११. लेखराम, पूर्वोद्धृत, पृ. २७; आदित्य पाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. ३३
११२. स्वहस्तलिखित आत्मकथा, मूल से पृ. ४
११३. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ९
११४. स्वहस्तलिखित आत्मकथा, मूल से पृ. ४
११५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १९४
११६. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, पूर्वोद्धृत, पृ. ८१, स्वहस्तलिखित आत्मकथा, मूल से पृ. ५
११७. वही
११८. वही
११९. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. १०
१२०. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, पूर्वोद्धृत, पृ. ८१
१२१. के. सी. यादव, आटोबायोग्राफी ऑफ स्वामी दयानन्द सरस्वती, पृ. २४
१२२. स्वहस्तलिखित आत्मकथा, मूल से पृ. ५
१२३. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. ६९
१२४. लेखराम, पूर्वोद्धृत, पृ. ३०
१२५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १७१
१२६. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. ८७, ८८, ९२
१२७. वही, पृ. ७०-८४ का मुख्य अंश
१२८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १७१
१२९. वही, पृ. १७१-१७२
१३०. वासुदेव वर्मा, अठारह सौ सत्तावन और स्वामी दयानन्द, पृ. २२
१३१. रामविलास शर्मा, स्वाधीनता संग्राम बदलते परिप्रेक्ष्य, पृ. ७७
१३२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १७२
१३३. गंगाप्रसाद उपाध्याय, सोशल रिकन्सट्रक्शन बाई बुद्ध एण्ड दयानन्द, पृ. ९६
१३४. लेखराम, पूर्वोद्धृत, पृ. ४५
१३५. रामविलास शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ. ८५
१३६. वही
१३७. आर्यमर्यादा, ४ अक्टूबर १९३८, पृ. ६
१३८. शिवदयालु, इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश, प्रथम भाग, पृ. ६
१३९. आर्यसन्देश, रविवार, ९ मई १९९३, पृ. २
१४०. यदुवंश सहाय, महर्षि दयानन्द, पृ. ७४-७५
१४१. सार्वदेशिक, श्रावणी अंक, २० अगस्त १९६७, पृ. ७९
१४२. दयानन्द सरस्वती, पूर्वोद्धृत, पृ. ७
१४३. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. ३१०
१४४. जे. पी. मिश्र, पूर्वोद्धृत, पृ. ४५५
१४५. सीताराम शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ. ६८
१४६. जे. पी. मिश्र, पूर्वोद्धृत, पृ. ४३६
१४७. पुखराज जैन, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन तथा भारतीय संविधान, पृ. १२


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१४८. बी. डी. महाजन, मॉडर्न इण्डियन हिस्ट्री, पृ. ६४९
१४९. आर्यसन्देश, ७ अप्रैल १९९६, पृ. ९
१५०. आर्यपत्र, पूर्वोद्धृत, पृ. ४७८
१५१. वही, दिसम्बर १९३३, पृ. २१२
१५२. अखण्ड ज्योति, जून १९९२, पृ. ४५
१५३. बलदेव उपाध्याय, भारतीय धर्म और दर्शन, पृ. ३८
१५४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २००
१५५. घासीराम, पूर्वोद्धृत, पृ. ८९
१५६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २०१
१५७. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ४९
१५८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २०३
१५९. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १
१६०. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ४९
१६१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २०४
१६२. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ६
१६३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २१०
१६४. वही
१६५. वही
१६६. काशीशास्त्रार्थः, मुखपृष्ठ से
१६७. वही, भूमिका, पृ. १
१६८. आज, ६ अगस्त १९९५, वंशीधर त्रिपाठी का लेख, पृ. ९
१६९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २११
१७०. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५३६
१७१. वही, पृ. ५४१
१७२. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ५०५
१७३. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५०६
१७४. वही, पृ. ५४१
१७५. सुधाकुमार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५३
१७६. वही,
१७७. वही, पृ. २५१
१७८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १६१
१७९. पुखराज जैन, पूर्वोद्धृत, पृ. ११
१८०. गोपालकृष्ण अग्रवाल, पूर्वोद्धृत, पृ. ३११-३१२
१८१. सुधाकुमार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५२
१८२. वही, पृ. २५२
१८३. पुखराज जैन, पूर्वोद्धृत, पृ. ११
१८४. बी. एल. ग्रोवर एवं यशपाल, पूर्वोद्धृत, पृ. ३७०
१८५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १६२
१८६. पुखराज जैन, पूर्वोद्धृत, पृ. १२
१८७. वही
१८८. बी. एल. ग्रोवर एवं यशपाल, पूर्वोद्धृत, पृ. ३७०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१८९. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५४३
१९०. वही, पृ. ५४२
१९१. वही, पृ. ५४३
१९२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम-भाग, पृ. १६२
१९३. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५४३
१९४. वही
१९५. वही
१९६. बी. एल. ग्रोवर एवं यशपाल, पूर्वोद्धृत, पृ. ३७१
१९७. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ५११
१९८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १६३
१९९. वही
२००. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५४३
२०१. वही, पृ. ५४६
२०२. वही
२०३. वही, पृ. ५७०
२०४. सुधाकुमार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५५
२०५. बी. एल. ग्रोवर एवं यशपाल, पूर्वोद्धृत, पृ. ३७१
२०६. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. २०; देखें- बी.एल. ग्रोवर एवं यशपाल, पूर्वोद्धृत, पृ. ३७२
२०७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २१४
२०८. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ८९
२०९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २१४
२१०. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १९७
२११. वही, पृ.१८१; सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २२२
२१२. दीनानाथ सिद्धान्तलंकार, आर्यसमाज के आदर्श पुरुष, प्रथम भाग, पृ.३२ सिद्धन्तालंकार
२१३. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १८१
२१४. वही, पृ. १९७
२१५. आर्यसन्देश, ७ अप्रैल १९९६, पृ. ९
२१६. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. १८१
२१७. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. ३११
२१८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २२२
२१९. दीनानाथ सिद्धान्तालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३२
२२०. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५५७
२२१. दीनानाथ सिद्धान्तालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३३
२२२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २२६
२२३. वही, पृ. २२७
२२४. वही
२२५. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ५८; देखें- जे. टी. एफ. जोर्डन्स, दयानन्द सरस्वती हिज लाईफ एण्ड आइडियाज, पृ. १२६ (२०अक्टूबर १८७४ ई. स्वामी दयानन्द बम्बई पहुँचे और यहाँ १८ माह व्यतीत किए)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२२६. कल्याण, हिन्दू संस्कृति अंक, चौबीसवें वर्ष का विशेषांक, पृ. १७४
२२७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३२
२२८. वही
२२९. ११वें सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन अलवर (राजस्थान) की झांकियाँ, पृ. ३, आयोजन १९ मई से २१ मई, १९७२
२३०. टंकारा पत्रिका, नवम्बर १९६४, पृ. ३
२३१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३३
२३२. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. १३६
२३३. लेखराम, पूर्वोद्धृत, पृ. २५५
२३४. आर्यसमाज क्या है? सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, १९६४
२३५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ११२
२३६. आर्यसमाज स्मृतिग्रन्थ, स्थापना शताब्दी १८७५-१९७५, पृ. २३
२३७. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ३१३
२३८. आर्यसमाज स्मृतिग्रन्थ, स्थापना शताब्दी १८७६-१९७५, पृ. २४
२३९. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत,, प्रथम भाग, पृ. ३१३
२४०. आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक, पूर्वोद्धृत, पृ. ५०९; देखें- जे. टी. एफ. जोर्डन्स, पूर्वोद्धृत, पृ. १३४
२४१. हरविलास शारदा पूर्वोद्धृत, पृ. १३०-३१
२४२. वही, पृ. १३१
२४३. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३१२
२४४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २४१
२४५. वही
२४६. आर्यसमाज स्मृतिग्रन्थ, स्थापना शताब्दी, १८७६-१९७५, पृ. २३
२४७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २४४
२४८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३३
२४९. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. २४५
२५०. वही, पृ. २६६
२५१. आर्यसमाज स्मृतिग्रन्थ, स्थापना शताब्दी १८७५-१९७५, पृ. २२
२५२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २४५
२५३. वही, पृ. २४५-२५१ तक में आर्यसमाज नियमों के अभिप्राय को स्पष्ट किया गया है।
२५४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २५०
२५५. महात्मा नारायण स्वामी, महर्षि दयानन्द की विशेषताएँ, पृ. ९
२५६. सार्वदेशिक पत्रिका, अगस्त १९२३, पृ. ६७७
२५७. आर्यकुमार, वर्ष ३१, १९५३, अंक ६, पृ. ५
२५८. कल्याण, हिन्दू संस्कृति अंक, चौबीसवें वर्ष का विशेषांक, पृ. १६०
२५९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. १७
२६०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २९८
२६१. वही
२६२. उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा, लखनऊ कार्यालय में उपलब्ध। आर्यसमाज के अधिकांशतः पत्र पत्रिकाओं व पुस्तकों में अंकित।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२६३. आर्यसमाज क्या है? सम्पादक-गंगाप्रसाद उपाध्याय, पृ. ४ एवं ५
२६४. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. १०४
२६५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २९९
२६६. सार्वदेशिक, ऋषिबोध विशेषांक, २४ फरवरी १९७६, पृ. ५
२६७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ३
२६८. धनपति पाण्डेय, दि आर्यसमाज एण्ड इण्डियन नेशनलिज्म, भूमिका से पृ. ९
२६९. वही, पृ. ७२
२७०. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५४५
२७१. वही, पृ.५४६
२७२. धनपति पाण्डेय, आधुनिक भारत का इतिहास, खण्ड २, पृ. १९६
२७३. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ५७
२७४. वही, पृ. ५८
२७५. धनपति पाण्डेय, पूर्वोद्धृत, भूमिका से पृ. ९
२७६. आर्यमर्यादा, दिनांक १ तथा ८ मार्च १९९२, पृ. १३
२७७. पुखराज जैन, पूर्वोद्धृत, पृ. १२
२७८. हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. १०
२७९. आर्यमर्यादा, ९ अक्टूबर १९८३, पृ. ६
२८०. सुधाकुमार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६०
२८१. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५६०-६१
२८२. शम्भूशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ५८
२८३. वही
२८४. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५६५
२८५. वही, पृ. ५७०
२८६. आर्यपत्र, फरवरी १९३३, पृ. ४४९

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट-१

## स्वामी दयानन्द सरस्वती के परिवार की नामावली

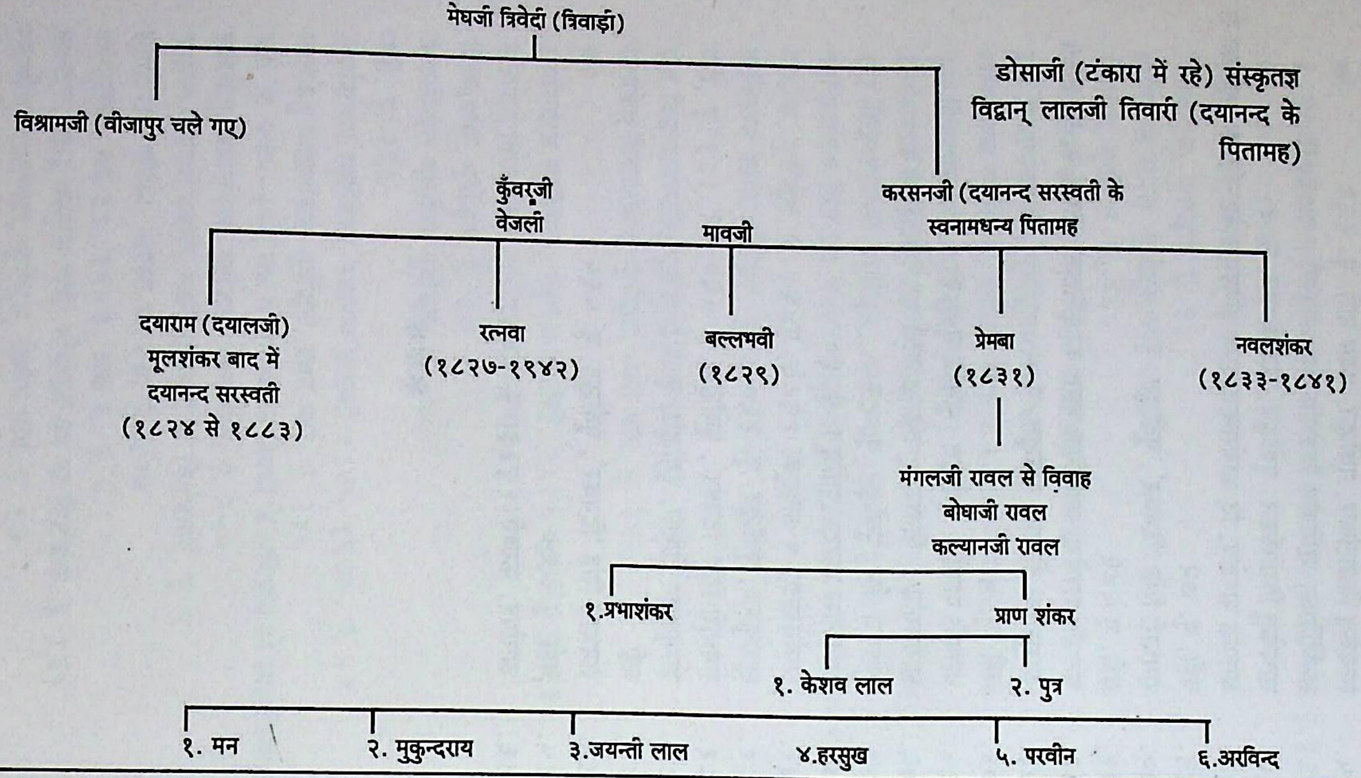


१. डा. भवानीलाल भारती- नवजागरण के पुरोधा दयानन्द सरस्वती, पृ.३

२. गुलशन स्वरूप सक्सेना, आर्यसमाज मूभमेण्ट इन इण्डिया (१८७५-१९४७), परिशिष्ट-१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट - २

"१"

मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती संक्षेपसे अपना जन्म चरित्र लिखता हूँ।

संवत १८८१ के वर्षमें मेरा जन्म दक्षिण गुजरात प्रान्त देश काठियावाड का मजोकठा देश मोर्वीका राज्य औदीच्य ब्राह्मणके घरमे हुआ था, मैंने पांचवे वर्षमें देवनागरी अक्षर पढ़नेका आरम्भ किया था। और मुझको कुलकी रीतिकी शिक्षाभी माता पिता आदि किया करते थे, बहुत से धर्म शास्त्रादिके श्लोक और सूत्रादिकभी कण्ठस्थ कराया करते थे। फिर ८ आठवें वर्षमे मेरा यज्ञोपवीत कराके गायत्री संध्या और उसकी क्रियाभी सिखादी गई थी। और मुझको यजुर्वेदकी संहिताका आरम्भ कराके उसमेंसे प्रथम रुद्राध्याय पढ़ाया गया था, और मेरे कुलमे शैवमत था उसीकी शिक्षाभी किया करते थे। और पिता आदि लोग यहभी कहा करते थे कि पार्थिव पूजन अर्थात मट्टीका लिङ्ग बनाके तूं पूजाकर। और माता मनेकिया करती थी कि यह प्रातःकाल भोजन कर लेता है इससे पूजा नहीं हो सकेगी पिताजी हठ किया करते थे कि पूजा अवश्य करनी चाहिये क्योंकि कुलकी रीति है। तथा कुछ २ व्याकरणका विषय और वेदोंका पाठमात्र भी मुझको पढ़ाया करते थे। पिताजी अपने साथ मुझको जहां तहां मन्दिर और मेलमिलापोंमे लेजाया करते और यहभी कहा करते थे कि शिवकी उपासना सबसे श्रेष्ठ है। इसप्रकार १४ चौदहवें वर्षकी अवस्थाके आरम्भ तक यजुर्वेदकी संहिता संपूर्ण और कुछ अन्य वेदोंकाभी पाठ पूरा होगया था। और शब्दरूपावली आदि छोटे २ व्याकरणके ग्रन्थ भी पूरे होगये थे। पिताजी जहां २ शिवपुराणआदिकी कथा होती थी वहां २ मुझको पास बैठाकर सुनाया करते थे। और घरमें भिक्षाकी जीविका नहीं थी किन्तु जिमीदारी और लेनदेनसे जीविकाके प्रबन्ध करके सबकाम चलाते थे। और मेरे पिताने माताके मनेकरनेपरभी पार्थिव पूजनका आरम्भ कराया था, जब शिवरात्रि आई तब १३ त्रयोदशीकेदिन कथाका माहात्म्य सुनाके शिवरात्रिके व्रतकरनेका निश्चय कर दिया। परन्तु माताने मनेभी किया कि इससे व्रत नहीं रहाजायगा। तथापि पिताजीने व्रतका आरम्भ करादिया। और जब १४ चतुर्दशीकी सांझ हुई तब बड़े २ बस्तीके रईस अपने पुत्रोंके सहित मन्दिरोंमें जागरण करनेको गये वहां मैं भी अपने पिताके साथ गया और प्रथम प्रहरकी पूजाभी करी दूसरे प्रहरकी पूजा करके पूजारिलोग बाहर निकलके सोगये। मैंने प्रथमसे सुन रक्खा था कि सोनेसे शिवरात्रिका फल नहीं होता है। इसलिये अपनी आंखोंमें जल के छींटे मारके जागतारहा। और पिताभी सोगये तब मुझको शंका हुई कि जिसकी मैंने कथा सुनी थी वही

इस सभा के काम में विघ्न हों क्योंकि मुझको उनकी सेवा करनी उनको साथ पढ़ने में धन और धनादि का व्यय करना चाहता

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


75

॥२॥

यह महादेव है वा अन्य कोई क्योंकि वह तो मनुष्य के माफक एक देवता है वह बै
ल पर चढ़ता, चलता फिरता खाता पीता त्रिशूल हाथमें रखता डमरू बजाता वर और
शाप देता और कैलाश का मालिक है इत्यादि प्रकार का महादेव कथामें सुना था, तब
पिताजी को जगाके मैंने पूछा कि यह कथा का महादेव है वा कोई दूसरा तब पिताने कहा कि
क्यों पूछता है। तब मैंने कहा कि कथा का महादेव तो चेतन है वह अपने ऊपर चूहों को
क्यों चढ़ने देगा और इसके ऊपर तो चूहे फिरते हैं तब पिताजीने कहा कि कैलाश पर
जो महादेव रहते हैं उनकी मूर्ति बना और आवाहन करके पूजा किया करते हैं अब
कलियुगमें उस शिवका साक्षात् दर्शन नहीं होता। इसलिये पाषाणादि की मूर्त्ति बना
के उन महादेव की भावना रखकर पूजन करनेसे कैलाश का महादेव प्रसन्न होजाता
है। ऐसा सुनके मेरे मनमें भ्रम होगया कि इसमें कुछ गड़बड़ अवश्य है। और भूख
भी बहुत लग रही थी पितासे पूछा कि मैं घरको जाता हूँ। तब उन्होंने कहा कि सिपाही को
साथ लेके चला जा परन्तु भोजन कदाचित् मत करना मैंने घरमें जाकर मातासे कहा
कि मुझको भूख लगी है। माताने कुछ मिठाई आदि दिया उसको खाकर १ एक बजे पर
सोगया। पिताजी प्रातःकाल रात्रिके भोजन को सुनके बहुत गुस्से हुए कि तैने बहुत बुरा
काम किया। तब मैंने पितासे कहा कि यह कथा का महादेव नहीं है इसकी पूजा मैं क्यों
करूँ। मनमें तो श्रद्धा नहीं रही परन्तु ऊपरके मन पिताजी से कहा कि मुझको पढ़ने
से अवकाश नहीं मिलता कि मैं पूजा कर सकूं। तथा माता और चाचा आदि ने भी पिताको
समझाया इस कारण पिता भी शान्त होगये कि अच्छी बात है पढ़ने दो। फिर निघण्टु
निरुक्त और पूर्वमीमांसा आदि शास्त्रों के पढ़नेकी इच्छा करके आरम्भ करके पढ़ता
रहा और कर्मकाण्ड विषय भी पढ़ता रहा। मुझसे छोटी १ एक बहन फिर उससे
छोटा एक भाई फिर भी एक बहन और एक भाई अर्थात् दो बहन और दो भाई और
हुए थे तब तक मेरी १६ वर्ष की अवस्था हुई थी। पीछे मुझसे छोटी १४ वर्ष की जो बहन थी
उसको हैजा हुआ एक दिन रात्रिमें जिस समय पहिले नाच हो रहा था। नौकरने खबर दी कि उसको
हैजा हुआ है। तब सब जने वहांसे तत्काल आये और वैद्य आदि बुलाये औषधि भी की त
थापि चार घंटेमें उस बहनका शरीर छूट गया सब लोग रोने लगे। परन्तु मेरे हृदयमें रो
साधक्का लगा और भय हुआ कि ऐसे ही मैं भी मर जाऊंगा सोच विचारमें पड़ गया।
जितने जीव संसारमें हैं उनमेंसे एक भी न बचेगा। इससे कुछ ऐसा उपाय करना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2





चाहिये कि जिससे यह दुःख छूटे और मुक्ति हो अर्थात इसी समय से मेरे चित्त में वैरा
ग्य [illegible] की जड़ पड़ गई। परन्तु यह विचार अपने मन में ही रक्खा किसी से कुछ भी न
कहा इतने में १९ वर्ष की जब अवस्था हुई तब जो मुझसे अति प्रेम करने वाले बड़े धर्मा
त्मा विद्वान मेरे चाचा थे। उनकी मृत्यु होने से अत्यन्त वैराग्य हुआ कि संसार में कुछ भी न
हीं परन्तु यह बात माता पिता से तो नहीं कही किन्तु अपने मित्रों से कहा कि मेरा मन गृहा
श्रम करना नहीं चाहता। उन्होंने माता पिता से कहा [illegible] माता पिता ने विचारा कि इसका
विवाह शीघ्र कर देना चाहिये। जब मुझको मालूम पड़ा कि ये २० वीसवें वर्ष में ही वि
वाह कर देंगे तब मित्रों से कहा कि मेरे माता पिता को समझा दो अभी विवाह न करें।
तब उन्होंने एक वर्ष जैसे तैसे विवाह रोका तब तक २० वीसवां वर्ष पूरा हो गया।
तब मैंने पिताजी से कहा कि मुझे काशी में भेज दीजिये कि मैं व्याकरण ज्योतिष और वै
द्यक आदि ग्रन्थ पढ़ आऊं। तब माता पिता और कुटुम्ब के लोगों ने कहा कि हम काशी को
कभी न भेजेंगे जो कुछ पढ़ना हो सो यहीं पढ़ो। और अगले साल में तेरा विवाह भी हो
गा क्योंकि लड़की वाला नहीं मानता। और हमको अधिक पढ़ा के क्या करना है जितना प
ढ़ा है वही बहुत है। फिर मैंने पिता आदि से कहा कि मैं पढ़ कर आऊं तब विवाह होना ठीक है
तब माता भी विपरीत हो गई कि हम [illegible] नहीं भेजते और अभी विवाह करेंगे। तब मैंने
चाहा कि अब सामने रहना अच्छा नहीं। फिर तीन ३ कोश ग्राम में अपनी जिमींदारी
थी वहां एक अच्छा पण्डित रहता था माता पिता की आज्ञा ले के वहां जाकर उस पण्डित के पास
में पढ़ने लगा। और वहां के लोगों से भी कहा कि मैं गृहाश्रम करना नहीं चाहता। फिर मा
ता पिता ने मुझे बुला के विवाह की तैय्यारी कर दी तब तक २१ इक्कीसवां वर्ष भी पूरा हो
गया। जब मैंने निश्चित जाना कि अब विवाह किये बिना कदाचित न छोड़ेंगे। फिर गु
प्त चुप संवत १९०३ के वर्ष में घर छोड़ के संध्या के समय भाग उठा, चार कोश पर ए
क ग्राम था वहां जाकर रात्रि को ठहर कर दूसरे दिन प्रहर रात्रि से उठ के १५ कोश चला प
रन्तु प्रसिद्ध ग्राम सड़क और जानकारों के ग्रामों को छोड़ के बीच २ में नित्य चलने का
प्रारम्भ किया। तीसरे दिन मैंने किसी राज पुरुष से सुना कि फलाने का लड़का घर छो
ड़ कर चला गया था उसको खोजने के लिये सवार और पैदल आदमी यहां तक आ गये।
जो मेरे पास थोड़े से रुपैये और अंगूठी आदि रुपया था वह सब पोपों ने ठग लिया। मुझसे कहा कि तुम
पक्के वैराग्यवान तब होगे कि जब अपने पास की चीज सब पुण्य कर दो फिर उन लोगों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2




॥४॥

के कहने से मैंने जो कुछ था सब दे दिया। फिर लाला भगत की जगह जो कि सायले शहर में
है वहां बहुत साधुओं को सुनकर चला गया वहां एक ब्रह्मचारी मिला उसने मुझसे कहा कि
तुम नैष्ठिक ब्रह्मचारी हो जाओ उसने मुझ को ब्रह्मचारी की दीक्षा दी और शुद्ध चैत
न्य [illegible] मेरा नाम रखा तथा काषाय वस्त्र भी करा दिये। जब मैं वहां से अहमदा
बाद के पास कोठ गांगड़ जो कि छोटा सा राज्य है वहां आया तब मेरे गाम के पास का जा
न पहचान वाला एक वैरागी मिला उसने पूछा कि तुम यहां कहां से आये और कहां जा
या चाहते हो। तब मैंने उससे कहा कि घर से आया और कुछ देशभ्रमण किया चाहता
हूं। उसने कहा कि तुमने काषाय वस्त्र धारण करके क्या घर छोड़ दिया। मैंने कहा कि
हां मैंने घर छोड़ दिया और कार्तिकी के मेले पर सिद्धपुर को जाऊंगा। फिर मैं वहां से
चलकर सिद्धपुर में आके नीलकण्ठ महादेव की जगह में ठहरा कि जहां दण्डी स्वामी
और ब्रह्मचारी ठहर रहे थे। उनका सत्संग और जो २ कोई महात्मा वा पण्डित मेले में
सुन पड़ा उन सब के पास गया और उनसे सत्संग किया। जो मुझको कोठ गांगड़ में
वैरागी मिला था उसने मेरे पिता के पास पत्र भेजा कि तुम्हारा पुत्र ब्रह्मचारी हुआ काषा
य वस्त्र धारण किये मुझको मिला और कार्तिकी के मेले में सिद्धपुर को गया। ऐसा सुन
के सिपाहियों के सहित पिता जी सिद्धपुर में आकर मेले में खोज कर पता लगा के जहां
पण्डितों के बीच में मैं बैठा था वहां पहुंच के मुझसे बोले कि तूं हमारे कुल में कलंक लगा
ने वाला पैदा हुआ। जब मैंने पिता जी को देखा [illegible] और उठके चरण स्पर्श किया और
नमस्कार करके बोला कि आप क्रोधित मत हूजिये मैं किसी आदमी के बहकाने से च
ला आया और मैंने बहुत सा दुःख पाया अब मैं घर को आने वाला था। परन्तु अब आप आये
यह बहुत अच्छा हुआ कि [illegible] अब मैं साथ २ घर को चलूंगा। तौभी क्रोध के मारे मे
रे गेरू के रंगे वस्त्र [illegible] फाड़ के फेंक दिये और एक तुम्बे को तोड़ और वहां भी बहुत कठिन बातें कहकर बोले कि तूं
अपनी माता की हत्या किया चाहता है। मैंने कहा कि मैं अब घर को चलूंगा तौ भी मेरे साथ
सिपाही कर दिये कि क्षणमात्र भी इसको अकेला मत छोड़ो और रात्रि को भी पहरा
रखो। परन्तु मैं भागने का उपाय देख रहा था। सो जब तीसरी रात के तीन बजे के पीछे पह
रे वाला बैठा २ सो गया उसी समय मैं लघुशंका का बहाना करके भागा। आध कोश पर
एक मन्दिर के शिखर की गुफा में एक वृक्ष के सहारे से चढ़ और जल का लोटा भर के छिपकर बैठ
रहा। जब चार बजे का अम्मल हुआ तब मैंने उन्हीं सिपाहियों में से एक सिपाही मलियों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



78

॥५॥

से मुझको पूछता था सुना तब मैं और भी छिप गया ऊपर बैठा सुनता रहा वे लोग ढूंढ के
चले गये मैं उसी मन्दिर की शिखर में दिनभर रहा जब अंधेरा हुआ तब उस पर से उतर सड़क को छो
ड़ के किसी से पूछ के दो कोश पर एक ग्राम था उसमें ठहर के अहमदाबाद होता हुआ।
बड़ोदरे शहर में आकर ठहरा वहां चेतन मठ में ब्रह्मानन्द आदि ब्रह्मचारी और संन्यासियों
से वेदान्त विषय की बहुत बातें कीं। और मैं ब्रह्म हूं अर्थात् जीव ब्रह्म एक है ऐसा निश्चय
उन ब्रह्मानन्दादि ने मुझको करा दिया प्रथम वेदान्त पढ़ते समय भी कुछ २ निश्चय हो
गया था परन्तु वहां ठीक दृढ़ हो गया कि मैं ब्रह्म हूं। फिर वहीं बड़ोदे में एक बनारसी बाई वैरा
गी का स्थान सुन कर उस की में जा के एक सच्चिदानन्द परमहंस से मैं ठहर के अनेक प्र
कार की शास्त्र विषयक बातें हुईं फिर वहां सुना कि आजकल चाणोद कन्याली में बड़े २ संन्यासी
ब्रह्मचारी और विद्वान् ब्राह्मण रहते हैं। वहां जाके दीक्षित और चिदाश्रमादि स्वामी ब्रह्म
चारी और पण्डितों से अनेक विषयों पर परस्पर संभाषण हुआ। फिर एक परमानन्द प
रमहंस से वेदान्तसार आर्य्या हरिमीडे तोटक वेदान्तपरिभाषा आदि प्रकरणों का
थोड़े महिनों में विचार कर लिया। उस समय ब्रह्मचर्य्यावस्था में कभी २ अपने हाथ से
रसोई बनानी पड़ती थी इस कारण पढ़ने में विघ्न विचार के चाहा कि अब संन्यास ले लेना
अच्छा है। फिर एक दाक्षिणी पण्डित के द्वारा वहां जो दीक्षित स्वामी विद्वान् थे उनको कहलाया
कि आप उस ब्रह्मचारी को संन्यास की दीक्षा दे दीजिये। क्योंकि मैं अपना ब्रह्मचारी का ना
म भी बहुत प्रसिद्ध करना नहीं चाहता था क्योंकि घर का भय बड़ा था जो कि अब तक बना है।
तब उन्होंने कहा कि उसकी अवस्था कम है इसलिये हम नहीं देते। इसके अनन्तर डेढ़ म
हिने के पीछे दक्षिण से एक दण्डी स्वामी और एक ब्रह्मचारी आके चाणोद से कुछ कम
कोशभर मकान जो कि जंगल में था उसमें ठहरे उनको सुनकर एक दाक्षिणी वेदान्ती प
ण्डित और मैं दोनों उनके पास जाके शास्त्रविषयक संभाषण करते से मालूम हुआ कि अच्छे विद्वान् हैं।
और वे शृंगेरी मठ की ओर से आके द्वारका की ओर को जाते थे उनका नाम पूर्णानन्द सर
स्वती था। उनसे उस वेदान्ती के द्वारा कहलाया कि ये ब्रह्मचारी विद्या पढ़ा चाहते हैं। यह
मैं ठीक जानता हूं कि किसी प्रकार का अपगुण इनमें नहीं है इनको आप संन्यास दे दीजि
ये संन्यास लेने का इनका प्रयोजन यही है कि निर्विघ्न विद्या का अभ्यास कर सकें। तब उन्हों
ने कहा कि किसी गुजराती स्वामी से कहो क्योंकि हम तो महाराष्ट्र हैं। तब उनसे कहा कि दाक्षिणी
स्वामी गौड़ों को भी संन्यास देते हैं तो यह ब्रह्मचारी तो पंच द्राविड़ है इसमें क्या चिन्ता है। तब उन्होंने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



॥६॥

मान लिया और उसी ठिकाने तीसरे दिन संन्यास की दीक्षा दण्ड ग्रहण कराया और दयानन्द सरस्वती नाम रक्खा परन्तु मैंने दण्ड का विसर्जन भी उन्हीं स्वामीजी के सन्मुख कर दिया क्योंकि दंड की भी बहुत सी क्रिया है कि जिससे पढ़ने में विघ्न हो सकता था। फिर वे स्वामीजी द्वारिका की ओर चले गये। मैं कुछ दिन चाणोद कन्याली में रहके व्यासाश्रम में एक योगानन्द स्वामी को सुना कि वे योगाभ्यास में अच्छे हैं उनके पास जाके योगाभ्यास की क्रिया सीखके एक कृष्णशास्त्री छिनौर शहर के बाहर रहते थे उनको सुनके व्याकरण पढ़ने के लिये उनके पास गया और कुछ व्याकरण का अभ्यास करके फिर चाणोद में आकर ठहरा वहां दो योगी मिले कि जिनका नाम ज्वालानन्द पुरी और शिवानन्द गिरि था उनसे भी योगाभ्यास की बातें हुईं और उन्होंने कहा कि तुम अहमदाबाद में आओ वहां हम नदी के ऊपर दूधेश्वर महादेव में ठहरेंगे। वहां आवोगे तो योगाभ्यास की रीति सिखलावेंगे। वहां से वे अहमदाबाद को चले गये फिर एक महिने के पीछे मैं भी अहमदाबाद में जाके उनसे मिला और योगाभ्यास की रीति सीखी। फिर आबू राजपर्वत में योगियों को सुनके वहां जाके अर्बुदा भवानी आदि स्थानों में भवानीगिरि आदि योगियों से मिलके कुछ और योगाभ्यास की रीति सीखके संवत् १९११ के वर्ष के अन्त में हरद्वार के कुम्भ के मेले में आके बहुत साधु संन्यासियों से मिला और जब तक मेला रहा तब तक चण्डी के पहाड़ के जंगल में योगाभ्यास करता रहा जब मेला हो चुका तब हृषीकेश में जाके संन्यासियों और योगियों से योग की रीति सीखता और सत्संग करता रहा॥

इसके आगे फिर लिखेंगे। (दयानन्द सरस्वती)

---

स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्वहस्त लिखित आत्मकथा पुस्तक-युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द स्वरस्वती, जो महर्षि दयानन्द-निर्वाण-शताब्दी पर आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली द्वारा सन् 1983 ई० तदनुसार सम्वत् 2040 में प्रकाशित किया गया था। उसमें स्वहस्तलेख का प्रति उपलब्ध है। यह अमूल्य पुस्तिका, आर्यसमाज, अनार कली, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली के मंत्री श्री हरवंश लाल कपूर (भूतपूर्व डी०एस०पी० पंजाब, हरियाणा) द्वारा मुझे उपलब्ध कराया गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2





फिर वहां से एक ब्रह्मचारी और दो पहाड़ी साधु जो साथ थे हम सब उनके टिहरी में आये वहां बहुत साधु और राज पण्डितों से समागम हुआ। वहां एक पण्डित ने एक दिन मुझको और ब्रह्मचारी को अपने घर में भोजन करने के लिये निमन्त्रण दिया था। समय पर उसका एक मनुष्य बुलाने को आया तब मैं और ब्रह्मचारी उसके घर भोजन करने को गये। जब उसके घर के द्वार में प्रवेश करें त्यों तो एक ब्राह्मण मांस को काट रहा था। उसको देख कर जब भीतर गये तब बहुत से पण्डितों को एक बिछौने पर बैठे देखे और वहां बकरे का मांस, चमड़ा, और शिर देख के पीछे लौटे। पण्डित देख के बोला कि आइये। तब मैंने उत्तर दिया कि आप अपना काम कीजिये। हम बाहर जाते हैं। ऐसा कह कर अपने स्थान पर चले आये। तब पण्डित जी हमको बुलाने आया। उससे मैंने कहा कि तुम सूखा अन्न जल दो हमारा ब्रह्मचारी बना लेगा। पंडित जी बोले कि आपके लिये तो सब पदार्थ बनाये हैं। मैंने उससे कहा कि आपके घर में मुझसे भोजन कदापि नहीं पाया जायगा। क्योंकि आप लोग मांसाहारी हैं। और मुझको मांस देख के ही वमन आती है। फिर पण्डित ने अन्न भेज दिया। पीछे कुछ दिन रह कर पण्डितों से पूछा कि इस पहाड़ देश में कौन २ शास्त्र के ग्रन्थ देखने को मिलते हैं। मैं देखना चाहता हूं। तब उन्होंने कहा कि व्याकरण, काव्य, कोष, ज्योतिष, और तन्त्र ग्रन्थ बहुत से मिलते हैं। तब मैंने कहा कि और ग्रन्थ तो मैंने देखे हैं परन्तु तन्त्रग्रन्थ देखना चाहता हूं। तब उन्होंने छोटे बड़े ग्रन्थ मुझको दिये। मैंने देखे तो बहुत भ्रष्टाचार की बातें उनमें देखीं कि माता, कन्या, भगिनी, चमारी, चाण्डाली, आदि से संगम करना, नग्न करके पूजना, मद्य, मांस, मच्छी, मुद्रा अर्थात् ब्राह्मण से लेके चाण्डाल पर्यन्त एकत्र भोजन करना, और इन स्त्रियों से मैथुन करना इन पांच मकारों से मुक्ति होनी आदि लिखा हुआ मैं देख के। जिन्होंने वेद कर आदि ग्रन्थों ने ये ग्रन्थ बनाये हैं वे कैसे नष्ट बुद्धि थे। फिर वहां से श्रीनगर को गये और केदार घाट पर मन्दिर में ठहरे। और वहां भी तन्त्र ग्रन्थों का देखना और पंडितों से इस विषय में संवाद होता रहा। इतने में एक गंगागिरि साधु जो कि सब दिन पहाड़ में रहता था उससे भेंट हुई। वे योग विषय में कुछ बात चीत होने से विदित हुआ कि यह साधु अच्छा है कई बार उससे बातें हुईं। मैंने उससे पूछा उसने उत्तर दिया उसने मुझसे पूछा उसका उत्तर मैंने दिया। दोनों प्रसन्न हो गये। दो महीने तक वहां रहे। जब वर्षा ऋतु आई तब आगे रुद्रप्रयाग आदि देवताओं को देखता अगस्त्यमुनि के स्थान पर पहुंच कर उसके उत्तर पहाड़ पर एक शिवपुरी स्थान है वहां जाकर चातुर्मास्य निवास करके पीछे उन साधु और ब्रह्मचारी को वहां छोड़ के अकेला केदार की ओर चलता हुआ गुप्तकाशी में पहुंचा। वहां कुछ दिन रह कर वहां से आगे चल के त्रियुगीनारायण का स्थान और गौरीकुण्ड देखता हुआ भीमगुफा देख कर थोड़े ही दिनों में केदार में पहुंच कर निवास किया। वहां कई एक साधु पंडे और केदार के पूजारी जङ्गम मत के थे उनसे समागम हुआ तब तक पांच सात दिन के पीछे वे साधु और ब्रह्मचारी भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

...नारायण के वहां आस पास के पहाड़ों में ...ज्ञात हुई कि इन पहाड़ों में जाकर पूछ कर देखें कि कोई साधु महात्मा रहता है या नहीं परन्तु मार्ग कठिन और उन पहाड़ों में अति शीत था। वहां के निवासियों से भी पूछा कि इन पहाड़ों में कोई साधु महात्मा रहता है या नहीं उन्होंने कहा कि कोई नहीं। फिर वहां मैं २० दिन रह कर पांच सौ... अकेला क्योंकि वह ब्रह्मचारी और साधु दोनों रह कर शीत से घबरा के प्रथम ही चले गये थे। फिर मैं वहां से चल के तुङ्गनाथ के पहाड़ पर चढ़ गया था उसका मन्दिर पुजारी बहुत सी मूर्ति आदि का संग्रह ... देखा। ...हां वहां से नीचे को उतरा बीच में दो मार्ग थे एक पश्चिम को और एक पश्चिम और दक्षिण के बीच को ... जाता था। जो जङ्गल का मार्ग था मैं उसमें चढ़ गया था। आगे जाकर देखा तो घना जङ्गल पहाड़ और बिगड़ा हुआ सूखा नाला है उसमें मार्ग बन्द हो रहा है। विचारा कि जो पहाड़ पर चढ़ें तो रात हो जायेगी पहाड़ का मार्ग कठिन है वहां पहुंच नहीं सकता ऐसा विचार उस नाले में बड़े कठिन तारे से ... और वृक्षों को पकड़ पकड़ नीचे उतरा नाले के किनारे पर चढ़ कर देखा तो पहाड़ और जङ्गल है कहीं मार्ग नहीं। उस वक्त सूर्य अस्त होने को था। विचारा कि जो रात हो गई तो पानी जल अग्नि कुछ भी नहीं है फिर क्या करेंगे। ऐसा विचार आगे को बढ़ा जङ्गल में चलते कांटों से कपड़े और पांव के तलवे भी फट गये। बड़ी कठिनता से पहाड़ के पार तराई में आ के एक मार्ग मिला और अंधेरा हो गया था फिर मैं चल के एक स्थान मिला वहां के लोगों से पूछा कि यह मार्ग कहां जाता है कहा कि ओखीमठ को। फिर वहां रात्रि को रह कर प्रातःकाल ओखीमठ आया वहां योगी महात्मा ... ओखीमठ में जाकर उसको देखा तो बड़ी ... केवल लाखों रुपये की जायदाद ... उसके महन्त ने कहा कि तुम हमारे चेले हो जाओ और यहां रहो लाखों के धन ... तुम्हारा होगा... मैं ... महन्त होंगे। मैंने उनको उत्तर दिया कि सुनो जो ऐसी इच्छा होती तो अपने माता, पिता बन्धु, कुटुम्ब, और घर आदि ही को क्यों छोड़ता ... और सम्पत्ति ... होते। मैंने जिस लिये सब छोड़े हैं वह बात तुम्हारे पास किञ्चित् मात्र भी नहीं है उसने पूछा कि वह कौन सी बात है। मैंने उत्तर दिया कि सत्य विद्या योग मुक्ति और अपने आत्मा की पवित्रता आदि गुणों से धर्मात्मता पूर्वक उन्नति करना है। तब महन्त ने कहा कि अच्छा तुम कुछ दिन यहां रहो मैंने उनको कुछ उत्तर न दिया और प्रातःकाल उठ के मार्ग में चल के जोशीमठ को पहुंच के वहां के दक्षिणी शास्त्री और संन्यासी थे उनसे मिल कर ठहरा !!

दयानन्दसरस्वती

---

युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती आत्मकथा - दयानन्द-निर्वाण शताब्दी पर आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित-सन्-1983।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## परिशिष्ट–३

### उत्तर प्रदेश ( तत्कालीन संयुक्तप्रान्त ) में स्वामीदयानन्द द्वारा किए गए प्रसिद्ध शास्त्रार्थ

| क्र०सं० | शास्त्रार्थ स्थान | प्रतिवादी पण्डित, वक्ता | शास्त्रार्थ विषय | शास्त्रार्थ तिथि |
|---|---|---|---|---|
| १ | काशी<br>(स्थल आनन्द बाग) | स्वामी विशुद्धानन्द आदि<br>४० प्रमुख पण्डित | मूर्तिपूजा | कार्तिक शुक्ला १२, १९२६ ई. विक्रमी<br>१६ नवम्बर १८६९ ई. |
| २. | फर्रूखाबाद | पं.श्री गोपाल | मूर्तिपूजा | १९२६ विक्रमी, सन् १८६९ ई. |
| ३. | फर्रूखाबाद<br>आगरा डिवीजन | पं. हलधर ओझा | मूर्तिपूजा | ज्येष्ठ शुक्ला १०,११,१९२६ विक्रमी,<br>१९,२० जून, १८६९ ई. |
| ४. | कन्नौज<br>आगरा डिवीजन | पं. हरिशंकर शास्त्री | मूर्तिपूजा | आषाढ़ १९२६ विक्रमी<br>जुलाई सन् १८६९ ई. |
| ५. | कानपुर<br>इलाहाबाद डिवीजन | पं. हलधर ओझा<br>पं. लक्ष्मण शास्त्री | मूर्तिपूजा | आषाढ़ १९२६ विक्रमी<br>३१ जुलाई सन् १८६९ ई. |
| ६. | मिर्जापुर<br>बनारस डिवीजन | पं. गोविन्द भट्ट<br>पं. जयश्री | भागवत व<br>मूर्तिपूजा | १९२६ विक्रमी सन् १८६९ई. |
| ७. | लखनऊ<br>लखनऊ डिवीजन | पं. गंगाधर शास्त्री | मूर्तिपूजा | मार्गशीर्ष अमावस्या<br>१९३० विक्रमी, ११ नवम्बर, १८७३ ई. |
| ८. | प्रयाग<br>इलाहाबाद डिवीजन | पं. नीलकण्ठ शास्त्री गोरे<br>धर्मान्तरित ईसाई | वेद में<br>देवतावाद | आषाढ़ १९३१ विक्रमी<br>जुलाई १८७४ ई. |
| ९. | फर्रूखाबाद<br>आगरा डिवीजन | पादरी जे०जे० लूकस | मोक्ष | ज्येष्ठ अमावस्या १९३३ विक्रमी<br>२३ मई, सन्– १८७६ ई. |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| १०. | बरेली<br>रूहेलखण्ड डिवीजन | पं. लक्ष्मण शास्त्री | | मार्गशीर्ष १९३३ विक्रमी<br>नवम्बर सन् १८७६ ई. |
| ११. | मुरादाबाद<br>रूहेलखण्ड डिवीजन | ई. डब्लू-पार्कर, पादरी बेली<br>देशी ईसाई रामचन्द्र बोस | ईश्वर मुक्ति दाता<br>सृष्टि उत्पत्ति | मार्गशीर्ष १९३३ विक्रमी<br>नवम्बर, सन् १८७६ ई. |
| १२. | सहारनपुर<br>मेरठ डिवीजन | पं. बलदेव व्यास<br>साधु दीवानदास | | फाल्गुन १९३३ विक्रमी<br>फरवरी, सन् १८७७ ई. |
| १३. | चाँदापुर (शाहजहाँपुर)<br>रूहेलखण्ड डिवीजन | मौलवी मोहम्मद कासिम<br>पादरी डा.टी०जे० स्काट | सृष्टि रचना का<br>प्रयोजन | चैत्र शुक्ला ४,५,१९३४ विक्रमी<br>१९,२० मार्च, सन् १८७७ ई. |
| १४. | बदायूँ जिला<br>रूहेलखण्ड डिवीजन | पं. रामप्रसाद, पं. वृन्दावन<br>पं. टीकाराम | ईश्वर साकार है<br>या निराकार | भाद्रपद कृष्णा, २, १९३६ विक्रमी<br>अगस्त सन् १८७९ ई. |
| १५. | बरेली<br>रूहेलखण्ड डिवीजन | डा. टी०जे० स्कॉट | १- आवागमन<br>(पुनर्जन्म) का<br>सिद्धान्त<br>२- ईश्वर देह धारण<br>करता है या नहीं<br>३- ईश्वर अपराध<br>क्षमा करता है या नहीं | भाद्रपद शुक्ल, ७,८,९, १९३६ ई.<br>विक्रमी, २५,२६,२७, अगस्त,<br>सन् १८७९ ई. |
| १६. | शाहजहाँपुर<br>रूहेलखण्ड | पं. लक्ष्मण शास्त्री | मूर्तिपूजा | आश्विन कृष्ण पक्ष<br>१९३६ विक्रमी, सितम्बर<br>सन् १८७९ ई. |

भवानी लाल भारती – नवजागरण के पुरोधा दयानन्द सरस्वती परिशिष्ट-५ पृ. ५८४ से ५८८ प्रकाशक- वैदिक पुस्तकालय, परोपकारिणी सभा, दयानन्दाश्रम, अजमेर दयानन्द सरस्वती की प्रथम निर्वाण शताब्दी पर प्रकाशित-कार्तिक अमावस्या (दीपावली) कौन सा जिला किस ड़िवीजन में पड़ता था, इसका विवरण ओ० २२-२३, क्षेत्रीय अभिलेखागार, वाराणसी, बॉक्स नं०-३६, (२०४० विक्रमी-१९८३ ई.) (ख्रीस्ताब्द) फाइल नं०-१०७, डिपार्टमेन्ट नं०-१८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट-४

## महर्षिदयानन्दसरस्वती द्वारा रचित प्रसिद्ध ग्रन्थ और पुस्तिकाएँ

| क्रम.सं० | ग्रन्थ/पुस्तिका | मुद्रक-प्रकाशक | प्रकाशन-तिथि |
|---|---|---|---|
| १. | संध्या | ज्वाला प्रसाद प्रेस, आगरा उ०प्र० (संयुक्त - प्रान्त-आगरामण्डल) | १९२० विक्रमी० १८६३ ई. |
| २. | भागवतखण्डन अपर नाम पाखण्डखण्डन | ज्वालाप्रसाद प्रेस, आगरा संयुक्त-प्रान्त, बनारस मण्डल। | १९२३ वि., १८६६ ई. |
| ३. | अद्वैतमतखण्डन काशी में निवास करते समय स्वामीजी द्वारा रचित पुस्तक | लाईटप्रेस, बनारस (संयुक्त-प्रान्त, बनारस मण्डल) | १९२७ वि., १८७० ई. |
| ४. | सत्यार्थप्रकाश (प्रथम-संस्करण) ५०० से भी अधिक पृष्ठों का ग्रन्थ (२-समुल्लास) | स्टारप्रेस, बनारस (संयुक्त-प्रान्त-बनारस मण्डल) | १९३१ वि., १८७५ ई. |
| ५. | सत्यार्थप्रकाश (द्वितीय संस्करण) (महर्षि के जीवनकाल में नहीं हो सका) | वैदिकयन्त्रालय, प्रयाग (संयुक्त-प्रान्त-इलाहाबाद मण्डल) | १९४१ वि., १८८४ ई. इस काल में प्रकाशित यह सत्यार्थप्रकाश ही आर्यसमाज द्वारा मान्य है। |
| ६. | सन्ध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञ-विधि | आर्यप्रेस, बम्बई | १९३१ वि., १७९६ शक सम्वत |
| ७. | पञ्चमहायज्ञ-विधि (संशोधित) (यज्ञों के अनुष्ठान की विधि) (ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, भूतयज्ञ, और नृयज्ञ) | लाजरस प्रेस, बम्बई | १९३४ वि., १८७७ ई. दसहजार प्रतियाँ शताब्दी इसका एक संस्करण दो वर्ष पूर्व १८७५ ई. में प्रकाशित हो चुका था |
| ८. | वेदान्तिध्वान्तनिवारण-नवीन वेदान्त के सिद्धान्तों के बारे में | ओरियन्टल प्रेस, बम्बई | १९३२ वि., १८७६ई. |
| ९. | वेदाविरूद्ध मतखण्डन-(बल्लभ और अन्य सम्प्रदाय का खण्डन) | निर्णयसागर प्रेस, बम्बई | १९३१ वि., १८७५ई. |
| १०. | शिक्षापत्रीध्वान्त निवारण (विभिन्न विश्वासों का खण्डन) | प्रश्नोत्तर के रूप में है २४ पृष्ठ की | १९३१ वि., १८७५ई. |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१- वेदमन्त्रों का संग्रह-१०७-५३ ऋग्वेद से, ५४ यजुर्वेद से, १०७ मंत्रों का सम्बन्ध ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना के भाव।

| क्रम.सं० | ग्रन्थ/पुस्तिका | मुद्रक-प्रकाशक | प्रकाशन-तिथि |
|---|---|---|---|
| ११. | आर्याभिविनव- | आर्यमण्डल, प्रेस, बम्बई | १९३२वि., १८७६ई. पहला संस्करण |
| १२. | संस्कारविधि - (सोलह संस्कारों का विधान है) | एशियाटिक प्रेस, बम्बई, | १९३३ वि., १८७७ई. |
| १३. | संस्कारविधि- (द्वितीय संस्करण) सोलह संस्कारों का विधान है। | वैदिक-यन्त्रालय, प्रयाग,(संयुक्त प्रान्त) | १९४१ वि., १८८४ ई. |
| १४. | वेदभाष्यम् (नमूने का अंक) - (सामवेद और अथर्ववेद का भाष्य नहीं कर सके) | लाजरस प्रेस, बनारस, संयुक्त प्रान्त) | १९३३ वि., १८७६ ई. |
| १५. | ऋग्वेदादि-भाष्य भूमिका (स्वामीदयानन्द द्वारा संस्कृत में अन्य पण्डितों द्वारा संस्कृत से हिन्दी अनुवाद) | लाजरस प्रेस, बनारस, पहले नमूने का अंक ५००० प्रति (१-१४ खण्ड) निर्भय सागर प्रेस, बम्बई ( संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं में प्रकाशित है) | वैशाख १९३४ वि., १९३५ वि., १८७७<br>१९३५वि., १८७८ई. (१५,१६ खण्ड) |
| १६. | ऋग्वेद भाष्य-(७/६२/२ तक) | निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, पहले वैदिक यन्त्रालय, काशी, प्रयाग, अजमेर। | १९३५ विक्रमी, १८७७ ई. से १९५६ वि., १८९९ई. पर्यन्त |

ऋग्वेद (१०मण्डल १०५५२ मन्त्र जिनमें से सप्तम मण्डल के बासठवें सूक्त के द्वितीय मंत्र तक का भाष्य महर्षि दयानन्द कर पाये थे। ऋग्वेद का पूर्ण भाष्य उनके द्वारा नहीं किया जा सका। ऋग्वेद के मन्त्रों में केवल ५६४९ मन्त्रों का भाष्य ही कर पाये थे।)

| | | | |
|---|---|---|---|
| १७. | यजुर्वेद भाष्य महर्षि द्वारा चार वैदिक संहिताओं में केवल इस वेद का भाष्य पूरा किया गया। मुद्रण-जीवन काल में नहीं हो सका। | निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, वैदिकयन्त्रालय, काशी, प्रयाग (संयुक्त-प्रान्त) | १९३५वि., १८७८ई. से १९४६वि., १८८९ई. पर्यन्त |
| १८. | आर्योद्धेश्य-रत्न-माला | चश्म ए नूर प्रेस, अमृतसर, | १९३४विक्रमी, १८७७ई. |

इस पुस्तक में सौ पारिभाषिक शब्दों का व्याख्या प्रतिपादित किया गया है। (सरल हिन्दी भाषा में)

| | | | |
|---|---|---|---|
| १९. | भ्रान्तिनिवारण | आर्यभूषण प्रेस, शाहजहाँपुर, (संयुक्त प्रान्त-रूहेलखण्ड मण्डल) | १९३७वि., १८८०ई. |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



| | | | |
|---|---|---|---|
| २०. | अष्टाध्यायी भाष्य (भाग-२) | .वैदिक यन्त्रालय-आलेखन काल अजमेर-प्रकाशन प्रथम भाग-द्वितीय भाग | १९३५-१९३६ विक्रमी, १८८४ वि., १९२७ई. १९९७ वि., १९४० ई. |

महर्षिजी ने संस्कृत व्याकरण के प्रसिद्ध ग्रन्थ अष्टाध्यायी पर भाष्य लिखा था। पर वे उसे पूरा नहीं कर सके थे और प्रकाशन भी उनके जीवन काल में नहीं हो सका था।

| | | | |
|---|---|---|---|
| २१. | संस्कृत वाक्य प्रबोध-(संस्कृत प्रवर्तकों से सम्बन्धित पुस्तक) | वैदिक यंत्रालय, काशी, उ०प्र० (संयुक्त-प्रान्त) | १९३६ विक्रमी, १८७९ई. |
| २२.. | व्यवहारभानु-(तरूणों, किशोरों, जवानों के सद्व्यवहारों के विषय में शिक्षा) | वैदिक यन्त्रालय, काशी, (संयुक्त प्रान्त) उ०प्र० | १९३६ विक्रमी, १८७९ई. |

गुरू-शिष्य, पति-पत्नी, माता-पिता और सन्तान, राजा-प्रजा आदि में परस्पर सम्बन्धों के विषय में विवरण है।

| | | | |
|---|---|---|---|
| २३. | गौतम-अहिल्या की कथा | वैदिक यन्त्रालय, काशी उ०प्र० (संयुक्त प्रान्त) | १९३७ विक्रमी, १८७९ई. |
| २४. | भ्रमोच्छेदन | वैदिक यन्त्रालय, काशी उ०प्र० (संयुक्त प्रान्त) | १९३७ विक्रमी, १८८०ई. १९३७ विक्रमी, १८८०ई. |
| २५. | गोकरूणानिधि-(गो-हत्या पर प्रतिबन्ध लगाने के प्रयोजन से लिखी गयी पुस्तक) | वैदिक यन्त्रालय, काशी, उत्तर प्रदेश ( संयुक्त प्रान्त) प्रयाग। | |
| २६. | वेदाङ्गप्रकाश (१४भाग) संस्कृत ग्रामर आफ पाणिनी मेड इजी। | वैदिकयन्त्रालय, काशी, उ०प्र०( संयुक्त प्रान्त) प्रयाग | १९३६वि., १८७९ई. से १९४० वि., १८८३ ई. पर्यन्त संस्कृत व्याकरण |
| २७. | काशी शास्त्रार्थ-(आनन्दबाग, दुर्गामन्दिर के निकट, १८६९) | वैदिक यन्त्रालय, काशी, (संयुक्त प्रान्त) उ०प्र० | १९३७ वि., १८८०ई. |
| २८. | हुगली शास्त्रार्थ (प्रतिमा पूजन) स्वामीजी का शास्त्रार्थ पं. ताराचरण तर्करत्न से | लाईट प्रेस, बनारस, उ०प्र० (संयुक्त प्रान्त) | १९३० वि., १८७३ ई. बंगाली भाषा में प्रकाशित और उसका हिन्दी रूपान्तरण - भारतेन्दु हरिश्चन्द्रजी द्वारा वाराणसी से प्रकाशित। |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



| | | | |
|---|---|---|---|
| २९. | सत्यधर्म विचार- (मेला चाँदपुर) का विवरण- सत्यधर्म विचार नाम से उपलब्ध है। | वैदिक यन्त्रालय, काशी, (संयुक्त प्रान्त) उ०प्र० | १९३७विक्रमी १८८० ई. इस मेले के शास्त्रार्थ का वृत्तान्त सबसे पहले पूर्व सन् १८७८ में (उर्दू) प्रकाशित हुआ था जो अब उपलब्ध नहीं है। |
| ३०. | जालंधर-शास्त्रार्थ | पंजाबीप्रेस, लाहौर | १९३४ विक्रमी, १८७७ई. |
| ३१. | सत्यासत्य विवेक- (बरेली-शास्त्रार्थ) | आर्यभूषण प्रेस, शाहजहाँपुर, संयुक्त प्रान्त, रूहेलखण्ड | १९३६ वि, १८७९ई. उर्दू |
| ३२. | चतुर्वेद विषय सूची- | वैदिक यन्त्रालय, अजमेर | २०२८ विक्रमी, सन् १९७१ ई. |

महर्षि ने अनेक ऐसी पुस्तकों की भी रचना की थी जो सन् १९४७तक अप्रकाशित थे जिसका विवरण निम्नवत था:-

चतुर्वेद विषय, ऋग्वेदमन्त्र, यजुर, अथर्ववेद मन्त्र, अथर्वमन्त्र, वेंद ब्राह्मण, निरूक्त की विषय, ऐतरेय ब्राह्मण, शतपथ-ब्राह्मण विषय, तैत्तिरीययोपनिषद् , मिश्रित, ऋग्वेद विषय स्मरणार्थ, धातुपाठ, कारिका संकेत, निघण्टु, ऐतरेय उपनिषद, छान्दोग्योपनिषद, ऋग्वेद सूक्त, शतपथ शिलापष्ट प्रतीक सूची स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित ग्रन्थों एवं पुस्तिकाओं का विवरण प्रकाशन तिथि सहित- मूल ग्रन्थों/पुस्तकों से सम्बन्धित पत्र, पत्रिकाओं, स्मारिकाओं एवं पुस्तकों के आधार पर तैयार किया गया है जो निम्नलिखित है- (इसमें कहीं-कहीं तिथि की भिन्नता है- जिसे सुधार दिया गया है।)

१. भवानी लाल भारतीय- नवजागरण के पुरोधा-दयानन्द सरस्वती, पृ. ५८२-५८३ परिशिष्ट-४
२. सत्यकेतु विद्यालंकार-आर्यसमाज का इतिहास प्रथम भाग- पृ. ६४२-६७२
३. इन्द्र विद्यावाचस्पति-आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ.३३३
४. स्वर्णजयन्ती स्मारिका आर्यसमाज, सीसामऊ, कानपुर-जिल्द के अन्तिम पृष्ठ नवम्बर १९८५ प्रधान सम्पादक-पं. लक्ष्मण कुमार शास्त्री
५. विश्वप्रकाश-लाईफ एण्ड टीचिंग्स आफ स्वामी दयानन्द-पृष्ठ २३० से २३४ इन्द्र विद्यावाचस्पति के पुत्र, प्रकाशित-कलाप्रेस, इलाहाबाद-३,
६. पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार, महर्षि दयानन्द सरस्वती सचित्र प्रामाणिक जीवन-चरित, पृ. ३८३ से ३८९ तक

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट संख्या-५

बम्बई-आर्यसमाज की स्थापना (अप्रैल-१८७५) के समय निर्धारित २८ नियम-

१. आर्यसमाज का सब मनुष्यों के हितार्थ होना आवश्यक है।

२. इस समाज में मुख्य स्वतः प्रमाण वेदों का ही माना जाएगा। साक्षी के लिए वेदों के ज्ञान के लिए तथा आर्य इतिहास के लिए शतपथादि ४ ब्राह्मण, ६ वेदांग, ४ उपवेद, ६ दर्शन, ११२७ वेदों की शाखा वेद व्याख्यान, आर्य सनातन संस्कृत ग्रन्थों का भी वेदानुकूल होने से गौण प्रमाण माना जाएगा।

३. इस समाज में प्रतिदेश के मध्य एक प्रधान समाज होगा और अन्य समाज शाखा-प्रशाखा होंगे।

४. अन्य सब समाजों की व्यवस्था प्रधान समाज के अनुकूल रहेगी।

५. प्रधान समाज में वेदोक्तानुकूल संस्कृत और आर्यभाषा में नाना प्रकार के सदुपदेश के पुस्तक होंगे और एक "आर्य प्रकाश" पत्र यथानुकूल आठ-आठ दिन में निकलेगा। यह सब समाजों में प्रवृत्त किए जायेंगे।

६. हर एक समाज में एक प्रधान पुरुष और दूसरा मन्त्री तथा अन्य पुरुष और स्त्री सभासद होंगे।

७. प्रधान पुरुष इस समाज की यथावत् व्यवस्था पालन करेगा और मंत्री सबके पत्रों का उत्तर तथा सबके नाम व्यवस्था लेख करेगा।

८. इस समाज में सत्पुरुष, सत्यनीति, सत्याचरणी मनुष्यों के हित-कारक समाजस्थ किए जायेंगे।

९. जो गृहस्थ गृह-कृत्य से अवकाश प्राप्त हो सो जैसा घर के कामों में पुरुषार्थ करता है, उससे अधिक पुरुषार्थ इस समाज की उन्नति के लिए करें और विरक्त तो नित्य ही इस समाज की उन्नति करें, अन्यथा नहीं।

१०. हर आठवें दिन प्रधानमंत्री और सभासद् समाज स्थान में इकट्ठे हों और सब कामों को मुख्य जानें।

११. इकट्ठे होकर सर्वथा स्थिरचित्त हों, परस्पर प्रीति से पक्षपात छोड़कर प्रश्नोत्तर करें, फिर सामवेदादि गान, परमेश्वर, सत्यधर्म, सत्यनीति तथा सत्योपदेश के सम्बन्ध में बाजा आदि के साथ हों और इसी विषय पर मन्त्रों का अर्थ और व्याख्यान, पुनः मान, फिर व्याख्यान और फिर गान हो, इत्यादि।

१२. हर एक सभासद् न्यायपूर्वक पुरूषार्थ से जितना धन प्राप्त करें उसमें से आर्यसमाज, आर्यविद्यालय और 'आर्य प्रकाश' पत्र के प्रचार और उन्नति के लिए आर्य समाज के धनकोष (एक) में प्रतिशत प्रीतिपूर्वक देवें, अधिक देने से अधिक धर्मफल। इस धन का इन ही विषयों में व्यय होवें और जगह नहीं।

१३. जो मनुष्य इन कार्यों की उन्नति और प्रचार के लिए जितना प्रयत्न करें उसका उत्साह के लिए यथायोग्य सत्कार होना चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१४. इस समाज में वेदोक्त प्रकार से हर एक स्तुति, प्रार्थना और उपासना अद्वितीय परमेश्वर की ही करने में आएगी। अर्थात् निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, दयालु, सर्वजगत्पिता, सर्वजगन्माता, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सच्चिदानन्द आदि लक्षणयुक्त, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव, अनन्तसुखप्रद, धर्मार्थ काम मोक्षप्रद इत्यादि विशेषणों से परमात्मा की ही स्तुति, उसका कीर्तन, प्रार्थना, उससे सर्वश्रेष्ठ कार्यों में सहाय्य चाहना, उपासना, उसके आनन्द स्वरूप में मग्न हो जाना। सो पूर्वोक्त निराकारादि लक्षण वाले की ही भक्ति करनी, उसके सिवाय किसी और की कभी नहीं करनी।

१५. इस समाज में निषेकादि अन्त्येष्टिपर्यन्त संस्कार वदोक्त किए जायेंगे।

१६. आर्य विद्यालय में वेदादि सनातन आर्यग्रन्थों का पठन-पाठन कराया जाएगा और वेदोक्त रीति से ही सत्यशिक्षा सब पुरूष और स्त्री के सुधार की होगी।

१७. इस समाज में स्वदेश के हितार्थ दो प्रकार की शुद्धि के लिए प्रयत्न किया जाएगा- एक परमार्थ, दूसरी लोक व्यवहार। इन दोनों का शोधन और शुद्धता की उन्नति तथा सब संसार के हित की उन्नति की जाएगी।

१८. इस समाज में न्याय वही माना जाएगा जो पक्षपात रहित अर्थात् प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से परीक्षित, सत्य धर्म वेदोक्त होगा, इससे विपरीत को यथाशक्ति न माना जाएगा।

१९. इस समाज की ओर से श्रेष्ठ विद्वान सर्वत्र सदुपदेश करने के लिए समयानुकूल भेजे जायेंगे।

२०. स्त्री और पुरूष दोनों के विद्याभ्यास के लिए हर एक स्थान में यथाशक्ति अलग-अलग बनाए जायेंगे। स्त्रियों के लिए पाठशाला में अध्यापन और सेवा प्रबन्ध स्त्रियों द्वारा ही किया जाएगा और पुरुष पाठशाला का पुरुषों द्वारा, इसके विरूद्ध नहीं।

२१. उन पाठशालाओं की व्यवस्था प्रधान आर्यसमाज के अनुकूल पालन की जाएगी।

२२. इस समाज में प्रधान आदि सब सभासद् परस्पर प्रीति के लिए अभिमान, हठ, दुराग्रह और क्रोध आदि सब दुर्गुण छोड़कर उपकार शुद्धता, सुहृदयता से सबसे सबका निर्वैर होकर स्वात्मवत् संप्रीति करनी होगी।

२३. विचार समय सब व्यवहारों में न्याययुक्त सर्वहितसाधक जो सत्य बात भली प्रकार विचार से ठहरे उसी को सब सभासदों को प्रकट करके मानी जाए, इसके विरूद्ध न मानी जाए। इसी का नाम पक्षपात छोड़ना है।

२४. जो पुरुष इन नियमों का अनुकूल आचरण करने वाला, धर्मात्मा, सद्गुणी हो उसको उत्तम समाज में प्रविष्ट करना, उसके विपरीत को साधारण समाज में रखना और अत्यन्त प्रत्यक्ष दुष्ट को समाज से निकाल ही देना परन्तु यह काम पक्षपात से नहीं करना, बल्कि यह दोनों बातें श्रेष्ठ सभासदों के ही विचार से की जायें, अन्य प्रकार नहीं।

२५. आर्यसमाज, आर्यविद्यालय, आर्यप्रकाश पत्र और आर्यसमाज का कोष, इन चारों की रक्षा और उन्नति प्रधानादि सब सभासद् तन, मन और धन से सदा करें।

२६. जब तक नौकरी करने और कराने वाला आर्यसमाजस्थ मिले तब तक और की नौकरी न करें और न किसी और को नौकर रखें, वे दोनों परस्पर स्वामी-सेवक भाव से यथावत् बरतें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२७. जब विवाह, जन्म, महालाभ वा मरण वा कोई समय दान व धन व्यय करने का हो तब आर्यसमाज के निमित्त धन आदि दान किया करें। ऐसा धर्म का काम और कोई नहीं है। इस निश्चय को जानकर इसको कभी न भूलें।

२८. इन नियमों में कोई नियम नया लिखा जाएगा वा कोई निकाला जाएगा वा न्यूनाधिक किया जाएगा सो सब श्रेष्ठ सभासदों की विचार रीति से सब श्रेष्ठ सभासदों को विदित करके ही यथायोग्य करना होगा।

---

१- सत्यकेतु विद्यालंकार- प्रथम भाग- पृष्ठ-२५८ से २६० में अंकित २८ नियम देखें- इन्द्र विद्यावाचस्पति-आर्यसमाज का इतिहास-पृष्ठ ३२५ से ३२७ देखें- लेखरामकृत अनु. रघुनन्दन सिंह निर्मल-महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र-पृष्ठ- २५६ से २५७ तक नियमों के भाव व अर्थ एक हैं कहीं- कहीं शब्दावली भिन्न है :- सम्बन्धित पुस्तकों में।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


# परिशिष्ट- ६

## आर्यसमाज के सिद्धान्त ईश्वर विषयक, जीव विषयक, प्रकृति विषयक व अन्य महत्त्वंपूर्ण सिद्धान्त ईश्वर-विषयक

१. ईश्वर एक है, कई ईश्वर नहीं।

२. ईश्वर निराकार है। उसको आँख से नहीं देख सकते और न उसकी मूर्ति बना सकते हैं।

३. ईश्वर सर्वज्ञ और सर्वव्यापक है। वह सब कुछ जानता है और छोटी से छोटी चीज के भीतर और बाहर मौजूद है।

४. ईश्वर सर्वशक्तिमान हैं, अर्थात् वह अपने किसी क़ाम के करने के लिए आँख, कान, नाक आदि शरीर या अन्य किसी औजार की जरूरत नहीं रखता। जो कुछ करता है बिना किसी चीज या आदमी की सहायता के करता है। जीव और प्रकृति को अनादि मानने से ईश्वर पराश्रित या मुहताज नहीं होता। जीव और प्रकृति ईश्वर के उपकरण नहीं हैं। उपादान उपकरण नहीं होता।

५. ईश्वर अजन्मा और निर्विकार है। वह मनुष्य के समान जन्म-मरण से नहीं आता। अवतार भी नहीं लेता। राम, कृष्ण आदि ईश्वर के अवतार नहीं थे। वे धर्मात्मा पुरुष थे, इसलिए उनके अच्छे कामों को याद करनी चाहिए परन्तु उनकी मूर्तियों को ईश्वर समझकर नहीं पूजना चाहिए। पृष्ठ-६

### जीव-विषयक

१. जीव चेतन है। इसकी संख्या अनन्त है।

२. जीव कभी न मरता है न पैदा होता है। अर्थात् कभी ऐसा समय नहीं हुआ जब जीव न रहा हो और न ऐसा समयआवेगा जब जीव न रहेगा।

३. जीव में ज्ञान तो है, पर थोड़ा और शक्ति भी थोड़ी है, इसलिए जीव को अल्पज्ञ कहते हैं।

४. जीव शरीर धारण करता है। कभी मनुष्य का कभी पशु का, कभी कीड़े आदि का।

५. जीव जैसाकर्म करता है उसको उसके फल के अनुसार वैसा ही शरीर मिलता है। बुरे कर्म के लिए बुरी योनि और अच्छे कर्म के लिए अच्छी योनि मिलती है। इसी को जीव-अवतार कहते हैं। अवतार जीव का होता है ईश्वर का नहीं।

६. जीव जब अच्छे कर्म करते-करते सबसे ऊँची अवस्था को पहुँच जाता है तो उसे मोक्ष मिल जाता है अर्थात् शरीर नहीं रहता और वह स्वतन्त्र विचरता हुआ ईश्वर के आनन्द में मग्न रहता है।

मोक्ष ३१ नील १० खर्व ४० अर्न वर्ष के लिए होता है इसके पश्चात् जीव मोक्ष से लौटता है और उत्तम ऋषियों का शरीर धारण करता है तो फिर मुक्त हो जाता है और यदि बुरे कर्म करता है तो नीचे की योनियों का चक्र आरम्भ हो जाता है। पृ.-७

### प्रकृति-विषयक

१. प्रकृति छोटे-छोटे परमाणुओं का नाम है।

२. यह परमाणु जड़ है। इनमें ज्ञान नहीं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३. यह परमाणु अनादि और अनन्त है। अर्थात् न कभी उत्पन्न हुए न नष्ट हुए ।
४. ईश्वर इन्हीं परमाणुओं को जोड़कर सृष्टि बनाता है। आग, पानी और पृथ्वी यह इन्हीं परमाणुओं के संयोग का फल है। सूर्य, चाँद आदि इन्हीं से बने हैं हमारे शरीर भी इन्हीं परमाणुओं से बने हैं। पृ.-८
५. जब परमाणु अलग-अलग हो जाते हैं तो उसको प्रलय या ब्रह्मरात्रि कहते हैं। जब सृष्टि बनी रहती है ब्रह्मदिन होता है।

**वेद-विषयक**

१. वेद चार हैं- ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद।
२. वेदों का ज्ञान ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों को दिया।
अर्थात् :- अग्नि ऋषि को ऋग्वेद।
वायु ऋषि को यजुर्वेद।
आदित्य ऋषि को सामवेद।
अंगिरा ऋषि को अथर्ववेद।
३. इन ऋषियों ने वेदों का अन्य ऋषियों और मनुष्यों को उपदेश दिया, संसार भर की सब विधाएँ वेदों से ही निकलती हैं।
४. वेद स्वतः प्रमाण हैं। परन्तु अन्य पुस्तकें परतः प्रमाण अर्थात् जो बात उनमें वेदके अनुकूल है वह ठीक है, जो वेद विरूद्ध है वह गलत।
५. वेद संस्कृत भाषा में नहीं है। किन्तु देववाणी में है। संस्कृत भाषा वेदों की भाषा से निकली है और अन्य सब भाषाएँ संस्कृत से।
६. वेदों में इतिहास नहीं है। वेदों में यौगिक शब्द है, रूढ़ि नहीं। अर्थात् वेदों में ऐसे शब्द आए हैं जो हमको मनुष्यों के से नाम मालूम होते हैं। परन्तु उनके और अर्थ थे। वह मनुष्य न थे।
७. वेदों में राम, कृष्ण आदि अवतारों का वर्णन नहीं है।
८. वेदों में मुख्यतः तीन बातें हैं- ईश्वर के लिए भिन्न-भिन्न अवसरों के अनुकूल प्रार्थनायें, सृष्टि के नियम, मनुष्यों को उपदेश।
९. वेदों में इन्द्र, अग्नि, वरूण आदि शब्द कहीं ईश्वर के लिए आए हैं और कहीं भौतिक पदार्थों जैसे आग पानी आदि के लिए। इसका पता संगति से लग सकता है।
१०. पहले संसार भर में वेदमत ही था। पीछे से भिन्न-भिन्न मत हो गए। पृष्ठ-८

**अन्य शास्त्र**

आर्यसमाज वेदों को तो ईश्वर कृत मानता है। परन्तु इनके अतिरिक्त नीचे लिखे ऋषियों के ग्रन्थों को भी उस हद तक प्रमाणिक मानता है जिस हद तक वह वेदों के अनुकूल हो :-

१. चार ब्राह्मण ग्रन्थ- एतरेय, साम, शतपथ और गोपथ।
२. ग्यारह उपनिषद्- ईश, केन, कठ, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, वृहदारण्यक, प्रश्न औरश्वेताश्वेतर।
३. छः दर्शन- गौतम का न्याय, कणाद का वैशेषिक, कपिल का सांख्य, पतंजलि का योग, जैमिनी का पूर्व मीमांसा, व्यास का उत्तर-मीमांसा या वेदान्त।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


४. मानव धर्मशास्त्र का मनुस्मृति।
५. गोमिल गृह्यसूत्र, पारस्कर गृह्यसूत्र, आश्वलायन गृह्यसूत्र। पृ.-१०
६. स्वामी दयानन्द के ग्रन्थ, सत्यार्थ-प्रकाश, ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका आदि।

**मनुष्य-समाज**

१. पहले पहल मनुष्य तिब्बत में उत्पन्न हुए, वहाँ से सब जगह फैल गए। आर्यजाति से पहले और कोई जाति नहीं थी। आर्यजाति के ही भिन्न-भिन्न देश में भिन्न-भिन्न नाम हो गए हैं।
२. पहले-पहल एक आदमी और एक औरत नहीं किन्तु बहुत से आदमी और बहुत सी औरते पैदा हुई थी। फिर इन्हीं की सन्तान आपस में विवाह करके बढ़ गई।
३. सब मनुष्य जन्म से समान हैं। गुण, कर्म स्वभाव के अनुसार उनके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र नाम हुए।
४. पढ़ने-पढ़ाने वाले नेताओं का नाम बाह्मण है, शारीरिक रक्षाकरने वालों का नाम क्षत्रिय, व्यापार और कला कौशल करने वालों को वैश्य, जैसे काछी, माली, ठठेर, तेली, कुम्हार, सुनार, बढ़ई, लुहार, इन्जीनियर, हलवाई, बजाज यह सब वैश्य हैं। जो सेवा करते हैं वह शूद्र हैं। वर्ण बदल सकता है। अर्थात् शूद्र ब्राह्मण हो सकता है और ब्राह्मण शूद्र।
५. शूद्र का काम नीच नहीं है और न उससे किसी को घृणा करनी चाहिए।
६. वेद का अधिकार सबको हैं।

**यज्ञ-विषयक**

पाँच यज्ञ हर आर्य को प्रतिदिन करने चाहिए।

१. ब्रह्म-यज्ञ अर्थात ईश्वर की पूजा और वेद पाठ।
२. देव-यज्ञ अर्थात हवन।
३. भ्रत-यज्ञ अर्थात-चींटी, गाय, कुत्ता आदि आश्रित जींवों को भोजन।
४. पितृ-यज्ञ, अर्थात-जीवित माता-पिता का सत्कार। मरे हुए माता-पिता का सत्कार करना असम्भव है। इसलिए मृतकों का श्राद्ध, तर्पण नहीं करना चाहिए।
५. अतिथि, अर्थात-साधु सन्यासी आदि आए हुए का सत्कार करना। पृष्ठ-१२

**संस्कार-विषयक**

प्रत्येक आर्य के सोलह संस्कार होने चाहिए।

तीन जन्म से पहले (१) - गर्भाधान, (२)- पुँसवन, (३)- सीमान्तोन्नयन।

छः बचपन में (१)- जातकर्म (२)- नामकरण, (३)-निष्क्रमण, (४)- अन्न प्राशन, (५)- मुण्डन, (६)- कर्णवेध)

दो विद्या पढ़ना आरम्भ करने के समय (१) समावर्तन, (२)- विवाह। विवाह- तीन पिछली अवस्था में (१)- वानप्रस्थ, (२)- सन्यास, (३) अन्त्येष्टि।

**विवाह-विषयक**

१. विवाह लड़की का कम से कम सोलह वर्ष की अवस्था में और लड़के का पच्चीस वर्ष की अवस्था में करना चाहिए।
२. एक पुरूष एक ही स्त्री से विवाह कर सकता है।
३. अक्षतयोनि विधवा का अक्षतवीर्य पुरूष के साथ विवाह ठीक है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



४. अक्षतयोनि विधवा का क्षतयोनि पुरूष के साथ विवाह हो सकता है यदि आवश्यकता हो। पृ. १२

---

१- गंगाप्रसाद उपाध्याय-आर्यसमाज क्या है?- पृष्ठ-६ से १३ तक
यह एक ट्रैक्ट है जो आर्यसमाज चौक, प्रयाग से निकलता था और यह विभिन्न ग्रामों, कस्बों, नगरों व शहरों में भारी संख्या में आर्यसमाजियों द्वारा उन दिनों वितरित किया जाता था। यह ट्रैक्ट-ट्रैक्टों का संग्रह-८१ के रूप में आर्यसमाजी श्री राजेन्द्र कुमार सिंह निवासी बी.-२२/१५७-ई-। विनायका के यहाँ उपलब्ध है।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट - ७

ऋषि दयानन्द का व्यक्तित्व महापुरूषों की दृष्टि में महर्षि दयानन्द हिन्दुस्तान के आधुनिक ऋषियों में, सुधारकों में और श्रेष्ठ पुरूषों में एक थे। इनका चरित्र मेरे लिए ईर्ष्या का विषय है। उनके जीवन का प्रभाव हिन्दुस्तान पर बहुत अधिक पड़ा है।

**मोहनदास कर्मचन्द गाँधी**

मेरा सादर प्रणाम उस गुरू दयानन्द को है, जिसका उद्देश्य भारतवर्ष को अविद्या, आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्त्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था। उसे मेरा बारम्बार प्रणाम है। आधुनिक भारत के मार्गदर्शक महर्षि दयानन्दजी सरस्वती को मैं सादर श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ।

**रवीन्द्र नाथ टैगोर**

इस बात का श्रेय दयानन्द को ही प्राप्त होगा कि उन्होंने सर्वप्रथम वेदों की व्याख्या के लिए निर्दोष मार्ग का अवलम्बन किया था। ऋषि दयानन्द ने उन द्वारों की कुंजी प्राप्त की है जो युगों से बन्द थे और उसने पटे हुए झरनों का मुख खोल दिया।

**अरविन्द घोष**

स्वामी दयानन्द एक विद्वान थे। उनके धर्म नियमो की नींव ईश्वर कृत वेदों पर थी। उन्हें वेद कण्ठस्थ थे। उनके मन और मस्तिष्क में वेदों ने घर किया हुआ था। वर्तमान समय में संस्कृत का एक ही बड़ा विद्वान, साहित्य का पुतला, वेदों के महत्व को समझने वाला अत्यन्त प्रबल नैयायिक और विचारक यदि भारतवर्ष में हुआ है तो वह महर्षि दयानन्द सरस्वती ही था।

**मैक्समूलर**

हमें वेदों के अध्ययन को प्रबल प्रोत्साहन देने और यह सिद्ध करने के लिए की मूर्तिपूजा, वेद सम्मत नहीं है, स्वामी दयानन्द के उपकार को अवश्य स्वीकार करना चाहिए।

**विण्टरबिट्ज**

स्वामी दयानन्द नि:सन्देह एक ऋषि थे। उनका प्रादुर्भाव लोगों को कारागार से मुक्त करने और जाति बन्धन तोड़ने के लिए हुआ था।

**पाल रिचर्ड**

वह इतने अच्छे और विद्वान आदमी थे कि प्रत्येक धर्म अनुयायियों के सम्मान के पात्र थे।[१]

**सैयद अहम खॉ**

स्वामी दयानन्द मेरे गुरू हैं। संसार में मैंने सिर्फ उन्हें अपना गुरू माना है। आर्यसमाज मेरी माता है। इन दोनों की गोद में खेला हूँ। मेरा ह्दय और मस्तिष्क दोनों को उन्होंने गढ़ा है। मेरे गुरू एक महान स्वतन्त्र मनुष्य थे, इसका मुझे अभिमान है। [२]

**लाला लाजपत राय**

स्वामी दयानन्द एक महान सुधारक और प्रबल क्रान्तिकारी महापुरूष तो थे ही साथ ही उनके ह्रंदय में सामाजिक अन्यायों को उखाड़ फकनें की प्रचण्ड अग्नि विद्यमान थी।[३]

**महान दार्शनिक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



स्वामी दयानन्द के कार्यों को मूक क्रान्ति का नाम दिया।[४]

**डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन**

स्वामी दयानन्द बेनजीर शख्स थे।[५]

**प्रसिद्ध विद्वान सर सैय्यद अहमद खाँ**

स्वामी दयानन्दजी ने सर्वप्रथम घोषणा की कि भारत भारतियों के लिए है।

**इन्डिया ए नेशन पुस्तक में एनीबेसेन्ट**

स्वामी दयानन्द सरस्वती स्वराज्य का प्रथम सन्देशवाहक तथा मानवता के उपासक थे।

**लोकमान्य बालगंगाधर तिलक**

स्वामी दयानन्द विचारों की नयी प्रक्रिया शुरू करने वाले चिन्तकों में से एक थे। भारत की खोज पुस्तक में।

**पं. जवाहर लाल नेहरू**

यह स्वीकार करना पड़ेगा कि भारत के सांस्कृतिक व राष्ट्र के नव जागरण में स्वामी दयानन्द का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उसकी मान्यताओं और सिद्धान्तों ने एक बार तो हीनभाव ग्रस्त इस जाति को अभूतपूर्व उत्साह से भर दिया।

**एमर्सन**

सचमुच में एक आला इन्सान ही नहीं फरिस्ते थे।

**कर्नल अलकाट**

वे भारतवर्ष के कीर्ति स्तम्भ थे, यह सब को स्वीकार करना पड़ेगा। उनको खोजकर भारत की भीषण शोचनीय हानि हुई।

**ग्रास ब्रोब्ड**

स्वामी दयानन्द एकेश्वरवादी, वेद पर अपने सिद्धांतों को मानन वाले, प्रगति समर्थक तथा देशों द्वारक थे।

**मोनियर विलियम्स**

उनका विश्वास था कि आर्यजाति चुनी हुई जाति है, भारत चुना हुआ देश है और वेद चुनी हुई धार्मिक पुस्तक है।

**रेमजे मेकडानल्ड**

स्वामी दयानन्द अपने देश के लिए गौरवस्वरूप थे, दयानन्द को खोकर भारत को महान हानि उठानी पड़ी है। वे एक महान और श्रेष्ठ पुरूष थे। वे आधुनिक भारत के मार्ग दर्शक थे जिससे देश की पतितावस्था में भी हिन्दुओं को प्रभु की भक्ति और मानव समाज की सेवा के सीधे व सच्चे मार्ग का दर्शन कराया।

**रवीन्द्रनाथ ठाकुर**

उन्होंने भारत में दिव्य ज्योति प्रकाशित की थी। वे हिन्दू संस्कृति को अप्रतिम तथा भारत माता के अक्षय पात्र थे।

**मदन मोहन मालवीय**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


एक मनुष्य, जिसकी आत्मा में परमात्मा है धर्म चक्षुओं में दिव्य तेज है और हाथों में इतनी शक्ति है कि जीवन तत्त्व से अभीष्ट स्वरूप वाली मूर्ति गढ़ सके। तथा कल्पना की क्रिया में परिणत कर सके। वे स्वयं दृढ़ चट्टान थे।

योगी अरबिन्द घोष

मैंने जो कुछ प्राप्त किया है, उसमें सबसे बड़ा हाथ उस वर्ष हितैषी, वेदज्ञ और तेजस्वी युगदृष्टा ऋषि दयानन्द का है।

श्यामजी कृष्ण वर्मा

महर्षि दयानन्द स्वाधीनता संग्राम के सर्व प्रथम योद्धा और हिन्दू जाति के रक्षक थे। उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने राष्ट्र की महान सेवा की है और कर रही है। 'सत्यार्थ प्रकाश' की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मजहब की शेखी नहीं मार सकता।

स्वातन्त्रयवीर सावरकर

महर्षि दयानन्द वैदिक सूर्य थे, उन्होंने असंख्य मनुष्यों को सत्य का मार्ग बताते हुए देश की जनता पर महान उपकार किए।

देवता स्वरूप भाई परमानंद एम.ए.

स्वामी दयानन्द महान सुधारक थे, उन्होंने युवकों के हृदय में त्याग, परोपकार और देशभक्ति की ज्योति जलाई।

–डॉ. हरदयालद्व

स्वामी दयानंदजी को मैं एक धार्मिक और सामाजिक सुधारक तथा कर्म योगी मानता हूँ। संगठन कार्यों में सामर्थ्य और प्रसार की दृष्टि से आर्यसमाज अनुपम संख्या है। संगठन कार्य, दृढ़ता, उत्साह और समन्वयात्मकता की दृष्टि से आर्यसमाज की समानता कोई समाज नहीं कर सकता।

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस

महर्षि दयानन्द के उपदेशों ने करोड़ों लोगों को जीवन, नवचेतना और नया दृष्टिकोण प्रदान किया है। हमें संकल्प लेना चाहिए कि उनके बताए मार्ग पर चल कर देश को सुख, शांति और वैभव पूर्ण बनाएगें।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

स्वामीजी को हिन्दुत्व का उद्धारक कहा जा सकता है।

राजगोपालाचार्य

स्वामी दयानन्द ने सारे देश में एक भाषा, खादी, स्वदेश: प्रचार, दलितोद्धार, राष्ट्रीय और सामाजिक एकता, उत्कट देशाभिमान और स्वराज्य की घोषणा, यह सब ऋषि ने देश को दिया।

विट्ठल भाई पटेल

महर्षि दयानन्द ने पद दलित भारत का पुन: उत्थान, राष्ट्र को नव जीवन का संदेश तथा अन्ध श्रद्धा को दूर कर राष्ट्र का निर्माण किया।

मोरारजी देसाई

ऋषि दयानन्द ने हिन्दू धर्म का कल्याण तथा ऐसे समय में देश का नेतृत्व किया जब बुराईयों की ओर संकेत करना भी कठिन काम था। उन्होंने हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने का घोषनाद किया और छुआ–छूत जाति पाँति के विरूद्ध आन्दोलन छेड़ा।

लाल बहादुर शास्त्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



स्वामी दयानन्दजी वर्तमान भारत के सर्वप्रथम महान निर्माता थे। नि:संदेह उनकी स्मृति भावी भारत को समृद्ध करती रहेगी।

**के.एम.मुन्शी**

''गांधीजी राष्ट्र के पिता थे'' तो दयानन्दजी सरस्वती राष्ट्र के ''पितामह'' थे। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि जगत की सब संस्कृतियों में सबसे अच्छी संस्कृति आर्यों की है। उन्होंने ईसाई मत और इस्लाम के हमलों से देश की रक्षा की।

**अनन्तशयनम अय्यंगार**

दयानन्द उत्कृष्ट देश भक्त थे। उनका जीवन राष्ट्र निर्माण के लिए स्फूर्ति दायक, बल दायक और मानवीय है।

**साधु टी.एल. वास्वानी**

स्वामी दयानन्द उत्कृष्ट भारत वर्ष के विख्यात पुरूषों की श्रेणी में एकं उज्जवल नक्षत्र थे।

**एम.ए.रंगाचार्य**

कोई भी हिन्दू आर्यसमाज में आने पर उसमें बहुत विशेषता आ जाती है उसके अन्दर उत्साह देश भक्ति, कर्मशीलता और एक प्रकार की अद्भुत स्प्रिट आ जाती है आर्यसमाजी स्वराज्य के कार्यों में ९० प्रतिशत योगदान देने वाले थे जब कि अन्य सोसाइटियों में मुश्किल से २-३ प्रतिशत।

**मौलाना हसरत मोहबी**

१९वीं सदी में स्वामी दयानन्दजी ने भारत के लिए जो अमूल्य काम किया है उससे हिन्दू जाति के साथ-साथ मुसलमानों तथा धर्मावलम्बियों को भी बहुत लाभ पहुँचा है।

**पीर मुहम्मद यूनुस**

ऋषि दयानन्द से बढ़कर हमारा उपकार इधर किसी भी दूसरे महापुरूष ने नहीं किया, जिन्होंने स्वयं कुछ भी न लेकर हमें अपार ज्ञान राशि वेदों से परिचित करा दिया।[९] पृ ४८

**महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'**

---

१. आर्यसमाज परिचय- महेन्द्र प्रताप शास्त्री-पृष्ठ-१०, ११, १२
२. स्वाधीनता संग्राम- बदलते परिप्रेक्ष्य-राम विलास शर्मा- पृ.-९३
३. आर्यसेवक-आर्यसमाज स्थापना शताब्दी विशेषांक-पृष्ठ-३७ सम्पादक- विश्वम्भर प्रसाद शर्मा, अप्रैल, १९७५
४. साप्ताहिक आर्य सन्देश- दिल्ली आर्यप्रतिनिधिसभा का मुखपत्र रविवार ७ अप्रैल १९९६, सम्पादक-नरेन्द्र विद्यावाचस्पति, पृ.५
५. आर्य सेवक- पृष्ठ-३७
६. आर्य सन्देश- पृष्ठ-५
७. वही-पृष्ठ-३
८. आर्यसमाज सीसामऊ, कानपुर-पृष्ठ-१
स्वर्ण जयन्ती स्मारिका-आर्यसमाज सीसामऊ, कानपुर-पृष्ठ (४३-४८) नवम्बर-१९८५ प्रधान सम्पादक-श्री पं. लक्ष्मण कुमार शास्त्री
९. वही-पृष्ठ २, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८.

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

## द्वितीय अध्याय

# आर्यसमाज का प्रचार और प्रसार

वैदिकधर्म के विशुद्ध स्वरूप को समाज में प्रचारित करने के लिए सामाजिक न्याय और समता की स्थापना, आर्यों के प्राचीन गौरव पर आधारित शिक्षा की व्यवस्था, भारतीय संस्कृति के प्रति गौरव की अनुभूति जनसामान्य को कराने के ध्येय से उत्तर प्रदेश में स्वामी दयानन्द ने सनातन धर्म पण्डितों, ईसाई मिशनरियों तथा मुस्लिम मौलवियों से अनेक शास्त्रार्थ किए ; अनेक स्थानों का भ्रमण एवं प्रवचन किए, इस सम्बन्ध में पं० शिवदयालु ने कहा है कि स्वामी दयानन्द ने अपने ऋषि जीवन के २७ वर्षों में से अज्ञातवास एवं अन्य प्रान्तों के प्रचार सम्बन्धी ७ वर्षों को छोड़कर २० वर्ष उत्तर प्रदेश में ही व्यतीत किए। इसप्रकार उत्तर प्रदेश ही ऋषियों के, योगियों के अनुसन्धान, विशेष शिक्षण, वेदानुशीलन, ग्रन्थ-निर्माण, पाखण्ड-खण्डन, धर्म-प्रचार एवं शास्त्रार्थ कार्यों का विशेष केन्द्र रहा है।[१]

बम्बई और लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना एवं उसके निर्मित सर्वविध हितकारी नियम 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' सिद्धान्त पर आधारित आर्यसमाज का भारत में प्रचार और प्रसार होना स्वाभाविक था। आर्यसमाज संगठन लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों पर आधारित था जो इसकी अनुपम विशेषता थी। संगठनों के निर्माण कार्य में मतदान, निर्वाचन तथा प्रतिनिधित्व आदि का आश्रय लिया गया है।[२] लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों के कारण ही आर्यसमाज संगठन में सभी जाति, वर्ग एवं विविध मतों को मानने वाले अनुयायियों को सम्मिलित किया गया था। डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार ने कहा है कि क्रिश्चिएनिटी और इस्लाम के समान आर्यसमाज कोई नया धार्मिक मत नहीं है और न वह शैव, वैष्णव, शाक्त आदि के समान वैदिकधर्म का कोई सम्प्रदाय ही है[३] और न इस संगठन का कार्यक्षेत्र किसी एक देश, एक जाति या एक जनसमुदाय तक सीमित है।[४] इस कारण से इस समाज में साधु-संन्यासी, विद्वान्, उपदेशक, पुरोहित,[५] प्रचारक, धनी व निर्धन, सवर्ण व दलित सब वर्गों के व्यक्ति आर्यसमाज के सदस्य थे।[६] किसी भी संगठन शक्ति के लिए यह अति उत्तम व्यवस्था है।

विशेषकर उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज के प्रचार और प्रसार के अन्तर्गत सामाजिक-शैक्षणिक क्षेत्रों में जो सुधार के कार्यक्रमों को प्रस्तुत किया जा रहा था, उसके मूल में आर्यसमाज का अद्वितीय संगठन इस प्रदेश में कार्य कर रहा था। इसके अन्तर्गत महर्षि दयानन्द द्वारा परोपकारिणी सभा की स्थापना, उनके देहावसान के बाद उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना आदि महत्त्वपूर्ण थे।

उत्तर प्रदेश को ही यह गौरव प्राप्त है जहाँ उसके अन्दर महर्षि के जीवनकाल में स्थापित परोपकारिणी सभा (मेरठ, सन्-१८८० ई.)[७] व उनके देहावसान के बाद उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा (मेरठ, सन्-१८८६ ई.),[८] सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, अखिल भारतीय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हिन्दू महासभा, भारतवर्षीय राजार्य सभा का निर्माण[९] हुआ था। इस प्रकार के सभा एवं समितियों की स्थापना के पूर्व स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार, उत्तर प्रदेश के विविध नगरों में स्थापित आर्यसमाजों द्वारा किया जा रहा था। ये आर्यसमाजें स्वायत्त संगठन[१०] के रूप में विद्यमान थे। इनका कोई केन्द्रीय संगठन नहीं था। महर्षि के जीवनकाल में आर्यसमाज का जो प्रचार-प्रसार हुआ वह प्राय: उनके कर्तृत्व का परिणाम था।[११] इन्द्र विद्यावाचस्पति ने कहा है कि– "दयानन्द ने आर्यसमाज का जो संगठन बनाया है उसकी मुख्य विशेषताएँ दो हैं।" वह बिल्कुल स्वाधीन और अपने आप में सम्पूर्ण और साथ ही लोकमत का सच्चा प्रतिनिधि है।[१२] क्योंकि दयानन्द द्वारा निर्मित २८ नियमों में तीसरे नियम; इस समाज में देश के मध्य एक प्रधान प्रशाखा होंगे, के आधार पर प्रारम्भ से ही स्वामी दयानन्द का विचार आर्यसमाज को अत्यन्त व्यापंक, सर्वोच्च शक्तिशाली संगठन बनाने का था।

यहाँ आर्यसमाज के विस्तार का क्रमबद्ध विवरण देने के लिए यह आवश्यक है कि उत्तर प्रदेश के गौरवपूर्ण इतिहास का संक्षिप्त अध्ययन किया जाए।

**उत्तर प्रदेश 'दिग्दर्शन'–** भारत देश के उत्तर दिशा में स्थित उत्तर प्रदेश राज्य का महत्त्वपूर्ण इतिहास रहा है। वैदिककाल से लेकर वर्तमान काल तक देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक गतिविधियों में उत्तर प्रदेश की केन्द्रीय भूमिका रही है।[१३] भौगोलिक दृष्टि से उत्तर प्रदेश का भारत में चौथा स्थान है। इसके उत्तर में महान् हिमालय तथा दक्षिण में सतपुड़ा एवं विन्ध्य-पर्वत मालाओं के बीच यह प्रदेश स्थित है। इसके उत्तर में चीन, नेपाल एवं तिब्बत देश स्थित है तथा दक्षिण में मध्यप्रदेश राज्य, पूरब में बिहार राज्य, पश्चिम में हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान व हिमाचल प्रदेश स्थित है।[१४] इस प्रदेश का भौगोलिक आकार सिंहवत है।[१५] वर्तमान में उत्तर प्रदेश के उत्तर एवं पश्चिम में शीत प्रभाग उत्तराखण्ड राज्य को बनाए जाने से इसका सिंह स्वरूप बदला है।

इतिहास में इस प्रदेश को कभी आर्यावर्त्त, कभी मध्य देश और कभी हिन्दुस्तान के नाम से जाना जाता रहा है। यह पूरा क्षेत्र, जो पूर्व में प्रयाग तक फैला हुआ था, मध्य देश के नाम से अभिहित हुआ।[१६] इसका प्राचीन नाम ब्रह्मावर्त्त व ब्रह्मर्षि प्रदेश के नाम से प्रसिद्ध था।[१७]

यह प्रदेश ब्रह्मवेत्ता, ऋषियों, मुनियों एवं योगियों की कर्मस्थली रही है, जिन्होंने अपने ज्ञान के प्रकाश से सारे संसार को प्रकाशित किया है। वैदिककाल के महान् मुनियों जैसे- भारद्वाज, याज्ञवल्क्य, वशिष्ठ, विश्वामित्र, वाल्मीकि आदि ने इसी ब्रह्मर्षि देश को अपनी कर्मभूमि बनाया था।[१८] परम पावनी वैदिकऋचाओं पर गम्भीर चिन्तन कर बड़े-बड़े आख्यान ग्रन्थ, उपनिषद्, दर्शन आदि का यहाँ निर्माण हुआ। 'रामायण ' और 'महाभारत ' जैसे संस्कृत महाकाव्यों की रचना भी इसी प्रदेश में हुई ।[१९]

उत्तर प्रदेश को हिन्दुओं के भगवान् श्रीराम और योगिराज श्रीकृष्ण की जन्मस्थली बनने का गौरव प्राप्त है। इस प्रदेश में पवित्र गंगा, यमुना, सरयू तथा अन्य महत्त्वपूर्ण सलिला सरिताएँ प्रवाहित हैं।[२०] पवित्र पुण्य सलिला सरिताओं का उद्गम स्थान गंगोत्री और यमुनोत्री नामक पर्वत कन्दरायें[२१] तथा पवित्र तीर्थों की भूमि मथुरा, हरिद्वार, काशी, प्रयाग, अयोध्या भी इस प्रदेश में स्थित है।[२२]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


उत्तर प्रदेश का केदारखण्ड जहाँ ध्रुवतारा की धवल धारा प्रकट हुई है और जहाँ आदि गुरु शंकराचार्य ने उत्तर प्रदेश के घुर उत्तर में हिमाच्छादित हिमालय पर्वत श्रृंखला के मध्य समाधि ली थी। वहाँ उन्होंने प्रसिद्ध केदारनाथ मन्दिर का निर्माण करवाया था। इसके साथ ही उन्होंने हिन्दुओं के प्रसिद्ध चार धामों– उत्तर में बद्रीनाथ, पूरब में जगन्नाथपुरी, पश्चिम में द्वारका और दक्षिण में श्रृंगेरी पीठ की स्थापना की। उनके द्वारा स्थापित यह चारों धाम (पीठ) सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में बाँधने का महान् एवं स्तुत्य प्रयास था।[२३]

पौराणिक साक्ष्यों के अनुसार मानववंश की शुरुआत भी उत्तर प्रदेश के निकट कनखल में ब्रह्मा के पुत्र दक्ष प्रजापति ने की थी।[२४] वेद संहिताओं का सम्पादक तथा वेदान्त सूत्र के रचयिता महर्षि वेदव्यास ने भी इसी प्रदेश को सुशोभित किया था।[२५]

इस प्रकार उत्तर प्रदेश का स्थान, भारत के अन्य राज्यों की अपेक्षा ऐतिहासिक एवं गौरवपूर्ण रहा है। वैदिककाल में इसका इतिहास अत्यन्त गौरवपूर्ण रहा है। मध्यकाल में उत्तर प्रदेश अनेक मुस्लिम शासकों के अधीन रहा और ऐसे ही समय में इस प्रदेश में नई संश्लेषित हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति का जन्म हुआ।[२६] भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में तो इस प्रदेश का विशेष योगदान रहा है। सन्-१८५७ ई. में हुए प्रथम स्वतन्त्रता आन्दोलन की शुरुआत इसी प्रदेश से हुई जिसने इस देश के इतिहास को काफी प्रभावित किया। इस प्रदेश से शुरू हुए प्रथम स्वतन्त्रता आन्दोलन के फलस्वरूप ही सन्-१९४७ ई. में अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा और देश अंग्रेजों की दासता से मुक्त हुआ।[२७]

आधुनिक काल, अंग्रेजी शासन काल में भी उत्तर प्रदेश ने विद्वत्ता के क्षेत्र में अपनी अग्रगण्यता कायम रखी।[२८] अंग्रेजों ने आगरा और अवध नामक दो प्रान्तों को मिलाकर सन्-१९३५ में इसे संयुक्त-प्रान्त (आगरा और अवध संयुक्त-प्रदेश) कर दिया और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् १२ जनवरी १९५० को इस संयुक्त-प्रान्त का नाम ही "उत्तर प्रदेश" रख दिया गया।[२९]

क्षेत्रीय अभिलेखागार, वाराणसी में उपलब्ध "जुडिशियल क्रिमिनल विभाग द्वारा नोटिफिकेशन संख्या छः ३४९-१९०९" सूची संख्या-४ फाइल नं० १०७, विभाग-१८, उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में विवरण प्राप्त होता है। जिसके अन्तर्गत संयुक्त-प्रान्त (आगरा और अवध) के डिवीजन और उसमें सम्मिलित शहरों की सूची उपलब्ध है। आर्यसमाज की स्थापना का उल्लेख करते समय डिवीजन (उत्तर प्रदेश) के अनुसार जिला और शहरों के नाम को यथास्थान दर्शाया गया है।

इस प्रकार उत्तर प्रदेश के गौरवपूर्ण इतिहास व सामयिक स्थिति की जानकारी प्राप्ति के उपरान्त, उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार का विवरण देना समीचीन होगा। इसके लिए सर्वप्रथम आर्यसमाज के विकास क्रमों को तीन भागों में (सन्-१८७५ से १८८३ ई. तक, सन्-१८८३ से १९१२ ई. तक, सन्-१९१२ से १९४७ ई. तक) करके प्रमुख आर्यसमाजों का विवरण दिया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**आर्यसमाज का प्रसार (सन्- १८७५ से १८८३ ई. तक)** – बम्बई और लाहौर में निर्मित लोकतंत्रात्मक पद्धति पर आधारित आर्यसमाज के नियम, उपनियम व उसके आदर्शात्मक सिद्धान्तों से प्रभावित होकर समाज के सुशिक्षित वर्ग में आर्यसमाज की स्थापना के प्रति अपूर्व जागृति हुई। इसके फलस्वरूप भारत के विविध राज्यों में आर्यसमाज की स्थापना का तीव्र गति से विस्तार होता गया। वैदिकधर्म का पुनरुत्थान करते हुए सबसे अधिक समय स्वामी दयानन्द ने उत्तर प्रदेश के विविध तीर्थस्थानों में व्यतीत किए थे जिसके कारण उनके देहावसान (सन्-१८८३ ई.) तक भारत में आर्यसमाजों की संख्या ८५ के लगभग थी। उनमें से ५० से भी अधिक समाजों का उत्तर प्रदेश में होना आर्यसमाज की दृष्टि से इस प्रदेश के महत्व को दर्शाता है।[३०] उत्तर प्रदेश में पहला आर्यसमाज १८ अप्रैल, १८७५ ई. के दिन मिर्जापुर में स्थापित हुआ था। उसके बाद रुड़की (जिला सहारनपुर) में २० अगस्त, १८७८ को, मेरठ में २९ सितम्बर, १८७८ को, देहरादून में २९ जून १८७९ को, फर्रुखाबाद में १२ जुलाई, १८७९ को, मुरादाबाद में २० जुलाई, १८७९ को और आगरा में २६ फरवरी, सन्-१८८१ को आर्यसमाजों की स्थापना हुई थी।[३१] आगरा आर्यसमाज ने स्वामी दयानन्द को अन्तिम विदाई दी थी।[३२]

इसप्रकार सन्-१८७७-७८ के बाद उत्तर प्रदेश और अन्य प्रान्तों में आर्यसमाज का प्रसार जिस तेजी के साथ प्रारम्भ हुआ, उसमें स्वामी दयानन्द का साहित्य एक महत्त्वपूर्ण कारण था।[३३] उनके अनेक ग्रन्थ इस समय तक प्रकाशित हो चुके थे और उनका वेदभाष्य भी प्रतिमास नियमित रूप से प्रकाशित हो रहा था।[३४] सन्-१८७५ में सत्यार्थ-प्रकाश का प्रथम संस्करण छपकर प्रकाशित हो गया था।[३५] स्वामी दयानन्द द्वारा रचित यह पुस्तक उनके सिद्धान्तों का वास्तविक विचार देती है।[३६] पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि महर्षि के देहावसान तक आर्यसमाज का इतिहास उनके कर्तृत्व का परिणाम था।

महर्षि के जीवनकाल में उत्तर प्रदेश के जिन पचास नगरों में आर्यसमाज की स्थापना हुई थी, उक्त आर्यसमाजों की स्थापना के अतिरिक्त बदायूँ, बिजनौर, नजीबाबाद, शाहजहाँपुर, हरदोई, बरेली, कर्णवास, सहारनपुर, सिकन्दराबाद, पीलीभीत, प्रयाग, लखनऊ, कानपुर, काशी, सीतापुर, गोरखपुर और आजमगढ़ उल्लेखनीय हैं।[३७]

प्रारम्भ में आर्यसमाज का पदाधिकारी व सदस्य होना एक साहस की बात थी, क्योंकि वैदिकधर्म के पुनरुत्थान के लिए आर्यसमाज रूढ़िगत प्राचीन परम्पराओं व मान्यताओं का घोर विरोध करता था। इस्लाम व ईसाइयत के विरुद्ध प्रचार, सामाजिक विषमता के विरुद्ध प्रचार, कर्म पर आधारित वर्ण व्यवस्था का समर्थन, स्त्री शिक्षा एवं विधवा-विवाह का समर्थन,आर्ष शैली पर आधारित शिक्षणालय की स्थापना आदि ऐसे महत्त्वपूर्ण कारण थे जिसे प्रगतिशील एवं क्रान्तिकारी व्यक्तित्व ही इन सिद्धान्तों का समर्थन करते हुए समाज में प्रचारित कर सकता था। ऐसे सदस्यों एवं पदाधिकारियों के विवरण को उत्तर प्रदेश में प्रमुख आर्यसमाज की स्थापना का उल्लेख करते समय दिया जाएगा। इसी क्रम में यहाँ सर्वप्रथम मिर्जापुर में स्थापित आर्यसमाज का विवरण देना समीचीन है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**मिर्जापुर आर्यसमाज** – संयुक्त-प्रान्त (वर्तमान उत्तर प्रदेश) के दक्षिणी-पूर्वी क्षेत्र में स्थित मिर्जापुर आर्यसमाज का विशेष महत्व है।[३८] उत्तरी भारत के पूर्वी क्षेत्र में और महर्षि के जीवनकाल में, जिन नगरों में आर्यसमाजों की स्थापना हुई थी, मिर्जापुर आर्यसमाज का विशेष महत्व था। वहाँ का आर्यसमाज उत्तर भारत में सबसे पुराना है।[३९] इसी नगर को यह गौरव प्राप्त था कि स्वामी दयानन्द का यहाँ प्रचार यात्रा करते हुए पाँच बार आगमन हुआ। स्वामीजी के जीवनकाल में ही चैत्र शुक्ल १० बृहस्पतिवार सं० १९३२ वि. में आर्यसमाज स्थापित हो गया था।[४०] डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार इस समाज की स्थापना दिनांक १८ अप्रैल सन्-१८७५ ई. के दिन हुई थी।[४१]

मिर्जापुर आर्यसमाज की स्थापना महर्षि दयानन्द के अनुयायियों द्वारा उनके सिद्धान्तों से प्रभावित होकर किया गया था। ये सज्जन कानपुर, काशी आदि में महर्षि दयानन्द के सम्पर्क में आए थे और उनके उपदेशों को सुनकर उनके भक्त या अनुयायी बन गए थे। इनमें पण्डित बन्धुदेव भारद्वाज, पण्डित रामप्रकाश शर्मा, पण्डित रामानन्द पाठक, बाबू लक्ष्मीनारायण और मास्टर नन्हूलाल के नाम उल्लेखनीय हैं।[४२] पं. शिवदयालु के अनुसार प्रारम्भिक काल के उल्लेखनीय पुरुषों में श्रीरामचन्द्र घोष, चौ. गुरुचरण रईस मुंशी, भगवती प्रसाद जी, म. गोपाल जी, कविवर पं. रामप्रकाश, पं. भोलानाथ जी, पं. घनश्यामाचार्य, श्री कालिका, श्री रामचन्द्र तिवारी, महा. रामदीनजी सेठ,श्री पुरुषोत्तम दासजी आर्य, श्री श्रीरामजी एवं मुंशी लक्ष्मणप्रसादजी हैं।[४३]

मिर्जापुर आर्यसमाज के प्रथम-प्रधान पं. गुरुचरन लाल निर्वाचित हुए और पण्डित रामप्रकाश शर्मा मंत्री। इसके अतिरिक्त अन्य प्रमुख सभासद पण्डित रामानन्द पाठक, पण्डित बन्धुदेव भारद्वाज, पण्डित सरयू प्रसाद शुक्ल, सेठ रामरतन लड्ढा, पण्डित रामाधीन तिवारी, पण्डित मोतीराम शर्मा, पण्डित कालिकाप्रसाद शर्मा, श्रीरामचन्द्र घोष, मुंशी भवानीप्रसाद, सेठ भवानीराम, श्री लक्ष्मीनारायण और मास्टर नन्हूलाल थे।[४४]

श्री मास्टर नन्हूलाल ने आर्यसमाज मिर्जापुर का इतिहास लिखा था। ये मिर्जापुर आर्यसमाज के संस्थापकों में से थे और अपने समाज का उनके द्वारा लिखा हुआ इतिहास (सन्-१८९० तक का वृत्तान्त) वस्तुतः अत्यन्त प्रमाणिक है।[४५]

प्रारम्भ में इस आर्यसमाज का अपना भवन नहीं था। सन्-१८९८ में इस समाज के अपने भवन का निर्माण हुआ और १९०१ में वहाँ आर्यकन्या पाठशाला की भी स्थापना कर दी गयी थी। स्वामी दर्शनानन्द तथा पण्डित लेखराम सदृश आर्यविद्वान् व नेता भी इस समाज के वार्षिकोत्सव पर व अन्य अवसरों पर मिर्जापुर पधारकर वैदिकधर्म का प्रचार करते थे।[४६]

सन्-१९०१ ई. में जो आर्यकन्या पाठशाला मिर्जापुर में स्थापित हुई थी वह बाद में बढ़ते-बढ़ते उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बन गया था। इसके प्रधान श्री ज्वालाप्रसादजी एम.ए. डिप्टी कलेक्टर अनेक वर्ष तक रहे।[४७]

आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश, लखनऊ के ११०वें वार्षिक वृत्तान्त में आर्यकन्या पाठशाला के सन्दर्भ में उल्लेख है कि जिस समय विद्यालय की स्थापना हुई उस वक्त पूरे जनपद में कोई बालिकाओं का विद्यालय नहीं था। पं. ज्वालाप्रसाद डिप्टी कलेक्टर इसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सर्वप्रथम अध्यक्ष चुने गए। श्री रामजी वकील आनरेरी मजिस्ट्रेट 'उपाध्यक्ष', बाबू लक्ष्मनप्रसाद वकील 'प्रधान' आर्यसमाज सदस्य जिला बोर्ड / मंत्री / प्रबन्धक सर्वप्रथम चुने गए, पं. शिवदास शर्मा हेड मास्टर पटवरिया स्कूल उपप्रबन्धक चुने गए। श्रीमती सरस्वती देवी सर्वप्रथम-प्रधान अध्यापिका नियुक्त हुई। इसप्रकार यह कन्या विद्यालय निरन्तर प्रगति करता रहा और १९१६ में कक्षा-५, १९१७ मिडिल कक्षा प्रारम्भ हुई और विद्यालय के प्रबन्धसमिति का रजिस्ट्रेशन सन्-१९२४ में हुआ, आगे २४ जुलाई १९४६ को इस विद्यालय को हाईस्कूल की मान्यता प्राप्त हुई।[४८] ठाकुर गजाधर सिंह यहाँ के अद्भुत वीर कार्यकर्ता थे। आपने उससमय जब आर्यसमाज पर सरकार की कोप दृष्टि थी, सेना में कार्य करते हुए भी खुलकर आर्यसमाज का कार्य किया और मंच से प्रचार भी किया। आपके प्रयास से ही लाला लाजपत राय यहाँ आकर भाषण किए थे।[४९]

महर्षि के जीवनकाल में ही मिर्जापुर जिले के मगरहा नगर में आर्यसमाज स्थापित हो गया था। सन्-१८८० ई. में इस आर्यसमाज की स्थापना, पण्डित जगदेव सिंह; जो काशी में संस्कृत के विद्यार्थी थे और महर्षि के भाषण सुनकर आर्यसमाजी बन गए थे, ने की।[५०]प्रारम्भ में मिर्जापुर आर्यसमाज के जो पदाधिकारी थे वे स्वयं भी संस्कृतज्ञ और वेद-शास्त्रों से सुपरिचित थे। वार्षिकोत्सव पर भी प्राय: इन्हीं के उपदेश और व्याख्यान हुआ करते थे। मिर्जापुर के समीपवर्ती क्षेत्र में वैदिकधर्म के प्रचार तथा आर्यसमाजों की स्थापना में भी इन विद्वानों का महत्त्वपूर्ण कर्तृत्व रहा। जिसके कारण उत्तर प्रदेश के पूर्वी अंचल में मिर्जापुर आर्यसमाज की स्थिति बहुत महत्त्वपूर्ण हो गयी थी।[५१]

**मेरठ आर्यसमाज –** उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र में स्थित मेरठ आर्यसमाज का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान था। मेरठ जिले को इस समय डिवीजन का अधिकार प्राप्त था जिसके अन्तर्गत कई जिले इसके अधिकार क्षेत्र में थे।[५२]डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार ने कहा कि आर्यसमाज के क्षेत्र में जो स्थान वर्तमान समय में दिल्ली को प्राप्त है, स्वामी दयानन्द के जीवनकाल में वह प्राय: मेरठ को प्राप्त था।[५३] मेरठ आर्यसमाज की स्थापना में स्वामी दयानन्द का यहाँ २२ दिनों का व्याख्यान विविध स्थानों में दिया जाना ऐतिहासिक है जिसके फलस्वरूप आश्विन बदी तीस सम्वत् १९३५ तदनुसार २९ सितम्बर, सन्-१८७८ को मेरठ आर्यसमाज की स्थापना हो गयी।[५४]

मेरठ जिले को आर्यसमाज के इतिहास में वह सौभाग्य प्राप्त था जहाँ महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित हुए थे जैसे-

**१-** स्वामी दयानन्द द्वारा मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत रुड़की आर्यसमाज व आर्यसमाज बुढ़ाना गेट की स्थापना अपने कर-कमलों से किया गया था।

**२-** स्वामी दयानन्द द्वारा परोपकारिणी सभा की स्थापना के लिए १६ अगस्त १८८० को मेरठ में स्वीकार पत्र लिखा गया था।

**३-** मेरठ आर्यसमाज द्वारा ही प्रान्त में आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना के लिए प्रतिज्ञा पत्र (Resolution) पास किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(सन्-१८८५) और उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा (मेरठ-२९ दिसम्बर १८८६) की स्थापना हुई।

४- आर्यसमाज के कार्यकलाप (शिक्षा, समाजसुधार एवं धार्मिक सुधार संबंधी) का प्रधान केन्द्र मेरठ आर्यसमाज था। प्रारम्भ में डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना (सन्-१८८४) मेरठ जिले में ही हुई थी।[५५]

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट है कि मेरठ आर्यसमाज की स्थापना के फलस्वरूप उत्तर प्रदेश में परोपकारिणी सभा, प्रान्तीय स्तर पर आर्यसमाजों को संगठित एवं नियन्त्रित करने के लिए उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना और प्रथम डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना हुई थी। इस स्कूल की स्थापना के बाद से ही डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का विस्तार होना प्रारम्भ हुआ।

आर्यसमाजों की स्थापना के क्रम में मेरठ आर्यसमाज का चौथा प्रमुख स्थान था। इसके पूर्व में स्वामी दयानन्द क्रमशः बम्बई, लाहौर और रुड़की में आर्यसमाजों की स्थापना कर चुके थे।[५६] बुढ़ाना-गेट, मेरठ आर्यसमाज की कार्यकारिणी के पदाधिकारी निम्नलिखित थे—

**प्रधान** – पण्डित कुन्दनलाल, सेकण्ड मास्टर, जिला स्कूल, मेरठ
**उपप्रधान** – लाल रामशरणदास रईस
**मंत्री** – बाबू आनन्द के० लाल़, सेकण्ड क्लर्क दफ्तर, जरनैली
**उपमंत्री** – पण्डित अम्बाशंकर, सेकण्ड क्लर्क, नहर
**कोषाध्यक्ष** – बाबू छेदीलाल गुमाश्ता, कमसरियट
**पुस्तकालयाध्यक्ष** – पण्डित जगन्नाथ रईस।

इन छः पदाधिकारियों के अतिरिक्त अन्तरंग सभा के सदस्य थे— मास्टर अजोध्याप्रसाद, पण्डित पालीराम, अध्यापक नार्मल-स्कूल, लाला गंगासहाय, बाबू उदयचन्द्र बनर्जी क्लर्क दफ्तर कमिश्नरी और पण्डित प्राणनाथ।[५७]

इसके अतिरिक्त उससमय इस समाज के सभासदों की संख्या ७० थी। ये पदाधिकारी और सभासद मेरठ आर्यसमाज की स्थिति को अत्यन्त शक्तिशाली बनाए हुए थे। यहाँ पदाधिकारी वर्ग का उल्लेख किया जा चुका है, सभासदों के विवरण को इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट -२ में देखा जा सकता है।

इस प्रकार मेरठ आर्यसमाज के सदस्यों की संख्या कुल ८१ थी और यह समाज सब प्रकार की धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक प्रगतियों में कभी किसी से पीछे नहीं रहा तथा यह उत्तर प्रदेश प्रान्त के इने-गिने प्रमुख जिलों में से एक था।[५८] इस समाज ने आर्यजगत् को उच्चकोटि के विद्वान् एवं नेता प्रदान किए। जैसे- पं. तुलसीराम स्वामी, पं. घासीराम, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम.ए. कार्यमुक्त चीफ-जज टिहरी राज्य, श्री रघुबीरशरण बी.ए. प्रबन्धक आर्य-भास्कर प्रेस आदि।[५९]

पं. तुलसीराम मेरठ से वेदप्रकाश नामक मासिक पत्र निकालते थे जिसमें सामवेद के भाष्य के अतिरिक्त सनातन-धर्म के खण्डन और वैदिकधर्म का मण्डन के सम्बन्ध में बहुत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



योग्यतापूर्ण लेख रहते थे। इस लेखबद्ध कार्य के अतिरिक्त वे मौखिक शास्त्रार्थ करने में भी अत्यन्त चतुर थे।[६०] पं. घासीराम और पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय ने आर्यसमाज के कृतियों को अपनी लेखनी से संयुक्त किया। इन विद्वानों ने आर्यसमाज के इतिहास पर अनेक पुस्तकें एवं ट्रेक्ट्स आदि का प्रकाशन किया। यहाँ महत्त्वपूर्ण विषय यह भी है कि सन्-१८७८ व उसके बहुत पश्चात् तक मेरठ में न किसी डिग्री कालेज की सत्ता थी और न ही इण्टर कालेज की। उससमय सर्वोच्च शिक्षणालय जिला स्कूलों और नार्मल स्कूलों में ही थे। मुजफ्फरनगर, सहारनपुर आदि सभी पवर्ती नगरों की भी यही दशा थी। इन नगरों के स्कूलों में हेडमास्टर प्राय: या तो अंग्रेज हुआ करते थे या क्रिश्चियन और या बंगाल के ब्रह्मसमाजी।[६१] क्योंकि ब्रह्मसमाजी पाश्चात्य संस्कृति से अत्यधिक प्रभावित थे। मेरठ आर्यसमाज के सभासदों में सात अध्यापक उन्हीं स्कूलों के ही थे। उनमें से एक ने आर्यसमाज के प्रधान पद को सुशोभित भी किया था वह पण्डित कुन्दनलाल थे जो जिला स्कूल मेरठ के सेकण्ड मास्टर थे।[६२]

सन्-१८८३ तक इस समाज का अपना भवन नहीं था। साप्ताहिक सत्संग आदि लाला रामशरणदास के मकान में ही हुआ करते थे। सन्-१८८४ में भूमि क्रय की गयी थी और उस पर मन्दिर बनाने का कार्य प्रारम्भ कर दिया गया था।[६३] इसप्रकार यह आर्यसमाज ही सांस्कृतिक चेतना का केन्द्र-बिन्दु था। इसका कारण यह भी था कि महर्षि दयानन्द अपने जीवन काल में आठ बार मेरठ सिटी गए थे।[६४] जिसके परिणाम-स्वरूप इस समाज की स्थिति अत्यन्त शक्तिशाली हो गई थी। आगे मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत स्थापित कुछ आर्यसमाजों का विवरण आर्यसमाज के विस्तार के क्रम में यथास्थान दिया जाएगा।

**फर्रुखाबाद आर्यसमाज** – उत्तर प्रदेश के आर्यसमाजों में फर्रुखाबाद आर्यसमाज का स्थान विशिष्ट था।[६५] ऐतिहासिक साक्ष्यों के अनुसार यह नगर गंगानदी के दाहिने किनारे समतल भूमि पर बसा है। अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में फर्रुखाबाद नगर की नींव पड़ी।[६६] फर्रुखशियर के नाम पर फर्रुखाबाद शहर बसाया गया था।[६७] यह हजारों वर्ष प्राचीन है। १७१४ में फर्रुखाबाद नामकरण के पहले इसका नाम पृथ्वीपालपुर था।[६८] जुडिशियल क्रिमिनल विभाग द्वारा नोटिफिकेशन संख्या छ: ३४९-१९०९ के अनुसार यह आगरा मण्डल में स्थित एक जिला था। शहरों के नाम सूची में इसे फर्रुखाबाद कम फतेहगढ़ दर्शाया गया है।

फर्रुखाबाद संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन का भी प्रधान केन्द्र रहा। स्वामी दयानन्द ने यहाँ अनेक शास्त्रार्थ किए और विद्यालय की स्थापना किए थे।[६९] यहाँ महर्षि का नव बार आगमन हुआ था और इस जिले के जलालाबाद, जंगीरामपुर, कायमगंज, कम्पिल, शकरुल्लापुर, फतेहगढ़ और कन्नौज में भी उनका पदार्पण हुआ था।[७०] फर्रुखाबाद आर्यसमाज उत्तर प्रदेश के उन ९ आर्यसमाजों में से एक था जिसकी स्थापना महर्षि दयानन्द ने स्वयं की थी।[७१] इसकी स्थापना तिथि १२ जुलाई, १८७९ है।[७२] पं. शिवदयालु की पुस्तक, इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश, द्वितीय भाग, पृ.८० पर दि० १९ मई १८८० को आर्यसमाज की स्थापना तिथि का उल्लेख है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार द्वारा आर्यसमाज की स्थापना तिथि का जो उल्लेख किया गया है वह प्रमाणिक है। क्योंकि " भारतसुदशाप्रवर्त्तक " पत्र का प्रकाशन फर्रुखाबाद आर्यसमाज द्वारा ही किया जाता था। इस पत्र के अगस्त तथा सितम्बर १८७९ के अंकों में प्रकाशित आर्यसभासदों का वर्णन है।[७३] इससे स्पष्ट होता है कि इस समाज की स्थापना सन्-१८७९ में हो गयी थी। डॉ. भवानीलाल भारतीय ने स्वामी दयानन्द के भ्रमण तिथि को दर्शाते हुए स्पष्ट किया है कि फर्रुखाबाद आर्यसमाज की स्थापना तिथि-१९३६ वि. (तदनुसार-१८७९) है।[७४]

फर्रुखाबाद आर्यसमाज के प्रथम प्रधान लाल जगन्नाथप्रसाद व प्रथममंत्री पं. गोपालराव हरि थे, जो उससमय उस जिले में सब-डिप्टी इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स थे[७५] श्री गोपाल राव हरि पुन्ताँकट भारतसुदशाप्रवर्त्तक मासिक पत्र के संपादक थे और उन्होंने पाखण्ड-तिमिर-नाशक, दयानन्द दिग्विजयार्क, ज्ञानसागर, सुन्दरी-सुधा आदि पुस्तकों की रचना की थी।[७६]

प्रारम्भ में फर्रुखाबाद आर्यसमाज के सदस्यों की संख्या-६१ थी, पर एक मास के स्वल्प समय में यह संख्या ८७ हो गयी थी। अगस्त तथा सितम्बर, सन्-१८७९ में, भारतसुदशाप्रवर्त्तक में प्रकाशित सूची के अनुसार प्रारम्भिक ८७ सदस्यों में अध्यापक-६१, विद्यार्थी-५, वकील-२, व्यापारी-४, जमींनदारी-साहूकार और ३ सरकारी कर्मचारी थे, ७ सभासदों के नामों के साथ उनका पेशा तथा व्यवसाय उल्लिखित नहीं है। जाति के आधार पर फर्रुखाबाद आर्यसमाज में ६० ब्राह्मण, शेष २७ वैश्य, कायस्थ, क्षत्रिय आदि थे।[७७]

फर्रुखाबाद आर्यसमाज के प्रतिष्ठित कार्यकर्त्ताओं में- लाला द्वारिका प्रसाद सेठ, जिन्होंने स्वामी दयानन्द के संस्कृत पाठशाला के लिए धन प्रदान किए, लाला कालीचरण व रामचरणजी रईस दोनों स्वामीजी द्वारा निर्मित परोपकारिणीसभा के माननीय सदस्य थे, मुंशी नारायणदास वैश्य, लाला सरयूप्रसादजी रईस आगे उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा के कोषाध्यक्ष नियुक्त हुए। पं. लक्ष्मीदंत्तजी पांडे आर्यसमाज के प्रसिद्ध उपदेशक थे।[७८] लाला मदन मोहनलाल ने अपनी कोठी का आधा भाग बिना किराए फर्रुखाबाद आर्यसमाज को प्रदान कर दिया था।[७९]

मई-१८८० फर्रुखाबाद के चुनाव में पदाधिकारी वर्ग में पण्डित गोपालराव हरि के स्थान पर कालीचरण को मंत्री बनाया गया था। इस कारण से इस समाज के विरोध और मतभेद का बीजारोपण हुआ। स्वामी दयानन्द ने इसके निराकरण के लिए एक "मीमांसकोपसभा" की स्थापना भी यहाँ की थी। यह सभा आपस में वैमनस्य दूर करने के लिए पक्षपातरहित न्याययुक्त निर्णयों के लिए बनाई गई थी। यह महर्षि दयानन्द के दूरदर्शी व्यक्तित्व का परिचायक है। इसके बाद ऐसी सभाओं का निर्माण अन्य आर्यसमाजों में किया जाने लगा।[८०]

फर्रुखाबाद आर्यसमाज के वृहद इतिहास की जानकारी प्राप्त करने के लिए भारतसुदशाप्रवर्त्तक के सम्पादक पं. गणेशप्रसाद शर्माजी द्वारा लिखित 'फर्रुखाबाद का इतिहास'; जो सन्-१९३१ ई. में प्रकाशित हुआ था, का अध्ययन किया जा सकता है। इस पुस्तक में प्राचीन आर्यनरेशों से लेकर सन्-१९३१ ई. तक सामाजिक, धार्मिक,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



राजनैतिक, आर्थिक-शिक्षा, न्याय, सैन्यबल, पराक्रम, विद्या, व्यापार, कृषि, शिल्प और भौगोलिक वृत्तान्त का विशद् वर्णन है। इसके साथ ही इस ग्रन्थ का स्वत्व स्वामित्व फरुखाबाद आर्यसमाज का है। इस पुस्तक में स्वामी दयानन्द द्वारा किए शास्त्रार्थ, धर्मोपदेश, आर्यसमाज स्थापित करने एवं पाठशालाएँ खोलने आदि के वर्णन के साथ ही उनके द्वारा किए गए पत्र-व्यवहार का भी उल्लेख है। इसके चतुर्थ भाग में फरुखाबाद आर्यसमाज के पचास वर्ष (जुलाई सन्-१८७९ से ३० सितम्बर सन्-१९२९ ई. तक) का इतिहास है। पंचम भाग में फरुखाबाद के स्वर्गीय रईसों और अन्य सज्जन पुरुषों की जीवनियाँ हैं।

इस ग्रन्थ में भी फरुखाबाद आर्यसमाज की स्थापना तिथि १२ जुलाई सन्-१८७९ ई. (तदनुसार श्रावण वदि ९ शनिवार सं० १९३६ वि.) का उल्लेख है।

**आगरा आर्यसमाज –** उन्नीसवीं सदी के तृतीय चरण में, आगरा एक ऐसा नगर था जो उत्तर प्रदेश के पश्चिम क्षेत्र में स्थित था।[८१] शासन की दृष्टि से आगरा ब्रिटिश भारत में एक पृथक् इकाई की स्थिति रखता था। उससमय उत्तर प्रदेश को आगरा और अवध का संयुक्त-प्रान्त (United Provinces of Agra and Avadh) कहा जाता था। इस प्रदेश का यह नाम स्पष्टतया सूचित करता है कि आगरा एक प्रान्त का भी नाम था, जिसका शासन केन्द्र आगरा नगर था।[८२] आगरा नगर में सबसे पूर्व ऐसे शिक्षणालयों की स्थापना हुई थी, जिनमें अंग्रेजी भाषा तथा आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की उच्च शिक्षा दी जाती थी।[८३] आगरे में ही रोमन कैथोलिक ईसाईयों का सेंट पीटर्स चर्च उत्तर-भारत का विख्यात गिरजाघर था।[८४] क्रिश्चियन मिशनरी चिरकाल से वहाँ ईसाई मत के प्रचार-प्रसार में संलग्न थे, जिसके कारण वहाँ ईसाई तथा नवशिक्षित लोग भी पर्याप्त संख्या में विद्यमान थे।

स्वामी दयानन्द के आगरा आगमन (२७ नवम्बर सन्-१८८०) और उनके द्वारा इस नगर में दिए गए व्याख्यानों के फलस्वरूप २६ दिसम्बर सन्-१८८० ई. रविवार के दिन आगरा आर्यसमाज की स्थापना हुई।[८५] डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार के अनुसार २६ दिसम्बर सन्-१८८० ई. को एक सभा की गई, जिसमें नगर के किसी सुविधाजनक स्थान पर आर्यसमाज स्थापित करने का निश्चय किया गया। उन्होंने कहा कि नियमित रूप से आगरा आर्यसमाज २६ फरवरी सन्-१८८० ई. को स्थापित हुआ।[८६] आगरे में यह समाज महर्षि के कर-कमलों द्वारा स्थापित किया गया था। यह समाज ९ वर्ष तक अनेक घरों और मुहल्लों में मकान किराए पर लेकर चलता रहा और सन्-१८८० ई. को हींग की मंडी में आगरा आर्यसमाज स्थिर हो गया।[८७]

आगरा आर्यसमाज के प्रथम प्रधान बाबू जमुनादास विश्वास थे, समाज के प्रति रुचि न लेने के कारण इनके स्थान पर श्री गिरधरलाल वकील को प्रधान निर्वाचित किया गया। हींग की मंडी में समाज के स्थिर होने से पूर्व साप्ताहिक सत्संग श्री गिरधरलाल के यहाँ ही होता था।[८८] प्रारम्भ में आगरा आर्यसमाज के जो सभासद बने थे उनका विवरण निम्नवत् है-

पण्डित मोहनलाल शाण्डिल्य, मास्टर मुरलीधर, श्री गिरधरलाल वकील, बाबू जमुनादास विश्वास, सेठ सोनीमल, महाशय मूलचन्द वर्मा, महाशय चुन्नीलाल रोहतगी, मास्टर मथुरादास, महाशय जाहिर सिंह, महाशय रामदास क्षत्रिय, महाशय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


नन्दकिशोर चिट्ठीरसा, लाला भगवानदास खत्री मुख्तार, महाशय भोला सितारवाला और बाबू रामेश्वर दयाल।[८९]

वैदिकधर्म के प्रचार-प्रसार, विधर्मियों तथा विरोधियों का सामना करने में आगरा आर्यसमाज अपने स्थापना काल से ही विशेष सक्रिय रहा। उसके वार्षिकोत्सव नियमित रूप से होते रहे हैं। महर्षि दयानन्द के शिष्य स्वामी सहजानन्द, स्वामी आत्मानन्द, स्वामी गोकुलानन्द, स्वामी गिरजानन्द व पण्डित रुद्रदत्त सम्पादकाचार्य आदि आर्यप्रचारक व विद्वान् इस समाज के प्रारम्भिक उत्सवों पर पधारा करते थे। सन्-१८८३ ई. के वार्षिकोत्सव में पण्डित लेखराम भी आगरा पधारे थे।[९०]

आगरा आर्यसमाज ने अनेक कर्मठ कार्यकर्ता एवं नेता समाज को प्रदान किए थे, जैसे- ठाकुर माधव सिंह, श्री नाथमलजी, श्री श्रीरामजी, श्री पूर्णाचन्द्रजी एडवोकेट, डॉ. हरिशंकर शर्मा कविरत्न, श्री शालिगराम जी, श्री नत्था सिंह, शास्त्रार्थ महारथी पं. कालीचरण एवं पं० भोजदत्त आर्यमुसाफिर आदि।[९१]

**लखनऊ आर्यसमाज–** उत्तर प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र में लखनऊ गोमती नदी के किनारे बसा नगर है।[९२] यह नगर उत्तर प्रदेश के मध्य में स्थित है। अंग्रेजों के समय से यह प्रान्त की राजधानी है। इससे पूर्व अवध के नवाबों का भी लखनऊ केन्द्र था।[९३] आर्यसमाज के इतिहास में लखनऊ नगर का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। प्रान्त में स्थापित आर्यसमाजों पर नियन्त्रण रखने के उद्देश्य से उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना जो मेरठ जिले में हुई थी उसके प्रधान कार्यालय (दिनांक १ अगस्त सन्-१९३९ ई.) को लखनऊ जिले में केन्द्रित कर लिया गया।[९४] इससे यह जिला प्रान्त में स्थापित अधिकांशतः आर्यसमाजों का केन्द्र बिन्दु रहा।

स्वामी दयानन्द ने अपने जीवनकाल में लखनऊ की चार बार यात्रा की थी[९५] जिसके फलस्वरूप उनके कर कमलों से लखनऊ आर्यसमाज की स्थापना दिनांक ९ मई सन्-१८८०[९६] को हुई। डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार तथा पं. शिवदयालु की पुस्तक में यह तिथि अंकित है। महर्षि की चौथी लखनऊ यात्रा में आर्यसमाज की स्थापना हुई। लखनऊ में स्वामी दयानन्द का निवास नाका हिण्डोले के पास राजा शंकरबख्श की वाटिका में हुआ था और नवाब अमीनुद्दौला के इमामबाड़े के चौतरे पर उनके व्याख्यान उन दिनों हुआ करते थे। आर्यसमाज की स्थापना भी इसी चौतरे पर स्वयं महर्षि द्वारा की गई थी।[९७]

लखनऊ आर्यसमाज के प्रथम सभासद मौलवी हुसैन साहब बने तथा समाज के प्रथम-प्रधान श्री इन्द्रनारायण मसालदानजी और मंत्री पण्डित रामुदुलारे बाजपेयी बनाए गए।[९८] प्रारम्भ में इस समाज के सभासदों की संख्या २५ थी पर इस संख्या में निरन्तर वृद्धि होती गयी और पहले वर्ष में ही सभासदों की संख्या २५ से ४६ हो गई। उससमय निम्न पदाधिकारी निर्वाचित हुए थे- प्रधान और मंत्री के अतिरिक्त उप-प्रधान-पण्डित रामाधार बाजपेयी, उपमंत्री - बाबू सरजूदयाल, कोषाध्यक्ष - पण्डित अयोध्या प्रसाद और पुस्तकाध्यक्ष- बाबू चन्द्रगोपाल। इनके अतिरिक्त अन्तरंग सभा के सदस्य निर्वाचित हुए थे- पं. देवीप्रसाद मिश्र, पं. सीताराम बन्द्योपाध्याय, पं. वेणीमाधव बाजपेयी, श्री हरप्रसाद, श्री छोटेलाल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



बी.ए. और पं. केशवराम विष्णुलाल पाण्ड्या।[९९]

लखनऊ आर्यसमाज का पहला वार्षिकोत्सव १ मई सन्-१८८१ को मनाया गया था। सन्-१८८२ के वार्षिकोत्सव में आर्यसमाज द्वारा यह निश्चय किया गया था कि आर्यलोग अपना सब कार्य देवभाषा (हिन्दी) में किया करें। उससमय तक 'हिन्दी' शब्द का अधिक प्रचलन नहीं हुआ था।[१००] लखनऊ तो उर्दू का गढ़ था।[१०१] लखनऊ आर्यसमाज को 'अधिष्ठाता' समाज की स्थिति प्रदान कर दी गयी थी। सन्-१८८० में इस समाज की स्थापना हो जाने पर उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में अनेक स्थानों (सीतापुर, आजमगढ़, गोरखपुर एवं हरदोई आदि) पर आर्यसमाज स्थापित हो गए थे।[१०२]

लखनऊ आर्यसमाज का प्रारम्भ में अपना भवन नहीं था। आर्यलोगों को संस्कृत भाषा तथा महर्षि कृत ग्रन्थों की शिक्षा के लिए समाज द्वारा 'सत्यप्रकाश पाठशाला' की स्थापना की गयी थी। जहाँ इस समाज के वार्षिक अधिवेशन हुआ करते थे। दिसम्बर सन्-१८९५ में गणेशगंज (लखनऊ) का वह स्थान आर्यसमाज के लिए क्रय कर लिया गया जहाँ बाद में भव्य व विशाल समाज मन्दिर का निर्माण किया गया।[१०३] यही वह आर्यसमाज है जहाँ की वर्त्तमान प्रधान श्रीमती संतोष कुमारी कपूर (सन्-१९९७) हैं। यहाँ से भी आर्यमित्र साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन हिन्दी में होता था।

इसप्रकार निर्दिष्ट किए गए प्रमुख आर्यसमाजों के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश के विभिन्न नगरों में सन्-१८८३ ई. तक अनेक आर्यसमाजों की स्थापना हो चुकी थी। जिसका विवरण संक्षेप में निम्नवत् है-

**बिजनौर आर्यसमाज–** उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र में स्थित यह जिला रुहेलखण्ड डिवीजन के अन्तर्गत विद्यमान था।[१०४] स्वामी सहजानन्द ने अपने गुरु स्वामी दयानन्द के सन्देश को सन्-१८८३ ई. में बिजनौर जिले में पहुँचाया था। उनके प्रयत्न से ही इस जिले में अनेक स्थानों पर आर्यसमाजों की स्थापना हो गई थी।[१०५] बिजनौर आर्यसमाज की स्थापना सन्-१८८३ ई. में स्वामी सहजानन्द के धर्मोपदेश के फलस्वरूप हुआ था। इसके प्रथम प्रधान श्री कुँवर भारत सिंह (ज्वाइंट मजिस्ट्रेट) व मंत्री श्री बाबूजीराजसिंह (वकील, अध्यक्ष व सम्पादक साप्ताहिक तोहफे हिन्द) थे।[१०६] बाद में महात्मा मुंशीराम, पं. लेखरामजी आर्यमुसाफिर, श्री मुंशी भगवानदासजी तथा सेठ शिवराज सिंहजी रईस मोहम्मदपुर देवमल आर्यसमाज मन्दिर बिजनौर के ट्रस्टी बनाए गए थे।[१०७]

बिजनौर जिले में मोहम्मदपुर-देवमल नामक ग्राम में आर्यसमाज की स्थापना हो गई। यह ग्राम बिजनौर से छह मील की दूरी पर मण्डावर के समीप स्थित था। इसके बहुसंख्यक निवासी विश्नोई सम्प्रदाय के अनुयायी थे। इस सम्प्रदाय के लोगों में शव को दफनाने जैसी प्रथाएँ प्रचलित थीं और मुसलमानी नाम भी रक्खे जाते थे। स्वामी सहजानन्द ने इस सम्प्रदाय को वैदिकधर्म का अनुयायी बनाया।[१०८]

**मुरादाबाद आर्यसमाज–** रुहेलखण्ड डिवीजन के अन्तर्गत विद्यमान मुरादाबाद जिले में[१०९] महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा २० जुलाई १८७९ को आर्यसमाज स्थापित हुआ था।[११०] इसके पूर्व सन्-१८७६ ई. में महर्षि दयानन्द के पधारने पर आर्यसमाज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


राजकोट की भाँति स्थापित हुआ था जो अधिक समय तक कायम न रहा और उसका विघटन हो गया। यदि यह समाज विघटित न होता तो संभवतः इसे बम्बई आर्यसमाज के पश्चात् स्थापित हुए द्वितीय या तृतीय आर्यसमाज का गौरव प्राप्त होता।[१११]

प्रारम्भ में मुरादाबाद आर्यसमाज के ३८ सभासद बनाए गए थे और उसके निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए- प्रधान - मुंशी - इन्द्रमणि बनाए गए, मंत्री - कुँवर परमानन्द और ठाकुर शंकर सिंह, कोषाध्यक्ष - साहू श्यामसुन्दर और पुस्तकाध्यक्ष - श्री जगन्नाथ दास। इसका अपना भवन नहीं था। शुरू में राजा जयकृष्णदास की कोठी में इस आर्यसमाज के अधिवेशन हुआ करते थे। साहू श्यामसुन्दर ने आर्यसमाज के लिए एक भूखण्ड दान में दिए थे, बाद में यहीं अधिवेशन होने लगे थे। मुरादाबाद आर्यसमाज के प्रधान द्वारा इस्लाम की आलोचना में तीन पुस्तकें लिखीं गयी थीं जिसके कारण मुसलमानों ने उनके ऊपर मुकद्दमा दायर किया था।[११२] महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित मंडी बाँस, जिले एवं नगर का प्रथम आर्यसमाज था।[११३]

**बदायूँ आर्यसमाज–** रुहेलखण्ड डिवीजन के अन्तर्गत स्थित बदायूँ[११४] जिले में दिनांक ३१ जुलाई सन्-१८७९ ई. को आर्यसमाज बदायूँ की स्थापना हुई।[११५] समाज के प्रारम्भिक उत्साही कार्यकर्ताओं में श्री दीवानसिंह, देवीप्रसाद, कन्हैयालाल, बालमुकुन्द, श्रीभगत दुर्गाप्रसाद, श्रीरामलाल, श्रीचुन्नीलाल आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।[११६]

श्री दीवानसिंह बदायूँ आर्यसमाज के प्रथम प्रधान निर्वाचित हुए थे और मंत्री देवी प्रसाद। उक्त उत्साही कार्यकर्त्ताओं में पण्डित बिहारी लाल, मुंशी लाल बहादुर, मुंशी जुगल किशोर, श्री अशर्फीलाल, पण्डित टीकाराम आदि प्रारम्भिक सभासद थे।[११७] मुंशी शंकरभक्त का स्थान प्रारम्भिक सभासदों में महत्त्वपूर्ण था। आर्यसमाज मन्दिर के लिए उन्होंने धनराशि प्रदान की थी।[११८] मुहल्ला सिद्धपुरा कूंचा पाण्डा में रूपए ३०००/- की लागत से समाज मन्दिर का निर्माण हुआ था।[११९]

इस प्रकार उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्रों में महर्षि दयानन्द के जीवनकाल तक निर्दिष्ट किए गए प्रमुख आर्यसमाजों के अतिरिक्त निम्न आर्यसमाजें थी जैसे शाहजहाँपुर आर्यसमाज (रुहेलखण्ड डिवीजन के अन्तर्गत एक प्रसिद्ध जिला शाहजहाँपुर स्थापना - सन्-१८७९) आर्यसमाज हरदोई - शाहजहाँपुर और लखनऊ के मध्यवर्ती क्षेत्र में स्थित हरदोई नगर में आर्यसमाज की स्थापना महर्षि के देहावसान (सन्-१८८३) से पूर्व हो गई थी। हरदोई जिले को यह गर्व है, इसने पं. भगवानदीन मिश्र (सभा के प्रधान ६ वर्ष, सार्वदेशिक सभा के मंत्री २ वर्ष) जैसे आर्यसमाज के सक्रिय कार्यकर्त्ता दिए।[१२०]

**बरेली आर्यसमाज–** रूहेलखण्ड डिवीजन में स्थित बरेली आर्यसमाज प्रधान केन्द्र रहा है।[१२१] आर्यसमाज बिहारीपुर बरेली नगर का प्रमुख आर्यसमाज था। इसकी स्थापना सन्-१८८३ ई. में हुई।[१२२] बरेली नगर को ही आर्यसमाज के इतिहास में यह सौभाग्य प्राप्त है जहाँ जीवन में क्रान्ति उत्पन्न करने वाले महर्षि के प्रवचनों से बरेली शहर के कोतवाल श्री नानकचन्द्रजी के पुत्र श्री मुंशीराम की यहाँ काया पलट हुई थी। समय के प्रवाह में बहने वाला यह नवयुवक मुंशीराम आगे चलकर महात्मा मुंशीराम और फिर स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से विख्यात हुआ।[१२३]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**सहारनपुर आर्यसमाज–** मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत स्थित जिला सहारनपुर[१२४] को यह गौरव प्राप्त है कि भारतवर्ष का प्रसिद्ध तीर्थस्थान हरिद्वार इसी जिले में है। दो आर्यसमाजें इसी जिले में रुड़की एवं सहारनपुर विद्यमान थे।[१२५]

**मथुरा आर्यसमाज–** मथुरा में ही रहकर स्वामी दयानन्द ने वैदिकसंस्कृति के अनुरूप विद्याध्ययन का पाठ पढ़ा था। यहाँ सन्-१८८१ ई. में आर्यसमाज की स्थापना हो गई थी। इस समाज के प्रारम्भिक कार्यकर्त्ताओं में पं. दयाशंकर दूबे, बाबू रामनारायण भटनागर तथा पण्डित क्षेत्रपाल शर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं।[१२६]

**प्रयाग (इलाहाबाद) आर्यसमाज–** इलाहाबाद मण्डल के अन्तर्गत यह एक प्रमुख जिला था।[१२७] इसके साथ ही गंगानदी के किनारे बसे प्रमुख तीर्थस्थली में से यह एक प्रसद्धि नगर है।[१२८] गंगा-यमुना का सुन्दर संगम स्थान है।[१२९] आर्यसमाज, चौक, प्रयाग की स्थापना सन्-१८७६ ई. में हुई। इसके संस्थापकों में श्री दरियाव सिंह, श्री फतेहचन्द बैरिस्टर, श्री रोशनलाल बैरिस्टर, मुंशी सूरज प्रसाद, मुंशी बालमुकुन्द सहाय आदि थे। प्रारम्भ में आर्यसमाज की बैठकें इन्हीं के निवास स्थानों पर हुआ करती थीं। आर्यसमाज चौक के अनन्य भक्तों में पं. शिवराय वैद्य थे जिन्हें महर्षि दयानन्द की सेवा का सौभाग्य मिला था। वैदिकयन्त्रालय प्रयाग में भी स्थापित हुआ था।[१३०]

इस नगर के आर्यसमाज को पं. क्षेमकरणदास त्रिवेदी अथर्ववेद भाष्यकार एवं पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जैसे नवरत्न प्रदान किए थे जिन्होंने अपने जीवन में वैदिकवांग्मय की अतुलित सेवा की।[१३१] आगे वह आर्यसमाज का एक आदर्श प्रकाशन केन्द्र बना, जहाँ पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय द्वारा लिखित १३८ हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी के ट्रेक्ट्स अधिक संख्या में प्रकाशित हो चुके हैं।[१३२] इन ट्रेक्ट्सों का वितरण उत्तर प्रदेश के विभिन्न नगरों में आयोजित उत्सवों, तीर्थमेलों एवं आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव में किया जाता था। चौक आर्यसमाज के पुरोहित श्री रामप्रसाद शास्त्रीजी ने श्री पन्नालाल गुप्त द्वारा लिखित आर्यसमाज, चौक का संक्षिप्त इतिहास, पुस्तक को मुझे उपलब्ध कराया। श्री पन्नालालजी गुप्त वर्तमान समय में इस आर्यसमाज के कोषाध्यक्ष (सन्-१९९७) हैं।

**कानपुर आर्यसमाज–** इलाहाबाद डिवीजन के अन्तर्गत स्थित कानपुर जिले में[१३३] १६ नवम्बर १८७९ ई. को आर्यसमाज की स्थापना हुई।[१३४] प्रारम्भ में कानपुर समाज के अधिवेशन बाबू माधव प्रसाद चक्रवर्ती के घर पर हुआ करते थे।[१३५] इसका प्रथम वार्षिकोत्सव सन्-१८८४ ई. में हुआ था। प्रारम्भिक काल में कवि सम्राट पं. नाथूराम शंकर शर्मा, पं. प्रतापनारायण तथा गदाधर सिंह पूर्व सभामंत्री इस समाज के सदस्य थे।[१३६] इस समाज का प्रथम मन्दिर ठंडी सड़क पर था, बाद में मेस्टन रोड पर एक विशाल मन्दिर का निर्माण हुआ। इस मन्दिर का शिलान्यास ३ मार्च, सन्-१९१६ ई. को महात्मा हंसराज ने अपने कर-कमलों से किया था।[१३७] प्रयाग नारायण शिवाला, कैलाश मन्दिर के निकट ३८/१६३ आर्यसमाज, कानपुर मेस्टन रोड के विषय में वहाँ के मंत्री डा. विजयपाल शास्त्री (सन्-१९९८ ई.) ने जानकारी प्रदान किया। इनके पिता आर्यसमाज के भजनोपदेशक ठाकुर गंगासिंहजी थे, जिन्होंने आर्यसमाज के सिद्धान्तों का खूब प्रचार-प्रसार किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**काशी आर्यसमाज–** वाराणसी (काशी) गंगानदी के बाएँ किनारे पर बसा यह प्राचीन नगर आर्यों की सभ्यता का प्रमुख केन्द्र है। गंगा का प्रवाह यहाँ भगवान् शिव के स्थान कैलाश की दिशा उत्तर की ओर है।[१३८] यह उत्तर प्रदेश के प्रमुख तीर्थस्थलों में से एक है।[१३९] काशी का महर्षि दयानन्द के जीवन में तथा आर्यसमाज के इतिहास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। काशी-शास्त्रार्थ के फलस्वरूप ही स्वामी दयानन्द को प्रसिद्धि मिली थी। प्रथम वैदिकयन्त्रालय काशी में ही खोला गया था[१४०] और स्वामी दयानन्द के प्रसिद्ध ग्रन्थ "सत्यार्थप्रकाश" (प्रथम संस्करण, उनके जीवनकाल में) यहीं से छपा था।[१४१]

स्वामी दयानन्द ने काशी में, अपने सातवें बार कें आगमन में चैत्र शुक्ल ६ संवत् १९३७वि. अर्थात् १५ अप्रैल सन्-१८८० ई. को आर्यसमाज की स्थापना[१४२] बुलानाला (नीचीबाग के समीप) में की। समाज का अपना भव्य मन्दिर है। इस समाज के साथ एक छात्रावास तथा अनाथाश्रम भी स्थापित किया गया था।[१४३] काशी का यह आर्यसमाज वाराणसी की सांस्कृतिक एवं सामाजिक गतिविधियों का केन्द्र था।[१४४] बाबू गौरीशंकर प्रसाद और पं. रामनारायण मिश्र काशीसमाज के प्रसिद्ध नेता व कार्यकर्ता थे।[१४५] वर्तमान में इस आर्यसमाज की देख रेख श्री रामदेव तीर्थ करते हैं। यहाँ आर्यसमाज से सम्बन्धित अनेक साहित्य उपलब्ध हैं। महर्षि के जीवनकाल में काशी में ही अकेला आर्यसमाज स्थापित हुआ था। यह उत्तर-भारत के पूर्वी क्षेत्र में स्थापित महत्त्वपूर्ण आर्यसमाज था।

निर्दिष्ट आर्यसमाजों के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश में सन्-१८८३ ई. तक अन्य आर्यसमाजों की स्थापना हुई थी । जैसे- उत्तर प्रदेश का पार्वत्य क्षेत्र नैनीताल में आर्यसमाज की स्थापना सन्-१८७५[१४६] शाहजहाँपुर में महर्षि दयानन्द के आगमन (४ सितम्बर, सन्-१८७९) से पूर्व आर्यसमाज की स्थापना[१४७] आदि।

इस प्रकार बम्बई और लाहौर में आर्यसमाज की स्थापना व सामयिक निर्मित नियमों के फलस्वरूप ही आर्यसमाज के प्रति समाज में अभूतपूर्व जागृति प्रस्फुटित हुई जिसके कारण उत्तर प्रदेश के विभिन्न नगरों एवं जिलों में आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार तीव्रगति से हुआ। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि महर्षि के देहावसान तक पूरे भारतवर्ष में ८५ आर्यसमाजें व उत्तर प्रदेश में ५० आर्यसमाजों की स्थापना हुई थी। यह आर्यसमाज के सिद्धान्तों व आदर्शों के प्रति लोकजागृति व लोकप्रियता का परिचायक है।

लाला लाजपतराय के अनुसार देश के सर्वाधिक सशक्त तथा प्रभावशाली सुधार आन्दोलन के रूप में आर्यसमाज के उभर आने का एक महत्त्वपूर्ण कारण उसका परिपूर्ण तथा अद्वितीय संगठन है।[१४८] मानव जीवन के सर्वविधहित, कल्याण, उत्थान एवं एकजुटता के लिए स्वामी दयानन्द ने आर्यसामज जैसे सार्वभौमिक संगठन का निर्माण इस देश में किया था। क्योंकि संगठन के बिना निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति नहीं की जा सकती। संगठन का निर्माण सामान्य उद्दश्यों की पूर्ति के लिए ही किया जाता है।[१४९]

स्वामी दयानन्द के भी निर्धारित लक्ष्य थे, पूर्व में इसका उल्लेख किया जा चुका है। प्रारम्भ में जो नियम आर्यसमाज के बने थे वे सभी आर्यसमाजों व उसके पदाधिकारियों एवं सभासदों के लिए मान्य थे। स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार के लिए उत्तर प्रदेश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



के विभिन्न भागों में स्थापित आर्यसमाजें सदैव तत्पर थे। ये आर्यसमाजें प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं की स्थापना के पूर्व स्वायत्तशासी थे। अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह की स्मारिका में उल्लेख है कि आर्यसमाज के संगठन की वास्तविक शक्ति का आधारबिन्दु प्रारम्भ में स्थानीय आर्यसमाजों में निहित था। ये आर्यसमाजें स्वायत्तशासी एवं आर्यसमाज के संगठन में सबसे महत्त्वपूर्ण मूलस्थ ईकाइयों के रूप में विद्यमान थे।[१५०]

आर्यसमाज के संगठन में यह अनोखी विशेषता विद्यमान थी, जिसके अन्तर्गत इसकी शक्ति का प्रवाह नीचे से ऊपर की ओर जाता था और यह पूर्णतः लोकतन्त्रात्मक पद्धति पर आधारित था। डा. सत्यकेतु विद्यालंकार ने इस सन्दर्भ में कहा है कि- लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था के अंतर्गत संगठन दो प्रकार के हो सकते हैं : एक तो वे जिनमें शक्ति का स्रोत नीचे से ऊपर की ओर बहता हो और दूसरे वे जिनमें शक्ति केन्द्र में निहित रहे तथा केन्द्र द्वारा उसे नीचे की ओर प्रसारित की जाए।

आर्यसमाज का संगठन पहले प्रकार का है। इसके शक्ति का वास्तविक स्रोत वे आर्यसमाजें हैं जो महानगरों, नगरों, कस्बों और गाँवों में स्थापित थे।[१५१] इसप्रकार आर्यसमाज के संगठन की विशेषता अभूतपूर्व एवं प्रभावदायक शक्ति के रूप में विद्यमान थी। जिसकी सम्पूर्ण शक्ति स्थानीय आर्यसमाजों के संगठन में निहित थी । इसके मूल में विचार करें तो ज्ञात होता है कि यदि आर्यसमाजों की शीर्षस्थ संस्था, जो महर्षि दयानन्द के देहावसान के बाद निर्मित हुए जैसे आर्यप्रतिनिधिसभा, आर्यउपप्रतिनिधि सभा एवं सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा आदि का स्वरूप समाप्त भी हो जाए तब भी स्थानीय आर्यसमाज का संगठन अक्षुण्ण रहेगा।[१५२]

इन स्थानीय आर्यसमाजों का संगठन प्रारम्भ में कैसा था? इस पर विचार करने से ज्ञात होता है कि आर्यसमाज के संचालन के लिए निम्नलिखित नियमों एवं कर्तव्यों का विधान उससमय किया गया था जो इसप्रकार है–

बम्बई में निर्मित २८ नियमों में छठा नियम-

१- एक समाज में एक प्रधान और दूसरा मंत्री तथा अन्य पुरुष और स्त्री सभासद होंगे। लाहौर में निर्धारित उपनियमों के अनुसार आर्यसमाज के पदाधिकारियों (प्रधान, उप-प्रधान, मंत्री, कोषाध्यक्ष तथा पुस्तकाध्यक्ष और आवश्यकतानुसार उप-मंत्री, उप-कोषाध्यक्ष तथा उप-पुस्तकाध्यक्ष) और अन्तरंग सभा के सदस्यों की नियुक्ति निर्वाचन द्वारा करने की व्यवस्था की गई।[१५३]

२- आर्यसमाज की स्थापना के लिए कम से कम नव सभासद (सदस्य) होने चाहिए।[१५४]

३- प्रत्येक सभासद को अपनी आय का शतांश (सैकड़ा पर एक) चन्दे में देना था।[१५५] एक बार की आय में एक प्रतिशत या तो मासिक या वार्षिक।

४- आर्यसमाज की सदस्यता ग्रहण करने के लिए लाहौर में निर्धारित दस नियमों को मानना[१५६] अनिवार्य था। आगे नियमों में संशोधन कर ''महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों और सिद्धान्तों वेदों के आधार पर जो उन्होंने अपने ग्रन्थों मे किया था'' को मानने वाले ही सदस्य हो सकते हैं,[१५७] ऐसा प्रावधान किया गया था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


५- समाज में सत्पुरुष, सत्यनीति, सत्याचरणी, मनुष्यों के हित-कारक समाजस्थ किए जायेंगे।

६- समाज में साप्ताहिक सत्संग का प्रावधान किया गया था।

गंगाप्रसाद उपाध्याय द्वारा लिखित आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग (ट्रैक्ट सं० २३, द्वितीय बार सन्-१९४९, पृ. ६-७ पर) में इसका वृहद् उल्लेख किया गया है। इसके अन्तर्गत निम्न विषयों का प्रावधान था, जैसे- सत्संग प्रात: काल, समय- कम से कम एक घन्टा और अधिक से अधिक दो घण्टा, हवन-सन्ध्या, स्वस्तिवाचन और शान्ति प्रकरण के पाँच-पाँच मन्त्र बारी-बारी से पढ़ना, ईश्वर-प्रार्थना, सत्यार्थप्रकाश का कुछ सरल भाग पढ़ना, अन्त में आर्यसमाज के नियम और 'सङ्गच्छध्वं' आदि मन्त्रों का पाठ, सबसे अन्त में 'द्यौ: शान्ति' मन्त्र का पाठ आदि।

इस प्रकार की व्यवस्था आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए इसके सुदृढ़ संगठन में किया गया था। सार्वदेशिक  मासिक पत्रिका में साप्ताहिक सत्संग के विषय में उल्लेख है कि आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संगों का मुख्य उद्देश्य धर्म प्रचार करना, धर्म लाभ उठाना और पारस्परिक प्रेम, सौहार्द और एकता की रक्षा और वृद्धि करना तथा आर्यसमाज के संगठन को दृढ़ करना है।[१५८] प्रारम्भ से ही आर्यसमाज में साप्ताहिक सत्संगों एवं वार्षिक अधिवेशनों का प्रावधान किया गया था। जिसके फलस्वरूप आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार होना तीवग्रति से स्वाभाविक था। क्योंकि इसके वार्षिक अधिवेशनों में ही प्राय: उत्तर प्रदेश के विविध जिलों से उत्साही आर्यसमाज के कार्यकर्तागण उपस्थित होकर समसामयिक सामाजिक जटिल समस्याओं पर निर्णय लिया करते थे।

सन्-१८८३ ई. तक उत्तर प्रदेश में जो आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार हुआ वह महर्षि दयानन्द के कर्तृत्व का परिणाम था। वे आर्यसमाज को एक प्रजा सत्तात्मक संगठन बनाना चाहते थे। इसीलिए समाज की नींव में उन्होंने समष्टि के भाव को भरा था।[१५९] महर्षि दयानन्द के जीवनकाल तक प्रादेशिक या केन्द्रीय स्तर पर आर्यसमाज के लिए किसी ऐसे संगठन का निर्माण न होना इस विषय का सूचक है कि आर्यसमाजी आर्यसमाज का उत्तरदाता और कृर्तत्वकर्ता स्वामी दयानन्द को समझते थे।[१६०]

वैसे स्वामी दयानन्द ने अपने जीवनकाल में ही एक ऐसे संगठन के निर्माण की रूपरेखा तैयार कर दी थी जो विविध क्षेत्रों में स्थापित आर्यसमाजों का ध्यान आकृष्ट करने में सक्षम था। वह परोपकारिणी सभा थी।

**परोपकारिणी सभा–** महर्षि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी संस्था परोपकारिणी १८८० ई. को मेरठ में हुई थी।[१६२] इसके बाद १८ अगस्त,सन-१८८० ई. को सभा का रजिस्ट्रेशन मेरठ में ही हुआ।[१६३] इस सभा की स्थापना के मूल में स्वामी दयानन्द का विचार था कि "उन्होंने अपने जीवनकाल में जो व्यक्तिगत सम्पत्ति अर्जित्त की थी, उसका समाज में सदुपयोग व सुरक्षा का कार्य परोपकारिणी सभा करेगी। यह सभा ही उनका सम्पूर्ण व्यक्तिगत सम्पत्ति की उत्तराधिकारी थी।[१६४]

स्वामी दयानन्द परोपकारिणी सभा को अपना उत्तराधिकारी और आर्यसमाज का रक्षक बनाना चाहते थे।[१६५] उन्होंने परोपकारिणी सभा के लिए जो वसीयतनामा तैयार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



कराया था उसमें इस सभा को वस्त्र, पुस्तक, धन और यन्त्रालय आदि सर्वस्व प्राप्त करने का अधिकार प्रदान किया था। इस वसीयतनामा में प्रारम्भ के २३ सभासदों का विवरण, स्वीकार पत्र के नियम व उसके ध्येय आदि का उल्लेख है।

इस सभा का प्रारम्भ में कुछ कर्त्तव्यों का निर्धारण भी हुआ था उसमें लेख और वाणी द्वारा देश और विदेश में प्रचार परोपकारिणी सभा का पहला कर्त्तव्य, दूसरा कर्त्तव्य-वैदिकशिक्षा का प्रबन्ध, उसका अन्तिम कर्त्तव्य दीनों और अनाथों को उठाना और उनकी सहायता करना था।[१६६] डॉ. भवानी लाल भारतीय ने इस विषय में कहा है कि वसीयतनामे के अनुसार उन्होंने प्रारम्भ में जो १८ सदस्यों की एक परोपकारिणी सभा बनाई जिसे उनकी मृत्यु के पश्चात् वेद वेदांगादिं शास्त्रों के प्रचार, वेदोक्त धर्म का उपदेश करने हेतु व्यवस्था करने तथा आर्यावर्तीय दीन अनाथादि के पालन का दायित्व सौंपा गया था।[१६७] साथ ही इस सभा की स्थापना कर वे आर्यसमाजों से जुड़े कार्यकर्ताओं को एक-दूसरे के समीप लाना चाहते थे।[१६८]

इस प्रकार इस सभा के माध्यम से स्वामी दयानन्द स्वायत्तशासी आर्यसमाजों का ध्यान एक केन्द्रीय संगठन की ओर आकर्षित कराना चाहते थे। क्योंकि प्रारम्भ से ही सार्वजनिक संगठनों के निर्माण में वे सिद्धहस्त थे। इसीलिए उन्होंने अपने जीवनकाल में अर्जित सम्पत्तियों को एक केन्द्रीय संगठन के अधीन कर दिए थे। इसका परिणाम यह हुआ कि इस सभा की बैठकों में आर्यसमाज के महान् कार्यकर्ताओं व नेताओं का आगमन हुआ करता था। ऐसे ही अधिवेशनों व बैठकों के फलस्वरूप प्रान्तीय स्तर पर एक संगठन निर्माण की रूपरेखा तैयार हुई।

परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन (दिसम्बर १८८३) में महादेव गोविन्दरानाडे, जो उसके अन्यतम सदस्य थे, ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया था कि भविष्य में सभा के सभासदों का जो स्थान रिक्त हो उसकी पूर्ति आर्यसमाज के प्रतिनिधियों द्वारा ही किया जाया करे।[१६९] बाद के अधिवेशनों में भी इस विषय पर विचार किया जाता रहा।[१७०] उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना के मूल में परोपकारिणी सभा का वार्षिक अधिवेशन इस दृष्टि से महत्व रखता है। क्योंकि इसके फलस्वरूप ही प्रान्तीय स्तर पर आर्यप्रतिनिधिसभाओं की स्थापना का क्रम प्रारम्भ हुआ। अब आगे यहाँ स्वामी दयानन्द के बाद उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार का अवलोकन करना समीचीन है।

**आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार (सन्- १८८३ - १९१२ ई. तक)**– महर्षि दयानन्द के जीवनकाल तक ५० आर्यसमाजों का होना उत्तर प्रदेश में इस समाज के प्रति लोकजागृति व लोकचेतना का परिचायक है। इसके द्वितीय चरण में उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार विषय का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि सन्-१८८३ से १९१२ की अवधि में जैसे सन्-१८८६ में आर्यसमाजों की संख्या-९०, सन्-१८९६ में संख्या-२१६ और सन्-१९१२ ई. तक आर्यसमाजों की संख्या कुल ४८२ हो गयी थी। इसप्रकार भारत के किसी भी अन्य प्रान्त या प्रदेश में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार की गति उतनी तेज नहीं थी, जितनी कि उत्तर प्रदेश में थी। इस प्रदेश में भी सबसे अधिक आर्यसमाज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


मेरठ, सहारनपुर, बिजनौर, बदायूँ, फर्रुखाबाद, कानपुर, बुलन्दशहर, अलीगढ़, मुजफ्फरनगर और एटा जिलों में थे। आगरा, मुरादाबाद, बरेली, मैनपुरी, शाहजहाँपुर और मथुरा जिलों में भी आर्यसमाज का अच्छा प्रचार था।[१७१]

**उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा–** आर्यसमाजों का एक केन्द्रीय संगठन उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना निर्दिष्ट अवधि के अनन्तर ही हुआ था। विदित है कि परोपकारिणी सभा के अधिवेशनों में ही उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना का निर्णय लिया गया था। इसमें प्रमुख भूमिका राय बहादुर महादेव गोविन्दरानाडे ने निभाई। उन्होंने ही २८ दिसम्बर १८८३[१७२] को अजमेर में हुए परोपकारिणी सभा के प्रथम अधिवेशन में, इस देश में विद्यमान विविध आर्यसमाजों को संगठित करने के लिए प्रादेशिक स्तर पर उच्चस्तरीय सभाओं की स्थापना का प्रस्ताव रखा था, रायबहादुर श्री सुन्दरलाल ने इसका समर्थन किया और यह प्रस्ताव तो स्वीकृत हो गया था लेकिन इसको कार्यरूप नहीं दिया जा सका।[१७३]

आगे इसमें बम्बई के आर्यसमाज के उपप्रधान श्री सेवकलाल कृष्णदास ने सन्-१८८४ में आर्यसज्जनों के नाम एक परिपत्र "जिसमें प्रधान समाज बनाने और उसमें सभी आर्यसमाजों के प्रतिनिधि सम्मिलित हों" जारी किया था । जिसका व्यापक असर हुआ।[१७४] इसके फलस्वरूप इस परिपत्र के समर्थन में पंजाब का आर्यपत्रिका और उत्तर प्रदेश (तत्कालीन पश्चिमोत्तर प्रान्त) में आर्यसमाचार ने इसके समर्थन में लेख लिखने प्रारम्भ कर दिए थे।[१७५]

अन्त में मेरठ आर्यसमाज के प्रधान श्री लक्ष्मण स्वरूप ने जून-१८८५ में सम्बन्धित उद्देश्य को सम्मुख रखकर एक प्रस्ताव किया। इसके साथ ही मेरठ नगर से प्रकाशित होने वाले आर्यसमाचार नामक पत्र में प्रान्तीय संगठन स्थापित करने पर उन्होंने बल दिया था। सर्वप्रथम उनके इस प्रस्ताव का पंजाब के आर्यबन्धुओं ने क्रियात्मक रूप से समर्थन किया और पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना कर डाली ।[१७६]

दिसम्बर-१८८६ मेरठ आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर, जिसमें उत्तर प्रदेश के अनेक आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों के साथ पंजाब से आए लाला लाजपत राय, पण्डित गुरुदत्त तथा लाला लालचन्द सदृश अनेक नेताओं की उपस्थिति में मुंशी लक्ष्मण स्वरूप द्वारा प्रस्तावित स्वीकृत नियमावली के आधार पर २९ दिसम्बर-१८८६ ई. को उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना मेरठ शहर में हुई।[१७७]

इस प्रान्तीय सभा के प्रथम प्रधान श्री बा. लक्ष्मण स्वरूप एवं श्री बिहारीलाल मुजफ्फरपुर निवासी इसके प्रथम मंत्री निर्वाचित हुए।[१७८] और श्री श्यामसुन्दर ब्रजरत्न-कोषाध्यक्ष। प्रारम्भ में इस सभा का कोई उपमंत्री तथा पुस्तकाध्यक्ष नियुक्त नहीं किया गया था।[१७९]

उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना के प्रारम्भ से उसके प्रधान पद को सुशोभित करने वालों में प्रमुख आर्यसमाज के नेतागण जैसे- श्री लक्ष्मण स्वरूप (सन्-१८८७-८८), दुर्गाप्रसाद, फर्रुखाबाद (सन्-१८९०), श्री भगवानदीन मिश्र, हरदोई (१८९७-१९००, १९०२-०७) कुँअर हुक्मसिंह-आंगई, मथुरा (१९०१, १९१७,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१९१९-२१), श्री तुलसीराम, मेरठ (१९०९-१३), पं. घासीराम, मेरठ (१९१४-१६, १९१८, १९२५-२७), श्री मदनमोहन सेठ, बुलन्दशहर (१९३५-३७, १९४०, १९४५), श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय, प्रयाग (१९४१-४४) आदि प्रमुख थे।

इस सभा की स्थापना के समय प्रान्तभर में आर्यसमाजों की संख्या ९१ थी। सभा की स्थापना होने के पश्चात् "वैदिक-वैजयन्ती" में दिए हुए आंकड़ों से विदिति होता है कि सन्-१८९७-९८ में २०५ आर्यमसमाज सभा में प्रविष्ट हो चुके थे, शेष ११ प्रार्थना-पत्र सभा में प्रविष्ट होने के लिए आए हुए थे।[१८०] सन्-१९१२ तक उत्तर प्रदेश में स्थापित आर्यसमाजों की संख्या ५०० के लगभग पहुँच चुकी थी। जिसमें से २३१ समाज आर्यप्रतिनिधिसभा के साथ सम्बद्ध थे।[१८१] इन्द्र विद्यावाचस्पति ने वैदिकवैजयन्ती में दिए हुए आंकड़ों के आधार पर बताया है कि ५०० समाजों में से २४४ आर्यसमाज तो सभा में प्रविष्ट हैं, शेष २५६ आर्यसमाज नाम मात्र ही हैं या उनका अस्तित्व ही नहीं रहा।[१८२]

नव स्थापित आर्यप्रतिनिधिसभा का उद्देश्य इसके प्रथम अधिवेशन (अजमेर, दिसम्बर १८८७)[१८३] में ही निश्चित हो गया था। नियमावली के द्वितीय नियम द्वारा इस सभा के निम्न उद्देश्य निर्धारित किए गए थे, जैसे-

१- वेद-वेदांग तथा प्राचीन संस्कृत शास्त्रों के पढ़ाने तथा आर्योपदेशक बनाने के लिए विद्यालय स्थापित करना।

२- सर्वसाधारण के उपकारार्थ धर्म और पदार्थ विद्या-सम्बन्धी तथा अन्य पुस्तकों का एक पुस्तकालय नियत करना।

३- छोटी बड़ी पुस्तकें वैदिकशिक्षा के प्रचारार्थ प्रकाशित करना।

४- संयुक्त-प्रान्त आगरा और अवध तथा अन्य स्थानों में उपदेश करना और कराना।

५- आर्यावर्त्त के अनाथ और दीनों के पालन, पोषण, शिक्षा और सुधारार्थ उपयुक्त प्रबन्ध करना।

६- सामान्य प्रकार से वैदिकधर्म के प्रचारार्थ उपयुक्त उपायों को काम में लाना।

आर्यप्रतिनिधिसभा के निर्दिष्ट उद्देश्य सन्-१८९० में रजिस्टर्ड कराए गए जो नियमावली से लिया गया है।[१८४] यह प्रान्तीय सभा उत्तर प्रदेश में स्थापित आर्यसमाजों के बीच परस्पर सम्बन्धों को ठीक रखने का प्रयास करता था और प्रान्तीय कार्यों को विशेष रूप से करता था।[१८५] सभा के अन्तर्गत साधारण सभा का निर्वाचन त्रैवार्षिक होता था।[१८६] पदाधिकारियों का चुनाव जनमत संग्रह द्वारा वार्षिक होता था।[१८७] प्रतिनिधि सभा प्रान्तीय सभासदों द्वारा मत संग्रह या जनमत संग्रह कराकर प्रबन्धकीय नियमों को बदल सकता था। लेकिन इसे आर्यसमाज के मूल धर्ममत, सिद्धान्तों को बदलने का अधिकार नहीं था।[१८८]

आर्यप्रतिनिधिसभा के संगठन में निम्नलिखित विभाग, सभा व समितियाँ उससमय कार्य कर रहीं थीं, जो उत्तर प्रदेश में, आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार में सहायक सिद्ध हुईं। वे निम्नवत् हैं-

१- डी.ए.वी. कॉलेज ट्रस्ट एण्ड मैनजिंग कमेटी का गठन, मेरठ, सन्-१८९२,[१८९]

२- वेदप्रचार मोहर्रिक कमेटी, सन्-१८९५,[१९०]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३- गुरुकुल शिक्षा पद्धति की योजना,[१९१]
४- धर्मप्रचार के प्रयोजन से ट्रैक्ट सोसायटी की स्थापना, सन् १८९९[१९२]
५- उपदेशक पाठशाला की योजना, सन्-१९०० ई,[१९३]
६- रक्षा विभाग की स्थापना, सन्-१९११,[१९४]
७- जिलाउपसभा की स्थापना (सहारनपुर, सन्-१९१२)[१९५]

इस प्रकार उपर्युक्त आर्यप्रतिनिधिसभा के संगठन को निर्दिष्ट विभागों ने प्रान्त में और अधिक सुदृढ़ किया। सभा में स्थापित समितियों, सभाओं एवं योजनाओं के क्रियाकलापों का उल्लेख आगे यथास्थान किया गया है।

**सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा–** उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत आर्यसमाज की प्रगति में सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। प्रान्तीय स्तर पर आर्यप्रतिनिधिसभा, जिस प्रकार प्रान्त में स्थापित आर्यसमाजों का प्रतिनिधित्व करता था, ठीक उसी प्रकार भारत के विविध प्रान्तों में स्थापित आर्यप्रतिनिधिसभाओं पर नियन्त्रण के लिए सर्वोच्च शक्तिशाली संगठन के रूप में सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा का स्थान था। आर्यसमाज के संगठन में सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा का स्थान सर्वोपरि था। इस सभा की स्थापना ३१ अगस्त सन्-१.९०९ ई. को दिल्ली में हुई।[१९६] इस सभा की स्थापना के मूल में उत्तर प्रदेश का आगरा जिला महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाया जिसके परिणामस्वरूप इस सभा की स्थापना हुई।

इस सभा की स्थापना का निर्णय करने में अत्यधिक समय लग गया था। इसके लिए सन्-१९०० ई. में, भारत धर्म महामण्डल महोत्सव, दिल्ली के अवसर पर अनौपचारिक समिति का गठन हुआ। अनौपचारिक समिति को संगठन निर्माण में अनेक वर्ष विचार-विनिमय एवं पत्र-व्यवहार में ही लग गए थे। अन्ततः २५ सितम्बर सन्-१९०८ ई. को आगरा में एक महत्त्वपूर्ण बैठक हुई और एक अनौपचारिक समिति का गठन हुआ। पंडित भगवान्दीन (प्रधान आर्यप्रतिनिधिसभा, संयुक्त-प्रान्त) की अध्यक्षता में सार्वदेशिक सभा के निर्माण की पृष्ठभूमि तैयार हुई।[१९७] परिणाम स्वरूप आर्यसमाज के इतिहास में सार्वभौम सर्वोच्च शक्तिशाली संगठन सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना हुई।

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा के साथ कई आर्यमहासम्मेलन हुए हैं। इस सभा के प्रधान पद को सुशोभित करने वालों में गुरुकुल कांगड़ी उत्तर प्रदेश के श्रीयुत् महात्मा मुंशीराम (सन्-१९१०-१७), पं. घासीराम, मेरठ (७.४.१९१७ से १९.८.१९१७ तक), कुँवर हुक्मसिंह आंगई, मथुरा (सन्-१९१९-१९२१), महात्मा नारायण स्वामी, रामगढ़ (नैनीताल) १९२३-१९३७, १९१४-१९४२, १९४५-१९४७), पं. गंगाप्रसाद, मेरठ (१९४३-४५), श्रीयुत् मदन मोहन सेठ, लखनऊ (१९४७-१९४८), उत्तर प्रदेश के प्रमुख आर्यसमाजी थे।

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा से जुड़े इन कार्यकर्ताओं द्वारा आर्यसमाज के उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए उत्तर प्रदेश के विभिन्न भागों में इसका प्रचार-प्रसार खूब किया गया। मुख्यतः यह सभा केवल आर्यावर्त्तीय या भारत तक ही सीमित न रहकर सच्चे अर्थों में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सार्वदेशिक या सार्वभौम हो गयी। क्योंकि दक्षिणी अफ्रीका, पूर्वी अफ्रीका और फीजी आदि अन्य देशों में जब आर्यप्रतिनिधिसभाएँ स्थापित हुईं, तो उन्हें सार्वदेशिक सभा के संगठन में सम्मिलित कर लिया गया।[१९८] इस सभा के मंत्री डॉ. सच्चिदानन्द शास्त्री (आयु ७० वर्ष) थे जिन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व आर्यसमाज के इतिहास का प्रत्यक्ष अवलोकन किया है, उन्होंने सार्वदेशिक सभा के विषय में बताया कि यह सभा आर्यसमाजों की गतिविधियों का प्रमुख केंद्र थी और इसका कार्यक्षेत्र समस्त देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर था। यह आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए सदैव तत्पर थी।

इस प्रकार आर्यसमाज की प्रगति में उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा और सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा की स्थापना अति महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है क्योंकि उत्तर प्रदेश के विविध भागों में स्थापित स्वायत्तशासी आर्यसमाजों पर नियंत्रण रखना और उनके बीच परस्पर सम्बन्ध बनाए रखना इसका परम् उद्देश्य था।

आर्यसमाज की लोकप्रियता व प्रभावशीलता को प्रान्त में देखते हुए ही मिस्टर ब्लण्ट (आई.सी.एस.), जो संयुक्त-प्रान्त के सेंसस आफिसर थे, ने सन्-१९१२ ई. में लिखा है कि "यह आर्यसमाज बीते हाफ सेंचूरी में भारत का महान् धार्मिक आन्दोलन है।"[१९९] सन्-१८९१ ई. में जनगणना के आधार पर उत्तर प्रदेश में आर्यसमाजियों की संख्या-२२०५३ हो गयी थी। अगले १० वर्षों में (सन्-१९०१) इस संख्या का ६५,२९२ तक पहुँच जाना आर्यसमाज के प्रसार की तीव्रगति को सूचित करता है। सन्-१९०१ में संयुक्त-प्रान्त (वर्त्तमान उत्तर प्रदेश) की कुल जनसंख्या ४,६९,०५,०८५ थी, जिनमें ४,०३,८०,१६८ हिन्दू थे। चार करोड़ के लगभग हिन्दुओं में पैंसठ हजार का "आर्य" या आर्यसमाजी बन जाना इस प्रदेश में आर्यसमाज की सफलता का द्योतक है।[२००]

सन्-१९१२ तक के काल को उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज के इतिहास का प्रारम्भिक युग कहा जा सकता है। इस प्रदेश के पश्चिमी भाग में आर्यसमाज सुदृढ़ आधार पर स्थापित हो गया था, और अन्यत्र भी उसके कार्यकलाप में गति आने लग गयी थी।[२०१] लेकिन इस काल तक आर्यप्रतिनिधिसभा का गठन हुए चौथाई सदी बीत जाने पर भी इस प्रदेश के पूर्वी, दक्षिण-पूर्वी, उत्तर-पूर्वी और पार्वत्य क्षेत्रों में आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार अधिक नहीं था। मेरठ, आगरा और रुहेलखण्ड कमिश्नरियों के जिले ही ऐसे थे, जिनमें आर्यसमाज पर्याप्त संख्या में स्थापित थे।[२०२] मेरठ डिवीजन के अंतर्गत देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, अलीगढ़, आदि जिले थे। आगरा डिवीजन में मथुरा, आगरा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा, एटा, आदि जिले सम्मिलित थे। रुहेलखण्ड डिवीजन के अन्तर्गत बरेली, मुरादाबाद, बिजनौर, शाहजहाँपुर, बदायूँ, पीलीभीत आदि जिले इसके अन्तर्गत आते थे।[२०३]

**मेरठ डिवीजन (१८८३-१९१२)-** इस डिवीजन के अन्तर्गत देहरादून जिले में, प्रारम्भिक कार्यकर्त्ताओं में पण्डित कृपाराम, स्वामी महानन्द, श्री दरोगालाल सिंह, बाबू माधो नारायण और श्री गोपाल सिंह आदि प्रमुख थे। सन्-१८८६ ई. में बाबू ज्योतिस्वरूप देहरादून आए, शीघ्र ही उत्तर प्रदेश के आर्यसमाजी क्षेत्र में उच्च स्थान प्राप्त कर लिया और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्-१८९१ में वह प्रतिनिधि सभा के प्रधान भी चुने गए थे। उन्हीं के प्रयत्न से मेरठ में स्थापित डी.ए.वी. कालेज को सन्-१९०४ में देहरादून से लाया गया था। यहाँ सन्-१९१२ तक चूहड़पुर (१८९३), डोईवाला (१९११), मसूरी और चकराता में भी आर्यसमाजों की स्थापना हो गयी थी।[२०४]

सहारनपुर जिले में सन्-१९१२ तक स्थापित हुए आर्यसमाजों में गंगोह (१८८५), तीतरो (१८९५), देवबंद (१९००), अम्बहटा (१९०२), नगली खटौली (१९०४), भगवानपुर (१९११), खेड़ा, अफगान, चुड़ियाला, गढ़ी, अब्दुल्लाखाँ, ज्वालापुर, पनियाल, महेवड़ और दावकी खेड़ी आदि थे। इसी जिले में हरिद्वार जैसे तीर्थस्थान और गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर जैसी आर्यशिक्षण संस्थाओं की सत्ता थी।[२०५]

मुजफ्फरपुर जिले में महर्षि के जीवनकाल तक आर्यसमाज की स्थापना नहीं हुई थी। सर्वप्रथम सन्-१८८५ ई. में यहाँ आर्यसमाज की स्थापना हुई उसके बाद सन्-१९१२ तक आर्यसमाजों की स्थापना के क्रम में यहाँ- कैराना (१८९०), दूधली (१९०१), कुर्माली (१९०२), चरथावल (१९०४), थानाभवन (१९०९), जानसठ (१९१०), और ३ सितम्बर, सन्-१९१२ में खतौली आर्यसमाज आदि थे। इसके अतिरिक्त एलम, मुबारिकपुर, लुहारी, खई, चौसाना, जसौला, बहारा बिनत और बुढ़ाना थे।[२०६]

मेरठ जिले में सन्-१९१२ तक फलावदा (१८८५), मवाना कलां (११ अप्रैल १८८६), परीक्षितगढ़ (१८८७), लालकुर्ती जवाहरनगर मेरठ छावनी (१९८८), हापुड़ (१८९०), गाजियाबाद (१८९१), खिवजिलालपुर (१८९८), सरधनी शहर (अक्टूबर, १९०३), आर्यकुमार सभा की स्थापना (१९०५), आर्यस्त्री समाज, मेरठ सदर (१९०८), इसके अतिरिक्त सन्-१९११ तक स्थापित हुए अन्य आर्यसमाज कपसाढ सनौता, किरठल, छुर, तरीन, नरैना, और बेगमाबाद आदि थे।

ये सब आर्यसमाजें उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा के साथ सम्बद्ध थे। इनके अतिरिक्त अन्य भी अनेक आर्यसमाज मेरठ जिले में स्थापित हो चुके थे, जो अभी तक सभा के साथ सम्बद्ध नहीं हुए थे और स्वतन्त्र रहकर वेद-प्रचार के कार्य में तत्पर थे।[२०७]

बुलन्दशहर जिले को यह सौभाग्य प्राप्त है कि आधुनिक युग के प्रथम गुरुकुल की स्थापना उसी के अन्यतम नगर सिकन्दराबाद में हुई थी । पण्डित कृपाराम (स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती) ने वहीं सन्-१८९८ ई. में अपने प्रथम गुरुकुल को स्थापित किया था। बुलन्दशहर जिले में सन्-१९१२ ई. तक सिकन्दराबाद (सन्-१८८८) वीरगांव टिटौडा (१८९२), जहाँगीराबाद (१८९८), खुर्जा (१८९८), डिबाई (१९००), इसके साथ ही घुंघरावली, नगला, महीउद्दीनपुर, नगला उदयभानु, पहासू, बैलोन, बैरा, फीरोजपुर, भदौरा, बुलन्दशहर, भुवन बहादुरनगर, लालगढ़ी सावितगढ़, सोखनी, सिकन्दराबाद, स्थाना आदि में आर्यसमाज स्थाप्रित हो गए थे।[२०८]

अलीगढ़ जिले में सन्-१९१२ तक वहाँ २१ आर्यसमाजों की स्थापना हो गयी थी।[२०९] इस जिले ने आर्यसमाज को अनेक कर्मठ कार्यकर्त्ता और नेता प्रदान किए थे जिनमें ध्रुवानन्द सरस्वती, स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी, पं. शिवकुमार शास्त्री, पं. सुरेन्द्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शर्मा गौड़, बाबू पीतमलाल, कवि सम्राट् पं. नाथूराम शंकर, माता लक्ष्मी देवी, ठाकुर खमान सिंह, श्री प्रेमचन्द शर्मा एम.ए.सी., पं. बाबूलाल दीक्षित, डॉ. महावीर प्रसाद प्रधान आर्यप्रतिनिधिसभा मध्य भारत आदि।[२१०] सन्-१९१२ ई. तक इस जिले में आर्यसमाज की स्थापना क्रम में आर्यसमाज अलीगढ़ (सन्-१८८५), काज़िमाबाद (१८८७), मुरसान (१८९१), अतरौली (१८९१), न्हौटी मडराक (१९००), सन्-१९०५ में श्री बलदेव सिंह के पुरुषार्थ से कचौरा आर्यसमाज की स्थापना, हाथरस, (सन्-१९१०), इगलास (१९११), महुआ (१९११), मण्डू (१९१२), बोरना (१९१२) आदि स्थानों में आर्य समाज ही स्थापना हुई। इनके अतिरिक्त छतरपुर, दादों, पहाड़ी नगला, विजयगढ़, बरौढा, बरला, शाहगढ़, सिकन्दरा राऊ और इनायतपुर बड़ौदा में भी सन्-१९१२ तक आर्यसमाज स्थापित हो गए थे। आर्य-स्त्री समाज अलीगढ़ की स्थापना सन्-१९०८ ई. में श्रीमती सरस्वती देवी द्वारा हुई।[२११]

**आगरा डिवीजन (१८८३-१९१२)**– विदित है कि इस डिवीजन के अन्तर्गत पहले मथुरा, आगरा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा, एटा आदि जिले सम्मिलित थे। सन्-१८८३-१९१२ तक स्थापित जिले के अनुसार आर्यसमाजों का विवरण निम्नवत है- जैसे आगरा जिले में सन्-१९१२ तक स्थापित आर्यसमाज- फीरोजाबाद आर्यसमाज (सन्-१८८५), कागारौल ग्राम आर्यसमाज (१९०१), नामनेर आर्यसमाज (१९०६) इस समाज की स्थापना पं. तुलसीराम, पं. टीकाराम, और श्री छतरसिंह आदि आर्यसमाजियों ने की। कुछ समय पश्चात् नामनेर आर्यसमाज को पं. भोजदत्त आर्यमुसाफिर ने अपना केन्द्र बनाया और वहाँ "आर्यमुसाफिर विद्यालय" की स्थापना सन्-१९१२ में की। "आर्यमुसाफिर" नाम से एक पत्र का प्रकाशन भी पं. भोजदत्त ने किया था। आगरा स्त्री समाज (सन्-१९०९) टूँडला और पिनाहट आर्यसमाज (सन्-१९११) आदि इसमे सम्मिलित थे।[२१२]

फर्रुखाबाद जिले में तेराजाकट आर्यसमाज (१-१०-१८९१), सकरावाँ (१८९९), खुदागंज (१९०२) और सन्-१९१२ तक समधन, रोहली, रसीदाबाद, भोलेपुर (१९८१), बिहारीपुर, पिलखना (५ मार्च १८९७), जसपुरापुर, कायमगंज और कन्नौज में (सं० १९४० विक्रमी) भी आर्यसमाज स्थापित हो गया था।[२१३]

मैनपुरी जिले के अन्तर्गत सन्-१९१२ तक इसके अन्यतम नगर भोगाँव में सन्-१९०८ में आर्यसमाज स्थातिप हुआ। शिकोहाबाद आर्यसमाज (सन्-१९०५) और बेवर, उरावर, गढ़िया, छिनकौरा, भारौल, मक्खनपुर और सिरसागंज आर्यसमाजों की स्थापना हुई।[२१४] इटावा जिले में जसवन्त नगर आर्यसमाज (सन्-१८८४), इटावा आर्यसमाज (१८८८), औरैया आर्यसमाज (सन्-१९००), अजीतमल जयतापुर, बकेबर, लहरापुर आदि आर्यसमाजों की स्थापना सन्-१९१२ के पूर्व हो चुकी थी।[२१५]

एटा जिले में, एटा आर्यसमाज (सन्-१८८५), कासगंज आर्यसमाज (१८८६), कासगंज समाज के पुराने कार्यकर्ताओं में बाबू आनन्द, किशोर, पण्डित हरविलास और डॉ. श्रीराम के नाम उल्लेखनीय हैं। अलीगंज आर्यसमाज (सन्-१८९०), सराय अगस्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(१९०४), सन्-१९१२ तक, सकीट, विलसड़, नरदोली, निघौली, तिरगवा, उँचागाँव और जिलौली नामक नगरों में आर्यसमाज स्थापित हो गए थे।[२१६]

**रुहेलखण्ड डिवीजन (१८८३-१९१२)**– इस डिवीजन के अन्तर्गत बरेली, मुरादाबाद, बिजनौर, शाहजहाँपुर, बदायूँ, पीलीभीत आदि जिले आते थे। सन्-१८८३ से १९१२ तक स्थापित आर्यसमाजों का विवरण इन जिलों में निम्नवत है—

बरेली जिला रुहेलखण्ड कमिश्नरी का केन्द्र था। इस जिले में सन्-१९१२ तक आर्यसमाज भूड़ (१९०२), इसके संस्थापकों में श्री लाला मुकुट बिहारीलाल, श्री श्याम बिहारीलाल, श्री बृज बिहारीलाल, श्री लालताप्रसाद, भोलानाथ एवं श्री मुरारीलाल प्रमुख थे। स्त्री-समाज भूड़ (४ जून १९०६), इसी समय आर्यसमाज फैजुल्लापुर की स्थापना स्वामी दर्शनानन्द ने किया था।[२१७]

मुस्लिम बाहुल्य मुरादाबाद जिले में महर्षि दयानन्द के देहावसान के दो वर्ष पश्चात् चन्दौसी (सितम्बर-१८८५) और सम्भल (१८८५) में आर्यसमाज स्थापित हुए। टांडा अफजल आर्यसमाज (१८९०), सरायतरीन आर्यसमाज (१८९३), सुरजनगर आर्यसमाज (मई १८९७), अमरोहा का आर्यसमाज (९ अक्टूबर १९०२), हसनपुर आर्यसमाज (१९०५), अगवानपुर (१ अप्रैल १९०९), बहजोई आर्यसमाज (१५ अक्टूबर १९११), काण्ठ आर्यसमाज (१ जनवरी सन्-१९१२) आदि आर्यसमाजों की स्थापना सन्-१९१२ तक हुयी थी।[२१८]

बिजनौर जिले के किसी भी स्थान में महर्षि दयानन्द का पदार्पण नहीं हुआ था। उनके शिष्य स्वामी सहजानन्द ने इस जिले में पधारकर वैदिकज्ञान गंगा प्रवाहित की जिसके फलस्वरूप यहाँ आर्यसमाजों की स्थापना का क्रम प्रारम्भ हुआ। सन्-१९१२ तक नहटौर आर्यसमाज (१८८७), नजीबाबाद आर्यसमाज (स्थायी रूप से १ जून १८९७), स्यौहारा आर्यसमाज (८ सितम्बर १८९२ ई.), चाँदपुर आर्यसमाज (१८९१), धामपुर आर्यसमाज (१८९८), गोहावर आर्यसमाज (१९०४), हल्दौर आर्यसमाज (९.९.१९०), पुरैनी आर्यसमाज (१९१२), इसके साथ रेहड़ बढ़ापुर, असगरीपुर, नांगल, सौंख, सेंद्वार (१९०२) और शेरकोट आदि आर्यसमाजों की स्थापना हुई।[२१९]

शाहजहाँपुर में स्थापित आर्यसमाज- जलालाबाद आर्यसमाज (१८८४) की स्थापना में स्वामी परमानन्द सरस्वती का मुख्य कर्तृत्व था। सन्-१९१२ के पूर्व यहाँ तिलहर आर्यसमाज (२९ फरवरी, १८९७), खुदागंज और पुवायां आर्यसमाज की स्थापना हो चुकी थी।[२२०]

इसी प्रकार बदायूँ तथा रुहेलखण्ड के दो अन्य जिले पीलीभीत और रामपुर में आर्यसमाजों की स्थापना हो चुकी थी। बदायूँ जिले में आर्यसमाज इस्लामनगर की स्थापना (१८९६), उझानी आर्यसमाज (१९००), पुराना आर्यसमाज मुंढ़िया घुरेकी (१९०४) और सन्-१९१२ तक गुन्नौर, ढहनवाँ, नौनी, बिलसी, बिसौली, भिरावरी, सोरहा, सहसवान, हरफरी और सेरहा आर्यसमाज की स्थापना हो चुकी थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पीलीभीत और रामपुर में सन्-१९१२ तक आर्यसमाज का अधिक प्रचार-प्रसार नहीं था। फिर भी आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश के समस्त आर्यसमाजों की संशोधित सूची विवरण में इन दोनों नगरों में स्थापित आर्यसमाजों को दर्शाया गया है। पीलीभीत आर्यसमाज (१८८५), पूरनपुर नगर में आर्यसमाज (१९०१), बीसलपुर आर्यसमाज (१९०२) की स्थापना हुई। रामपुर पहले एक रियासत थी, जिस पर नवाब का शासन था। इसमें भी १९१२ तक तीन आर्यसमाज- रामपुर, गैराकलां (१९०८) और रहमतगंज आदि स्थापित हो चुके थे। रहतमतगंज आर्यसमाज की स्थापना स्वामी चिदानन्द ने की थी।[२२१]

इस प्रकार सन्-१८८३ ई. से लेकर सन्-१९१२ तक उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग में आर्यसमाज का तीव्रगति से प्रचार-प्रसार हुआ। वहीं दूसरी ओर जैसा कि विदित है कि इस देश के पूर्वी, दक्षिणी-पूर्वी, उत्तर-पूर्वी और पार्वत्य क्षेत्रों में आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार अधिक नहीं था। फिर भी इलाहाबाद, बनारस, गोरखपुर, कुमायूँ, लखनऊ और फैजाबाद आदि मण्डलों में आर्यसमाज आन्दोलन का पर्याप्त असर था। उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि आदि उत्तर प्रदेश के विविध भागों में आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार के लिए सक्रिय थे। इन मण्डलों में भी ऐसे संगठनों का प्रभाव कायम था जिसके फलस्वरूप आर्यसमाजों की स्थापना भी यहाँ हुई। यहाँ ध्यान देने योग्य है कि उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा का कार्यक्षेत्र केवल प्रचार तक ही सीमित नहीं था, बल्कि प्रान्त के विविध भागों में आर्यसमाज को सुदृढ़ करने, डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं की स्थापना, आर्यकन्या स्कूल व कॉलेजों की स्थापना, गुरुकूल पद्धति की शिक्षण संस्थाएँ खोलने, विधर्मियों को शुद्ध कर आर्यबनाने, दलितों का उद्धार करने के निमित्त अधिवेशन, सम्मेलन व सहभोज के कार्यक्रम आयोजित करने, आर्यकुमार सभाओं की स्थापना करने, अनाथों और अनाश्रितों के लिए अनाथालय स्थापित करने, नारी जागृति के लिए आन्दोलन करने, आपदाग्रस्त लोगों की सहायता आदि का कार्य संगठित ढंग से सभा द्वारा किया जाता रहा । उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की योजनाएँ विविध क्षेत्रों में स्थापित आर्यसमाजों में भी इसी प्रकार क्रियान्वित होती रहीं।

**आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार (१९१२ से १९४७ ई. तक)–** आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार सन्-१९१२ ई. से १९४७ ई. तक यह काल आर्यसमाज के इतिहास का स्वर्णिम युग था। विदित है कि सन्-१८८३ ई. से सन्-१९१२ ई. तक के काल में उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा, सार्वदेशिकप्रतिनिधिसभा तथा जिला उपसभा या आर्योपप्रतिनिधिसभा आदि आर्यसमाज के सशक्त संगठनों का निर्माण हो चुका था। सन्-१९४७ ई. तक उत्तर प्रदेश के ३५ जिलों में जिला प्रतिनिधि सभाओं की स्थापना हुई ।[२२२] जिला उपप्रतिनिधिसभा या आर्योपप्रतिनिधिसभा की स्थापना में यह ध्यान रखा गया था कि जिस जिलें में कम से कम ९ आर्यसमाजें हों वहाँ इस सभा की स्थापना की जाए।[२२३]

उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा जिले में स्थापित आर्यसमाजों पर नियन्त्रण रखने के उद्देश्य से इस संगठन का निर्माण किया गया था । आर्यसमाज अपने स्थापना के प्रारम्भ से ही इस विषय पर सदैव प्रत्यनशील था कि विविध क्षेत्रों में स्थापित स्वायत्तशासी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाजों पर नियंत्रण कैसे रखा जाए। इसके फलस्वरूप ही ऐसे संगठनों का निर्माण हुआ। आर्योपप्रतिनिधिसभा भी इसी उद्देश्य से स्थापित की गयी थी कि जिले में स्थापित आर्यसमाजों को कैसे संगठित किया जाए। सन्-१९४७ ई. तक उत्तर प्रदेश में बारह सौ (१२००) के लगभग आर्यसमाज स्थापित किए गए थे।[२२४] इसमें सन्-१९४७ तक ७१६ आर्यसमाज उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा से सम्बद्ध थे और जो समाज अभी तक सभा के साथ सम्बद्ध नहीं हुए थे उनकी संख्या ५०० के लगभग थी।[२२५]

सन्-१९२२ ई. की अवधि में उत्तर प्रदेश के विविध भागों में आर्यसमाजों की स्थापना का क्रम चलता रहा लेकिन इस काल तक भी उत्तर प्रदेश की पश्चिमी जिलों में ही तीव्रगति से आर्यसमाजों की स्थापना हुई। इस समय तक इलाहाबाद, कानपुर, लखनऊ और बनारस सदृश बड़े व महत्त्वपूर्ण जिलों में बहुत कम आर्यसमाजों की सत्ता थी। कानपुर में केवल १० समाज थे, बनारस में ४, लखनऊ में ५, गोरखपुर, आजमगढ़, बलिया आदि पूर्वी जिलों में तो उससमय आर्यसमाजों की संख्या चार-पाँच तक भी नहीं पहुँच पाई थी। सन्-१९२२ ई. तक सभा से सम्बद्ध स्थापित आर्यसमाजों का विवरण निम्नवत् है–

सहारनपुर-३२, मुजफ्फरनगर-२०, मेरठ- २१, बुलन्दशहर-२०, अलीगढ़-१७, मुरादाबाद-१४, फर्रुखाबाद-१४, बदायूँ-१२, बिजनौर-१७, एटा-१७, बरेली-११ और मैनपुरी-११[२२६] आदि।

उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा भू-सम्पत्ति विभाग (सन्-१९१५ ई.), आर्य को-ऑपरेटिव बैंक (सन्-१९२० ई.), सन्-१९२२ ई. में जातिभेद निवारक संघ, आदि खोला गया था। प्रान्त के विविध नगरों में स्थापित आर्यसमाजों एवं संस्थाओं की चल-अचल सम्पत्ति की सुव्यवस्था एवं सुरक्षा के लिए भू सम्पत्ति विभाग की स्थापना प्रतिनिधिसभा द्वारा की गयी थी।[२२७] इस विभाग का कार्य अधिष्ठाता के संरक्षण में होता था।[२२८] आर्य को-ऑपरेटिव बैंक आर्यसमाजियों को आवश्यक पूँजी उपलब्ध कराने तथा उनकी बचत के धन का लाभदायक रूप में विनियोग करने के लिए स्थापित की गयी थी। यह बैंक लखनऊ, कानपुर और आगरा आदि जिलों के किसानों, मजदूरों का छोटा-छोटा संघ बनवाकर उद्योग धन्धों के लिए ऋण देना आरम्भ किया था। अनेक वर्षों तक यह बैंक अच्छा कार्य करता रहा।[२२९] पर यह देर तक कायम नहीं रह सका और बाद में यह बन्द हो गया।[२३०] जातिभेद निवारक संघ की स्थापना कर आर्यसमाज ने जन्मगत जाति बन्धनों को तोड़ने की दिशा में अथक प्रयास किया। इस दिशा में दृढ़तापूर्वक पं. धमेन्द्रनाथ शास्त्री, तर्क शिरोमणि, एम.ए. पं. महेन्द्रप्रताप शास्त्री, एम.ए. आदि ने पग बढ़ाए।[२३०] इस संस्था के विषय में, सामाजिक क्षेत्रों में आर्यसमाज द्वारा किए गए योगदान विषयक अध्याय में यथास्थान उल्लेख किया जाएगा।

सन्-१९२५ ई. में मथुरा जन्म-शताब्दी के अवसर पर आयोजित अधिवेशनों में विविध विषयों पर अनेक प्रस्ताव स्वीकृत किए गए थे। उनमें से एक प्रस्ताव आर्यसमाज के संगठन में पूर्णता लाने के लिए विद्यार्यसभा, धर्मार्यसभा और राजार्यसभा गठित करने के सम्बन्ध में था।[२३२] यह शताब्दी समारोह मनाने का दायित्व परोपकारिणी व सार्वदेशिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सभा ने अपने हाथों में लिया था। २० जनवरी, सन्-१९२८ ई. के अधिवेशन में सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा ने एक प्रस्ताव द्वारा धर्मार्यसभा की बुनियाद रख दी थी।[२३३] १६ अप्रैल १९३० ई. को धर्मार्यसभा का अधिवेशन गुरुकुल वृन्दावन में हुआ और इसके उद्देश्य वैदिक सिद्धान्तों पर मतभेद होने पर निर्णायक व्यवस्था करना, शुद्ध पठादि की व्यवस्था, दयानन्द कृत ग्रन्थों का सम्पादन करना, वेदानुकूल ग्रन्थों का निर्माण, वैदिक सिद्धान्तों की रक्षा के लिए अनुष्ठान करना आदि निर्धारित किए गए। धर्मार्यसभा के ऐसे उद्देश्यों को सम्मुख रखकर आर्यसमाज ने प्रान्त में निरन्तर कार्य किया।

सन्-१९४५-४६ ई. में सार्वदेशिक सभा राजार्य सभा को अपने आधीन बनाना चाहा और आगे चलकर विधिवत इस सभा की संगठना भी की।[२३४] विद्यार्यसभा का संगठन आर्यमहासम्मेलन बरेली (फरवरी-१९३१) के अवसर पर भी नहीं किया जा सका था। इस संदर्भ में प्रस्ताव अवश्य पारित किया गया। प्रस्ताव में संख्या १७ के अनुसार- सार्वदेशिक सभा, विद्यार्यसभा को संगठित करने की योजना करें जो आर्यसमाज के शिक्षा सम्बन्धी कार्य में यथासम्भव पारस्परिक सहयोग समानता और आवश्यक सुधार लाने की चेष्टा करे और यत्न किया जाए कि यह विद्यार्यसभा भविष्य में ''अखिल भारतीय दयानन्द पीठ'' का रूप धारण कर सके।[२३५] इस समय तक उत्तर प्रदेश के विविध भागों में अनेक आर्यशिक्षण संस्थाओं की स्थापना हो चुकी थी लेकिन इन शिक्षण संस्थाओं का संचालन किसी विद्यार्यसभा ऐसे सर्वोच्च संगठन के अधीन नहीं रहा। यह अपने आप में स्वतन्त्र और सोसायटी के अधीन थे।

२६ जनवरी सन्-१९२८ ई. में आर्यरक्षासमिति द्वारा आर्यवीरदल नाम से एक संस्था की स्थापना की गयी। आर्यसमाज के आर्यवीरों को संगठित करने एवं एक सूत्र में पिरोने के लिए सन्-१९२७ ई. में महात्मा हंसराज की अध्यक्षता में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया था। जिसमें निर्णय लिया गया कि धर्मान्ध लोगों द्वारा आर्यनेताओं की हत्याओं को रोकने का एकमात्र उपाय ''आर्ययुवा संगठन'' है।[२३६] फलस्वरूप आर्यवीर दल की स्थापना हुई। महात्मा नारायण स्वामी का योगदान इस संगठन की प्रगति में अपूर्व रहा।[२३७] आर्यवीर दल संगठन के निर्माण के बाद उत्तर प्रदेश के आर्यसमाजों में आर्यवीर दल की स्थापना होती रही।

प्रान्त में आर्यवीर दलों की स्थापना में आर्यरक्षा समिति के सहायक मंत्री श्री शिवचन्द्र का योगदान प्रशंसनीय है। उनके दौरे के परिणाम स्वरूप सन्-१९३७ ई. तक निम्नलिखित नगरों में आर्यवीर दलों की स्थापना हुई- मेरठ सिटी, मुरादाबाद, चन्दौली, बरेली, हरदोई, लखनऊ, फैजाबाद, बनारस, मिर्जापुर, इलाहाबाद, फतेहपुर, कानपुर, आगरा, इन्दौर आदि।[२३८] इसके अतिरिक्त १९४७ ई. तक आर्यवीर दलों की स्थापना- आर्यसमाज का बगही, मिर्जापुर (सन्-१९४६), आर्यसमाज दर्शनपुरवा (सन्-१९४३), आर्यसमाज फैजाबाद (सन्-१९४०), आर्यसमाज नानापारा बहराइच (सन्-१९४७), आर्यसमाज गढ़मुक्तेश्वर (सन्-१९४२), आर्यवीर दल गाजियाबाद (सन्-१९४३ ई.) आदि, उत्तर प्रदेश के अन्य नगरों में भी की गयी।[२३९]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इस प्रकार सन्-१९१२ ई. से सन्-१९४७ ई. तक आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार एक संगठन की दृष्टि से अति महत्त्वपूर्ण रहा। इस अवधि में उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा, आर्योपप्रतिनिधिसभा, सार्वदेशिकआर्यप्रतिनिधिसभा, आर्यवीर दल आदि का खूब प्रचार-प्रसार रहा। इनके द्वारा आयोजित अधिवेशनों, महासम्मेलनों, शताब्दी समारोहों आदि में अनेक प्रस्ताव पारित हुए थे जो आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार में सहायक थे। यहाँ ध्यान देने योग्य है कि उत्तर प्रदेश में सन्-१९४७ ई. तक १२०० के लगभग आर्यसमाजों का होना, लोक चेतना व जागृति का परिचायक है। ये आर्यसमाजें प्रान्त में आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में अत्यधिक तत्पर थीं। समाजिक सुधार और शैक्षणिक कार्यक्रमों में स्थापित आर्यसमाजों का योगदान अति महत्त्वपूर्ण रहा।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## सन्दर्भ


१. शिवदयालु, इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश, प्रथम भाग, पृ. ७
२. सत्यकेतु विद्यालंकार, आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. ६३१
३. वही, पृ. ६२१
४. वही, पृ. ६२२
५. वही, पृ. ६२७
६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ३
७. वही, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३३९
८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३४
९. वही, पृ. ६३
१०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३३९
११. वही, पृ. ६३३
१२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. १४५
१३. अजीतकुमार शुक्ल, उत्तर प्रदेश में पर्यटन उद्योग, पृ. २
१४. उत्तर प्रदेश एक परिचय, नवम्बर १९९४, पृ. ५
१५. वही
१६. वही, पृ. ७
१७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १
१८. उत्तर प्रदेश - एक परिचय, पूर्वोद्धृत, पृ. ७
१९. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १
२०. अजीतकुमार शुक्ल, पूर्वोद्धृत, पृ. ६७
२१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १
२२. अजीतकुमार शुक्ल, पूर्वोद्धृत, पृ. ६७
२३. उत्तर प्रदेश - एक परिचय, पूवोद्धृत, पृ. ८; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १
२४. उत्तर प्रदेश - एक परिचय, पूर्वोद्धृत, पृ. ७
२५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३
२६. उत्तर प्रदेश - एक परिचय, पूर्वोद्धृत, पृ. ८
२७. वही, पृ.१६
२८. अजीतकुमार शुक्ल, पूवोद्धृत, पृ. ६७
२९. उत्तर प्रदेश - एक परिचय, पूर्वोद्धृत, पृ. ९
३०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५४९
३१. वही, द्वितीय भाग, पृ. २१४
३२. शिवदयालु पूर्वोद्धृत, पृ. ३१
३३. सत्यकेतु पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३०७
३४. वही, पृ. ३११
३५. वही, पृ. २५७
३६. गुलशन स्वरूप सक्सेना, आर्यसमाज मूभमेंट इन इण्डिया, पृ. ६७
३७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २१४


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३८. वही, पृ. २४४
३९. वही, प्रथम भाग, पृ. ५९२
४०. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ९६
४१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोर्द्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५९२
४२. वही, पृ. ५९२
४३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९६
४४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५९२
४५. वही
४६. वही, द्वितीय भाग, पृ. २४४
४७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९६
४८. धर्मेन्द्र सिंह आर्य, आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर-प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. ४१
४९. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ.९६
५०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग; पृ.२४४
५१. वही, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.५९३
५२. ई.ए.एच. बलण्ट, सेंसस ऑफ इण्डिया-१९११,पृ. ८
५३. वही, प्रथम भाग, पृ. ५५१
५४. वही, पृ.५५२
५५. मेरठ गजेटियर, एच.आर. नेविल, इलाहाबाद १९०४, पृ. ८२
५६. रजत'जयंती स्मारिका - आर्यसमाज, साकेत, मेरठ, पृ. २१
५७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५५२
५८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३०
५९. वही, पृ. ३१
६०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २५५
६१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५५५
६२. वही
६३. वही, द्वितीय भाग, पृ. २२८
६४. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ६८
६५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५६९
६६. पंचाल, खण्ड-७, १९९४, पृ. ५३
६७. वही, पृ.५३
६८. वही, पृ.५५
६९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५७३
७०. वही, पृ. २४१
७१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८०
७२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५७४
७३. वही, पृ. ५७४ के आधार पर
७४. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. ३७१
७५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५२५
७६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



७७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५७४; देखें- गणेशप्रसाद शर्मा, फर्रुखाबाद का इतिहास, पृ. २२४ २६, सभासदों (प्रारम्भ में ६१, बाद के २६) का विवरण
७८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८०
७९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५७७
८०. वही, पृ.५७६-७७ के अधार पर
८१. ई. ए. एच. ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. ८
८२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५५६
८३. वही
८४. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. ४१७
८५. वही, पृ. ४१६-१७
८६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५७६-७७
८७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ६४; देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २८९
८८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २८९
८९. वही, प्रथम भाग, पृ. ५५८
९०. वही, द्वितीय भाग, पृ.२९०
९१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ६४
९२. उत्तर-प्रदेश - एक परिचय, पृ. ८७
९३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ.१६४
९४. वहीं, प्रथम भाग, पृ. ३५
९५. महेशप्रसाद, पूर्वोद्धृत, महर्षि दयानन्द कहाँ और कब ? पृ. २५
९६. भवानीलाल पूर्वोद्धृत, पृ.३९४
९७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५८९
९८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. १६५
९९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५८९ के आधार पर
१००. वही, पृ. ५९०
१०१. वही, द्वितीय भाग, पृ. २८६
१०२. वही, प्रथम भाग पृ. ५९१
१०३. वही, द्वितीय भाग, पृ. २८६
१०४. ई. ए. एच. ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. ८
१०५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५६५
१०६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १५८
१०७. वही, पृ. १५८-१५९
१०८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६९ के आधार पर
१०९. ई. ए. एच. ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. ८; देखें- जूडियशियल क्रिमिनल विभाग द्वारा नोटिफिकेशन, संख्या छः, ३४९-१९०९; देखें- परिशिष्ट-१
११०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत,द्वितीय भाग, पृ. २३५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१११. वही, प्रथम भाग, पृ. ५७०
११२. वही, पृ. ५७०-७१ के आधार पर
११३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १४०
११४. ई. ए. एच. ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. ८
११५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १५३
११६. वही
११७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५७२
११८. वही
११९. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १५३
१२०. शिवदयालु, सत्यकेतु विद्यालंकार, ई. ए. एच. ब्लण्ट के आधार पर तैयार आर्यसमाजों का विवरण, पृ. १७१, ५७२-७३, ८
१२१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २३६
१२२. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग पृ. १३६
१२३. वही, पृ. १३७
१२४. जूडिशियल क्रिमिनल विभाग द्वारा नोटिफिकेशन संख्या छः ३४९-१९०९; देखें, परिशिष्ट-१
१२५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १२
१२६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २४०
१२७. ई. ए. एच. ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. ८
१२८. उत्तर-प्रदेश - एक परिचय, पृ. ३०
१२९. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९३
१३०. पन्नालाल गुप्त, आर्यसमाज, चौक, प्रयाग का संक्षिप्त इतिहास, पृ. १-३ के आधार पर
१३१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९३
१३२. वही, पृ. ९४
१३३. जूडिशियल क्रिमिनल विभाग द्वारा नोटिफिकेशन संख्या छः, ३४९-१९०९; ई. ए. एच. ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. ८
१३४. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८५
१३५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २४२
१३६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८५
१३७. वही
१३८. उत्तर-प्रदेश - एक परिचय, पृ. ८७
१३९. वही, पृ. ३०
१४०. भवानीलाल भारतीय, काशी में महर्षि दयानन्द, पृ. ४७, १२ फरवरी १८८० ई. को लक्ष्मीकुण्ड स्थित विजय नगराधिपति के उद्यानगृह की छत पर वैदिकयन्त्रालय की स्थापना।
१४१. स्वर्णजयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज लल्लापुरा, वाराणसी , पृ. २
१४२. वही; देखें- भवानीलाल भारतीय, काशी में महर्षि दयानन्द, पृ. ४८
१४३. सत्यकेतु विद्यालंकार, आर्यसमाज का इतिहास, द्वितीय भाग, पृ.२४४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१४४. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९९
१४५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २४४
१४६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ६
१४७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३१७
१४८. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. २४९
१४९. एम. एल. दशोरा, संगठन सिद्धान्त एवं व्यवहार, पृ. ५
१५०. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. १६
१५१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ६३१
१५२. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. १६
१५३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ६३०; देखें- लाला लाजपतराय, पूर्वोद्धृत, अधिकारी ५ प्रकार के होंगे पृ. ५१-५२
१५४. गंगाप्रसाद उपाध्याय, आर्यसमाज क्या है?, पृ. १३
१५५. सुधा, १६ अक्टूबर, १९३३, पृ. ४११
१५६. लाला लाजपतराय, पूर्वोद्धृत, पृ. ५१
१५७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ६२८
१५८. सार्वदेशिक मासिक पत्रिका, अगस्त १९३२, पृ. ६६२
१५९. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १५०
१६०. वही,
१६१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत,, सातवाँ भाग, पृ. २२०
१६२. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ४
१६३. चन्द्रप्रकाश, मेरठ आर्यसमाज के सौ वर्ष, पृ. ५८-५९
१६४. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १३२
१६५. वही, पृ. १३
१६६. वही,
१६७. भवानीलाल भारतीय, नवजागरण के पुरोधा - दयानन्द सरस्वती, पृ. ४१२
१६८. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ.१३३
१६९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३४१-४२
१७०. वही, पृ.३४२
१७१. वही, द्वितीय भाग, पृ. २१४-१५
१७२. वही, छठाँ भाग, पृ. २२२ (प्रथम अधिवेशन-२८,२९ दिसम्बर १८८३ ई.)
१७३. वही, द्वितीय भाग, पृ. ४७
१७४. वही, पृं. ४८
१७५. वही
१७६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३४
१७७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २१६ के आधार पर
१७८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३५
१७९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २१७
१८०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ७६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


१८१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २२७
१८२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत द्वितीय भाग, पृ. ७६
१८३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २१६
१८४. वही; देखें- मंदनमोहन सेठ, वैदिकवैजयन्ती (सभा के पच्चीस वर्षों की रिपोर्ट), पृ. १६०
१८५. सुधा, १६ अक्टूबर १९३३, पृ. ४११
१८६. लाला लाजपतराय, पूर्वोद्धृत, पृ. ५३
१८७. वही, पृ. ५२
१८८. वही, पृ. ५३
१८९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २१९
१९०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ७६
१९१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३९
१९२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २२६
१९३. वही, पृ. २२७
१९४. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४०
१९५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५३
१९६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ६३; देखें- आर्यसमाज के नियम-उपनियम, प्रकाशक सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, १९८५, पृ. ३
१९७. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ४४-४५; शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ६३ के आधार पर
१९८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५००
१९९. सेंसस रिपोर्ट फार यू.पी., १९११, पृ. १२९
२००. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २१५
२०१. वही, पृ. २५०
२०२. वही, पृ. २४८
२०३. एगजम्सन अन्डर आर्म्स-एक्ट फाईल, विभाग XVIII, फाईल नं. १७, २६ सितम्बर १८९४, नैनीताल (डिवीजन-शहरों की सूची उपलब्ध)
२०४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २३०-३१ के अनुसार
२०५. वही, पृ. २२९-३०, शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. १५-१७, २०-२१
२०६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २२९; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. २५-२८
२०७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २२८-२९ के आधार पर; देखें- शिवदयालु, वही, द्वितीय भाग, पृ. ३२, ३४-३६, ३८; शताब्दी स्मारिका (१८८८-१९८८), आर्यसमाज जवाहरनगर (लालकुर्ती), मेरठ, १४-१६ अक्टूबर १९८८ पृ. २ (मेरठ आर्यसमाज स्थापना)
२०८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २३१; शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४४-४६
२०९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २३२
२१०. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४९
२११. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २३२; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४९-५७ के आधार पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२१२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २३९-४०; देखें- आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश के समस्त आर्यसमाजों की संशोधित सूची, पृ. २८-२९; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ६६, ६७, ६९

२१३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८३; देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २४२; फर्रुखाबाद का इतिहास, पूर्वोद्धृत, पृ. ६१, ६४, ८९

२१४. आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश के समस्त आर्यसमाजों की संशोधित सूची, पृ. ३१; देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २४१; शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ७६-७७, ७९

२१५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २४१; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ७४-७५

२१६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २४०-४१; देखें- आर्यप्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश के समस्त आर्यसमाजों का संशोधित सूची, पृ. ३२-३३

२१७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १३७-३९

२१८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २३५; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १४१-४६

२१९. सत्यकेतु विद्यालंकार, वही, पृ.२३४-३५ के आधार पर; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १५९-६४

२२०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.२३७; देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १५२

२२१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत,पृ. २३६-३७ के आधार पर

२२२. वही, पूर्वोद्धृत, पृ. २५३

२२३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३६

२२४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत,पृ. २८३

२२५. वही, पृ. २५३

२२६. वही, पृ. २५३-५४

२२७. आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश का ९८वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. ४३

२२८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ३६

२२९. वही, पृ. ४३

२३०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.२५७

२३१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४२

२३२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १८८

२३३. वही

२३४. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ७४

२३५. सार्वदेशिक,. मार्च-अप्रैल, १९३२, पृ. ५४०

२३६. आर्यवीर सन्देश, पृ. ८

२३७. वही

२३८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पाँचवाँ भाग, पृ. ६२३

२३९. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ३९, ४१, ८७, ९८, १२४

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट- १

संयुक्त-प्रान्त (आगरा और अवध के डिवीजन और उसमें सम्मिलित शहरों की सूची

| मण्डल | जिला | शहरों के नाम |
|---|---|---|
| **मेरठ डिवीजन** | **देहरादून** | देहरा. देहरा कैन्टोमेण्ट, मसूरी , लन्दौर कैण्टोमेण्ट, चकराता कैन्टोमेण्ट, राजपुर |
| | **सहारनपुर** | सहारनपुर, हरिद्वार, ज्वालापुर, कनंखल, रुड़की, देवबन्द, मंगलौर लाइब्रहरी, रामपुर, गंगोन, नाकूर सुल्तानपुर, चिलखाना। |
| | **मुजफ्फरनगर** | मुजफ्फरनगर, शामली, बरधाना, जानसठ, मिरनपुर, खण्डाला, खटौली, कैराना। |
| | **मेरठ** | मेरठ, गाजियाबाद, बागपत, बरऊत, शरधना, हापुड़, शाहदरा, मोवाना, गढ़मुक्तेश्वर, खेकरा, छपरौली, मेरठ कैन्टोमेण्ट। |
| | **बुलन्दशहर** | सिकन्दराबाद, डिवाय, जहाँनगीराबाद, गुलौथी, सीकरपुर। |
| | **अलीगढ़** | कोल, हाथरस, अतरौली, सिकन्दराराव, सिकन्दराराव, रेलवे स्टेशन। |
| | **मुत्रा** | मुत्रा, मुत्रा कैन्टोमेण्ट,, वृन्दावन, कोसी, छोटा, महावन, गोकाल, सादाबाद,। |
| **आगरा डिवीजन** | **आगरा** | आगरा, आगरा कैन्टोमेण्ट,, फतेहपुर सीकरी, फिरोजाबाद |
| | **फर्रुखाबाद** | फर्रुखाबाद, कम फतेहगढ़, फर्रुखाबाद रेलवे स्टेशन और फतेहगढ़, छिवरामन, कन्नौज, समसाबाद, भीराव की सराय रेलवे स्टेशन। |
| | **मैनपुरी** | मैनपुरी, शिकोहाबाद, शिकोहाबाद, रेलवे स्टेशन, करहल, भोगाँव, शिरसागंज, |
| | **इटावा** | इटावा, औराईया, फफुन्द, जसवन्तनगर, इकदिल। |
| | **एटा** | एटा, सोरोन, काशगंज, अलीगंज, जलेसर। |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



| | | |
|---|---|---|
| **रूहेलखण्ड डिवीजन** | **बरेली** | बरेली, आनला, फरीदपुर। |
| | **मुरादाबाद** | मुरादाबाद, चन्दौसी, अमरोहा सम्भल, ठाकुरद्वारा, कन्थ, हसानपुर। |
| | **बिजनौर** | बिजनौर, चाँदपुर, धम्मपुर, नंगीना, नजीबाबाद। |
| | **शाहजहाँपुर** | शाहजहाँपुर, तिलहर, जलाल़ाबाद, पवयान। |
| | **बदायूँ** | बदायूँ, बीलसी, शहसवान, उज्जैनी, ककराला, इस्लामनगर। |
| | **पीलीभीत** | पीलीभीत, विशलपुर। |
| **इलाहाबाद डिवीजन** | **इलाहाबाद** | इलाहाबाद, कैन्टोमेण्ट, कारा, मऊआइमा, फूलपुर, सिपहदारगंज। |
| | **कानपुर** | कानपुर, कैन्टोमेण्ट, वीठूर, बिल्हौर, अकबरपुर, गगनेर। |
| | **फतेहपुर** | फतेहपुर, बिन्दकी, कोराजहानाबाद, |
| | **बाँदा** | बाँदा, राजापुर, करवी, |
| | **हमीरपुर** | हमीरपुर, मांडा, महोबा, रथ, कल्पाहार। |
| | **झाँसी** | झाँसी, कैन्टोमेण्ट, मऊरानीपुर, ललितपुर। |
| | **जालौन** | उरई, काल्पी, कुन्च, जालौन |
| **बनारस डिवीजन** | **गाजीपुर** | गाजीपुर, मुहम्मदाबाद, युसुफपुर, जामानियाँ, सैंदपुर। |
| | **बनारस** | बनारस, रामनगर, मुगलसंराय रेलवे स्टेशन। |
| | **मिर्जापुर** | मिर्जापुर, चुनार, अहरौरा |
| | **बलिया** | बलिया, रसड़ा, मैनपुर, सिकन्दरपुर, सहतवार, तुरतीपुर, सहतवार, रेवती, बेरिया |
| | **जौनपुर** | जौनपुर, मछलीशहर, शाहगंज, |
| **गोरखपुर डिवीजन** | **गोरखपुर** | गोरखपुर, पडरौना कम साहिबगंज |
| | **बस्ती** | बस्ती |
| | **आजमगढ़** | आजमगढ़, मऊ, मुबारकपुर, मुहम्मदाबाद |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



| | | |
|---|---|---|
| **कुमायूँ डिवीजन** | **नैनीताल** | नैनीताल, हल्द्वानी, रामनगर, काशीपुर |
| | **अल्मोड़ा** | जसपुर, रानीखेत, कैन्टोमेण्टं,अल्मोड़ा |
| | **गढ़वाल** | श्रीनगर |
| **लखनऊ मण्डल** | **लखनऊ** | लखनऊ, मलीहाबाद, कांकोरी |
| | **उन्नाव** | उन्नाव, नेवालगंज-महाराजगंज |
| | **रायबरेली** | बनगारमन, सफीपुर, रायबरेली सलोन, दलमऊ |
| | **सीतापुर** | सीतापुर, बिसवान, खेराबाद, मिसरीख, |
| | | मुहम्मदाबाद, लहरपुर, मचरहट्टा, नईमखर |
| | **हरदोई** | हरदोई, शाहाबाद, सन्डीला, बिलग्राम पिहानी |
| | **खीरी** | लखीमपुर, मुहम्मदी, बहादुरसिंहई |
| **फैजाबाद डीविजन** | **फैजाबाद** | फैजाबाद कम अयोध्या, टाण्डा, अकबरपुर कम शाहजादपुर |
| | **गोण्डा** | गोण्डा, उतरौला, नवाबगंज, बलरामपुर |
| | **बहराईच** | बहराईच, नानपारा |
| | **सुल्तानपुर** | सुल्तानपुर |
| | **प्रतापगढ़** | प्रतापगढ़ बेला, प्रतापगढ़, कतरा, नबावगंज |
| | **बाराबंकी** | रुदौली, फतेहपुर, दरियाबाग। |

---

संयुक्त-प्रान्त के शहरों का विवरण डिवीजन के अनुसार दर्शाया गया है। वह विवरण जो २२-२३, क्षेत्रीय्र अभिलेखागार, शास्त्रीनगर, सिगरा, वाराणसी के कार्यालय सूची संख्या-४, फाईल नं. १०७, विभाग-१८ में उपलब्ध है। जूडिशियल क्रिमीनल विभाग, द्वारा और नोटिफिकेशन संख्या-६-३४९-१९०९ में विधिवत डिवीजन वाईज शहरों के विवरण का उल्लेख है। यह विवरण आंग्ल-भाषा में उल्लिखित है, जिसका हिन्दी-भाषा में अनुवाद किया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट- २

मेरठ आर्यसमाज (बुढ़ाना गेट) की स्थापना (सन्-१८७८) के समय
चयनित सभासदों (संख्या-७०) का विवरण

१. राय गणेशीलाल - प्रबन्धक, जलवयेतूर प्रेस
२. बाबू बहकी लाल - क्लर्क महकमा-गंगबहरी
३. लाला चन्द्र सेन
४. पं. किशनलाल
५. प्रानदत्त
६. लाल बलदेव प्रसाद
७. विशनसहाय
८. लाला कृपाशंकर, अहलमद, फौजदारी, तहसील-बागपत।
९. बाबू सूरजभान, एकाउण्टेण्ट
१०. मुंशी ललिता प्रसाद
११. पं. गोपीनाथ, हेड-क्लर्क, दफ्तर जेल
१२. मुंशी श्यामसुन्दर,क्लर्क दफ्तर, सुपरिण्टेण्डिंग इंजीनियर
१३. मुंशी बशेश्वर दयाल
१४. पण्डित बिहारीलाल, अध्यापक-नार्मन स्कूल, मेरठ
१५. बाबू भोलानाथ, क्लर्क दफ्तर, इन्सपेक्टर आप स्कूल्स
१६. बाबू चुन्नीलाल, नक्शानवीस, गंगनहर
१७. डा. रामचन्द्र
१८. लाला गणेशी लाल, नक्शनवीस
१९. लाला नन्दराय।
२०. बाबू शिवप्रसाद, क्लर्क, दफ्तर-कमिश्नरी
२१. लाल देवीप्रसाद
२२. पं. देवीचन्द, नकल नवीस, अदालत दिवानी
२३. चौधरी मोहनसिंह जमींदार, ग्राम मसोदरा निवासी
२४. मुंशी लालचन्द्र, हेडमास्टर, जिला स्कूल, मुजफ्फरनगर
२५. लाला सीताराम, मुजफ्फरनगर निवासी
२६. मुंशी कल्याणराय, अध्यापक, स्कूल सहारनपुर
२७. पं. बलदेव सहाय, अध्यापक, स्कूल, सहारनपुर
२८. लाला प्रानदास, छात्र गवर्नमेण्ट स्कूल
२९. लाला चुन्नीलाल मिस्त्री
३०. लाला मुन्नालाल साहू
३१. लाला टोडरमल जैन
३२. पं. विश्वम्भर सहाय
३३. लाला गंगाशरण
३४. बाबू नत्थीमल चित्रकार
३५. लाल नथलदास, पुस्तक विक्रेता
३६. बाबू बालमुकुंद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३७. लाला गंगा प्रसाद
३८. लाला ज्वालाप्रसाद, कानूनगो
३९. लाला बद्रीप्रसाद
४०. बख्सी किशनलाल
४१. बाबू किशनचरन सरकार, क्लर्क-दफ्तर, सुपरिटेण्डिग इंजीनियर, मेरठ
४२. पं. चन्द्रभान, अध्यापक
४३. पं. बटेश्वर प्रसाद, नक्शानवीस
४४. पाण्डे रघुवर व्यास
४५. बाबू मोहनदत्त, हेड-क्लर्क, दफ्तर जनरैली
४६. डाक्टर बसन्तराय
४७. बाबू द्वारकानाथ घोष, क्लर्क दफ्तर, कमिश्नरी
४८. बाबू मुन्नालाल
४९. लाला मथुरादास
५०. लाल रामनाथ, कर्मचारी, डाक खाना मेरठ
५१. पं. बालमुकुन्द, क्लर्क, दफ्तर जेल
५२. लाला जगन्नाथ, कानूनगो, तहसील, हापुड़
५३. पं. गंगाप्रसाद, पटवारी, ग्राम-महायत
५४. लाला श्यामसुन्दर लाल
५५. लाला ज्योतिस्वरूप
५६. लाला भोलानाथ
५७. लाला चेतराम
५८. मुंशी रामशरण दास
५९. लाला मुन्नालाल
६०. श्री मनोहरचरणशरण राय
६१. राय कमलाप्रसाद, प्रबन्धक 'साहिले हिन्द' समाचार-पत्र
६२. श्री हरिहर हीरालाल, वजीर अदालत, सब जजी-मेरठ
६३. लाला जैसीराम
६४. चौधरी गुलाब सिंह
६५. लाला हीरालाल
६६. लाला मिट्ठूमल
६७. बाबू जुगुल किशोर
६८. पं. अजुध्या नाथ
६९. बाबू गणेशीलाल, क्लर्क-दफ्तर सुपरिटेण्डेण्ट इंजीनियर, गंगनहर
७०. लाला रामलाल

---

मेरठ आर्यसमाज के ८१ सभासदों में ७ अध्यापक थे, २६ सरकारी सर्विस में थे। ५ का सम्बन्ध प्रिंटिंग प्रेस, समाचार-पत्र व पुस्तक व्यवसाय से था। १-विद्यार्थी था, २- डाक्टर थे, १- मिस्त्री था, रईस थे और १- जमींदार था। शेष ३५ सभासदों के व्यवसाय था कारोबार के सम्बन्ध में कोई संकेत सदस्य सूची से प्राप्त नहीं होता। इसके नाम के साथ लाला, मुंशी, पण्डित और साहू सदृश शब्दों का जो प्रयोग किया जाता है। उससे यह अवश्य सूचित होता हैं कि जब समाज में उसकी स्थिति पर्याप्त रूप से प्रतिष्ठित थी और सम्भवत: ये महाजनी, दुकानदारी, पौरोहित्य आदि के कार्यों में संलग्न थे।

सत्यकेतु विद्यालंकार- आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ.५५२ - ५५४ तक।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट - ३

## वसीयतनामा - स्वामीदयानन्द सरस्वती

## परोपकारिणी सभा-स्वीकार पत्र

मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निम्नलिखित नियमों के अनुसार तेईस (२३) सज्जन आर्यपुरुषों की सभा को वस्त्र, पुस्तक, पेन और यंत्रालय आदि। अपने सर्वस्व का अधिकार देता हूँ और उसको परोपकार, सुकार्य में सभाओं के लिए बढ़ाकर स्वीकार पत्र लिखे देता हूँ कि समय पर काम आवे।

इस सभा का नाम परोपकारिणी सभा है निम्नलिखित तेईस (२३) महाशय उसके सभासद हैं-

१. श्रीमत् महाराजाधिराज महीमहेन्द्र यावदार्थ-कुलकमलदिवाकर महाराणा श्री श्री १०८ सज्जनसिंह वर्मा जी, जी.सी.एस.आई. उदयपुराधीश राज मेवाड़, सभापति
२. लाला मूलराज साहब, एम.ए.एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नर, प्रधान आर्यसमाज लाहौर, उपसभापति
३. श्रीयुत् कविराज श्यामलदास जी उदयपुर, राज मेवाड़-मंत्री
४. लाला रामशरणदास रईस व उपप्रधान, आर्यसमाज, मेरठ उदयपुर, जन्म-स्थान मथुरा-उपमंत्री
५. पाण्ड्या मोहनलाल विष्णुलालजी शर्मा उदयपुर, मंत्री-२
६. श्रीमत् महाराजाधिराज श्री नाहरसिंहजी वर्मा, शाहपुराधीश-सभासद
७. श्रीमत् राव तख्तसिंहजी, राज मेवाड़, सभासद
८. श्रीमत् राव श्री राणा फतहसिंहजी वर्मा, उदयपुर, सभासद
९. श्रीमत् राव श्री अर्जुनसिंहजी वर्मा, भेलवाड़ा सभासद
१०. श्रीमत् महाराज गजसिंहजी वर्मा, आसींद सभासद
११. श्रीमत् राव बहादुरसिंहजी वर्मा, जिला-अजमेर सभासद
१२. राय बहादुर पं. सुन्दरलाल सुपरिटेण्डेण्ट, वर्कशाप, अलीगढ़, आगरा-सभासद
१३. राजा जयकृष्णदास जी सी.एस.आई. डिप्टी कलेक्टर, बिजनौर, मुरादाबाद, सभासद
१४. साहू दुर्गाप्रसाद, कोषाध्यक्ष, आर्यसमाज, फर्रुखाबाद, सभासद
१५. साहू जगन्नाथ प्रसाद, फर्रुखाबाद, सभासद
१६. सेठ निर्भयराम प्रसाद, आर्यसमाज फर्रुखाबाद, बिसाऊ राजपुताना-सभासद
१७. लाला कालीचरण, रामचरण मंत्री आर्यसमाज, फर्रुखाबाद-सभासद
१८. लाला छेदीलाल भुभाश्ते, कमसरियट छावनी, मुरार (ग्वालियर) मध्यप्रदेश, सभासद
१९. लाला साईंदास, मंत्री-आर्यसमाज, लाहौर, सभासद
२०. बाबू माधवदास मंत्री-आर्यसमाज, दानापुर, सभासद
२१. राय बहादुर राजभान्य राजश्री पं. गोपालराव हरिदेशमुख-मेम्बर कौन्सिल गवर्नर, बम्बई व प्रधान आर्यसमाज बम्बई, पूना-सभासद
२२. राव बहादुर महादेव गोविन्द रानाडे जज पूना, सभासद
२३. पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा, प्रोफेसर संस्कृत यूनिवर्सिटी ऑक्सफोर्ड-लण्डन-बम्बई, सभासद

**स्वीकार पत्र के नियम**

१. उक्त सभा जैसे कि मेरी जीवितावस्था में मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा करके निम्नलिखित परोपकार के कार्यों में सभाओं का अधिकार रखती है वैसे ही मेरे पीछे अर्थात् मृत्यु के पश्चात् भी सभा करें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१. वेद और वेदान्त आदि शास्त्रों के प्रचार अर्थात् उसकी व्यवस्था करने-कराने, पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने, छापने-छपवाने आदि में।
२. वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा अर्थात् उपदेशक मण्डली नियत करके देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में भेजकर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग आदि में।
३. आर्यावर्त्त के अनाथ और दीनजनों की शिक्षा और पालन में कार्य करें और करावें।

२. वैसे मेरी उपस्थिति में यह सभा सब प्रबन्ध करती है। वैसे ही मेरे पीछे तीसरे या छठें महीने किसी सभासद को वैदिक यन्त्रालय का हिसाब-किताब समझने और पड़तालने के लिए भेजा करें और सभासद वहाँ जाकर कुल आमदनी और कार्य की जाँच पड़ताल किया करें और उसके नीचे अपने हस्ताक्षर करे और उस पड़ताल की एक-एक प्रति प्रत्येक सभासद के पास भेजे और यदि मंत्रालय के प्रबन्ध में कुछ त्रुटि हो तो उसके सुधार के लिए अपनी सम्मति लिख कर प्रत्येक सभासद के साथ भेज देवें और प्रत्येक सभासद को उचित है कि अपनी-अपनी सम्पत्ति के यथोचित प्रबन्ध करें, इस कार्य में कोई सभासद आलस्य या अनुचित व्यवहार न करे।

३. इस सभा को उचित है कि जैसा यह परम-धर्म और परमार्थ का काम है वैसा ही उसको उत्साह, पुरुषार्थ, गंभीरता और उदरता के साथ करे।

४. प्रायुक्त तेईस (२३) आर्य-सज्जनों की सभा मेरी पीछे सब प्रकार मेरा स्थानान्तरण समझी जाय। अर्थात जो अधिकार मुझे अपने सर्वस्व का है। वही अधिकार सभा को है और होगा। यदि उक्त सभाओं में से अन्य व्यक्ति हस्ताक्षर करे तो वह सर्वदा झूठा समझा जायेगा।

५. जैसे इस सभा को वर्तमान समय में मेरी और मेरे सब पदार्थों की यथा शक्ति रक्षा और उन्नति करने का भी अधिकार है वैसे ही मेरे मृतक शरीर के संस्कार का भी अधिकार है अर्थात् जब मेरा शरीर छूटे तो न उसको गाड़े न जल में बहावें न जंगल में फेंके, सिर्फ चन्दन की चिता बनवावें और जो वह सम्भव न हो तो दो मन चन्दन, चार मन घी, पाँच सेर कपूर, अढ़ाई मन अगरतगर ओर दस मन काष्ठ लेकर वेद के अनुसार जैसा कि संस्कारविधि पुस्तक में लिखा है वेदी बनाकर वेद मंत्रों से जो इसमें लिखे हैं भस्म करें। इसके सिवाय और कुछ वेद के विरुद्ध न करें और जितना धन उसमें लगे उसे सभा से लेवे और सभा उसको दे देवें।

६. अपने जीवन में मै और मेरे पीछे यह सभा इस बात का अधिकार रखती है कि जिस सभासद को चाहे पृथक करके किसी और योग्य सामाजिक आर्यपुरुष को इसका स्थानापत्र नियत कर दे, परन्तु कोई सभासद सभा से तब तक पृथक न किया जायेगा, जब तक उसके काम में अनुचित चेष्टा न पायी जाय।

७. मेरे सदृश यह सभा सदा स्वीकार-पत्र की व्याख्या या उसके नियमों का पालन या किसी सभासद के पृथक करने और उसके स्थान में अन्य सभासद को नियत करके या मेरे आपत्काल के निवारण करने के उपाय और यत्न में यह उपयोग करे जो सब सभासदों की सम्मति से निश्चय और निर्णय हो या होवे और यदि सभासदों की सम्मति में विरोध रहे तो बहुसम्मति के अनुसार कार्य करे और सभापति की सम्मति को सदा द्विगुण समझें।

८. किसी भी दशा में यह सभा तीन से अधिक सभासदों को तब तक अपराध के सिद्ध होने पर भी पृथक न कर सकेगी जब तक कि उसकी जगह में और सभासदों को नियत न कर लें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



९. यदि किसी सभासद का देहान्त हो जाय या वेदोक्त कार्य को छोड़कर उक्त नियमों के विरुद्ध चलने लगे तो सभापति को अधिकार है कि सभासदों की सम्मति से उसको पृथक करके उसकी जगह में किसी और योग्य वेदान्त धर्मायुक्त आर्यपुरुष को नियत करे। परन्तु उस समय तक साधारण कामों के अतिरिक्त नया काम न छेड़ा जाय।

१०. इस सभा को अधिकार है कि सब प्रकार का प्रबन्ध करे और नये उपाय सोचे, यदि सभा को अपने परामर्श और विचार पर पूरा-पूरा निश्चय और विश्वास न हो तो समय का निर्धारण करके लेख द्वारा सम्पूर्ण आर्यसमाजों के सम्पत्ति ले और बहुपत्रानुसार उचित प्रबन्ध करे।

११. प्रबन्ध का घटना-बढ़ना या स्वीकार-अस्वीकार करना या किसी सभासद को पृथक या नियत करना, आमदनी या कार्य की जाँच-पड़ताल करना या अन्य हानि-लाभ सम्बन्धी विषयों को सभापति वर्ष भर में या छः महीने में छपवाकर चिट्ठी के द्वारा सब सभासदों प्रचारित करे।

१२. यदि इस स्वीकार-पत्र के विषय में कोई झगड़ा उठे तो उसे राजगृह में न ले जाया जाना चाहिए। किन्तु जहाँ तक हो सके यह सभा अपनें उसका निर्णय करे। यदि आपस में उसका निर्णय न हो सके तो न्यायालय के अधीन निर्णय होना चाहिए।

१३. यदि मैं अपने जीते-जी किसी योग्य आर्यपुरुष को पारितोषिक देना चाहूँ और उसकी लिखन-पढ़न कराकर रजिस्ट्री कर दूँ तो सभी को चाहिए कि उसको माने और दें।

१४. मुझे और मेरे पीछे सभा को सदा अधिकार है और रहेगा कि उक्त नियमों को देश के किसी विशेष लाभ और परोपकार के लिए न्यूनाधिक करे।

---

१- इन्द्र विद्यावाचस्पति-आर्यसमाज का इतिहास प्रथम-भाग, पृष्ठ संख्या ३२९से ३३२ तक।

**देखें-** श्री पं. हरिश्चन्द्रजी विद्यालंकार-महर्षि दयानन्द सरस्वती, सचित्र प्रामाणिक जीवन-चरित-सभा के सदस्यों का विवरण । पृ-३५२.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## परिशिष्ट-४

## उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा प्रधान व सभा-मंत्री का सूची विवरण

## (सन्-- १८५७ से १९४७ तक)

## आर्यप्रतिनिधिसभा का प्रधान

| सन् | सभा-प्रधान |
|---|---|
| १८८७-१८८८ | श्री लक्ष्मणस्वरूप, देहरादून, मेरठ |
| १८८९ | श्री सुन्दरलाल रायजादा, मैनपुर |
| १८९० | श्री दुर्गाप्रसाद, फर्रुखाबाद |
| १८९१-१८९२ | श्री देवीप्रसाद |
| १८९३ | श्री ज्योतिस्वरूप, देहरादून, मेरठ |
| १८९४-१८९६ | श्री राजा फतेह सिंह, पुवाया |
| १८९७ | श्री लखपत राय, गाजियाबाद |
| १८९७-१९०० | श्री भगवानदीन मिश्र, हरदोई |
| १९०१ | श्री हुकुम सिंह आंगई, मथुरा |
| १९०२-१९०७ | श्री भगवानदीन मिश्र, हरदोई |
| १९०८ | श्री रामदुलारे लाल, फतेहगढ़ |
| १९०९-१९१३ | श्री तुलसीराम स्वामी, मेरठ |
| १९१४-१९१६ | श्री घासीराम, मेरठ |
| १९१७ | श्री हुकुम सिंह 'आंगई', मथुरा |
| १९१८ | श्री घासीराम, मेरठ |
| १९१९-१९२१ | श्री हुकुम सिंह 'आंगई', मथुरा |
| १९२२-१९२३ | श्री सीताराम, लखीमपुर |
| १९२४ | श्री विश्वम्भर दयाल, मुजफ्फरनगर |
| १९२५-१९२७ | श्री घासीराम, मेरठ। |
| १९२८-१९३२ | श्री मशाल सिंह, हरदोई |
| १९३३ | श्री पूर्णचन्द, आगरा |
| १९३४ | श्री बाबूराम सक्सेना, प्रयाग |
| १९३५-१९३७ | श्री मदनमोहन सेठ, बुलन्दशहर |
| १९३८ | श्री प्रीतमदास, अलीगढ़ |
| १९३९ | श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री |
| १९४० | श्री मदनमोहन सेठ, बुलन्दशहर |
| १९४१-४४ | श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय |
| १९४५ | श्री मदनमोहन सेठ, बुलन्दशहर |
| १९४६-१९५० | श्री राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री |

उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा, नारायण स्वामी, भवन-५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ के कार्यालय में प्रतिनिधिसभा के प्रधान व सभा मंत्री की सूची विवरण (सन्-१८८८ से १९४७) सभा के प्रवक्ता सम्पादक डॉ. इन्द्रदेव पाठक द्वारा उपलब्ध कराया गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा प्रधान व सभा-मंत्री का सूची विवरण
(सन्-१८८७-१९४७ तक)

### आर्यप्रतिनिधिसभा मंत्री

| सन् | सभा-मंत्री |
|---|---|
| १८८७-८९ | श्री बिहारीलाल, मुजफ्फरनगर |
| १८८९-९६ | श्री भगवानदीन मिश्र, हरदोई |
| १८९७-१९०० | श्री नारायणप्रसाद, मुरादाबाद, |
| १९०१-०२ | श्री श्यामसुन्दर लाल, मैनपुर |
| १९०३ | श्री नारायणप्रसाद, मुरादाबाद |
| १९०४-०६ | श्रीराम, आगरा |
| १९०७-०८ | श्री नारायणप्रसाद, मुरादाबाद |
| १९०९ | श्री गुलराज गोपाल, फतेहपुर |
| १९१० | श्री रघुवीरशरण, मेरठ |
| १९११-१८ | श्री मदनमोहन सेठ, बुलन्दशहर |
| १९१९ | श्री पूर्णचन्द, आगरा |
| १९२० | श्री गजाधर सिंह, सचेड़ी |
| १९२२ | श्री सालिगराम, आगरा |
| १९२३ | श्री रघुनन्दन प्रसाद, लखनऊ |
| १९२४ | श्री इन्द्रमणि, बुलन्दशहर |
| १९२५-२७ | श्री वैजनाथ मित्तल, मेरठ |
| १९२८-३१ | श्री रासबिहारी तिवारी, लखनऊ |
| १९३२-३४ | श्री उमाशंकर, फतेहपुर |
| १९३५-३७ | श्री प्रीतमलाल, अलीगढ़ |
| १९३८-४० | श्री कालीचरण |
| १९४१-४३ | श्री महेन्द्रप्रताप शास्त्री |
| १९४४-४६ | श्री रामदत्त शुक्ला, लखनऊ |
| १९४७ | श्री उमाशंकर, फतेहपुर |
| १९४८-४९ | श्री रामदत्त शुक्ल, लखनऊ |

---

उत्तर-प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा नारायण स्वामी भवन-५, मीराबाई मार्ग, लखनऊ के कार्यालय में प्रतिनिधिसभा के प्रधान व सभा मंत्री की सूची विवरण (सन्-१९८७ से१९४७ तक) सभा के प्रबन्ध सम्पादक डॉ. इन्द्रदेव पाठक द्वारा उपलब्ध कराया गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## परिशिष्ट - ५

## सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा के प्रधान व मंत्री का सूची एवं आयोजित की गई आर्य-महासम्मेलनों का विवरण,

### सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा के प्रधान
(सन्-१९०९ से १९४७ तक)

| | | |
|---|---|---|
| १. | १९०९-१९१० | श्रीयुत् पं. वंशीधर शर्मा,एम.ए.,एम.एस.सी., अजमेर |
| २. | १९१०-१९१७ | श्रीयुत् महात्मा मुंशीरामजी,गुरुकुल काँगड़ी-उत्तर प्रदेश |
| ३. | ७-४-१९१७ से १९-८-१९१७तक | श्रीयुत् पं० घासीरामं, एम.ए., एल.एल.बी., मेरठ |
| ४. | १९१७-१९१८ | श्रीयुत् लाला रामकृष्णजी, जालंधर (पंजाब) |
| ५. | १९१९-१९२१ | श्रीयुत् कुँवर हुक्मसिंहजी, आंगई, मथुरा |
| ६. | १९२१-१९२३ | श्रीयुत् स्वामी श्रद्धानन्दजी, दिल्ली |
| ७. | १९२३-१९३७ १९४१-१९४२ १९४५-१९४७ | श्रीयुत् महात्मा हरनारायण स्वामी जी, रामगढ़, नैनीताल। |
| ८. | १९४२-१९४३ १९३०-१९४१ | श्रीयुत घनश्याम सिंह जी गुप्त,बी.एस.सी., एल.एल.बी., दुर्ग,(मध्यप्रदेश) |
| ९. | १९४७-१९४८ | श्रीयुत् मनमोहन सेठ,एम.ए.,एल.एल.बी.,लखनऊ |
| १०. | १९४३-१९४५ | श्रीयुत् गंगाप्रसादजी, एम.ए., मेरठ |

आर्यसमाज का परिचय-सम्पादक-महेन्द्रप्रसाद शास्त्री, पू० २८,२९, प्रकाशक, सार्वदेशिक मंत्री -आर्यप्रतिनिधिसभा, दिल्ली, सन्-१९६१.

### सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा के मंत्री (सन्- १९०९ से १९४७ तक)

| | | |
|---|---|---|
| १. | १९०९-१९१० | श्रीयुत् पं. भगवानदीनजी मिश्र, हरदोई |
| २. | १९१०-१९१८ | श्रीयुत् मुंशी नारायणप्रसादजी, मुरादाबाद |
| ३. | १९१८-१९२१ | श्रीयुत् लाला नारायणदत्तजी ठेकेदार, दिल्ली |
| ४. | १९२१-१९२३ | श्रीयुत् कुँवर हुक्मसिंहजी शास्त्री, मथुरा |
| ५. | १९२३-१९२९ | श्रीयुत् डॉ. केवशदेवजी शास्त्री,दिल्ली |
| ६. | १९२९-१९३३ | श्रीयुत् स्वामी आदन्दभिक्षु सरस्वती, गुरुकुल, वृंदाबन |
| ७. | १९३३-१९४६ | श्रीयुत् प्रो. सुधाकरजी, एम.ए., दिल्ली |
| ८. | १९३६-१९३७ | श्रीयुत् डा. देशबन्धुजी गुप्त, दिल्ली |
| ९. | १९४२-१९४७ | श्रीयुत् प्रो. इंद्रजीतजी विद्यावाचस्पति, दिल्ली |
| १०. | १९४७-१९५१ | श्रीयुत् पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय, एम.ए., इलाहाबाद |

आर्यसमाज का परिचय-सम्पादक महेन्द्र प्रताप शास्त्री, पृ. २९-३० प्रकाशक, मंत्री, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, दिल्ली, सन्-१९६१ तक संक्षिप्त पुस्तिका आर्यप्रतिनिधिसभा, वाराणसी के प्रधान (१फरवरी १९९७) एवं महर्षि दयानन्द बालविद्या मंदिर, बड़ी गैवी, (अम्बेडकर पार्क) वाराणसी के प्रबन्धक श्री अशोक त्रिपाठी के पास उपलब्ध है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा द्वारा आयोजित महासम्मेलन

| | |
|---|---|
| १. प्रथम आर्यमहासम्मेलन- | १९२७ ई० दिल्ली- श्री महात्मा हंसराजजी |
| प्रयोजन- | आर्यसमाजों के नगर-कीर्तनों की बाधाओं के निराकरण एवं आर्य नेताओं के शृंखलाबद्ध वधों को रोकने के लिए। |
| २. द्वितीय आर्यमहासम्मेलन- | १९३९ ई. बरेली-श्री महात्मानारायण स्वामी जी |
| प्रयोजन- | आर्यसमाज के धार्मिक और नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए। |
| ३. तृतीय आर्यमहासम्मेलन- | १९३३ ई. अजमेर-श्री आचार्य रामदेवजी |
| प्रयोजन- | आर्यसमाज के आन्तरिक संगठन के दृढ़ीकरण के लिए। |
| ४. चतुर्थ आर्यमहासम्मेलन- | १९३८ ई. शोलापुर श्री एम.एस. अड़े |
| प्रयोजन- | हैदराबाद में सत्याग्रह का निश्चय करने के लिए। |
| ५. पंचम आर्यमहासम्मेलन- | १९४४ ई. दिल्ली, डा. श्यामाप्रसाद मुकर्जी |
| प्रयोजन- | सिन्ध में सत्यार्थप्रकाश पर लगे प्रतिबन्ध के निराकरण के लिए। |

---

आर्यसमाज का परिचय-सम्पादक-महेन्द्र प्रताप शास्त्री, पृ. ३५-३६, प्रकाशक, मंत्री - सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, दिल्ली, सन्-१९६१.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

## तृतीय अध्याय

# आर्यसमाज की सामाजिक सुधार में भूमिका

आर्यसमाज अपने सुदृढ़ एवं सशक्त संगठन के माध्यम से उत्तर प्रदेश में प्रचलित सामाजिक कुरीतियों एवं प्रथाओं का खण्डन अपने मंच से निरन्तर करता था। इसकी साप्ताहिक बैठकों, वार्षिक अधिवेशनों एवं महासम्मेलनों में सामाजिक विषमताओं, धार्मिक अन्धविश्वासों एवं रूढ़िवादी परम्पराओं के विरुद्ध सदैव व्याख्यान एवं प्रस्ताव पारित किए जाते थे। विदित है कि भारत के नवजागरण तथा उसके सांस्कृतिक पुनरुत्थान में आर्यसमाज द्वारा जो योगदान किया गया है, उसके मूल में आर्यसमाज द्वारा अपनाए गए सिद्धान्तों में वैदिकआदर्श प्रमुख थे।

सदियों की सामाजिक संकीर्णता, विदेशी आक्रमणों, विभिन्न कुप्रथाओं तथा रूढ़ियों ने भारतीय समाज को पतन के कगार पर पहुँचा दिया था। अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्धकाल तक भारतीय समाज में ऐसे दोष उत्पन्न हो गए थे जिससे भारतीय सामाजिक जीवन जीर्ण और जर्जरित हो गया था। ऐसी स्थिति से भारतीयों को छुटकारा दिलाने का प्रथम प्रयास ब्रह्मसमाज बंगाल में अपने संगठन के माध्यम से कर रहा था। यूरोपीय संस्कृति, ईसाई धर्म और वैज्ञानिक विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित होने के कारण यह आन्दोलन थोड़े से लोगों तक सीमित रहा। इसमें अधिकतर वे ही लोग सम्मिलित हुए, जिसके पास धन या विद्या अथवा दोनों का प्राचुर्य था। बंगाल में जन-साधारण ने इस धर्म को कभी प्रश्रय नहीं दिया। फिर भी यह आन्दोलन भारतीय संस्कृति के महान् आन्दोलनों में से एक है क्योंकि यूरोप से आने वाले अनेक विचारों ने आरम्भ में ब्रह्मसमाज के भीतर से ही हिन्दू धर्म में प्रवेश किया था।[१]

ज्ञातव्य है कि ब्रह्मसमाज के नेताओं से ही प्रेरणा प्राप्त कर आर्यसमाज जैसे सार्वभौम संगठन का निर्माण इस देश में हुआ था। जिसका उत्तर भारत में निरन्तर प्रचार प्रसार होता गया। उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज आन्दोलन के प्रचार प्रसार का अध्ययन द्वितीय अध्याय में किया जा चुका है। प्रस्तुत अध्याय में आर्यसमाज द्वारा सामाजिक सुधार में किए गए योगदान विषय की विवेचना की जा रही है।

आर्यसमाज आन्दोलन ने सभी भारतीयों को अपने देश, संस्कृति और धर्म पर गर्व करने का पाठ पढ़ाया।[२] इस आन्दोलन ने आर्यसंस्कृति और धर्म में 'जिसके प्रतीक वेद थे, अपनी दृढ़ आस्था बनाए रखी[३] जिसके कारण १९वीं शताब्दी के अन्त में सारे सनातन धर्म पर परोक्ष रूप से आर्यसमाज छाया हुआ था।[४] सत्य सनातन वैदिकधर्म के सबसे प्रामाणिक ग्रन्थ वेद हैं।[५] यह सनातन धर्म ही सार्वभौम धर्म है।[६]

"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" पर आधारित आर्यसमाज के सिद्धान्त एवं उसके आदर्शों के फलस्वरूप ही इस समाज की ओर जनमानस तीव्र गति से आकर्षित हुआ। इसके संगठन में सभी वर्गों का समावेश था। डॉ. रामविलास शर्मा ने नवजागरण के कार्यक्षेत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



एवं आर्यसमाज आन्दोलन के विषय में उसके विद्यमान लक्षण को देखते हुए कहा था कि किसी देश या उसके प्रदेश के सामाजिक-सांस्कृतिक आन्दोलन को हम नवजागरण कहते हैं। इसमें सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के प्रयत्न शामिल हैं। शूद्रों और स्त्रियों की स्थिति को बदलने के प्रयत्न नवजागरण के अंग हैं। धार्मिक सुधार, अन्धविश्वासों के प्रचार नवजागरण के अन्तर्गत आते हैं। शिक्षा प्रसार, साहित्य रचना जैसे कार्य तो उसके अन्तर्गत हैं ही। स्वाधीनता आन्दोलन, विदेशी प्रभुत्व के विरुद्ध चलाया हुआ राजनीतिक आन्दोलन, वह नवजागरण का एक भाग है, उसका पर्याय नहीं। वह नवजागरण को प्रेरित कर सकता है, घुलमिल सकता है, पर उसका स्थान नहीं ले सकता। स्वाधीनता आन्दोलन के बिना भी नवजागरण संभव है पर वह उच्च वर्गों तक सीमित रहेगा, वह समाज को बड़े पैमाने पर प्रभावित कर सकेगा। नवजागरण यदि समाज में मौलिक परिवर्तन का उद्देश्य लेकर चलेगा तो वह स्वाधीनता आन्दोलन की प्रेरक शक्ति बनेगा। स्वामी दयानन्द ने ऐसे ही नवजागरण का संगठन और संचालन किया था।[७]

आर्यसमाज आन्दोलन उत्तर प्रदेश में धार्मिक सुधार, अन्धविश्वासों के प्रचार, शिक्षा प्रसार, साहित्य रचना, शूद्रों और स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए सदैव तत्पर था। साथ ही आर्यजाति में फैली सामाजिक कुरीतियों, बाल-विवाह, सतीप्रथा, निरक्षरता, अस्पृश्यता आदि को समूल नष्ट करने में यह समाज सतत प्रयत्नशील था। पुरातन भारत के गौरव और गरिमा को पुन: स्मृत करते हुए ही आर्यसमाज ने अपना कार्य आरम्भ किया तथा उसने हिन्दुओं को बताया कि वेदों और शास्त्रों के इस देश में यह उचित नहीं है कि वह केवल यूरोपियन साहित्य तथा जीवन पद्धति का मात्र आलोचक तथा अनुकरणकर्ता ही बनकर अपने "स्व" को लुप्त कर ले। परन्तु वस्तुस्थिति ऐसी ही थी और जिस समय आर्यसमाज ने अपना धर्म प्रचार का कार्य आरम्भ किया, उस समय भारतीयों की मनोदशा इसी प्रकार की थी।[८]

आर्यसमाज ने प्राचीन संस्कृति की कीर्तिपूर्ण परम्पराओं को भारतीय जनमानस के सम्मुख प्रस्तुत किया। उत्तर प्रदेश के विविध भागों में स्थापित आर्यसमाज सदैव इसके लिए उत्साहित एवं तत्पर था। भारत के अतीत को उजागर कर भारतवासियों के मन में आत्मगौरव व आत्मसम्मान एवं आत्मिक शक्ति को आर्यसमाज ने जागृत किया। हमारे देश की सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था अतीतकालीन धार्मिक परम्पराओं तथा नैतिक आदर्शों पर आधारित रही है। लेकिन उसमें समय-समय पर साम्प्रदायिक प्रभाव के कारण अनेक दोष उत्पन्न होते रहे हैं। इस कारण उसका वास्तविक रूप विकृत होता गया। आर्यसमाज ने पुन: उसे अपने अतीतकालीन गौरवपूर्ण स्थान पर प्रतिष्ठित करने का अथक प्रयास किया।

आर्यसमाज एक आक्रामक शक्ति के रूप में भारतीय जनमानस के सम्मुख अपने को प्रस्तुत किया क्योंकि केवल शान्ति, निष्क्रियता, समर्पण भाव तथा आज्ञाकारिता ही राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण नहीं करते वरन् शक्ति, कार्य को आरम्भ करने में उत्साह, उत्तरदायित्व की भावना या विद्रोह की शक्ति भी आवश्यक होती है।[९] आर्यसमाज व उसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



अनुयायियों में यह लक्षण स्पष्ट दृष्टिगोचर होते थे। प्रारम्भ से ही शास्त्रार्थों का आश्रय, व्याख्यान, अधिवेशन, महासम्मेलन व धार्मिक-सामाजिक सभाएँ आदि आर्यसमाज के प्रमुख लक्षण थे। आक्रामक शक्ति के साथ ही आर्यसमाज के कार्यक्रमों में प्रारम्भ से ही शक्ति और तर्क का, प्राचीन और अर्वाचीन का मिश्रण रहा है।[१०]

आर्यसमाज के आक्रामक विचारों के विषय में रेवरेण्ड सी.एफ. एण्डूज कहते हैं कि आर्यसमाज जो प्रारम्भ से ही अपनी धारणाओं और नीतियों में उग्र तथा आक्रामक रहा है उसका सीधा कारण यही था कि उसे ईसाइयत तथा इस्लाम जैसे दो आक्रामक सम्प्रदायों का विरोध कर उन्हें पराभूत करना था। आज आर्यसमाज उत्तर भारत में सर्वाधिक सशक्त सुधार आन्दोलन है।[११] आर्यसमाज के आक्रामक विचारों के विषय में उल्लेख मिलता है कि अब हमारा काम मात्र अपनी रक्षा करना ही नहीं है अपितु दूसरों को अपने धर्म में प्रविष्ट कराना भी है। बिन्दु-बिन्दु यदि अग्रसर हुआ जाए तो हम कहेंगे कि हमने यह निश्चय कर लिया है कि जो कुछ हमारे पास है, हम उससे ही सन्तुष्ट नहीं होंगे, अपितु उसे भी विजय कर लायेंगे जो पूर्व हमें अप्राप्त था। अन्य लोग हमारे बारे में क्या धारणा रखते हैं, अब यह प्रश्न नहीं रहा। अब तो प्रश्न यह है कि हम उनके बारे में क्या सोचते हैं? यह विचार नहीं करना है कि हमने क्या छोड़ा, सोचना यह है कि हमने क्या जोड़ा? अब और अधिक हम खोना नहीं चाहते, क्योंकि हमने अपनी सीमाओं से पार जाकर संघर्ष करने की शपथ ली है।[१२] यह विचार लाला लाजपत राय द्वारा लिखित 'दि आर्यसमाज' पुस्तक में उपलब्ध है। इस पुस्तक का प्राक्कथन सिडनी वेब ने नवम्बर-१९१४ में लिखा था। इससे सन्-१९१४ के पूर्व आर्यसमाज के वास्तविक क्रान्तिकारी विचारों पर प्रकाश पड़ता है।

आर्यसमाज द्वारा उत्तर प्रदेश के विविध भागों में जो शुद्धिसंगठन आन्दोलन चलाया गया था इस प्रकार के क्रान्तिकारी विचारों का ही परिणाम था। विदित है कि आर्यसमाज के दोहरे उद्देश्य में प्रथम उद्देश्य हिन्दू धर्म को इस्लाम और ईसाई धर्म के आक्रमणों से बचाना था; विशेषत: पहले से। क्योंकि १९वीं सदी में भारत के प्राचीन आर्य धर्म को इस्लाम से उतना खतरा नहीं था जितना कि क्रिश्चिएनिटी से था।[१३] इसी उद्देश्य को सम्मुख रखकर आर्यसमाज ने उत्तर प्रदेश में शुद्धिआन्दोलन चलाया, जो इस्लाम और ईसाइयत दोनों सम्प्रदायों के विरुद्ध था।

**शुद्धि आन्दोलन–** शुद्धि एक संस्कृत शब्द है, जिसका अर्थ है पवित्र करना। लाला लाजपत राय का विचार था कि आर्यसमाजी लोग इसे धर्म में पुन: प्रविष्ट होने तथा प्रविष्ट कराने के अर्थ में प्रयुक्त करते हैं । वैदिक सम्प्रदाय होने के कारण आर्यसमाज हिन्दू संगठन ही है। अत: इसका प्रयोजन उन लोगों को हिन्दू धर्म में पुन: प्रवेश दिलाना है, जो इस धर्म से पृथक हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति भी इस धर्म में आस्था रखते हुए प्रवेश पा सकता है।[१४]

आर्यसमाज के समय ईसाइयत और इस्लाम दोनों हिन्दुत्व पर सांघातिक (प्राणनाशक) आक्रमण कर रहे थे, दोनों ही भारत में हिन्दुत्व के विरोधी थे और अपने-अपने धर्म का प्रचार कर रहे थे।[१५] विदित है कि आर्यसमाज प्रारम्भ से ही इस्लाम की अपेक्षा क्रिश्चियन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मिशनरीज के प्रति सचेत था क्योंकि इसके प्रादुर्भाव के समय ईसाइयत का प्रचार प्रसार पूरे भारतवर्ष में तीव्र गति से हो रहा था। इससे उत्तर प्रदेश भी अछूता न रहा। भारत इस समय अंग्रेजों के अधीन था। ईसाइयत के प्रचार प्रसार के उद्देश्य से लन्दन में कई सोसायटियाँ कार्यरत थीं। इस प्रकार की केन्द्रीय मिशनरियों द्वारा भारत में ईसाई धर्म के प्रचार प्रसार के साथ ही धर्म परिवर्तन का कार्य बड़े जोरों से किया जा रहा था। लन्दन के चर्च मिशनरीज़ सोसायटी में निम्न प्रमुख थे- दि बैपटिस्ट मिशनरीज सोसायटी ऑफ लन्दन, दी चर्च मिशनरी सोसायटी, मैथोडिस्ट इपिस्क्रॉपॅल चर्च, लन्दन मिशनरी सोसायटी, दी साल्वेशन आर्मी।[१६]

इसमें से दी चर्च मिशनरीज सोसायटी ने यूनाइटेड प्रॉविन्स में सन्-१८१३ ई० से अपना कार्य प्रारम्भ किया। इसका प्रमुख उद्देश्य उत्तर प्रदेश में ईसाई धर्म प्रचार के साथ ही धर्म परिवर्तन कराने का था। इस कार्य को प्रभावशाली ढंग से संचालित करने के लिए सोसायटी ने जगह-जगह स्कूल और कालेज खोले। इस सोसायटी के द्वारा जो धर्म प्रचार किया जा रहा था उसमें जनाना लेडी भी थीं जो घूम-घूम कर धर्म प्रचार कर रही थीं।[१७]

इन स्कूल और कॉलेजों में धर्म परिवर्तन का कार्य धर्मशासक पादरी वर्ग द्वारा बड़ी तेजी से किया जा रहा था। इन पादरी वर्ग द्वारा हिन्दू धर्म की निन्दा करते हुए, सभी प्रश्नों के उत्तर में जीसस क्राइस्ट को मुक्ति का दाता बतलाया जा रहा था।[१८]

एन्जिल कैन चर्च के प्रथम भारतीय धर्मशासक पादरी ने संयुक्त प्रान्त में मिशनरीज खोलने का कार्य प्रारम्भ किया, उनमें मेरठ (सन्-१८१५), बनारस (सन्-१८१७), गोरखपुर (सन्-१८२३), आजमगढ़ (सन्-१८३१), जौनपुर (सन्-१८३१), लखनऊ (सन्-१८५८), इलाहाबाद (सन्-१८५९), देहरादून (सन्-१८५९), फैजाबाद (सन्-१८६२), अलीगढ़ (सन्-१८६३), मथुरा (सन्-१८७८) आदि प्रमुख था।[१९] प्रथम दि बैपटिस्ट चर्च आगरे में भारतीय ईसाईयों के लिए सन्-१८४४ में बना था।[२०]

इस प्रकार चर्च मिशनरीज द्वारा हिन्दुत्व पर किए जा रहे सांघातिक आक्रमणों के विरुद्ध, जिसमें ईसाई धर्म का प्रचार प्रसार, हिन्दुत्व की निन्दा व धर्म परिवर्तन का कार्य सम्मिलित था'। इस्लाम द्वारा मध्यकाल में जो हिन्दुत्व पर आक्रमण कर हिन्दुओं का बलात् धर्म परिवर्तन कराया गया था और निरन्तर इस्लामिक संस्कृति का प्रचार प्रसार किया जा रहा था, क्षुब्ध होकर स्वामी दयानन्द ने कहा था कि ईसाई और इस्लाम के इस तरह नंगा करने की प्रवृत्ति को हिन्दू अपने हथियारों से अवश्य रोंके।[२१] भारतीय समाज पर किए जा रहे इस प्रकार के भीषण प्रहार और हिन्दुओं को ईसाई और मुसलमान बनाने के प्रयास को विफल करने के लिए स्वामी दयानन्द ने अपना आक्रामक रूप प्रस्तुत करते हुए शास्त्रार्थ, व्याख्यान और लेखन द्वारा विधर्मियों को चैलेन्ज किया था।[२२] क्योंकि वास्तविक रक्षा का उपाय तो आक्रमण की नीति ही है।[२३]

स्वामी दयानन्द द्वारा अपनाए गए आक्रामक नीति को आर्यसमाज के अनुयायियों ने निरन्तर अपनी सभाओं में इसका प्रभावशाली ढंग से प्रयोग किया। वैसे शुद्धि के विधान का प्रचलन प्राचीन और मध्य युगों में भी होता आया है। वस्तुतः यह विचार भारतीय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



समाज में अतीव प्राचीन और इन्हें विभिन्न नामों द्वारा विभूषित किया जाता था। आर्य भिन्न विधर्मी जातियों के लोगों को आर्य धर्म एवं समाज का अंग बना लेने के लिए सूत्र ग्रन्थों में ''व्राच्यस्तोम'' यज्ञ का विधान किया गया था।[२४] स्वामी दयानन्द ने शुद्धि शब्द का प्रयोग ईसाई और मुसलमान धर्म स्वीकार करने वाले व्यक्तियों को अपने धर्म में पुन: दीक्षित करने वाली विधि के लिए किया था।[२५]

उत्तर प्रदेश में लाखों की संख्या में जाट, गूजर, राजपूत, चौहान त्यागी आदि मुसलमान बनाए गए थे। जिले के जिले इन आर्य धर्म से पतित बन्धुओं से भरे पड़े थे। मुगलिया शासन की समाप्ति पर आर्यसमाज के प्रबल प्रचार से प्रभावित होकर यह बन्धु अपने पूर्वजों के धर्म में वापिस आने के लिए तैयार हुए।[२६] किन्तु हिन्दुओं में जो संकीर्णता चिरकाल से चली आ रही थी, उसे दूर कर मुसलमान माने जाने वाले लोगों को आत्मसात कर सकना राजपूतों के लिए बहुत कठिन सिद्ध हुआ ।[२७] कठिनाइयों के बावजूद आर्यसमाज ने इनको हिन्दू धर्म में आत्मसात करने का अथक प्रयास किया और अन्तत: इसे सफलता भी मिली।

हिन्दू धर्म में पुन: प्रवेश कराने के सम्बन्ध में आगरा एव अवध के जनगणना आयुक्त का कहना है कि ''जो लोग हिन्दू-धर्म को त्यागकर ईसाई या मुसलमान बन गए थे उन्हें पुन: हिन्दू बनाने के विशेष प्रयत्न किए गए हैं तथा जो जन्मना ईसाई या मुसलमान हैं उन्हें भी हिन्दू धर्म में प्रविष्ट कराने के प्रयत्न प्राय: आर्यसमाज द्वारा किए गए हैं.....'' मुसलमान बने लोगों को हिन्दू धर्म में प्रविष्ट कराने के प्रयत्नों में से एक का ज्ञान मुझे भी है, इसी प्रकार के अन्य प्रयत्न भी हुए हैं, राजपूत शुद्धिसभा नामक एक संस्था आर्यसमाज से संबंधित है। इसका मुख्य लक्ष्य मुसलमान बने राजपूतों को आर्यसमाज के माध्यम से हिन्दू धर्म में लाना है। एक ही दिन में ऐसे ३७० नवमुस्लिम राजपूतों को आर्य धर्म में दीक्षित किया गया। सन्-१९०७ से १९१० तक की त्रिवर्षीय अवधि में इस संस्था द्वारा १०५२ मुसलमान राजपूतों को शुद्ध किया गया।[२८]

राजपूतशुद्धिसभा की स्थापना आर्यसमाज के अवैतनिक वेद प्रचारक आगरा के पण्डित भोजदत्त ने सन्-१९०९ में किया था, उनके द्वारा ही राजपूत नवमुसलिमों को शुद्ध किया गया था।[२९] यह सभा सन्-१९१० तक ही कायम रही। पर इस शुद्धिसभा ने अपने जीवन की स्वल्प अवधि में ही उत्तर प्रदेश के मैनपुरी, हरदोई तथा शाहजहाँपुर जिलों के हजार से ऊपर नवमुसलिमों को शुद्ध कर लिया था।[३०] आर्यसमाज ने इन नवमुसलिमों को हिन्दू-धर्म में लाने के लिए शास्त्रार्थों के द्वारा इस्लाम मत की हीनता और आर्य धर्म की श्रेष्ठता की भावनाएँ जनता में उत्पन्न की और अपने पूर्वजों की वीरगाथाएँ, भजनों एवं व्याख्यानों को सुना-सुनाकर हिन्दुओं में स्वाभिमान जागृत किया और शुद्धि के मार्ग में जो धार्मिक आपत्तियाँ उठाई जाती थीं, उनका उन्मूलन किया।[३१] सन्-१८८६ से १९१२ ई० तक उत्तर प्रदेश में हुए जिन शास्त्रार्थों का विवरण उपलब्ध हैं, उनकी संख्या १०६ है। आर्यसमाज की ओर इस काल में जिन विद्वानों ने शास्त्रार्थों में विशेष योग्यता प्रदर्शित की, उनमें पं. गणपति शर्मा,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पं. देवदत्त शर्मा, पं. रुद्रदत्त शर्मा संपादकाचार्य, पं. लक्ष्मीदत्त, पं. तुलसीराम स्वामी, पं. भगवानदीन और पं. ज्योतिस्वरूप के नाम उल्लेखनीय हैं।[३२]

आर्यसमाज द्वारा जन्मना ईसाई और मुसलमान को भी शुद्धि के माध्यम से हिन्दू धर्म में ग्रहण किया जाता था। वैसे तो इसका प्रारम्भ स्वामी दयानन्द के समय से ही हो चुका था। शुद्धिकार्य स्वामी दयानन्द द्वारा स्वयं मेरठ डिवीजन में प्रारम्भ किया गया था, सन्-१८७८ ई० में मोहम्मद उमर जो जन्मना मुसलमान था, उसे हिन्दू धर्म में दीक्षित कर उसका नाम अलखदारी रक्खा।[३३] यह पूरे भारत का प्रथम शुद्धिकरण था।[३४] रुड़की आर्यसमाज के प्रयास से जून-१८८१ ई० में मार्टिन लूथर नाम के एक ईसाई ने अपनी पत्नी के साथ क्रिश्चिएनिटी का परित्याग कर वैदिकधर्म की शिक्षा ग्रहण कर ली थी, जबकि मार्टिन लूथर रुड़की के क्रिश्चियन अनाथालय का अध्यापक एवं उप प्रबन्धक था।[३५] दिसम्बर सन्-१८८३ ई० में मौलाना अब्दुल अजीज की शुद्धि कर हरजसराय नाम दिया गया तथा३ दिसम्बर सन्-१८९१ को उत्तर प्रदेश के नजीबाबाद के श्री अमामउद्दीन को शुद्ध करके बृजमोहन नाम दिया।[३६]

इस प्रकार शुद्ध होकर आर्य बने जन्मजात मुसलमान और ईसाईयों में ३१ जनवरी -१९०४, मुंशी अब्दुल कादिरखान- मेरठ आर्यसमाज के प्रयास से,[३७] मिर्जा गुलामहैदर सन्-१९०८ में शुद्धकर सत्यदेव, सन्-१९०९ में लखनऊ सिटी आर्यसमाज द्वारा मिस टामसन नामक यूरोपियन महिला को शुद्धकर सीतादेवी, सन्-१९११ ई० में काशीआर्यसमाज के तत्वावधान में मिस्टर राबर्टसन शुद्ध होकर धर्मदेव आदि का नाम उल्लेखनीय है।[३८]

इस सम्बन्ध में राष्ट्रकवि दिनकरजी ने कहा है कि ईसाइयत धर्म ग्रहण करने वाले प्राय: वे लोग थे जो हिन्दुत्व के अन्दर छोटी जाति के गिने जाते थे अथवा जो आदिवासी और वन्य होने के कारण प्रचलित हिन्दू वृत्त से दूर थे। इस्लाम का प्रचार भी इसी वर्ग के भीतर हुआ था, किन्तु मुसलमान कुछ अच्छे हिन्दू भी हुए थे। किन्तु, कितने उच्चवंशीय हिन्दू या मुसलमान क्रिस्तान हुए हैं, इस प्रश्न का उत्तर नगण्य है। भारत में धर्म परिवर्तन मुख्यत: उन्हीं लोगों ने किया है जो हिन्दुत्व के भीतर अनादृत थे, जिनकी सुधि लेने वाला कोई नहीं था।[३९] आर्यसमाज ने इस ओर जनमानस का ध्यान आकृष्ट करते हुए दलित जातियों के उत्थान के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किया। आर्यसमाज ने सर्वाधिक रुचि दलित लोगों के सामाजिक उत्थान में लिया था। आर्यसमाज द्वारा दलितों की शुद्धि दो पृथक् सारणियों पर हुई जैसे- जिन जातियों को यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार नहीं है, उन्हें यह अधिकार देकर उनका सामाजिक स्तर उठाना। अछूतों को स्पर्श्य बनाना, उन्हें उच्चतर सामाजिक आदर्शों की शिक्षा देना ताकि वे अन्य हिन्दुओं के तुल्य सामाजिक स्तर प्राप्त कर सकें।[४०]

उच्च जाति के लोग बहुधा धर्म परिवर्तन करके शिक्षण पद प्राप्त करते थे। निम्नजाति धर्म परिवर्तन करके उपयुक्त रोजगार प्राप्त करने का प्रयास करती थी। निम्न जाति के चमारों ने स्वेच्छा से धर्म परिवर्तन की मांग की थी। धर्म परिवर्तन सभी आयु के लिए था लेकिन कम उम्र की आयु के लिए उसके माता-पिता की सहमति आवश्यक थी।[४१]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज द्वारा चलाए गए शुद्धिआन्दोलन और इससे ईसाइयत के प्रचार प्रसार में उत्पन्न हुई बाधाओं के विषय में सन्-१९१० ई० में एडिनबरा में सम्पन्न हुई विश्व मिशनरी कान्फ्रेंस ने आर्यसमाज को आधुनिक हिन्दू आन्दोलनों में से प्रमुख माना था- कार्य और प्रभाव दोनों दृष्टियों से, साथ ही इसे भारत में ईसाइयत के प्रचार में प्रमुख बाधा के रूप में स्वीकार किया गया था।[४२]

आर्यसमाज द्वारा किए जा रहे शुद्धि कार्य में ऊँचे वर्ण और कल्पित शुद्धता के कुसंस्कारों ने कुछ बाधा अवश्य उपस्थित की लेकिन इस कार्य की संपूर्ण समाज ने प्रशंसा की परन्तु शुद्ध हुए लोगों को सर्वथा बराबर का पद देने को तैयार न हुए।[४३] आर्यसमाज में जो शुद्धिसंस्कार किया जाता था संयुक्त प्रान्त के जनगणना आयुक्त श्री बर्न्स ने कहा कि यह शुद्धिसंस्कार अत्यन्त सरल है। आर्यधर्म में प्रविष्ट होने वालों को पहले १५ दिनों तक केवल दूध पर रखा जाता है। यह प्राचीनकाल का चान्द्रायण व्रत है। शुद्धिसंस्कार को एक बड़े सामाजिक उत्सव का रूप दिया जाता है- शुद्धि करने वाले लोग आर्यसमाज के दस नियमों में अपनी आस्था प्रकट करते हैं, यज्ञ होता है, वेद के मन्त्रों का पाठ किया जाता है तथा उपस्थित लोगों को, शुद्धि हुए व्यक्तियों के द्वारा मिठाई बाँटी जाती है। कभी-कभी शुद्ध हुए लोगों को एक प्रमाणपत्र भी दिया जाता है, ताकि हिन्दुओं से उनका सामाजिक मेल-मिलाप सहजता से हो सके। पहले जो १५ दिन व्रत का विधान किया गया था, अब (सन्-१९१४ से) केवल ३ दिन तक ही रखना होता था।[४४]

पं. भोजदत्त द्वारा स्थापित सभा के टूट जाने से शुद्ध हुए लोगों के हितों की रक्षा करने वाली तथा बिरादरी में उन्हें सम्मिलित करने के लिए प्रेरणा देने वाली कोई संस्था रह ही नहीं गयी थी।[४५] दूसरी ओर मुस्लिम समाचार पत्रों में नवमुस्लिमों को आर्य समाचार पत्र के आक्रमण से बचाने के लिए आन्दोलन शुरू हो गया था। दिल्ली के ख्वाजा हसन निजामी ने मुसलमानों को धर्म की रक्षा के लिए उकसाना प्रारम्भ कर दिया था और एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसमें इस्लाम के प्रचार के नानाविध उपाय प्रतिपादित किए थे। स्वामी श्रद्धानन्द ने इसके विपरीत ''मुहम्मदी साजिश का इन्किशाफ'' नाम की एक पुस्तिका उर्दू में प्रकाशित की, जिसमें हिन्दुओं को उन उपायों व हथकण्डों से सावधान किया, जो तबलीग (धर्मप्रचार) के लिए प्रयुक्त किए जा रहे थे।[४६]

आर्यसमाज मुसलमानों द्वारा किए जा रहे इस आन्दोलन से सचेत था और इसके कर्मठ तथा तपस्वी नेता स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज ने १३ फरवरी सन् १९२३ ई० को आगरे में अखिल भारतीय हिन्दूशुद्धिसभा संगठित की।[४७] इस सभा के उद्देश्य निम्नलिखित थे, जैसे- १. हिन्दू समाज से बिछुड़े हुए तथा अन्य मतावलम्बी भाइयों को पुन: हिन्दू समाज में सम्मिलित करना। २. शुद्धिक्षेत्र में प्रेम तथा धर्म का प्रचार करना। ३. पाठशालाओं तथा अन्य शिक्षाप्रद संस्थाओं द्वारा शुद्धिक्षेत्र में विद्यादि का प्रचार करना। ४. अनाथ तथा विधवाओं के धर्म की रक्षा करना। ५. आवश्यकतानुसार शुद्धिक्षेत्र में चिकित्सालय खोलना। ६. सभा के उद्देश्यों के पूत्यर्थ अन्य आवश्यक साधनों को काम में लाना।[४८] स्वामी श्रद्धांनन्द व अन्य के अथक प्रयास से १५० के लगभग ईसांईयों का धर्म परिवर्तन मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत हुआ था।[४८-अ]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उत्तर प्रदेश के विविध भागों में स्थापित आर्यसमाजों द्वारा इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर कार्य प्रारम्भ किया जा रहा था। इस सभा के निर्वाचित पदाधिकारियों में प्रधान-स्वामी श्रद्धानन्द, उपप्रधान-महात्मा हंसराज, बाबू रामप्रसाद आगरा और कुँवर हनुमन्त सिंह, आगरा,महामन्त्री- कुँवर माधव सिंह, आगरा, मन्त्री-बाबू नाथमल, आगरा, श्री देवप्रकाश, अमृतसर और चौबे विश्वेश्वर दयाल, कोषाध्यक्ष- बाबू चाँदमल आदि थे। अन्तरंग सदस्यों में बाबू श्रीराम, आगरा, राजा नरेन्द्रनाथ, लाहौर, प्रो० गुलशनराय, लाहौर, पं. रामगोपाल शास्त्री, लाहौर, पं. ठाकुरदत्त शर्मा, लाहौर, महाशय खुशहालचन्द लाहौर, महाशयकृष्ण, लाहौर, महात्मा नारायण स्वामी, श्री हरगोविन्द गुप्ता, कलकत्ता, कुँवर चाँदकरण शारदा, अजमेर, बाबू सालिग्राम, आगरा, और डॉ. गोकुलचन्द नारंग,लाहौर आदि थे।[४९]

४ दिसम्बर १९२४ ई० को भारतीयहिन्दू सभा की विधिवत रजिस्ट्री, रजिस्ट्रेशन-एक्ट नं. २१, १८६० के अनुसार हुई।[५०] आगरे में इस सभा का मुख्य कार्यालय स्थापित हुआ। सन्-१९२५ ई० तक यह कार्यालय आगरा में रहा। उसके बाद लखनऊ में राजा साहब महबा की कोठी में इसे ले जाया गया। एक वर्ष बाद मार्च-१९२६ ई० में इसे दिल्ली स्थानान्तरित कर दिया गया।[५१] इस सभा के माध्यम से उत्तर प्रदेश के मथुरा, आगरा, एटा, इटावा, मैनपुरी, भरतपुर आदि क्षेत्रों में लाखों की संख्या में मूल जाटों एवं मलकाने राजपूतों की सामूहिक शुद्धियाँ की गई। इस शुद्धिआन्दोलन से उत्तर भारत का मुसलमान क्षुब्ध हो उठा और आर्यसमाज के तपस्वी नेता स्वामी श्रद्धानन्द की २३ दिसम्बर १९२६ ई० को अब्दुल रसीद नामक मुसलमान ने दिल्ली में गोली मारकर हत्या कर दी।[५२] स्वामी श्रद्धानन्द की ही प्रेरणा से अखिलभारतीयक्षत्रियमहासभा की सम्मेलन में एक प्रस्ताव पारित हुआ था कि मुसलमान बनाए गए व्यक्तियों को हिन्दू धर्म में पुनरूद्धार किया जाए। इस प्रस्ताव के फलस्वरूप हिन्दूमहासभा (१३ अप्रैल १९१५- हरिद्वार) ने पाँच लाख मलकाना राजपूत मुसलमानों को आगरा क्षेत्र में शुद्ध किया।[५३] इस समय हिन्दूमहासभा के अध्यक्ष (सन्-१९२२ ई०) स्वामी श्रद्धानन्द थे और सन्-१९२५ ई० में लाला लाजपत राय इसके अध्यक्ष बने।[५४]

सन्-१९३१ ई० तक भारतीयहिन्दूशुद्धिसभा द्वारा २ लाख नवमुस्लिमों को आर्य-धर्म में वापिस लाया गया। इन्हीं वर्षों में ६० हजार के लगभग अस्पृश्य कहलाने वाले लोगों को विधर्मी होने से बचाया, १२७ शुद्धिसम्मेलन किए गए, १५६ पंचायतें हुईं और ८१ बड़े-बड़े सहभोज किए गए। शुद्धि सभा की ओर से शुद्धि समाचार (सन्-१९२५ ई०) नाम का एक मासिक पत्र भी निकलता था।[५५] जिसमें आर्यधर्म में विधर्मियों को प्रवेश कराने की प्रेरणा व भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता पर आर्यसमाज के मनीषियों द्वारा उच्चकोटि का लेख लिखा जाता था। स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान के फलस्वरूप हिन्दूशुद्धिसभा, दलितोद्धारसभा और हिन्दूमहासभा सदृश हिन्दू संस्थाओं के कार्यकलाप तथा गतिविधि में तेजी आ गयी थी। लाला लाजपत राय और पं. मदनमोहन मालवीय सदृश हिन्दू नेता अब यह भलीभाँति अनुभव करने लगे थे कि हिन्दू जाति में शक्ति का संचार करने के लिए स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा प्रदर्शित मार्ग का अनुसरण आवश्यक है।[५६] बाद में आर्यरक्षासमिति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



और वीरदल जैसे शक्तिशाली संगठन का निर्माण आत्मरक्षार्थ के प्रयोजन से आर्यसमाज ने किया। डॉ. सीतारमैया ने काँग्रेस का इतिहास नामक ग्रन्थ में यह सत्य स्वीकार किया है कि आर्यसमाज के आर्य वीरों को संगठित करने एवं एक सूत्र में पिरोने के लिए सन्-१९२७ में महात्मा हंसराज की अध्यक्षता में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें निर्णय लिया गया कि धर्मान्ध लोगों द्वारा आर्य-नेताओं की हत्याओं को रोकने का एकमात्र उपाय आर्ययुवा संगठन है। आर्यरक्षासमिति ने २६ जनवरी १९२८ को आर्यवीरदल के नाम से एक संस्था की स्थापना की।[५७]

प्रान्त में आर्यवीरदल के कार्यक्रमों के विषय में ब्रह्मचारी शिवमित्र शास्त्री (वर्तमान समय में आर्यसमाज काशीशास्त्रार्थ स्मृति स्थल, आनन्दबाग, दुर्गाकुण्ड-प्रधान-दो वर्ष-आयु ७८ वर्ष) जिन्होंने सन्-१९४५ में आर्यवीरदल शिक्षण शिविर, बरेली के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सम्मिलित होकर एक मास का शिक्षक प्रमाणपत्र, आर्यप्रतिनिधिसभा संयुक्त-प्रान्त, लखनऊ, मंत्री की तरफ से प्राप्त किया है, यह बताया कि इसके प्रशिक्षण कार्यक्रमों में लाठी-भाँजना, तलवार-चलाना, भाला-फेंकना, व्यायाम एवं आसन करना आदि सम्मिलित थे। इसका प्रमाणपत्र अध्याय के अन्त में संलग्न है।

आर्यवीरदल पूर्वी उत्तर प्रदेश के वर्तमान मंत्री, जिलासभा मंत्री श्रीप्रमोद आर्य (आर्यसमाज मन्दिर, भोजूबीर, वाराणसी कैन्ट के वर्तमान कोषाध्यक्ष- आयु-४० वर्ष, सन्-१९९८) ने इससे सम्बन्धित अनेक जानकारी देते हुए तत्सम्बन्धी त्रैमासिक पत्र व स्मारिकाओं को उपलब्ध कराया। 'आर्यवीरसन्देश' त्रैमासिक पत्र में उल्लेख है कि आर्यदल में वैदिकसंस्कृति पर आधारित नयी पीढ़ी के वैयक्तिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय निर्माण की योजना है। यह अथर्ववेद के मंत्र- "वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम।।" अर्थात् हम मातृभूमि के लिए बलिदान देने वाले हों, की भावना से ओत-प्रोत करना चाहता है।[५८] आर्यवीरदल के इस प्रकार के सिद्धान्त का पालन व प्रशिक्षण के कार्यक्रमों के फलस्वरूप शुद्धि के कार्यों में अपूर्व सहयोग मिलना स्वाभाविक था। महात्मा नारायणस्वामी के प्रयास से सन्-१९२८ के अन्त तक लक्ष्य से अधिक "स्वामी का लक्ष्य दस हजार था उसके स्थान पर साढ़े ग्यारह हजार" स्वयं सेवक आर्यवीरदल में भरती हो गए थे।

आर्यरक्षासमिति के लिए सबसे अधिक धन संग्रह संयुक्त प्रान्त (वर्तमान उत्तर प्रदेश) ने किया था। उसके हिस्से में दस हजार रुपये रखे गए थे, पर इसके द्वारा ११,४९६ रूपए एकत्र कर समिति को भेज दिए गए थे।[५९] आगे चलकर आर्यों और आर्यसमाज पर जो अनेक विध संकट आए, उनमें आर्यरक्षासमिति और आर्यवीरदल ने समाज की अच्छी सेवा की।[६०]

आर्यरक्षासमिति को अभूतपूर्व सफलता उस समय मिली जब सहारनपुर जिले के बहादराबाद आर्यसमाज मन्दिर में घुसकर (२२ नवम्बर, १९३०) कैप्टन गफ ने ओउम् की ध्वजा को उतारकर फेंक दिया। समाज के उपमंत्री रामलाल को बुरी तरह पीटा। इस पर आर्यरक्षासमिति और सार्वदेशिकसभा के प्रधान नारायणस्वामी ने इसका प्रबल विरोध किया। इस विरोध में उनके साथ पं. रासबिहारी तिवारी, रायसाहब गंगाराम और महाशय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



रामलाल आदि थे, जिसके फलस्वरूप कैप्टन गफ ने बहादराबाद आर्यसमाज से लिखित रूप में माफी माँगी– २२ नवम्बर सन्-१९३० को बहादराबाद में मैंने जो कुछ किया, उसके लिए मुझे खेद है और मैं इसके लिए सच्चाई से क्षमा प्रार्थना करता हूँ।[६१]

यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि प्रारम्भ से ही आर्यसमाज जहाँ एक ओर शुद्धि के कार्यों के लिए तत्पर था। जिसके कारण कट्टर मुस्लिम वर्ग इसका शत्रु था, वहीं दूसरी ओर राजनैतिक पार्टी काँग्रेस प्रारम्भ से ही मुसलमानों को अपनी पार्टी में आकर्षित करने के लिए कटिबद्ध थी और आर्यसमाज द्वारा किए जा रहे शुद्धिकार्य से काँग्रेस पार्टी असन्तुष्ट थी। सन्-१९२५ में काँग्रेस ने हिन्दू महासभाईयों को काँग्रेस से बाहर करने का प्रस्ताव पारित किया था। कांग्रेसी लोग, जिनमें उस समय प्रमुख थे महात्मा गाँधी और मोतीलाल नेहरू, यह सहन नहीं कर सके कि हिन्दू लोग प्रेरणा मात्र से भी किसी मुसलमान को हिन्दू होने के लिए कह सकते हैं।[६२] गाँधीजी द्वारा लिखित पुस्तक 'मेरे सपनों का भारत' में यह उल्लेख है कि मुसलमान बने मलकाना जाति के लोग हिन्दू धर्म में वापिस आना चाहते हैं तो उन्हें इसका पूरा अधिकार है, वे जब भी आना चाहें आ सकते हैं। लेकिन इस सिलसिले में ऐसे किसी प्रचार की अनुमति नहीं दी जा सकती, जिसमें दूसरे धर्मों को गालियाँ दी जाती हो।[६३]

महात्मा गाँधी आर्यसमाज द्वारा मत परिवर्तन सम्बन्धी किए जा रहे प्रचार के खिलाफ थे। उनका कथन था कि सच्चा शुद्धि का आंदोलन यह होना चाहिए कि हम सब अपने-अपने धर्म में रहकर पूर्णता प्राप्त करने का प्रयत्न करें। इस प्रकार की योजनाओं में एकमात्र चरित्र ही मनुष्य की कसौटी होगा।[६४] गाँधीजी का यह विचार दर्शन आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त मनुष्य के लिए ही प्रेरणादायक सिद्ध हो सकता है लेकिन समसामयिक परिस्थितियों को देखते हुए आर्यसमाज द्वारा चलाए गए शुद्धिआन्दोलन ही तात्कालिक समाज के लिए आवश्यक थे। यह शुद्धिकार्य केवल आर्यसमाजियों तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि लगभग सारे हिन्दू समाज ने उसका हृदय से स्वागत किया था। अनेक कट्टर सनातन धर्मी पंडित और कार्यकर्ता जी-जान से शुद्धि के कार्य में सहायता देने लगे थे।[६५] इस समय गाँधीजी का विरोध प्रभावहीन बना रहा और आर्यसमाज ही ऐसी संस्था थी जो अन्य धर्मों के अनुयायियों को अपने धर्म में दीक्षित करने का कार्य करती रही।[६६]

लाला लाजपत राय ने कहा कि इससे अन्य धर्मों में गए हिन्दुओं को स्वधर्म में प्रविष्ट कराने में आर्यसमाज को पर्याप्त सफलता मिली है तथा उसने हिन्दुओं के धर्मान्तरण प्रवेश को भी रोक दिया है।[६७]

सन्-१९४७ के पूर्व आर्यसमाज द्वारा .में शुद्धिसम्बन्धी कार्यकलापों के विषय में साक्षात्कार के दौरान प्रदेश के वयोवृद्ध आर्यसमाज के महान् कार्यकर्ताओं में श्री सूर्यबली पाण्डेय (आयु-८५ वर्ष, जौनपुर), डॉ. विजयपाल शास्त्री (मूल निवास बलिया- गढ़वार, आयु-७६ वर्ष, पिता-ठाकुर गंगा सिंह- आर्यसमाज के महान् भजनोपदेशक, मृत्यु-१९४६), श्रीदेवीदास आर्य (आयु-७८ वर्ष, कार्यक्षेत्र उत्तर प्रदेश, हैदराबाद सत्याग्रह में सम्मिलित हुए डेढ़ वर्ष की सजा भुगते), श्रीशिवमित्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शास्त्री (अयोध्या नि:शुल्क गुरुकुल महाविद्यालय के स्नातक-१९४५, आयु-७८ वर्ष) व श्रीब्रह्मदेव शास्त्री (गुरुकुल वृन्दावन के स्नातक, आयु-८१ वर्ष) आदि प्रमुख थे, इन लोगों ने बताया कि आर्यसमाज द्वारा शुद्धि के दायित्व को ग्रहण कर लेने के कारण मुसलमान कट्टरपंथी मुल्लाओं और ईसाई पादरियों के साथ सीधे संघर्ष करना पड़ा था। प्रान्त में स्थापित जिले, कस्बों व ग्रामों में आर्यसमाज शुद्धिकार्य के लिए निरन्तर तत्पर था। इसके अधिवेशनों, महासम्मेलनों में शुद्धिप्रकरण महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था। आर्यसमाज के उपदेशकों, भजनोपदेशकों एवं कार्यकर्ताओं द्वारा भारतीय संस्कृति की कीर्तिपूर्ण परम्पराओं को प्रान्त में घूम-घूमकर प्रचार प्रसार किया गया था और तत्सम्बन्धी ट्रैक्ट्स (हिन्दुओं पर एक और आफत, हिन्दु-मुसलमानों के मेल का प्रश्न, शुद्धिपद्धति, ईसाई क्यों बनते हो, हिन्दू जाति की रक्षा के उपाय, ईसाईमतं समीक्षा, स्वामी श्रद्धानन्दजी का धर्म बलिदान आदि) समाज में वितरित किए जाते थे।

इन ट्रैक्टों में हिन्दुओं के धर्मान्तरण पर चिन्ता प्रकट की गयी है और इसके साथ ही इसे रोकने के लिए समाज को सचेत भी किया गया था। शुद्धि के लिए प्रेरणा का अमूल्य ट्रैक्ट- हिन्दुओं पर एक और आफत का एक प्रसंग-अभी ३० वर्ष हुए जब पं. लेखरामजी ने शुद्धि का काम आरम्भ किया था तो उनको भी एक मुसलमान ने मार डाला था। कुछ मुसलमान यह चाहते हैं कि इस प्रकार शुद्धि करने वालों की हत्या करके हिन्दुओं को डरा दें, जिससे कोई हिन्दू शुद्धि के काम करने का साहस न कर सके और वह समस्त हिन्दू जाति को मुसलमान बना लें।[६८] इस समय मुसलमानों की तबलीग बड़े जोर शोर से जारी था।[६९] आर्यसमाज द्वारा भी एक रुपया दिल्ली शुद्धिसभा को भेजने के लिए आग्रह किया गया था।[७०]

स्वामी श्रद्धानन्दजी का धर्म बलिदान ट्रैक्ट के प्रसंग का विवरण सन्-१९२६ ई० को बड़े दिन की तातील में मुसलमानों की तबलीग की एक कान्फ्रेन्स हुई उसमें कहा गया कि हर एक मुसलमान को अपनी जिन्दगी के हर दस साल में तीन हिन्दुओं को मुसलमान बना लेना चाहिए। इस प्रकार जल्दी से उनकी संख्या १५ करोड़ हो जाएगी और फिर वह सब हिन्दुओं को मुसलमान बना सकेंगे।[७१]

हिन्दुओं पर एक और आफत ट्रैक्ट में हिन्दुओं को जागृत करने के लिए कहा गया है कि मुसलमानों को देखो, अपने धर्म के लिए इतना प्रेम है कि बड़े-बड़े सेठ से लेकर कुँजड़े और जुलाहे तक अपना पेट काटकर तबलीग के लिए रुपया देते हैं और उनके सैकड़ों मौलवी निश्चिन्त होकर प्रचार कर रहे हैं, परन्तु हिन्दुओं के सिर पर जूँ भी नहीं रेंगती। दूसरी ओर शुद्धि के लिए लाला लाजपत राय, पं. मदनमोहन मालवीयजी तथा अन्य सज्जनों ने १० लाख रूपए की अपील की थी।[७२] विधर्मियों की शुद्धिपद्धति ट्रैक्ट में १० क्रियाओं का उल्लेख है। इसमें ऋग्वेद, यजुर्वेद मन्त्रों का पाठ व प्रतिज्ञा सम्मिलित है। १० क्रियाओं से गुजरने के बाद हिन्दू धर्म में लाने की क्रिया को आर्यसमाज ने शुद्धिआन्दोलन या संगठन का नाम दिया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इसप्रकार आर्यसमाज द्वारा शुद्धि के क्षेत्र में किए गए प्रयास से भारतीय जनमानस में अपने धर्म व अपनी अभूतपूर्व संस्कृति के प्रति चेतना व स्वाभिमान जागृत हुई। साथ ही हिन्दुओं के धर्मान्तरण पर रुकावट पैदा हुई और स्वधर्म में प्रविष्ट कराने में आर्यसमाज को अभूतपूर्व सफलता भी मिली।

आर्यसमाज गोविन्दनगर, कानपुर के देवीदास आर्य ने मुझे विवाह-प्रमाणपत्र एवं शुद्धिसंस्कार प्रमाणपत्र उपलब्ध कराया। विवाह प्रमाणपत्र आर्य विवाह अधिमान्य करण अधिनियम-१९३७ की धारा -२ के अन्तर्गत मान्य था। आर्यसमाज द्वारा शुद्धिसंस्कार प्रमाणपत्र शुद्धि करवाकर वैदिकधर्म को स्वीकार करने वाले आर्यजाति में प्रविष्ट शुद्धकों को दिया जाता था। आर्यसमाज द्वारा प्रदत्त यह प्रमाणपत्र समाज में सर्वत्र मान्य था, और शुद्धकों के लिए सहायक था। प्रमाणपत्र के लिए परिशिष्ट-१,२ देखा जा सकता है।

२७ दिसम्बर सन्-१९४७ ई० को गुरुकुल वृन्दावन में महत्त्वपूर्ण प्रान्तीय आर्य-सम्मेलन सेठ मदनमोहन की अध्यक्षता में आयोजित हुआ था जिसमें अन्य विषयों के अतिरिक्त शुद्धिआन्दोलन को सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय कृत्य समझने की प्रेरणा जनमानस को दिया गया था।[७३]

पं.इन्द्र विद्यावाचस्पति ने आर्यसमाज द्वारा चलाए गए शुद्धिआन्दोलन के विषय में कहा है कि यह सब कार्य केवल आर्यसमाज अथवा आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं के प्रयत्न से ही नहीं हुआ, इसमें सारी हिन्दू जाति का सहयोग शामिल था, किन्तु इसमें प्रमुख भाग आर्यसमाज का ही था।[७४] आर्यसमाज द्वारा शुद्धियाँ भी होती रहीं परन्तु यह शिकायत कम नहीं हुई कि सब आर्यसमाजी शुद्ध हुए नर-नारियों के साथ परिवार के सदृश समानता का व्यवहार नहीं करते। जो दोष पहले हिन्दू सोसायटी में था, वह सूक्ष्म रूप से आर्यसमाज में भी जारी रहा।[७५] किन्तु यदि पक्षपातहीन दृष्टि से देखा जाए तो शुद्धि का आन्दोलन विशुद्ध धार्मिक था।[७६]

**महिलाओं की स्थिति में क्रमिक परिवर्तन–** आर्यसमाज प्रारम्भ से ही नारी जागरण एवं उसके कल्याण के निमित्त निरन्तर प्रयासरत था। भारतीय नवजागरण के इतिहास में नारी जाति के उत्थान के लिए आर्यसमाज द्वारा किया गया इस प्रकार का प्रयास सदैव अविस्मरणीय रहेगा। क्योंकि आर्यसमाज के अथक प्रयास के फलस्वरूप स्त्रियों के प्रति भारतीय जनमानस में व्यापक परिवर्तन हुआ, नारी स्वतन्त्रता, समानता व उनके अधिकारों के प्रति भारतीय समाज में जागरूकता आनी प्रारम्भ हुई।

सदियों की सामाजिक संकीर्णता, इस्लाम व ईसाइयत के आक्रमणों के परिणामस्वरूप भारतीय समाज में असमानता, हीनता व अनेक कुरीतियों का जन्म हो चुका था। स्त्रियों के प्रति रूढ़िवादी समाज का दृष्टिकोण संकुचित था। इससे स्त्रियों की दशा इस समय अत्यन्त सोचनीय हो गयी थी। इसमें शिक्षा का अभाव, पर्दाप्रथा,बहु विवाह,बाल विवाह, विधवाओं के विवाह का निषेध, सतीप्रथा आदि अनेक सामाजिक प्रचलन स्त्रियों के उत्थान में बाधक थे। सेंसस रिपोर्ट आफ इन्डिया में उल्लेख है कि स्त्रियों की दुर्दशा के अधिकांश कारण विवाहजन्य दोषों में निहित थे। बाल-विवाह का दुष्परिणाम था कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


वयस्क अवस्था तक अधिकांश स्त्रियाँ विधवा हो जाती थीं। इन विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी। इसके विपरीत पुरुष एक से अधिक विवाह कर सकते थे।[७७] इससे समाज में अव्यवस्था, असमानता एवं अनेक विकृतियों का होना स्वाभाविक था।

प्राचीन वैदिकयुग में स्त्रियों की स्थिति प्राय: पुरुषों के समान होती थी। स्त्री को पुरुष की सहधर्मिणी माना जाता था। स्त्रियाँ भी पुरुषों के समान विद्याध्ययन करती थीं और सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व धार्मिक जीवन में उनका हाथ बँटाती थीं।[७८] प्राचीन भारत में स्त्रियों का समाज में उत्कृष्ट स्थान था।[७९] शिक्षा और विवाह के क्षेत्र में इनका समान अधिकार था।[८०] वैदिकग्रन्थों में भी नारी के प्रति "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:" का भाव निहित है।[८१] इससे स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति में प्रारम्भ से ही नारी के प्रति आदर्शात्मक भाव विद्यमान थे।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचारों में भी नारी जाति के प्रति बहुत अधिक सम्मान का भाव था। वह नारी को मातृ शक्ति एवं मातृत्व के रूप में पुकारते थे।[८२] दूसरी ओर समाज में नारी की दशा कैदियों से भी अधिक बदतर थी। वे अपने घरों में एक कैदी की भाँति चहारदीवारी में कैद थीं। उनके साथ एक नौकर की तरह व्यवहार किया जाता था और बच्चा पैदा करने वाली मशीन समझा जाता था। उनका बौद्धिक स्तर अत्यन्त निम्नतम था।[८३] समाज में स्त्रियों की ऐसी दशा में आर्यसमाज सदैव सचेत था। इसके लिए इसने नारी शिक्षा के प्रति विशेष ध्यान दिया। क्योंकि शिक्षित नारी ही अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति मूलरूप से जागरूक रहकर समाज को नयी दिशा दे सकती है और गार्गी, मैत्रेयी, महारानी दुर्गावती, लक्ष्मीबाई आदि जैसी विदुषी और वीरांगना नारियों का उदाहरण समाज में प्रस्तुत कर सकती है।

आर्यसमाज ही भारत में पहला समाज था जिसने स्त्री शिक्षा को प्रारम्भ किया और उनके लिए स्कूल स्थापित किए।[८४] स्त्रियों के पढ़ने का निषेध आर्यसमाज ने सदैव मूर्खता, स्वार्थपरता और निर्बुद्धि का परिचायक माना[८५] और पुरुषों के समान स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्मशास्त्र, आयुर्वेद, गणित, शिल्प आदि सभी शिक्षाओं के लिए योग्य ठहराया।[८६] आर्यसमाज द्वारा उत्तर प्रदेश में शिक्षा के क्षेत्र में किए गए योगदान को एक अलग अध्याय में दर्शाया गया है, जिसमें नारी शिक्षा का उल्लेख सम्मिलित है।

नारी जाति के उत्थान के लिए आर्यसमाज के पूर्व ब्रह्मसमाज, प्रार्थनासमाज एवं अनेक सामाजिक सुधारकों द्वारा प्रयास किया गया था। जिसमें अभूतपूर्व सफलता भी मिली। उसमें राजा राममोहनराय के अथक प्रयास के फलस्वरूप सतीप्रथा के निषेध अधिनियम (रेग्यूलेशन XVII नं०, सन्-१८२९),[८७] विधवा-विवाह के पक्ष में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर (१८२०-१८९१) द्वारा चलाए गए वृहद् आन्दोलन के फलस्वरूप हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम (सन्-१८५६),[८८] केशवचन्द्र सेन के प्रयत्नों के परिणामस्वरूप सन्-१८७२ का मैरिज-एक्ट[८९] आदि कानून महत्त्वपूर्ण थे। मैरिज एक्ट अधिनियम में बहु विवाह को दण्डित माना गया और बाल विवाह का अन्त भी किया गया था।[९०] इसके पूर्व सर्वप्रथम सन्-१८०७ में बालविवाहनिरोधकअधिनियम एवं इस मैरिज-एक्ट के बाद (सन्-१८७२) सन्-१८९१ ई० में द्वितीय अधिनियम पारित हुआ।[९१]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज ने उत्तर प्रदेश में इन सामाजिक विधानों को दृढ़ता के साथ समाज में प्रस्तुत कर एक नयी चेतना जागृत की और बाल विवाह, बहु विवाह, वृद्ध विवाह, विधवा विवाह निषेध, सतीप्रथा, दहेज प्रथा, स्त्रियों के लिए शिक्षा के प्रति संकुचित दृष्टिकोण आदि सामाजिक कुप्रथाओं के विरुद्ध प्रदेश में वृहद् आन्दोलन चलाया। जनसामान्य में तत्सम्बन्धी ट्रैक्टों (जिन्दा लाश, धन की देवी, विधवायें और देश का नाश, दहेज) को हजारों की संख्या में वितरण कर समाज को जागृत किया। इन ट्रैक्टों में, समाज में कन्याओं के प्रति किए जा रहे अत्याचारों के साथ ही उनके उत्थान के लिए विचार भी प्रस्तुत किया गया है। उदाहरणार्थ जैसे जिन्दा लाश ट्रैक्ट में उल्लेख हैं कि- हमारे यहाँ लड़कियों को पैदा होते ही गला घोंटकर मार डालते थे। भला हो अंग्रेजी सरकार का जिसने इस बुरे रिवाज को जबर्दस्ती बन्द करा दिया। हमारे देश में आजकल लड़कियाँ जिन्दा जला दी जाती हैं। इस समय ऐसी जिन्दा लाशों की संख्या लाखों और करोड़ों तक पहुँच गयी है। पहले तो छोटे बच्चों या साठ वर्ष के बुड्ढों से आँखों पर पट्टी बाँधकर अपनी प्यारी कन्याओं को ब्याह देते हैं और जब वे विधवा हो जाती हैं तो उनको हजारों तरह के कष्ट देते हैं।

इस ट्रैक्ट में नारी उद्धार व जागरण के प्रति समाज को सचेत भी किया गया है, जैसे- हमारे ऋषि मुनियों ने इन दुःखों पर विचार कर उनके पुनर्विवाह की आज्ञा दी थी जिसका प्रमाण इसमें निहित है-

**उदीर्ष्व नार्यभिजीवलोकं गतासुमेतमुपशेष एहि।**
**हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभिसंबभूथ।।**

**ऋग्वेद मं.१०, सू० १८, मं. ८११**

विधवायें और देश का नाश नामक ट्रैक्ट उत्तर प्रदेश में आठवीं बार सन्-१९५० में प्रकाशित हुआ था। इसमें उल्लेख है कि भारत में छब्बीस लाख इकतीस हजार सात सौ अट्ठासी विधवाओं का होना प्रकट करता है कि भारत महासंकट में है। आज सैकड़ों विधवायें रोज ईसाई और मुसलमान हो जाती हैं, आजकल विधवाओं के कारण हिन्दू जाति का बहुत बड़ा नाश हो रहा है। विधवा विवाह हमारे शास्त्र के विरुद्ध है तो क्या सर्वनाश तुम्हारे शास्त्र के अनुकूल है। याद रक्खो कि विधवाओं के विवाह में रुकावट डालना अपने देश और जाति के डूबने के लिए कुआँ खोदना है।[९३]

उत्तर प्रदेश में बाल विवाह के संदर्भ में सेंसस रिपोर्ट, उत्तर प्रदेश, सन्-१९११ के अनुसार १०,००० महिलाओं में, बाल्यावस्था में हुए विवाहों को इस प्रकार दर्शाया गया है।[९४]

| आयु | हिन्दू | मुस्लिम | जैन | आर्य |
|---|---|---|---|---|
| ०-१० | १५७ | ११६ | ५६ | ९२ |
| १०-१५ | ६०२ | ४५७ | ४१९ | ४४२ |

इस प्रकार बाल विवाहों की समाज में प्रथा के कारण बहुत सी कन्याएँ छोटी आयु में विधवा हो जाती थीं और उन्हें जन्मभर वैधव्य जीवन बिताने के लिए विवश होना पड़ता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



था।[९५] उच्च वर्ग की विधवाओं के लिए पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी और इनकी स्थिति अत्यधिक खराब थी।[९६] जबकि वैदिककाल में विधवा विवाह का प्रचलन था।[९७] बाल विवाह के संदर्भ में वैदिकयुग के साहित्य या धर्म ग्रन्थों के अध्ययन से यह स्पष्ट पता चलता है कि उस समय बाल विवाह का प्रचलन नहीं था।[९८] वैदिकयुग की संस्कृति के प्रति दृढ़ विश्वास रखने के कारण आर्यसमाज ने विवाहजन्य जैसी कुप्रथाओं का प्रदेश में निरन्तर अपनी सभाओं, महासम्मेलनों एवं अधिवेशनों में विरोध किया। अपने जीवन के पहले २५ वर्षों में ही इन सब दोषों की दीवारों को हिला दिया था, इन दोषों के विरुद्ध कार्य भी आरम्भ कर दिए थे।[९९]

स्वामी दयानन्द ने बाल विवाह का विरोध किया तथा १६ वर्ष से कम आयु की स्त्री और २५ वर्ष से कम आयु के पुरुष के विवाह को अनुचित बताया।[१००] सत्यार्थ-प्रकाश में उल्लेख है कि सोलहवें वर्ष से लेकर चौबीसवें वर्ष तक कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेकर ४८ वर्ष तक पुरुष का विवाह समय उत्तम है।[१०१] इसके पूर्व सन्-१८६० के एक्ट में कन्या की विवाह आयु कम से कम १० वर्ष होनी चाहिए का प्रावधान किया गया था।[१०२] सन्-१८७२ के मैरिज-एक्ट में दूल्हा या वर की उम्र-१८ वर्ष और दुल्हन की उम्र-१४ वर्ष निश्चित किया गया था।[१०३] बाद में विवाह सम्बन्धी अधिनियम १८९१ के अनुसार विवाह के समय लड़की की आयु कम से कम १२ वर्ष का प्रावधान किया गया था।[१०४]

बाल-विवाह जैसी कुप्रथाओं के प्रचलन के कारण बाल विधवाओं की निरन्तर संख्या वृद्धि से व्यग्र आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता दीवान बहादुर हरविलास शारदा जो एक समय परोपकारिणी सभा के अध्यक्ष और विधान परिषद् के सदस्य थे[१०५] ने एसेम्बली में एक बिल पेश किया था[१०६] जिसे बालविवाहनिरोधंक अधिनियम या संक्षेप में शारदा-एक्ट कहते हैं। बाल-विवाहों के विरुद्ध यह शारदा एक्ट हरविलास शारदा की सिफारिशों के फलस्वरूप २३ सितम्बर सन्-१९२९ को सायं ७:४५ पर पास हुआ था।[१०७] इसे कानून के रूप में १ अप्रैल, सन्-१९३० ई० से लागू किया गया। इसमें विवाह के समय वर की आयु-१८ वर्ष और कन्या की आयु-१५ वर्ष का प्रावधान किया गया था।[१०८] इसके नियमों का पालन न करने पर जेल जाने का प्रावधान था।[१०९] आलइण्डियावीमेन द्वारा इस कानून को समर्थन प्राप्त था।[१०९-अ]

आर्यसमाज उत्तर प्रदेश में बालविवाहनिषेध एवं विधवाओं के रक्षार्थ सदैव प्रयत्नशील था। आर्यसमाज द्वारा इसके लिए आश्रमों की स्थापना करने का कार्य प्रारम्भ किया गया था। जिसमें स्वामी मंगलदेव की प्रेरणा से आगरा आर्यसमाज द्वारा सन्-१९०९ में विधवाहितकारिणीसभा एवं विधवाआश्रम (सन्-१९११) की स्थापना,[११०] लखनऊ आर्यसमाज द्वारा सन्-१९४१ ई० में विधवा आश्रम की स्थापना,[१११] देहरादून में सन्-१९२४ ई० में श्रद्धानन्द बाल ''वनिताश्रम'' की स्थापना[११२] आदि महत्त्वपूर्ण था। आगरा आर्यसमाज द्वारा, सन्-१९११ ई० में जो विधवाआश्रम की स्थापना की गयी थी उसमें प्रारम्भ में केवल ३ विधवाओं ने आश्रय लिया था। बाद में उनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि होती गयी और प्रतिवर्ष एक सौ के लगभग विधवाएँ आश्रय ली थीं। बाद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



में उनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि होती गयी जिसमें प्रतिवर्ष लगभग एक सौ एक विधवाएँ आश्रम में प्रविष्ट होने लगी थीं।[११३]

आर्यसमाज द्वारा स्थापित विधवा आश्रमों में आश्रय के साथ ही उनको दस्तकारी सिखाना, शिक्षा की व्यवस्था करना व उनके पुनर्विवाह की व्यवस्था का भी प्रबन्ध किया गया था। आगरा, लखनऊ व देहरादून के समान ही प्रयाग, शाहजहाँपुर, सहारनपुर और बरेली आदि अन्य नगरों में भी आर्यसमाज द्वारा विधवाओं, असहाय स्त्रियों व अनाथ बालिकाओं के लिए आश्रमों की स्थापना की गयी थी।[११४] आर्यसमाज द्वारा इस प्रकार किए गए प्रयास के फलस्वरूप उससमय कुछ विधवा-पुनर्विवाह भी हुए थे। संयुक्त-प्रान्त की आर्यप्रतिनिधिसभा का सन्-१९१२ में वैदिकवैजयन्ती नाम से जो २५ साल का विवरण प्रकाशित हुआ था, उसमें कुछ विधवा-विवाह की चर्चा है, जैसे- आगरा के डॉ. मुकुन्दलालजी की पुत्री विधवा हो गई थी। उसका पुनर्विवाह विद्वानों में चर्चा का विषय था । कान्यकुब्ज ब्राह्मणों में पं. विश्वनाथ शर्मा के एक विधवा से विवाह का और श्री भगवानदीनजी की विधवा कन्या के विवाह का विवरण मिलता है।[११५] इसके साथ ही सौ से अधिक बाल-विधवाओं का विवाह आर्यसमाज के प्रयास से हुआ था। जून-१९०१ ई० में मुजफ्फरपुर के लाला स्वरूप लाल अग्रवाल ने अपनी कुँवारी विधवा पुत्री का पुनर्विवाह लाला गोविन्द प्रसाद से किया था। इस वैवाहिक धर्मानुष्ठान में बहुत से आर्यसमाजी सम्मिलित हुए थे।[११६]

उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा के सर्वमान्य नेता मदनमोहन सेठ (सब-जज, गोरखपुर, सन्-१९१८) के प्रेरणास्वरूप मथुरा में महर्षिदयानन्दजन्मशताब्दीमहोत्सव (सन्-१९२५) मनाया गया था और इस अवसर पर सार्वदेशिक सभा, परोपकारिणीसभा, सब आर्यप्रतिनिधिसभाओं, प्रमुख आर्य-संस्थाओं, संन्यासियों तथा विद्वानों को आमन्त्रित किया गया था। महोत्सव की सफलता व संचालन के लिए पूर्व में कमेटियाँ भी बनायी गयी थीं जिसमें आर्यसमाज के अनेक सक्रिय कार्यकर्त्तागण- श्रीस्वामीश्रद्धानन्द संन्यासी (कार्यक्षेत्र - उत्तर प्रदेश), श्रीमहात्मा नारायणस्वामी (उत्तर प्रदेश - जन्म-अलीगढ़), श्रीमहात्मा हंसराज (लाहौर), डॉ. क़ल्याणदास देसाई (बम्बई), श्रीहरविलास शारदा-अजमेर, श्रीसेठ जयनारायण (कलकत्ता), बाबू सीताराम लखीमपुर, श्रीमदनमोहन सेठ (बुलन्दशहर), बाबू श्रीराम (आगरा), आचार्य रामदेव प्रिंसिपल दीवानचन्द और पं. घासीराम (मेरठ) आदि सम्मिलित थे।[११७] इस महोत्सव का प्रधान श्रेय श्रीनारायणस्वामी को प्राप्त था।[११८] पूरे भारत से इस महोत्सव में अनेक आर्यसमाज के सक्रिय वरिष्ठ कार्यकर्त्तागण, विद्वान् व चिन्तक सम्मिलित हुए थे। इसमें अनेक आर्य-महिलाओं के भाषण भी हुए थे, इनमें श्रीमती सत्यवती (जालन्धर), श्रीमती दमयन्ती देवी, श्रीमती चन्द्रावती (इन्द्रप्रस्थ) और श्रीमती सुमित्रा देवी (गुजरात) प्रमुख थीं।[११९]

गुरुकुल के स्नातक और ब्रह्मचारी, कन्या महाविद्यालय की स्नातिकाएँ और छात्राएँ, भिन्न-भिन्न कालेजों, स्कूलों और पाठशालाओं के विद्यार्थी, अनाथालयों के बालक और बालिकाएँ, ३५,००० पंजाब की स्त्रियों का नगर-कीर्तन भजन मण्डलियाँ आदि मथुरा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



महोत्सव में सम्मिलित थे।[१२०] इस अवसर पर इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं का सम्मिलित होना, उनका भाषण होना, उनकी जागरूकता व उत्साह का द्योतक था। महोत्सव में जो सम्मेलन, अधिवेशन व सभाएँ आयोजित हुई थीं और अनेक प्रस्ताव स्वीकृत किए गए थे उनमें नारी स्वतन्त्रता, समानता व उनके अधिकारों को भी सम्मिलित किया गया था। विधवाओं की स्थिति से उपस्थित लोगों को अवगत भी कराया गया और आर्य-संस्कृति में उत्कृष्ट स्वयंवर विवाह को मान्यता दी गयी। प्रस्ताव संख्या-४ के अंश में कहा गया है कि यह सम्मेलन निश्चय करता है कि स्वयंवर विवाहों की स्थापना की जाए और स्नातक एवं स्नातिकाओं को इस पद्धति कें अनुसार विवाह करने के लिए प्रोत्साहित किया जावे।[१२१] इस प्रकार के विवाह से बाल-विवाह में अवरोध उत्पन्न होगा।

विधवा विवाह के सम्बन्ध में पं. गंगाप्रसाद , एम.ए. ने एक प्रस्ताव पेश किया था-वर्तमान सामाजिक अवस्था को ध्यान में रखते हुए यह परिषद् स्थिर करती है कि युवा स्त्री-पुरुष आयु की समानता की दृष्टि से यदि पुनर्विवाह करना चाहें तो मना नहीं है। इसमें संशोधन (विधुर का विधवा के साथ विवाह, विधुर की आयु-४० वर्ष से अधिक नहीं हो।) किया गया जो स्वीकृत हो गया।[१२२]

प्रस्ताव संख्या -५-आर्य मैरिज बिल को लेजिस्लेटिव एसेम्बली में उपस्थित कराने पर भी विचार किया गया था।[१२३] जो बाद में सन्-१९२९ ई० में हरविलास शारदा के प्रयास से यह बिल पेश हुआ और इसे लागू भी किया गया। विधवाओं की दयनीय स्थिति से हरविलास शारदा ने लेजिस्लेटिव एसेम्बली को परिचय कराया जो सन्-१९३० ई० में "हिन्दू विडो राईट इनहेरिटेन्स" के नाम से जाना गया। इसमें पति के मृत्यु के बाद उनके सम्पत्तियों में शेयर का विधान किया गया था जो सरकार के विरोध करने पर पास न हो सका।[१२४]

मथुरा महोत्सव के विषय में इन्द्र विद्यावाचस्पति ने कहा है कि यह शताब्दी महोत्सव आर्यसमाज और आर्यजाति में उत्पन्न हुई जागृति का विराट् प्रदर्शन था।[१२५] आर्यसमाज आन्दोलन में बहुत सी महिलाओं ने भाग लिया था और जेल की यात्रा भी उन्हें सहन करनी पड़ी थी। एक घटना सन्-१९३२- फर्रुखाबाद जेल में श्रीमती सावित्री देवी और सहारनपुर जेल में श्रीमती चमेली देवी सत्याग्रह आन्दोलन के कारण बन्द थीं। इनको जेल में हवन करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था जिस पर उन्होंने भूख-हड़ताल कर सरकार को हवन करने देने के लिए बाध्य किया।[१२६]

उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्वर्ण जयन्ती सन्-१९३६ ई० को मेरठ में मनायी गयी। इसकी सफलता का प्रधान श्रेय पं. महेन्द्रप्रताप शास्त्री को था। इस महोत्सव में वेद सम्मेलन, आर्य सम्मेलन, राष्ट्रभाषा सम्मेलन और महिला सम्मेलन मुख्य था। महिला सम्मेलन में श्रीमति शन्नोदेवी का व्याख्यान बहुत ही प्रभावोत्पादक था।[१२७]

इस प्रकार सन्-१९४७ ई० तक आर्यसमाज विवाहजन्य दोषों के कारण समाज के उत्थान में उत्पन्न बाधाओं से प्रान्त में निरन्तर संघर्ष करता रहा और भारतीय जनमानस में इन कुप्रथाओं के विरुद्ध सदैव आवाज उठाई। जिसके फलस्वरूप स्त्रियों में व्यापक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



चेतना जागृत हुई और बाल विवाहों के प्रति जनमानस में एक नवीन विचारधारा का जन्म हुआ। आर्यसमाज ने ही बाल विवाह, वृद्ध विवाह, बहु विवाह एवं अनमेल विवाह के विरुद्ध जनमानस को तैयार करने का काम किया और विधवा विवाह के विरुद्ध समाज में प्रचार प्रसार किया। जिसके फलस्वरूप विधवा विवाह की प्रथा प्रारम्भ हुई।[१२८] संयुक्त-प्रान्त में सन्-१९२४ ई० में २५४ और सन्-१९२६ ई० में ६८२ विधवा पुनर्विवाह हुए।[१२९] सन्-१९२३ ई० में असहाय स्त्रियों की रक्षा के लिए आर्यसमाज विधवा आश्रम की स्थापना काशी में हुई और सन्-१९३० ई० में १९१ स्त्रियों ने इस आश्रम में आश्रय लिया, जिसमें से ७४ स्त्रियों का विधवा पुनर्विवाह हुआ।[१३०] अप्रैल सन्-१९३४ ई० में प्रसिद्ध तीर्थस्थल प्रयाग में अग्रवाल महासभा द्वारा विधवा पुनर्विवाह का अधिवेशन आयोजित किया गया था।[१३१] इस प्रकार विधवा पुनर्विवाह के प्रति आर्यसमाज प्रारम्भ से ही सदैव जागरूक था।

**नायक जाति में सुधार कार्य–** उत्तर प्रदेश के पार्वत्य कुमायूँ क्षेत्र में ''नायक'' नाम की एक जाति का निवास है, जिसकी कन्याएँ वेश्यावृत्ति किया करती थीं।[१३२] वेश्यावृत्ति करना उसका सामाजिक कर्त्तव्य या स्वधर्म समझा जाता था।[१३३] पहाड़ी क्षेत्र गढ़वाल में इस जाति की बहुतायत संख्या थी। नायक लोग शिक्षा में बहुत पिछड़े हुए थे और उनमें सामाजिक कुरीतियों की भरमार थी।[१३४]

आर्यसमाज ने नायक जाति में प्रविष्ट हुई अपनी कन्याओं से वेश्यावृत्ति कराने की घृणित प्रथा के विरुद्ध व्यापक आन्दोलन चलाया और नायक लोगों को इस बात की प्रेरणा देने का प्रयत्न किया कि वे अपनी कन्याओं का विधिवत विवाह किया करें, जिससे कि वे सद्गृहस्थों के समान जीवनयापन कर सकें। आर्यसमाज के प्रचार के कारण उत्तर प्रदेश की सरकार का ध्यान इस कुप्रथा की ओर आकृष्ट हुआ और २९ अगस्त १९१२ को उसने उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा के नाम इस आशय का एक पत्र लिखा कि इंससे पहले की सरकार राजकीय कानून बनाकर प्रथा को दूर करे, यह उचित होगा कि नायक जाति स्वयं ही इस प्रथा का अन्त कर देने के लिए आन्दोलन करे और इसके लिए राजकीय कानून का आश्रय न लेना पड़े।[१३५]

सन्-१९२७ ई० में उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा ने आगरा निवासी बाबू गजाधर प्रसाद के अधीनस्थ एक उपसमिति बनायी।[१३६] जिसके सदस्य डॉ. श्यामस्वरूप सत्यव्रत और श्री रामप्रसाद भी थे।[१३७] कमेटी ने इन क्षेत्रों में सुधारकार्य करने हेतु आर्य मिशनरीज भेजा। जिसने इन क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में सुधारात्मक कार्य किया।[१३८] इस उपसमिति का मुख्य दायित्व था कि वेश्यावृत्ति करने वाली कन्याओं का विवाह और उन्हें छात्रवृत्तियाँ देकर नायक कन्याओं की शिक्षा की व्यवस्था करना।[१३९] ऐसी कन्याओं के निवास एवं शिक्षणादि के लिए प्रतिनिधिसभा ने मेरठ में नायक बालिका आश्रम स्थापित किया था जिसका संचालन माता हीरादेवी बड़ी दक्षता के साथ करती रहीं।[१४०] आर्यसमाज द्वारा इन क्षेत्रों में उपदेशकों व कार्यकर्ताओं को भेजकर, वेश्यावृत्ति के विरुद्ध प्रचार कार्य करते हुए सुधारात्मक कार्य किया जा रहा था। उपसमिति द्वारा अपीलें छपवाकर प्रत्येक आर्यसमाजों,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



प्रतिनिधि सभाओं तथा अन्य आर्य संस्थाओं के पास सहायता एवं सहयोग के लिए भेजी गयी थी। जिसके फलस्वरूप प्रादेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा लाहौर के प्रधान ने १०० नायक कन्याओं तथा ४ बालकों के भरण-पोषण एवं शिक्षा का व्यय देना स्वीकार किया। इसमें अन्य अनेक आर्य संगठनों तथा सम्पन्न व्यक्तियों ने अपूर्व सहयोग किया।[१४१]

इस जाति को ऊपर उठाने के लिए आर्यसमाज के कतिपय कार्यकर्ताओं- श्री रामप्रसाद मुख्तार, पं. देवीदत्त, डॉ. श्यामस्वरूप सत्यव्रत, बाबू बृजनाथ और बाबू उदयसिंह ने अपूर्व सहयोग दिया।[१४२] इसके साथ ही राजकीय संरक्षण की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए आर्यसमाज के वयोवृद्ध कार्यकर्ता रायबहादुर ठाकुर मशाल सिंह (एक समय उत्तर प्रदेश विधान परिषद् सदस्य थे) ने काउन्सिल में इस आशय का प्रस्तावं पेश किया कि कानून द्वारा नायक जाति की स्त्रियों को वेश्या बनने से रोका जाए। यह प्रस्ताव सन्-१९२८ ई० में पास हो गया। जिससे नायक स्त्रियों के वेश्यावृत्ति में जाने का प्रवाह रुक गया।[१४३] डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार ने इस सम्बन्ध में कहा कि नायक जाति में अपनी कन्याओं से वेश्यावृत्ति कराने की जो प्रथा प्रचलित थी, उसे अन्त कराने का प्रधान श्रेय उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा को प्राप्त है।[१४४]

**दहेज प्रथा के विरुद्ध प्रचार कार्य–** आर्यसमाज ने नारी जाति को जागृत करने के ध्येय से कन्या पाठशालाएँ खोलीं। विवाह जन्य दोषों को दूर करने के लिए व्यापक आन्दोलन चलाए और सरकार से कानून पास कराया। साथ ही समाज में प्रचलित दहेज प्रथा के कारण उत्पंन्न हुई अनेक समस्याओं और कुरीतियों से जनसामान्य को अवगत कराते हुए इसे दूर करने का प्रयास किया। भारतीय जनमानस में यह प्रचारित किया कि दहेज जैसी प्रथा का अन्त होना चाहिए।

भारत में दहेज प्रथा की समस्या का रूप अधिक प्राचीन नहीं है। धर्मशास्त्र युग तक तो कन्या को विवाह के समय वस्त्र और आभूषण से सुसज्जित करना ब्राह्म विवाह की रीति का एक अंग रहा। जिसका निर्वाह कन्या का पिता अपनी इच्छा और सामर्थ्य के अनुसार करता था।[१४५] आजकल की तरह नहीं कि विवाहित स्त्री दहेज के लिए बलि चढ़ा दी जाती है।

मुसलमान शासकों के काल में जब कुलीनता, दहेज प्रथा, बाल विवाह और सामाजिक रूढ़ियाँ अधिक प्रभावपूर्ण हो गयीं तब कुलीन परिवारों ने अपनी उच्च सामाजिक स्थिति का लाभ उठाते हुए कन्या पक्ष से अधिक से अधिक उपहार लेना आरम्भ कर दिया। धीरे-धीरे यह प्रथा एक संक्रामक बीमारी की तरह सभी जातियों और सभी वर्गों के लोगों में फैलती गयी।[१४६] मध्यकाल में भी दहेज प्रथा जैसी किसी समस्या का विशेष उल्लेख नहीं मिलता।[१४७]

इस संक्रामक बीमारी को दूर करने में आर्यसमाज ने सक्रिय भूमिका निभाई। इसने संयुक्त प्रान्त के विविध भागों में दहेज प्रथा के विरुद्ध प्रचार कार्य किया। इसके अन्तर्गत आर्यसमाज चौक, प्रयाग से उन दिनों ट्रैक्ट्स समाज में वितरित किए जाते थे। इन ट्रैक्टों में दहेज, दुखदायी दुर्व्यसन आदि महत्त्वपूर्ण थे। इन ट्रैक्टों के माध्यम से आर्यसमाज ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



जनमानस को ऐसी सामाजिक कुप्रथा के प्रति जागृत किया। इन ट्रैक्टों के कुछ मुख्य अंश उद्धृत हैं, जैसे- दहेज नामक ट्रैक्ट में इस सामाजिक प्रथा को कुप्रथा माना गया है।[१४८] इसमें यह भी कहा गया है कि यह बुरी रस्म पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर समस्त भारतवर्ष में फैली हुई है और जितनी हिंसा इस प्रथा से होती है उतनी शायद एक-दो प्राणियों के मारने से भी नहीं होती।[१४९] दहेज लेने वाले तो समस्त जाति की कन्याओं को और उनके परिवार को जन्म भर दुःख देते हैं। उनको तड़पा-तड़पा कर मारते हैं।[१५०] इस ट्रैक्ट में दहेज के दुष्प्रभाव का विधिवत् वर्णन किया गया है।[१५१]

दुखदायी दुर्व्यवसन नामक ट्रैक्ट-१० में विवाह के समय अधिक व्यय न करने के प्रति समाज को सजग किया गया है।[१५२] इस कुप्रथा को हिन्दुओं की दुर्गति का कारण माना गया।[१५३] इस सम्बन्ध में उंल्लेख है कि हिन्दू विवाह की समस्याओं में आज कोई भी समस्या इतनी गम्भीर नहीं है जितनी कि दहेज प्रथा।[१५४] आर्यसमाज द्वारा किए गए इस प्रकार के प्रयास से सामाजिक दशा में हुए परिवर्तनों के विषय में आर्यसमाज के महान् कार्यकर्ता इन्द्र विद्यावाचस्पति ने कहा है कि २०वीं शताब्दी के आरम्भ में उत्तरी भारत की सामाजिक दशा में हम बहुत बड़ा परिवर्तन पाते हैं।[१५५] इसी प्रकार दहेज आदि की हानिकारक प्रथाओं पर समाज सुधार की भावना का परोक्ष असर होने लगा था।[१५६] सारे समाज में एक खलबली-सी उत्पन्न हो गई जो सामाजिक क्रान्ति की पूर्व-पीठिका थी।[१५७]

इस प्रकार उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज द्वारा स्त्रियों के उत्थान के लिए किए गए अथक प्रयास के परिणामस्वरूप नारी समाज में प्रगतिशील विचारधाराओं का जन्म हुआ। उनमें व्यापक परिवर्तन आया। आर्यसमाज की कन्या पाठशालाओं में अधिक संख्या में कन्यायें शिक्षा ग्रहण करने लगीं। इससे वे भारतीय संस्कृति की शिक्षा के साथ ही साथ आधुनिक ज्ञान विज्ञान की शिक्षाओं से अवगत हुईं। जिसके फलस्वरूप उनमें अपनी स्वतन्त्रता और अधिकारों के प्रति जागरूकता व स्वाभिमान का उदय हुआ और एक नवीन चेतना जागृत हुई। इसके साथ ही समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों का बोध भी हुआ। इस समय महिलाएँ शिक्षिता ही नहीं बल्कि वेद विदुषी भी बनीं।[१५८] आर्यसमाज के अधिवेशनों में प्रतिनिधि बनकर पर्याप्त संख्या में सम्मिलित भी होती थीं, जेल की यात्राएँ भी सत्याग्रह करने के कारण कीं।

**जात पाँत विरोध तथा अछूतोद्धार–** भारतीय समाज की दशा १९ वीं सदी में अत्यधिक शोचनीय हो गयी थी। इसका कारण यह था इस समाज में अनेक कुप्रथाओं, कुसंस्कारों व कुरीतियों ने घर कर लिया था। इसमें से प्रमुख जात-पाँत, ऊँच-नीच और छूत-अछूत का विचार इस युग के भारतीय समाज की महत्त्वपूर्ण कुरीतियाँ थे। समाज अनेक ऐसी जातियों में विभक्त था, जिनमें रोटी-बेटी का सम्बन्ध नहीं हो सकता था। खान-पान, रहन-सहन और आचार-विचार के सम्बन्ध में प्रत्येक जाति के अपने-अपने पृथक् नियम थे, जिनका अतिक्रमण कर सकना किसी के लिए सुगम नहीं था।[१५९] आर्यसमाज ने शुद्धि और दलितोद्धार के जो कार्य आरम्भ किए, उनमें सबसे बड़ी बाधा पैदा करने वाला हिन्दू जाति में फैला हुआ जात-पाँत का कुसंस्कार था।[१६०] स्वामी दयानन्द

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



ने जन्मना जाति-पाँतवाद, अस्पृश्यता या छुआछूतवाद को भारतीय समाज के भयंकर कलंक बताए थे और उन्होंने उसी समय कहा था कि राष्ट्र से यदि इन कलंकों को दूर न किया जायगा, तो विदेशी सम्प्रदायों का आतंक इस देश पर रहेगा ही।[१६१] समाज को उनका यह सन्देश उनके दूरदर्शी व्यक्तित्व का परिचायक है। उन्होंने जन्म के अनुसार माने जाने वाली जाति का खंडन और गुण कर्म स्वभाव के अनुसर वर्ण व्यवस्था का समर्थन किया।[१६२] जब उन्होंने अपना कार्य प्रारम्भ किया उस समय विनाशक जाति व्यवस्था सबसे खराब स्थिति में थी।[१६३]

आर्यसमाज का सिद्धान्त वैदिक उद्घोष ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' पर आधारित था। सम्पूर्ण संसार को आर्य बनाना उसका लक्ष्य था। आर्य एक सुसंघटित सुसंस्कृत जाति थी।[१६४] बाद में आपस में द्वेष और कलह उत्पन्न हुए- धर्म के नाम पर,सम्प्रदाय के नाम पर, स्वार्थ और सत्ता के नाम पर।[१६५] समाज धीरे-धीरे कई जातियों, उपजातियों में विभक्त होता गया। जबकि आर्षकाल में केवल वेद ही मनुष्य का स्वाभाविक सहज धर्म था। जन्मना जाति-पाँति नहीं थी। सब संघटन सूत्र में आबद्ध आर्य थे ।[१६६]

वैदिकयुग की वर्ण व्यवस्था का रूप अब अत्यधिक विकृत हो चुका था। वर्णों का आधार गुण, कर्म, स्वभाव न होकर जन्म रह गया था।[१६७] जाति व्यवस्था के इतिहास में वैदिकयुग सबसे लम्बा रहा है। इस युग में समाज विभिन्न वर्गों में अवश्य विभाजित हो गया था लेकिन विभिन्न वर्णों के बीच विवाह, व्यवसाय और खान-पान के प्रतिबन्ध अधिक कठोर नहीं थे।[१६८] वैदिकयुग के संबंध में पता चलता है कि इस युग में वर्ण व्यवस्था के आधार पर कठोरता बिलकुल न थी और न ही ऊँच-नीच की भावना इतनी गम्भीर थी। पेशों के सम्बन्ध में कोई प्रतिबन्ध न था और न ही खाने-पीने के सम्बन्ध में, जन्म पर भी अधिक बल नहीं दिया जाता था।[१६९] ब्राह्मणों का काम पूजा करना और शिक्षा देना था, पर वे भी क्षत्रियों का कार्य करते थे, जैसा कि परशुराम की जीवनी से पता चलता है। इसी प्रकार विश्वामित्र एक क्षत्रिय होतें हुए भी पुजारी का काम करते थे।[१७०]

वैदिकयुग की वर्ण व्यवस्था जन्म और कर्म दोनों पर आधारित थी। आरम्भ में आर्य तथा अनार्यों में भेद करने के लिए तथा इन दोनों में पाए जाने वाली प्रजातीय व सांस्कृतिक अन्तरों के आधार पर सामाजिक दूरी को बनाए रखने के लिए वर्ण व्यवस्था आर्यों के मस्तिष्क की एक उपज थी जिसका कि आधार जन्म और कर्म दोनों ही था।[१७१] इस आधार पर भारतीय संस्कृति की स्थिरता का यदि कोई सबसे दृढ़ आधार ढूँढ़ा जाए तो वह वर्ण-व्यवस्था ही है जिसमें सम्पूर्ण समाज को कार्यात्मक रूप से चार बड़े समूहों-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में विभाजित किया गया था जबकि जाति व्यवस्था एक ऐसा संगठन है जिसका निर्माण हजारों जातियों के संस्तरण द्वारा हुआ है।[१७२]

वैदिकयुग की वर्ण व्यवस्था का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि आज एक-एक वर्ण के अन्तर्गत असंख्य जातियों, उपजातियों का निर्माण हो गया है।[१७३] १९वीं शताब्दी एक ऐसा काल था जिसमें वर्ण-व्यवस्था जन्म के आधार पर निर्धारित होकर फल-फूल रही थी।[१७४] इस सम्बन्ध में क्रान्तिकारी सचित्र मासिक पत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



युगान्तर के एक लेख (सन्-१९३३) से स्पष्ट है कि दुराचार, व्यभिचार, वेश्यावृत्ति, मद्यपान, गृहस्थों में अशान्ति, विधवाओं और अनाथों का नारकीय जीवन, अशिक्षा का साम्राज्य, हिन्दुओं में फूट, स्त्रियों का अपहरण और शिक्षित युवकों तथा युवतियों का मुसलमान बनना, इन सबका मूल कारण कमबख्त जातपाँत ही है।[१७५] जातपाँत ने हिन्दू समाज को रसातल को पहुँचा रक्खा है। इसी जातपाँत का कुफल छूत-छात है।[१७६] हिन्दुओं की अधोगति और दासता का मुख्य कारण जातपाँत है। यह हमारी राष्ट्रीय समाजिक तथा राष्ट्रीय कुरीतियों की जड़ है।[१७७]

आर्यसमाज ने ''गुण-कर्म-स्वभावेन'' वर्णव्यवस्था का समर्थन करते हुए अपनी प्रबल शक्ति से जन्मगत जातिवाद पर जबरदस्त प्रहार किया। ऊँच-नीच, छूत-छात के भेद को मिटाने के लिए उत्तर प्रदेश में वृहद् आन्दोलन चलाए। इस समाज ने वेद के आधार पर घोषणा की कि जन्म से सभी मनुष्य समान हैं। मनुष्य जाति में किसी भी प्रकार का कोई भेदभाव खड़ा करना धर्म विरुद्ध है।[१७८] क्योंकि यह वेद वाक्य किसी मनुष्य के लिखे नहीं है, अपौरुषेय हैं। इस कथन की पुष्टि में श्रीमत् शंकराचार्य ने वृहदारण्यक उपनिषद् से यह वचन दिया-अस्य महतो भूतस्य निःश्रवसिमेतद्यहग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो अथर्ववेदः। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद इस महत् भूत (परमपुरुष) के निःश्वास है ।[१७९] वेदों के उपदेश सार्वभौम हैं।[१८०]

आर्यसमाज ने बताया कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि वर्ण हैं और ये कर्मानुसार निश्चित होते हैं। ब्राह्मण का पुत्र शूद्र और शूद्र का पुत्र ब्राह्मण भी बन सकता है। ईश्वर ने सबको समान बनाया है।[१८१] दलितोद्धार ट्रैक्ट में इस सन्दर्भ में उल्लेख है कि जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं वे ही ब्राह्मणादि नीच कर्म भी करते हैं और नीच भी उत्तम वर्ण के गुण कर्म स्वभाव वाला होवे तो उसको भी उत्तम वर्ण में और जो उत्तम वर्णस्थ होकर नीच काम करे तो उसको नीच वर्ण में गिनना अवश्य चाहिए।[१८२] यह मनुस्मृति के अंश से भी स्पष्ट है-

**शूद्राब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।**
**क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च ।।**

अर्थ- जो शूद्र कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के समान गुण, कर्म, स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाए, वैसे ही जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य कुल में उत्पन्न हुआ हो और उसके गुण·कर्मस्वभाव शूद्र के सदृश हों तो वह शूद्र हो जाए, वैसे ही क्षत्रिय, वैश्य के कुल में उत्पन्न होके ब्राह्मण व शूद्र के समान होने से ब्राह्मण और शूद्र भी हो जाता है।[१८३] स्वामी दयानन्दजी ने अपने गुरुकुलों में गुणकर्मानुसार चातुर्वर्ण्य की स्थापना के लिए प्रमुख नियम प्रतिपादित किए थे- राजनियम और जातिनियम द्वारा यह अनिवार्य हो कि बालकों और बालिकाओं को आठ वर्ष की आयु हो जाने पर गुरुकुलों (आवासीय शिक्षणालयों) में पढ़ने के लिए भेज दिया जाए। शिक्षा सबके लिए अनिवार्य हो और एक समान हो, चाहे कोई द्विज की सन्तान हो और चाहे शूद्र या अतिशूद्र की।[१८४]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज ने महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित इस विचारधारा को ध्यान में रखते हुए आगे बृहद् आन्दोलन चलाया और जात-पाँत, छुआछूत जैसी समाज में प्रचलित विचारधारा को दूर करने का अथक प्रयास किया।

आर्यसमाज ने उत्तर प्रदेश में जात-पाँत, छुआछूत, अस्पृश्यता के विरुद्ध व्यापक आन्दोलन चलाया। इसके अन्तर्गत आर्यसमाज की ओर से स्थान-स्थान पर अछूत वर्ग के बच्चों के लिए पाठशालाएँ खोली जानी लगीं और तथाकथित उच्च वर्णस्थ जनों के बालकों के साथ अछूतों के बालकों की पठन-पाठन व्यवस्था इन शिक्षा संस्थाओं में की जाने लगी थीं।[१८५] उत्तर प्रदेश के बरेली नगर में आर्यसमाज के कर्मठ नेता डॉ. श्यामस्वरूप सत्यव्रत ने अकेले अपने प्रयत्न से ३२ कल्याणी पाठशालाएँ खोली थीं।[१८६] इसके अतिरिक्त दलित वर्ग की शिक्षा के लिए प्रयाग, मैनपुरी हरदोई, हापुड़, सरधना, मुरादाबाद, बिजनौर, गोरखपुर, चन्दौसी आदि में पाठशालाएँ खोली गयी थीं।[१८७] प्रयाग में आर्यसमाज द्वारा १२ नवम्बर १९२० ई० को एक कल्याणी पाठशाला खोली गई थी। वहाँ अछूतों के बालक वेदमन्त्रों का उच्चारण किया करते थे।[१८८] प्रो० राममूर्ति शर्मा (आधुनिक भीम) के कर कमलों द्वारा सन्-१९३६ ई० में हरिजन पाठशाला वाराणसी में खोली गयी थी।[१८९]

कल्याणी पाठशालाओं में अछूत जातियों के बच्चों की पढ़ाई की समुचित व्यवस्था थी।[१९०] इसमें उच्च वर्णस्थ व अछूत वर्ग के बच्चों की समान रूप से व्यवस्था की गयी थी। इसमें सबको समान आसन, समान वस्त्र और समान भोजन की व्यवस्था थी। ये गुरुकुलीय शिक्षा व्यवस्था के महत्त्वपूर्ण नियम थे।[१९१]

आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व उत्तर प्रदेश छूत-छात का भारी गढ़ था। हिन्दुओं में अपने ही अनेक वर्गों के साथ खान-पान करना तो दूर उनको छूना तक पाप समझा जाता था। अछूत से पल्ला भिड़ जाने मात्र पर भी स्नान करने में ही शुचिता मानी जाती थी। अपने को अछूतों से उच्च मानने वाले हिन्दुओं के वर्ग उनके बालक-बालिकाओ को अपने बच्चों के साथ पाठशालाओं में पढ़ने तक नहीं देते थे। उनको अपने मंदिरों में प्रविष्ट होने अथवा धर्मशालाओं में ठहरने नहीं देते थे, यहाँ तक कि सार्वजनिक कूपों से जल तक नहीं भरने देते थे।[१९२] स्त्रियों और शूद्रों को वेद पढ़ने, पढ़ाने और सुनने का अधिकार नहीं था।[१९३] इस तरह की समाज में असमानता से भारतीय समाज निष्क्रिय व शक्तिहीन हो गया था।[१९४]

अंग्रेजों के हितों को पूरा करने के लिए जातिगत संकीर्णता सबसे अधिक लाभप्रद थी। भारतीयों में इसे बनाए रखने के लिए अंग्रेजों ने अथक प्रयास किया और अस्पृश्यता को भी खूब बढ़ावा दिया। जिससे इस देश की एक बड़ी जनसंख्या के मन में हिन्दुओं के प्रति विरोध बना रहे।[१९५] सन्-१७६७ ई० में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जातीय कचहरियों की स्थापना को भी मान्यता दे दी थी। जिसके फलस्वरूप प्रत्येक जाति और उपजाति की अपनी जाति पंचायतें बनने लगी थीं और शासन की ओर से हिन्दुओं के सामाजिक और पारस्परिक जीवन में भी हस्तक्षेप करने का अधिकार दे दिया गया था।[१९६] परिणामस्वरूप भारतीयों में जातिगत संकीर्णता और द्वेष की भावना बढ़ती गयी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज ने भारतीयों के मन में प्रविष्ट कर गयीं जात-पाँत, छुआछूत व ऊँच-नीच की भावना को दूर करने का अथक प्रयास किया। पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि आर्यसमाज ने इसके लिए पाठशालाएँ खोलीं। इसमें समानता के नियम प्रतिपादित किए गए थे। पाठशालाओं की स्थापना के साथ ही साथ जातिगत संकीर्णता को दूर करने के निमित्त आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा स्थान-स्थान पर व्याख्यान दिए गए। सामूहिक सहभोज का कार्यक्रम चलाया गया। सभा की स्थापना व सम्मेलनों का आयोजन किया गया और उनमें सम्बन्धित प्रस्ताव पारित हुए। प्रान्त में तत्सम्बन्धी ट्रैक्ट्स वितरण किए गए। आर्यसमाज द्वारा जात-पाँत जैसी कुप्रथा के विरूद्ध किए गए इस प्रकार के प्रयास से भारतीय समाज में व्यापक परिवर्तनों का होना स्वाभाविक था।

आर्यसमाज के व्याख्यानों में यह प्रचार किया जाता था कि किसी को अछूत मानना धर्मविरुद्ध है। समाज में छुआछूत व ऊँच-नीच का भेदभाव अनुचित है। सबको विद्या पढ़ने का अधिकार है और मनुष्यों की सामाजिक स्थिति उनके गुण कर्म व योग्यता के अनुसार ही निर्धारित की जानी चाहिए।[१९७] एक व्याख्यान में आर्यसमाज के प्रबल समर्थक व सक्रिय कार्यकर्ता लाला लाजपत राय ने कहा कि आर्यसमाज दलित श्रेणियों को द्विज बनाकर अपने अन्दर सम्मिलित करता है। वह उनमें से जो योग्य हैं उन्हें गायत्री का उपदेश देता है, यज्ञोपवीत पहनाता है, होम करने का अधिकार देता है और उनके साथ सहभोज तथा विवाह के सम्बन्ध को जारी करता है।[१९८] बाबू ज्योतिस्वरूप (सचिव- देहरादून आर्यसमाज) के आवास पर एक व्याख्यान (१८ अक्टूबर सन्-१९०९ ई०) में उन्होंने कहा कि दलित जातियों की स्वतन्त्रता से एक संगठित हिन्दू जाति की शक्ति बढ़ेगी और इस देश में उत्पन्न प्रत्येक समस्याओं से छुटकारा मिलेगा। इस अवसर पर गुरुकुल कांगड़ी के अधिकांश छात्र उपस्थित थे।[१९९]

**सामूहिक सहभोज-** आर्यसमाज के सामूहिक सहभोजों में सब वर्णों और जातियों के स्त्री-पुरुष एक साथ बैठकर भोजन करते थे और भोजन बनाने तथा परोसने वाले व्यक्ति भी सब जातियों हुआ करते थे।[२००] इसी तरह का एक ब्रह्मभोज सन्-१९०९ में पं. केशवदेव शास्त्री जो आर्यसमाज के अवैतनिक प्रचारक और मुख्य कार्यकर्ता थे, जिन्होंने आर्यकुमार सभा की बुनियाद डाली थी। भारतवर्षीय आर्यकुमार परिषद् के जन्मदाता एवं साप्ताहिक नवजीवन नामक पत्र के संस्थापक भी थे, के प्रयत्न से बनारस, (वर्तमान वाराणसी) में हुआ था। जिसमें सभी वर्गों और जातियों के लोगों ने मिलकर एक स्थान पर बैठकर भोजन किया। इस सहभोज की आर्यसमाज में अनुकूल और प्रतिकूल खूब चर्चा हुई। जिन लोगों के मन में अभीं जन्मगत जात-पाँत के संस्कार विद्यमान थे, उन्होंने इस ब्रह्मभोज की बहुत निन्दा की।[२०१]

आर्यसमाज द्वारा चलाए गए सामूहिक सहभोजों के कार्यक्रमों के फलस्वरूप अछूतों को भी समाज में धीरे-धीरे समानता का अवसर मिलना प्रारम्भ हुआ। आर्यसमाज के विविध कार्यक्रमों में अछूत वर्ग बड़ी संख्या में बिना संकोच के सम्मिलित होते थे। जिला अलीगढ़, औरंगाबाद ग्राम के कर्मठ प्रभावशाली कार्यकर्ता ठाकुर खानसिंह ने आर्यसमाज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



में अछूत वर्ग के सामूहिक प्रवेश के लिए आन्दोलन चलाया। बरौठा ग्राम में विशाल यज्ञ रचकर इनको आर्यसमाज में दीक्षित किया गया।[२०२] अछूतों को शुद्धि द्वारा आर्य बनाया गया और इनके साथ सहभोज की व्यवस्था भी किया गया था।[२०३]

अछूतों के उद्धार तथा उन्हें मानवोचित स्थिति व अधिकार दिलाने के निमित्त हलदौर (जिला-बिजनौर) के प्रतिष्ठित आर्यसमाजी लाला ठाकुरदास ने जिले के अनेक नगरों में छुआछूत के विरुद्ध प्रचार कराया और सन्-१९२६ ई० में बिजनौर और हलदौर में अछूतोद्धार विषय पर दो कान्फ्रेंस कराइ। जिनमें बहुत से अछूतों को यज्ञोपवीत धारण कराके आर्यसमाज में प्रविष्टि किया गया और उनके हाथ से मिठाई बँटवायी गयी जिसे सबने प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण किया।[२०४] ठाकुरदास के प्रयत्न से ही २६ जून सन्-१९२६ ई० को नजीबाबाद में दलित वर्ग और द्वि-जातियों के बीच सहभोज का आयोजन हुआ था। उस दिन नगर के सब मुख्य-मुख्य कुओं पर अछूतों ने पानी भरा और आचमन किया। अन्त में आर्यसमाज मन्दिर में एकत्र होकर सभी ने एक पंक्ति में बैठकर (जिनमें ब्राह्मण, ठाकुर, वैश्य, चमार आदि सम्मिलित थे) दाल-रोटी का भोजन भी किया।[२०५]

सन्-१९२८ ई० में ठाकुरदास द्वारा बुआपुर ग्राम में एक ऐतिहासिक यज्ञ रचा गया और अनेक ग्रामों के लगभग ५०० चमारों को आर्यसमाज में दीक्षित किया गया और अनेक नवयुवकों को यज्ञोपवीत धारण कराए गए।

पं. शिवदयालु इस यज्ञ में स्वयं उपस्थित थे और उन्होंने बरेली के प्रसिद्ध आर्यविद्वान् पं. बिहारीलाल शास्त्री काव्यतीर्थ के साथ अछूतों को दीक्षा दिलाने में भाग लिया था। दीक्षा के उपरान्त लगभग १००० आर्य जनता ने सहभोज में भाग लिया। भंगी, चमारों के हाथ से दाल-भात की प्रसादी सभी ने ग्रहण की।[२०६] इस प्रकार लाला ठाकुर दास द्वारा बिजनौर जिले में दतिलोद्धार के लिए जो कार्य किया गया। उसके कारण वहाँ एक प्रकार की सामाजिक क्रान्ति उत्पन्न हो गयी थी।[२०७] जबकि इस जिले में सन्-१९२१ ई० की जनगणना के अनुसार चमारों की संख्या १,३६,५४४ थी। जिले के सम्पूर्ण आबादी के वे १७ प्रतिशत और हिन्दुओं की जनसंख्या के २३.४ प्रतिशत थे।[२०८] चमारों को सार्वजनिक कुओं से पानी भरने के अधिकार को लेकर बिजनौर आर्यसमाज को अनेक मुकद्दमे लड़ने पड़े थे और अन्ततः सरकार ने अछूतों के इस अधिकार को स्वीकार कर लिया। अछूतों के ये मुकद्दमे बिजनौर जिला उपप्रतिनिधि सभा के तत्कालीन प्रधान बाबू जगन्नाथशरण वकील बिना शुल्क लिए लड़े थे।[२०९]

आर्यसमाज के सामूहिक सहभोज का आयोजन सन्-१९३० ई० में कुम्भ के अवसर पर आर्यसमाज मन्दिर चौक, प्रयाग में स्वामी रामानन्दजी की अध्यक्षता में हुआ था। इसमें अछूत भाइयों के साथ-साथ अनेक आदरणीय नेता जैसे- पं. जवाहरलाल नेहरू, श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन और श्री कैलाशनाथ काटजू भी उपस्थित थे।[२१०]

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन राजनैतिक क्षेत्र के एक प्रसिद्ध कार्यकर्ता थे। उन्होंने संयुक्त प्रान्त में अछूतों के सम्बन्ध में बहुत कुछ कार्य किया है। उन्होंने अभ्युदय में एक लेख निकाला था- अछूत विषयक काम के दो मुख्य विभाग हैं- प्रथम स्वयं अछूतों की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



बुरी आदतों को ठीक करना तथा सामाजिक और नैतिक रीति से ऊपर उठाना, द्वितीय- उच्च जातियों के भावों को पलटना जिसमें वह अछूतों के साथ सही व्यवहार करें।[२११]

इस प्रकार जनसाधारण जनता में लोकप्रिय और अत्यधिक प्रभावशाली नेताओं के आर्यसमाज के सामूहिक सहभोज के कार्यक्रमों में उपस्थित होना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। ऐसे आयोजनों से अछूतों की स्थिति में व्यापक परिवर्तन आया और आर्यसमाज के आयोजनों में समान भागीदारी का अवसर भी उन्हें प्राप्त हुआ।

यहाँ यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि आर्यसमाज के भी कतिपय आर्यविद्वान जन्मगत जाति व्यवस्था के पक्षधर थे और वे किसी दूसरी जाति के यहाँ भोजन नहीं कर सकते थे। जन्मगत जाति व्यवस्था की प्रमुखता आर्यसमाज में भी व्याप्त थी। क्रान्तिकारी युगान्तर के एक लेख से स्पष्ट है कि- संयुक्त प्रान्त के बहुत से साधारण आर्यसमाजी नहीं, बड़े-बड़े आर्योपदेशक आज (सन्-१९३३) भी स्वयंपाकी तथा स्वयंपायी हैं। वे दूसरे जाति के किसी आर्यसमाजी के यहाँ भोजन नहीं कर सकते।[२१२] इन लोगों का खुद उन सिद्धान्तों (गुण-कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था) पर विश्वास नहीं, जिसका वे प्रचार करते थे।[२१३] अजमेर की अर्द्ध निर्वाण शताब्दी कमेटी जात-पाँत तोड़क सम्मेलन रखने से इन्कार किया था,[२१४] क्योंकि यह ठेठ आत्मसुधार था इसमें जन्माभिमान छोड़ना मुश्किल कार्य था। क्रियात्मक प्रमाण देने से घबराहट होता था।[२१५] फिर भी आर्यसमाज के सामूहिक सहभोज के कार्यक्रम अछूत वर्ग में उत्पन्न हीन भावना को दूर करने में सहायक सिद्ध हुआ। इसके साथ ही उन्हें उच्च वर्गों के बीच उठने-बैठने और भोजन करने का अवसर भी प्राप्त हुआ।

**सम्मेलन सभा व समारोह –** आर्यसमाज ने जात-पाँत, ऊँच-नीच, छूतछात जैसी कुरीतियों को दूर करने के लिए जहाँ उत्तर प्रदेश में अनेक व्याख्यान दिए, सामूहिक सहभोज के कार्यक्रम आयोजित किए, वहीं अनेक सम्मेलन किए और समाजों की स्थापना भी की। इसी तरह एक जाति-भेद निवारक सम्मेलन डॉ. श्यामस्वरूप सत्यव्रत (प्रोफेसर धर्मेन्द्रनाथ तर्कशिरोमणि, आर्यसमाजी मेरठ, प्रोफेसर- मेरठ कालेज) की अध्यक्षता में रात्रि २७ दिसम्बर १९२१ ई० को गुरुकुल वृन्दावन में आयोजित हुआ था। इसमें अध्यक्ष द्वारा कहा गया कि यदि आर्यसमाज के अस्तित्व को बरकरार रखना है तो जात-पाँत को खत्म करना होगा।[२१६]

आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश द्वारा २५ दिसम्बर १९२२ ई० को जाति-भेद निवारक संघ की स्थापना की गयी थी। इस दिशा में अनेक आर्य नवयुवक नेताओं ने दृढ़तापूर्वक पग बढ़ाए यथा- पं. धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री (प्रसिद्ध आर्यनेता- बिजनौर), पं. महेन्द्रप्रताप शास्त्री आदि।[२१७] पं. धर्मेन्द्रनाथ ने जाति बन्धन तोड़कर अपना विवाह किया और मेरठ में जात-पाँत तोड़क मण्डल की स्थापना भी की। आपने अनेक पुस्तकें-पथ-प्रदीप, मुक्तधारा, सदाचार सन्ध्या, दिव्य दर्शन आदि भी लिखीं।[२१८] पं. महेन्द्रप्रताप शास्त्री ने सन्-१९४१ से १९४३ तक सभा के मंत्री और १५ वर्ष तक डी.ए.वी. कॉलेज, लखनऊ के प्रधानाचार्य,[२१९] आर्यप्रतिनिधिसभा की स्वर्ण जयन्ती-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मेरठ,सन्-१९३६, समारोह मन्त्री[२२०] के पद को सुशोभित किया। साथ ही आपने नारायण स्वामी अभिनन्दन ग्रन्थ, गंगाप्रसाद अभिनन्दन ग्रन्थ, आर्यसमाज परिचय आदि पुस्तकों का सम्पादन भी किया।[२२१] यह जाति-भेद निवारक संघ अन्तर्जातीय विवाह के लिए युवकों और युवतियों को प्रेरणा प्रदान करता था और जन्म के आधार पर जाति-भेद का विरोधी था।[२२२] आर्यसमाज के इन नवयुवकों ने इस संघ के कार्यकलाप में क्रियात्मक रूप से हाथ बँटाया था।[२२३]

आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेताओं में लाला लाजपत राय, स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज प्रमुख थे। इन लोगों ने जात-पाँत को जड़ से उखाड़ फेंकने का प्रयास किया। गुरुकुल और डी.ए.वी.जैसी प्रभावपूर्ण शिक्षण संस्थाओं के छात्रों को अपने नाम के आगे जाति या गोत्र लिखने पर सख्त प्रतिबन्ध था।[२२४] स्वामी श्रद्धानन्द ने (अछूतों की समस्या- ट्रैक्ट के अंश) ईसाइयों के समान मुसलमान भी अछूत समझे जाने वाले करोड़ों हिन्दुओं को आत्मसात् करने के लिए प्रयत्न करने लगे थे, पर विशेष ध्यान दिया और इसी प्रयोजन से सन्-१९२१ ई० में उन्होंने विधिपूर्वक दलितोद्धार सभा की स्थापना की।[२२५] इस सभा के प्रधान स्वामी श्रद्धानन्द और मन्त्री डॉ. सुखदेव निर्वाचित हुए। डॉ. सुखदेव स्वामीजी के जमाता थे और चिरकाल तक गुरुकुल कांगड़ी में उन्होंने पूर्णतया निष्काम भाव से चिकित्सक के रूप में कार्य किया था। गुरुकुल कांगड़ी के चिकित्सालय में कम्पाउण्डर का कार्य करने के लिए उन्होंने अछूत वर्ग के एक युवक को प्रशिक्षित किया था और वहाँ वही चिकित्सा कार्य में डॉ. सुखदेव का प्रधान सहायक था।[२२६] बाद में यह दलितोद्धार सभा स्वामीं श्रद्धानन्द के बलिदान के पश्चात् "अखिलभारतीयश्रद्धानन्ददलितोद्धारसभा" हो गयी।[२२७]

आर्यसमाज और विशेषतया स्वामी श्रद्धानन्द के नेतृत्व में काँग्रेस से पृथक् व स्वतन्त्र रूप में तीन आन्दोलन सन्-१९२२ के लगभग प्रारम्भ हुए थे। उनमें शुद्धि और हिन्दू संगठन के साथ ही दलितोद्धार आन्दोलन प्रमुख था। इनमें अपनी सब शक्ति और समय लगाने के लिए स्वामी श्रद्धानन्द ने काँग्रेस से त्यागपत्र (सन्-१९२३) दे दिया था।[२२८] इसके पहले स्वामी श्रद्धानन्दजी के जोर देने पर काँग्रेस ने अपने प्रोग्राम में अछूतोद्धार को शामिल कर लिया था।[२२९] महात्मा गाँधी ने स्वामीजी और लाला लाजपतराय की प्रेरणा से इस दिशा में अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक भगीरथ प्रयत्न किए।[२३०] महात्मा गाँधी और आर्यसमाज दोनों अछूतोद्धार या अस्पृश्यता निवारण के लिए प्रान्त में निरन्तर प्रयासरत थे।

राज्य शासन में अस्पृश्य दलित जातियों को हिन्दुओं से पृथक् प्रतिनिधित्व दिए जाने के प्रश्न पर महात्मा गाँधी ने इसका प्रबल विरोध किया था। आर्यसमाज ने महात्मा गाँधी के विचारों का समर्थन किया। सन्-१९३१ ई० में महात्मा नारायण स्वामी के सभापतित्व में सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन बरेली में आयोजित हुआ था।[२३१] सम्मेलन में अनेक प्रस्ताव स्वीकृत किए गए थे। उनमें से प्रस्ताव संख्या-३ में आर्यसमाज द्वारा महात्मा गाँधी के विचारों का किया गया समर्थन है- यह सार्वदेशिक सम्मेलन राज्य शासन में कही जाने वाली अस्पृश्य दलित जातियों को हिन्दुओं से पृथक् प्रतिनिधित्व को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विशेषतया दलितों और साधारणतया हिन्दुओं के धार्मिक तथा सामाजिक संगठन के लिए अत्यन्त हानिकारक समझता है और प्रतिनिधित्व को स्वीकार न करने के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी का समर्थन करता है।[२३२]

बरेली सम्मेलन प्रस्ताव संख्या-५ के अनुसार- दलितोद्धार के विषय में कहा गया कि आर्यसमाजों, प्रान्तीय सभाओं और सार्वदेशिक सभा को कुछ समय तक अपनी शक्ति इसप्रकार केन्द्रित करनी चाहिए कि जिसमें इस महती समस्या का शीघ्र ही हल हो और हिन्दू समाज इस कलंक से मुक्त हो सके।[२३३] जाति उपसूचक शब्द प्रत्येक आर्य (नर-नारी) को अपने नाम के पीछे न लगाने का प्रस्ताव भी इसमें पास हुआ था।[२३४]

बरेली आर्य महासम्मेलन के पूर्व महर्षिदयानन्दजन्मशताब्दीसमारोह मथुरा में मनाया (सन्-१९२५) गया था। इसमें अनेक सम्मेलन आयोजित हुए और प्रस्ताव पारित किए गए थे। दिल्ली की दलितोद्धार सभा की ओर से यहाँ दलितोद्धार सम्मेलन हुआ। महात्मा हंसराज इसके सभापति थे। अस्पृश्यता विरोध और दलितोद्धार के पक्ष में व्याख्यान हुए। इस सम्मेलन का उद्घाटन स्वामी श्रद्धानन्दजी के भाषण से हुआ था।[२३५] २० फरवरी को बम्बई के डाक्टर कल्याणदास देसाई के सभापतित्व में जात-पाँत तोड़क मण्डल का अधिवेशन हुआ था। कई प्रस्ताव स्वीकार हुए जिनमें आर्य जाति-पाँति तोड़कर विवाह सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया था। प्रस्तावों पर स्वामी श्रद्धानन्द, बाबू घासीराम, स्वामी मुनीश्वरानन्द, स्वामी सत्यदेव, इन्द्र विद्यावाचस्पति और पं. धर्मदेव सिद्धान्तालंकार आदि के भाषण हुए।[२३६] स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा इस आर्य-सम्मेलन के अधिवेशन में आर्य विवाह बिल प्रस्तावित होकर निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत किया गया था- यह आर्यसम्मेलन निश्चय करता है कि शीघ्र ही लैजिस्लेटिव असेम्बली में आर्य विवाह बिल को उपस्थित कराया जावे ताकि आर्यसमाज के प्रचार में जो बाधाएँ उपस्थित होती हैं, उनका निवारण हो सके और जनता में गुण, कर्म और स्वभावानुसार विवाह आदि का प्रचार हो सके।[२३७]

आर्य-विवाह बिल सिलेक्ट कमेटी से होकर सन्-१९३७ ई० में श्री घनश्याम सिंह गुप्त (मध्यप्रदेश की ओर से असेंबली के सदस्य) द्वारा भारतीय धारा सभा में प्रस्तुत हुआ और काफी लम्बे वाद-विवाद के पश्चात् स्वीकार हुआ। इस कानून का मुख्य आदेश- चाहे हिन्दू कानून, प्रथा अथवा रिवाज कुछ भी हो, आर्यसमाजी पुरुष और स्त्री का कोई विवाह जो इस कानून के बनने से पूर्व अथवा पीछे आर्यसमाज की विधि से सम्पन्न हुआ हो, फिर चाहे व पुरुष और स्त्री भिन्न-भिन्न जातियाँ अथवा उपजातियों के हों या विवाह से पहले वह किसी हिन्दू धर्म के मानने वाले हों, नियम विरुद्ध नहीं माना जाएगा।[२३८] इस कानून से हिन्दू समाज की एक बहुत कठिन समस्या हल हो गई और समाज सुधार का द्वार खुल गया।[२३९] जात-पाँत बन्धन इस कानून से अत्यधिक कमजोर हुआ और इससे अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन मिला।

शताब्दी महोत्सव के विषय में उल्लेख है कि आर्यसमाज का इससे बड़ा कोई अधिवेशन आज तक (सन्-१९३१ ई०) नहीं हुआ और न अन्य किसी सोसायटी का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इससे पूर्व इतना बड़ा समारोह कभी हुआ था।[२४०] समारोह की सफलता का अधिकतर श्रेय उत्तर प्रदेश के श्रीनारायण स्वामी (जन्म अलीगढ़) को जाता है।[२४१] इन्होंने आर्यसमाज के इतिहास में एक अद्वितीय आर्य समारोह का रूप दिया।[२४२]

आर्यसमाज द्वारा अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन किया गया था लेकिन इस विचारधारा का पं. मदनमोहन मालवीय ने विरोध किया। उन्होंने पूना में अपने भाषण के दौरान कहा कि अन्तर्जातीय भोजन और विवाह के सम्बन्ध में जो प्रतिबन्ध चले आ रहे हैं उनके उड़ाने को मैं पसन्द नहीं करता।[२४३] आगे उन्होंने कहा कि वर्णभेद को मिटाया नहीं जा सकता।[२४४] उन्होंने महर्षि द्वारा प्रतिपादित गुण कर्म स्वभावानुसार वर्ण व्यवस्था का समर्थन किया था।[२४५] पं. मदनमोहन मालवीयजी की अध्यक्षता में बम्बई में अन्त्यजोद्धार विषय पर सभा हुई तथा अस्पृश्यता निवारण पर प्रस्ताव पारित हुआ (२५ सितम्बर १९३२)। हरिजनों को काशीविश्वनाथ आदि मन्दिरों में प्रवेश के अधिकार दिलाने का नेतृत्व भी मालवीयजी ने किया था।[२४६] इसके पूर्व सन्-१९२५ ई० में हिन्दू महासभा का अधिवेशन लाला लाजपतराय की अध्यक्षता में कलकत्ता में हुआ था। इस अधिवेशन में लाला रामप्रसादजी द्वारा ''सबके लिए वेदपाठ का अधिकार'' विषय पर एक प्रस्ताव रखा गया। कुछ सनातधर्मी प्रतिनिधियों में प्रस्ताव के विरोध में स्वर उभरने लगे थे। पं. मालवीयजी ने मध्य मार्ग निकालकर उस समय विवाद बढ़ने से रोका और कहा कि ''ईश्वर के दिए हुए प्रसाद सबके लिए सुलभ हैं।''[२४७] उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज द्वारा जात-पाँत के विरोध में आर्यसमाज चौक, प्रयाग से ट्रैक्ट्स वितरण किए जाते थे, उनमें से हिन्दुओं का हिन्दुओं के साथ अन्याय, आदि हिन्दू कौन, हिन्दुओं पर एक और आफत, दलितोद्धार, अछूतों का प्रश्न, हमारे बिछुड़े भाई, हिन्दू जाति के रक्षा के उपाय आदि प्रमुख थे।[२४८]

**गढ़वाल में अछूतोद्धार** – आर्यसमाज द्वारा चलाया गया उत्तर प्रदेश में अछूतोद्धार आन्दोलन गढ़वाल क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ और अन्ततः एक कानून द्वारा इस समाज को सफलता प्राप्त हुई। सन्-१९१२ से १९४७ तक उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज का जो प्रसार व विस्तार हुआ, उसका एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र गढ़वाल था।[२४९] गढ़वाल के निवासियों का एक बहुत बड़ा वर्ग उन अछूत समझे जाने वाले लोगों का था जिन्हें ''डूम''या 'डोम'' कहा जाता था। ये बढ़ई, लोहार, दर्जी आदि के विविध शिल्पों द्वारा अपना निर्वाह करते थे, समाज में इनकी स्थिति हीन समझी जाती थी।[२५०] लाला लाजपतराय ने इनके जीविका सम्बन्धी कार्यों को देखकर इन्हें शिल्पकार कहा। उन्होंने कहा कि ये उच्च कोटि के शिल्पकार हैं और इन्हें इसी नाम से पुकारा जाना चाहिए। तब से कुमायूँ और गढ़वाल के डूम शिल्पकार कहे जाने लगे।[२५१] गढ़वाल के डूम (शिल्पकार) लोग इस पार्वत्य प्रदेश के पुराने आदि निवासी थे। जिन लोगों को वहाँ ऊँचा (ब्राह्मण और राजपूत) माना जाता था, ''विट'' कहे जाते थे।[२५२] विटों के सम्मुख शिल्पकारों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति दयनीय थी। ये डूम या शिल्पकार लोग जीवन निर्वाह के लिए विटों पर आश्रित थे।[२५३]

आर्यसमाज ने गढ़वाल में डूमों की दुर्दशा को देखकर इन क्षेत्रों में अपने सिद्धान्तों का प्रचार प्रसार किया। सन्-१९१८ ई० में नजीबाबाद आर्यसमाज की ओर से दुगड्डा के समीप बोर ग्राम के डूमों में धर्म प्रचार प्रारम्भ किया गया था और ५०० के लगभग डूमों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



को यज्ञोपवीत धारण कराके आर्यसमाज में प्रविष्ट कर लिया गया।[२५४] उच्च जात्याभिमानी राजपूतादि ने शिल्पकारों के जो आर्यसमाजी बने थे, यज्ञोपवीत धारण किए थे, उनके यज्ञोपवीत तोड़े और क्रूर अत्याचार किए।[२५५] आर्यसमाज की ओर से यहाँ शिक्षणालय भी खोले जाने लगे थे और इस समाज के प्रभाव में वहाँ के कुछ सवर्ण जातियों के भी व्यक्ति आने लगे थे।[२५६]

डूमों को समाज में समुचित न्याय और समान स्थिति प्रदान करने के लिए आर्यसमाज गढ़वाल में निरन्तर प्रयासरत था। गढ़वाल की डोला-पालकी की ऐतिहासिक समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया। शिल्पकार वर्ग इस अधिकार से वंचित था। डूम या शिल्पकार वर्ग आदि वर-वधू को डोला-पालकी में ले जाने का प्रयास करता था तो विट् वर्ग उस पर टूट पड़ते थे। सन्-१९४०-४१ तक बारातों पर विटों के निरन्तर आक्रमण होते रहे।[२५७] इसके पूर्व यहाँ आर्यसमाज डूमों की दशा सुधारने के लिए निरन्तर आन्दोलन चलाता रहा। विटों का शिल्पकारों की बारातों पर निरन्तर आक्रमण से व्यग्र उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा के प्रधान श्री मदनमोहन सेठ ने प्रदेश की गवर्नमेण्ट को गढ़वाल की भयंकर स्थिति से परिचय कराया।[२५८] सन्-१९४२ ई० में पुनः बारातों पर खूनी आक्रमण किए गए।[२५९] आर्यप्रतिनिधिसभा ने सन्-१९४३ ई० में सारे प्रान्त का ध्यान गढ़वाल दिवस मनाकर आकर्षित किया। दुगड्डा में प्रान्त भर के आर्यसमाजों के प्रधान मन्त्रियों का सम्मेलन बुलाया गया था। पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, मन्त्री सार्वदेशिक सभा, बाबू पूर्णचन्द्र वकील प्रधान, सार्वदेशिक सभा एवं पं. हृदयनाथ कुंज लैन्सडाउन पधारे और समस्या हल करने का प्रयत्न किया किन्तु परिस्थिति में सुधार न आयी। अनेक आर्य उपदेशकों पर भीषण हमले किए गए।[२६०]

जुलाई-१९४५ ई० में, ग्राम कस्याली (उदयपुर) में डोला-पालकी के साथ आर्यों की एक बारात पर आक्रमण किया गया। इस बारात में आर्य उपदेशक पं. वेदव्रत तथा ब्रह्मचारी बालकराम साथ थे। वेदव्रतजी को मारा-पीटा गया और ब्रह्मचारीजी से ओउम् का झण्डा छीनकर उन्हें रस्से से बाँध दिया गया और फिर उन्हें थल नदी में डुबाने का प्रयत्न किया गया।[२६१] इस काण्ड से ६ अगस्त १९४५ ई० को पं. वेदव्रत एवं ब्रह्मचारी बालकराम ने डी.ए.वी. इण्टर कालेज दुगड्डा में भूख हड़ताल आरम्भ कर दी जो एक मास तक चला। आर्य नेताओं के आश्वासन पर हड़ताल समाप्त हुई।[२६२] इन दोनों आर्य नेताओं ने ऐसे अत्याचारों की आवाज महात्मा गाँधी एवं पं. जवाहरलाल नेहरू तक अनेक बार पहुँचायी थी। अन्त में सन्-१९४७ ई० में अस्पृश्यता निवारण कानून बनाकर सरकार ने इस समस्या का सदा के लिए अन्त कर दिया।[२६३]

आर्यसमाज द्वारा गढ़वाल में चलाए गए आन्दोलन के फलस्वरूप शिल्पकारों में वैदिकधर्म का प्रचार हुआ, यज्ञोपवीत धारण कराए गए, डोला-पालकी में वर-वधू को ले जाने के अधिकार प्राप्त हुए और इस कानून द्वारा विटों के अत्याचारों से छुटकारा भी मिला। उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 'सामाजिक असमर्थता निवारण कानून' जो बनाया गया था उसके फलस्वरूप नागरिक व सामाजिक जीवन में शिल्पकारों (आर्यों) को वे सब अधिकार प्राप्त हो गए जो सवर्ण विटों को प्राप्त थे।[२६४] गढ़वाल में आर्यसमाज की ओर से जो अछूतोद्धार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आन्दोलन चलाया गया था, उनमें श्रीजयानन्द भारतीय, पं. रेवानन्द (स्वामी सच्चिदानन्द), पं. तोताराम जुगराण, पं. रघुबर दयालु, महात्मा हंसराज, स्वामी श्रद्धानन्द, नजीबाबाद आर्यसमाज के धर्मेन्द्रनाथ आर्य, पं. आनन्दी लाल, मुंशी लक्ष्मीनारायण एवं पं. महेन्द्र प्रताप शास्त्री व पं. कृपाराम प्रमुख थे।

इस प्रकार उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज द्वारा जात-पाँत, छुआ-छूत, ऊँच-नीच की भावना के विरुद्ध चलाए गए व्यापक आन्दोलन के फलस्वरूप समाज में जागृति आनी प्रारम्भ हुई। भारतीय जनमानस में व्यापक परिवर्तन आया। जिन जातियों को वेदपाठ करने का अधिकार नहीं था, यज्ञोपवीत धारण करने की मनाही थी, सार्वजनिक कूपों से पानी नहीं ले सकते थे, शिक्षा से वंचित किया गया था, जन्मगत जाति व्यवस्था के कारण समाज में हीन व दयनीय स्थिति थी उन्हें सभी अधिकार प्राप्त हुए।

आर्यसमाज ने अछूत वर्ग को वेदपाठ करने, संस्कृत पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार दिया, यज्ञोपवीत धारण कराए, सार्वजनिक कूपों से पानी भरने का अधिकार दिलाया, पुरोहित वर्ग का कार्य करने के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया-जिसमें यज्ञ, हवन, विवाह संस्कार आदि सम्मिलित थे, शिक्षा में समानता का अवसर अपने शिक्षणालयों में प्रदान किया, अछूत वर्ग में उत्पन्न हुई हीनता की भावना को दूर कर उनमें स्वाभिमान की भावना जाग्रत किया, समानता का अवसर उपलब्ध कराकर सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाया। अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहित किया तथा उन्हें कानूनी अधिकार दिलाए। अछूत वर्ग को ईसाइयत और मुस्लिम सम्प्रदाय में जाने से रोका। मनुष्यों की सामाजिक स्थिति उनके गुण कर्म व योग्यता के अनुसार निर्धारित करने का प्रचार प्रसार किया । आर्यसमाजस्थापना- शताब्दीसमारोहस्मारिका में आर्यसमाज द्वारा चलाए गए अछूतोद्धार आन्दोलन के विषय में उल्लेख है कि आर्यसमाज द्वारा अब तक समाज सुधार के जितने कार्य किए गए अथवा किए जा रहे हैं उनमें अछूतोद्धार अथवा अस्पृश्यता निवारण का कार्य महंत्त्वपूर्ण रहा है।[२६५]

**आर्यसमाज व अन्य समाज हितकारी कार्य–** आर्यसमाज, उत्तर प्रदेश में जहाँ वैदिकधर्म के प्रचार के लिए सदैव प्रयत्नशील था वहीं शुद्धिकार्य, हिन्दू संगठन, जात-पाँत विरोध तथा नारी जागरण व अछूतोद्धार के लिए व्यापक आन्दोलन चलाया। सामाजिक न्याय व समता की स्थापना के लिए निरन्तर अथक प्रयास किया। शिक्षा के प्रसार व कुरीतियों के निवारण के लिए प्रान्त में विविध स्थानों में पाठशालाएँ खोलीं और व्याख्यान दिए। इसके साथ ही प्रदेश में अन्य जनहितकारी कार्य भी किए। इसके अन्तर्गत गौरक्षा, भाषा सम्बन्धी कार्य, मांसभक्षण व मद्यपान का विरोध, प्राकृतिक विपत्तियों के कारण आपदाग्रस्त लोगों की सहायता आदि कार्य सम्मिलित थे।

**आर्यसमाज और गौरक्षा –** वैदिकसंस्कृति के प्रबल पक्षधर स्वामी दयानन्द सरस्वती गौ को आर्यों के लिए सर्वोत्तम और परमोपयोगी पशु मानते थे। जीभ के स्वाद के लिए किसी भी प्राणी की हत्या को महापाप मानते थे। विशेषतया आर्यावर्त्त देश में गौवध आदि को कलंक समझते थे तथा देशवासियों की धार्मिक, सामाजिक, शारीरिक और साम्पत्तिक अभिवृद्धि के लिए घातक समझते थे। उन्होंने गौवध को कानून द्वारा बन्द कराने के लिए

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हजारों व्यक्तियों के हस्ताक्षरों से युक्त एक मेमोरियल भी महारानी विक्टोरिया की सेवा में भिजवाया था। गौकरुणानिधि अपूर्व पुस्तक की रचना भी उन्होंने की थी। इसी पुस्तक में पशुओं की सामूहिक रक्षा के भाव से प्रेरित होकर उन्होंने गौकृष्णादिरक्षिणीसभा का निर्माण भी किया था।[२६६]

स्वामी दयानन्द ने अपने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि जिसमें उपकारक प्राणियों की हिंसा अर्थात् जैसे एक गाय के शरीर से दूध, घी, बैल, गाय उत्पन्न होने से एक पीढ़ी में चार लाख पचहत्तर सहस्त्र छः सौ मनुष्यों को सुख पहुँचता है, वैसे पशुओं को न मारें और न मारने दें।[२६७] अपने गौकरुणानिधि पुस्तक की भूमिका में लिखा है कि सर्वशक्तिमान, जगदीश्वर इस सृष्टि में मनुष्यों के आत्माओं में अपनी दया और न्याय को प्रकाशित करें जिससे वह दया और न्याययुक्त होकर सर्वदा सर्वोपकारक कार्य करे और स्वार्थपन से पक्षपातयुक्त होकर कृपापात्र गाय आदि पशुओं का विनाश न करें जिससे दुग्ध आदि पदार्थों और खेती आदि क्रियाओं की सिद्धि से युक्त होकर सब मनुष्य आनन्द में रहे।[२६८] इस तरह के भाव स्वामी दयानन्द के हृदय में विद्यमान थे। स्वामी दयानन्द वेदों के पक्षधर थे। शक्तिस्वरूपा माँ गौरूपा देवी के विषय में अथर्ववेद में इसप्रकार के विचार मिलते हैं-

**यया धौर्यया पृथिवी ययापो गुपिता इमाः।**
**वशां सहस्त्रधारां ब्रह्मणाच्छावदामसि।। १०/१०**
**अथर्ववेद, १०/१०/४-५**

अर्थात् जिस गौ के द्वारा धु, पृथ्वी एवं जनमय अन्तरिक्ष- ये तीनों लोक सुरक्षित है उस सहस्त्र धाराओं से दूध देने वाली गौ की हम प्रशंसा करते हैं।[२६९] "गावो विश्वस्य मातरः"-गाय विश्व की माता है।[२७०] गाय हमारी संस्कृति से अतीत काल से सम्बद्ध है।[२७१] स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ-प्रकाश में लिखा है कि जब आर्यो का राज्य था तब ये महोपकारक गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे।[२७२] स्वामी दयानन्द ने गोहत्या बन्दी के लिए महाअभियान चलाया था जिसमें उन्होंने गोरक्षा पर सैकड़ों व्याख्यान दिए, सहस्त्रों मुसलमानों और ईसाइयों को गाय की उपयोगिता निश्चित कराई।[२७३] २ अक्टूबर सन्-१८७९ ई० को लाला जगन्नाथ प्रसादजी की हवेली पर गोरक्षा विषयक एक व्याख्यान बड़े समारोह के साथ हुआ था।[२७४] लखनऊ आर्यसमाज की स्थापना (९ मई १८८०- अमीनुद्धौला की कोठी) के समय दो व्याख्यान हुए- गोरक्षा तथा सद्धर्म।[२७५] इस प्रकार स्वामी दयानन्द अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक गोरक्षा के लिए सदैव समाज को सचेष्ट करते रहे।

स्वामी दयानन्द के बाद आर्यसमाज ने गोरक्षा के कार्यक्रम को सदैव अपने व्याख्यानों में, सम्मेलन व समारोहों में जारी रक्खा। सन्-१८९४ ई० को लखनऊ अधिवेशन में उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा गोरक्षा के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव स्वीकृत किया गया था "गोपरस्ती न कभी किसी तरह आर्यसमाज के अकायद में शामिल थी और न है और न कोई इसमें ऐसा रूहजान पाया जाता है जो इस गोपरस्ती की तरफ आयन्दा मायल करने वाला तसव्वुर किया जा सके।" इस प्रस्ताव द्वारा सभा ने गोरक्षा के प्रति आर्यसमाज के रुख को पूर्णतया स्पष्ट कर दिया था और आगे गोरक्षा एवं गोवंश के संवर्द्धन की आवश्यकता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पर बहुत बल दिया।[२७६] मथुराजन्मशताब्दीमहोत्सव (सन्-१९२५) के अवसर पर आर्योपदेशक सम्मेलन, क्षत्रिय-कान्फ्रेन्स, ब्राह्मण-कान्फ्रेन्स के साथ ही गौ-कान्फ्रेन्स भी आयोजित की गयी थी।[२७७] आर्यसमाज के उद्देश्य जो वेदों के ही शब्द थे, दूध देने वाली गायें और भार ले जाने वाले बैल की आकांक्षा की गयी थी।[२७८]

७ दिसम्बर १९४७ ई० को गुरुकुल वृन्दावन में सेठ मदनमोहन की अध्यक्षता में एक महान् प्रान्तीय आर्य सम्मेलन किया गया था। जिसमें राजनियम द्वारा देशभर में पूर्णतया गो-वध बन्द करने की माँग की गयी थी।[२७९] पं. शिवदयालु ने आर्यसमाज द्वारा गोरक्षा प्रचार कार्य के विषय में कहा कि आर्यसमाज के मंच से गोरक्षा के सम्बन्ध में समय-समय पर प्रचार किया गया। किन्तु उसका अभी तक कोई विशेष प्रभाव न जनता पर पड़ा और न सरकार पर ही।[२८०] उन्होंने आगे कहा कि आर्यसमाज को इस दिशा में अभी सजग होकर विशेष कार्य करना चाहिए। आर्यसमाज में और अधिक सक्रियता लाने के लिए पं. शिवदयालु ने इस प्रकार का विचार रक्खा और प्रत्येक को घरों में गौ रखने का कर्त्तव्य समझाया।[२८१]

गोहत्या बन्दी के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी, लोकमान्य तिलक, महामना मालवीय, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, लाला हरदेवसहाय, आर्यसमाज के स्वामी श्रद्धानन्द आदि स्वाधीनता सेनानियों ने भी स्पष्ट मत व्यक्त किया था कि देश के स्वाधीन होते हुए गोवंश की हत्या का कलंक समाप्त कर दिया जाएगा।[२८२] इस प्रकार गोरक्षा के सम्बन्ध में आर्यसमाज ने सदैव उत्तर प्रदेश में प्रयत्न किया, जनसाधारण के बीच गोवध बन्द करने एवं उसके सुरक्षा के उपाय की वकालत की।

**आर्यसमाज और आर्यभाषा हिन्दी** - किसी भी देश की एकता में उसकी भाषा का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। हमारे देश की एकता को बनाए रखने और उसकी अखण्डता को सुरक्षित रखने में हिन्दी का अभूतपूर्व स्थान है। डॉ. रामविलास शर्मा ने कहा है कि हिन्दी राष्ट्रभाषा है और हिन्दी जनता की जातीय भाषा [२८३] और इसे भारत देश के कोने-कोने में जानने समझने व बोलने वाले हैं। यहाँ ध्यान देने योग्य है कि संस्कृत के प्रमुख केन्द्र उन्हीं जनपदों में रहे हैं जिनसे आगे चलकर हिन्दी भाषी प्रदेश बना।[२८४] इसी से यह संयुक्त प्रान्त हिन्दी भाषी प्रदेश बना और इसकी भाषा हिन्दी हुई।[२८५] स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व हिन्दी के ही माध्यम से भारत के अनेक सन्तों, सुधारकों, मनीषियों और नेताओं ने अपने विचारों का प्रसार और प्रचार किया था।[२८६] उनमें से एक सन्त स्वामी दयानन्द थे, जिन्होंने मार्च सन्-१८७३ ई० में कलकत्ते में ब्रह्मसमाज के नेता श्री केशवचन्द्र सेन के परामर्श पर हिन्दी में व्याख्यान देना प्रारम्भ किया था और अपने जीवनकाल तक आर्यभाषा हिन्दी का प्रचार प्रसार करते रहे।

आर्यसमाज की स्थापना के समय बने अट्ठाईस नियमों में पाँचवाँ नियम आर्यभाषा हिन्दी के महत्त्व को दर्शाता है, जैसे- प्रधान समाज में वेदोक्तानुकूल संस्कृत और आर्यभाषा में नाना प्रकार के सदुपदेश के पुस्तक होंगे और एक 'आर्यप्रकाश' पत्र यथानुकूल आठ-आठ दिन में निकलेगा।[२८७] यह नियम संस्कृत व हिन्दी भाषा की उपयोगिता को सिद्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



करता है। लाहौर में बने ३५वें उपनियमों में सब आर्यों और आर्य-सभासदों को संस्कृत तथा आर्यभाषा (हिन्दी) जानना अनिवार्य किया गया था।[२८८] ये नियम-उपनियम स्वामी दयानन्द द्वारा स्वत: निर्मित थे। मातृभाषा, मातृसंस्कृति, मातृभूमि और मातृशक्ति के प्रति स्वामी दयानन्द के मन में अगाध और गहरा लगाव था।[२८९] संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् और गुजराती भाषी होने के बावजूद उन्होंने लोगों की सुविधा की दृष्टि से अपनी बात हिन्दी में कही और सत्यार्थ प्रकाश हिन्दी में लिखा।[२९०] इनके द्वारा बोली जाने वाली हिन्दी भाषा में गुजराती और संस्कृत भाषा का प्रभाव था।[२९१] वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का उपदेश दिया था और राष्ट्र के लिए एक भाषा की बात कही थी[२९२] और आर्यसमाज में देवनागरी लिपि और हिन्दी भाषा को अनिवार्य कर दिया था।[२९३] हिन्दी को आर्यभाषा का नाम उन्होंने ही दिया था और इसे सम्पर्क भाषा के लिए उपयुक्त मानते थे।[२९४]

महर्षि दयानन्द के बाद आर्यसमाज ने प्रारम्भ से ही महर्षि के चरण चिह्नों पर चलते हुए आर्यभाषा हिन्दी को अपना लिया था। उत्तर प्रदेश में जितने सामयिक पत्र निकलते थे वे प्राय: आर्यभाषा में ही होते थे जैसे- भारत सुदशा प्रवर्तक, फर्रुखाबाद आर्यसमाज, गणेशप्रसाद शर्मा के संपादन में, वेदप्रकाश- कानपुर का साप्ताहिक था और फिर मेरठ से तुलसीराम ने सन्-१८९७ ई० में इसे मासिक रूप में निकाला। यह पत्र सन्-१९०७ ई० में गुरुकुल कांगड़ी से निकला, सन्-१९१२ ई० में दिल्ली से, वह पुन: सन्-१९१५ ई० में कांगड़ी परवर्तित हो गया। सन्-१९१८ ई० में साप्ताहिक ब्रह्मर्षि (मेरठ), सन्-१९२० ई०साप्ताहिक श्रद्धा (कांगड़ी), सन्-१९२१ ई. दैनिक सन्देश (कांगड़ी), सन्-१९२४ ई० मासिक अलंकार (कांगड़ी), आर्यमित्र (उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा का मुखपत्र पहले उर्दू में, बाद में हिन्दी में निकलने लगा), मासिक वेदोदय (सन्-१९३०-प्रयाग), साप्ताहिक गुरुकुल कांगड़ी (सन्-१९३६-कांगड़ी), आर्यसन्देश (सन्-१९३६-२७ आगरा) आदि।

आर्यसमाज ने हिन्दी को अनेक श्रेष्ठ पत्रकार व सम्पादक भी दिए थे जिनमें महात्मा मुंशीराम (सन्-१८५६-१९२६), सम्पादकाचार्य रुद्रदत्त शर्मा, पद्मसिंह शर्मा, डॉ. हरिशंकर शर्मा, इन्द्र विद्यावाचस्पति, सत्यदेव विद्यालंकार, सत्यकाम विद्यालंकार, हरिशचन्द्र विद्यालंकार, इन्द्रदेव विद्यालंकार, कृष्णचन्द्र विद्यालंकार, जयन्त वाचस्पति, अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार आदि के नाम महत्त्वपूर्ण है। गणेश शर्मा, गुरुदत्त, महाशय कृष्ण आदि आर्यसमाज के तपस्वी पत्रकार रहे।[२९५] महर्षि दयानन्द के पश्चात् स्वामी नित्यानन्द, पं. भीमसेन शर्मा, पं. आर्यमुनि और पं. तुलसीराम आदि विद्वानों ने जो ग्रन्थ लिखे और जिनका आर्यसमाज के अन्दर और बाहर खूब प्रचार हुआ सब आर्यभाषा में थे।[२९६] 'मातृभाषा का उद्धार' के लेखक स्वामी श्रद्धानन्दजी थे। शहीद स्वामी श्रद्धानन्द ने स्वदेश, स्वदेशी, स्वभाषा और स्वराज्य के लिए सारी आयु संघर्ष किया था। देश में हिन्दी माध्यम से ऊँची से ऊँची शिक्षा देने के लिए पहली शिक्षण संस्थान ''गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार'' की स्थापना उन्होंने ही की थी।[२९७] हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न स्वामी श्रद्धानन्द ने किया था ।[२९८]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उत्तर प्रदेश के कुछ भाग उर्दू के गढ़ समझे जाते थे। विशेष रूप से रुहेलखण्ड में उर्दू का दौर-दौरा था। लखनऊ तो उर्दू का केन्द्र ही था । उस गढ़ की दीवारों में सुराख करने का श्रेय भी आर्यकन्या पाठशालाओं को ही था। कन्याओं द्वारा घरों में प्रविष्ट होकर आर्यभाषा शीघ्र ही पुरुषों में फैल गयी और धीरे-धीरे लोकप्रियता की दौड़ में उर्दू से आगे निकल गयी। यहाँ हिन्दी भाषा के प्रचार के लिए लखनऊ आर्यसमाज द्वारा सन्-१८८३ ई० में ही देवभाषाप्रचारसमिति की स्थापना की गयी थी। जो सन्-१९०६ ई० में जिले के सभी स्थानों में हिन्दी का बोर्ड लगाने के लिए म्युनिसिपैलिटी के पास एक प्रस्ताव भेजा गया था। इस प्रस्ताव को क्रियान्वित कराने में लखनऊ आर्यसमाज को सफलता प्राप्त हुई।[२९९] उन्नीसवीं शताब्दी के अधिक भाग में अहिन्दी भाषी प्रान्तों में हिन्दी को ले जाने का बहुत सा प्रारंभिक श्रेय महर्षि के ग्रन्थों और आर्यसमाज को है।[३००]

भारत में पहला शिक्षणालय, जिसमें राष्ट्रभाषा के माध्यम द्वारा सम्पूर्ण ज्ञान और विज्ञान की शिक्षा का सफल परीक्षण किया गया। वह उत्तर प्रदेश का गुरुकुल कांगड़ी ही था जिसके साथ समयान्तर में आर्यसभाओं द्वारा चलाए गए अन्य अनेक गुरुकुलों की शक्ति भी मिल गयी थी। आर्यसमाज की संस्थाओं में हिन्दी का प्रमुख स्थान था जिसके फलस्वरूप आन्दोलन के लिए इन संस्थाओं में पृष्ठभूमि तैयार हो गयी थी।[३०१]

सन्-१९१६ ई० में काँग्रेस का अधिवेशन लखनऊ में हुआ था। इस महत्त्वपूर्ण अधिवेशन में काँग्रेस के सूरत में बिछड़े हुए दोनों दल राष्ट्रीय मंच पर फिर इकट्ठे बैठे थे। इस अवसर पर कई दिनों तक वैदिकधर्म के प्रचार की धूमधाम रही। इस प्रचार का प्रबन्ध आर्यसमाज, गणेशगंज सिटी और आर्यकुमार सभा की सम्मिलित शक्ति से हुआ था। २९ दिसम्बर १९१६ ई० को आर्यसमाज के पंडाल में ''अखिलभारतीयहिन्दी साहित्यसम्मेलन'' अधिवेशन हुआ था। जिसमें महात्मा गाँधी, पं. मदनमोहन मालवीय तथा महात्मा मुंशीराम आदि प्रभावशाली नेताओं के भाषण हुए।[३०२]

सन्-१९३६ ई० में उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा की स्वर्ण जयन्ती मेरठ में मनायी गयी थी। इस समारोह के मंत्री श्री महेन्द्रप्रताप शास्त्री थे और स्वागत समिति के प्रधान पं. गंगाप्रसाद (रिटायर्ड जज, टिहरी) और मंत्री कालीचरण थे। महोत्सव में अनेक सम्मेलनों का आयोजन किया गया था जिनमें वेद-सम्मेलन, आर्य-सम्मेलन, महिला-सम्मेलन के साथ ही राष्ट्रभाषा-सम्मेलन भी हुआ था।[३०३] यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि हिन्दी में वेदों के अनुवाद सदृश महान् कार्य को इस वर्ष (१९३६ ई०) तक न प्रतिनिधि सभाओं द्वारा किया गया और न सार्वदेशिक सभा द्वारा।[३०४] जबकि वेद को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए आर्यभाषा हिन्दी में वेदों का अनुवाद सामयिक दृष्टि से आवश्यक था। यह कार्य सन्-१९७५ ई० में अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोह के अवसर (सन्-१९७५) पर सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रारम्भ किया गया।[३०५] फिर भी हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किए जाने और उसे यथोचित सम्मान दिलाने में आर्यसमाज का विशेष कर्तृत्व था। संविधान सभा की १० दिसम्बर सन्-१९४६ ई० की बैठक में आर्यसमाज के श्रीधुलेकर ने हिन्दी का प्रश्न उठाया था। उस समय तक डॉ. राजेन्द्रप्रसाद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



संविधान सभा के अध्यक्ष निर्वाचित नहीं हुए थे। सभा की अध्यक्षता श्रीसच्चिदानन्द सिन्हा द्वारा की जा रही थी । श्रीधुलेकर ने अपना भाषण हिन्दी में देना शुरू किया, तो श्रीसिन्हा ने कहा कि श्रीराजगोपालाचारी सदृश कितने सदस्य हिन्दी नहीं जानते अत: आप अपना भाषण अंग्रेजी में दीजिए।[३०६] इस पर श्रीधुलेकर ने कहा कि "जो लोग यहाँ भारत के संविधान का निर्माण करने आए हैं, यदि वे हिन्दी नहीं जानते तो उनमें इस सदन का सदस्य बनने की योग्यता नहीं है, अच्छा यही है कि वे सभा से उठकर चले जाएँ। मैं चाहूँगा कि संविधान का प्रारूप हिन्दी में तैयार किया जाए और हिन्दी न जानने वाले सदस्यों की सुविधा के लिए अंग्रेजी में उसका अनुवाद किया जाए।[३०७]

हिन्दी के लिए श्रीधुलेकर के वकालत पर जब डॉ. राजेन्द्र प्रसाद संविधान सभा के स्थायी अध्यक्ष चुने गए तो उन्होंने अपना भाषण पहले हिन्दी में दिया और फिर अंग्रेजी में।[३०८] यह सफलता आर्यसमाज को प्राप्त हुई।

प्रयाग में, आर्यसमाज द्वारा हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करवाने हेतु कई सम्मेलन आयोजित किए गए थे। १ फरवरी १९४७ ई० को हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने भारतवर्ष में सर्वत्र हिन्दी दिवस मानने का निश्चय किया था। इस निर्णय के अनुसार श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन की अध्यक्षता में आर्यसमाज, चौक, प्रयाग के सभाकक्ष में हिन्दी-दिवस मनाया गया ।[३०९] इसी वर्ष २७ दिसम्बर १९४७ ई० को गुरुकुल वृन्दावन में सेठ मदनमोहन की अध्यक्षता में एक प्रान्तीय आर्यसम्मेलन किया गया था जिसमें कई निर्णय किए गए थे। उसमें राष्ट्र की भाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी निर्णीत करने और देश का नाम हिन्द न होकर भारतवर्ष रखने पर बल दिया गया था।[३१०] सेठ मदनमोहन हिन्दी के प्रबल समर्थक थे और न्यायालय में अपने फैसले सर्वप्रथम हिन्दी में लिखने का श्रेय आपको है।[३११]

इस प्रकार आर्यसमाज अपने जन्म के प्रारम्भ से लेकर सन्-१९४७ तक आर्यभाषा हिन्दी का प्रचार प्रसार अपने व्याख्यानों में, सभा-सम्मेलन व समारोहों में सदैव उत्तर प्रदेश के विविध भागों में करता रहा। आर्य गुरूकुलों में हिन्दी भाषा के माध्यम से शिक्षा का विधान किया गया था । जिसके फलस्वरूप जनसामान्य के घरों में हिन्दी का प्रवेश हुआ। इससे आर्यभाषा का प्रचार प्रसार प्रान्त में तीव्र गति से हुआ। आर्यभाषा के प्रचार के लिए आर्यसमाज को इसका श्रेय प्राप्त है।

**मांसभक्षण व मद्यपान का विरोध –** आर्यसमाज प्रान्त में मांसभक्षण व मद्यपान के विरोध में जनजागृति पैदा करने का निरन्तर कार्य करता रहा। प्रारम्भ में स्वामी दयानन्द ने मांसभक्षण व मद्यपान का सत्यार्थप्रकाश, वेदभाष्य तथा अपने पत्रों और व्याख्यानों में स्पष्ट रूप से विरोध किया है। उन्होंने कहा है कि जो मांसभक्षण और मद्यपान करते हैं, उनके शरीर और वीर्यादि धातु भी दुर्गन्धादि से दूषित होते हैं। इनसे आर्यों को दूर रहना चाहिए।[३१२]

आर्यसमाज में मांसभक्षण को लेकर आपस में सदैव विरोध होता रहा और यह कालान्तर में दो दलों में विभाजित हुआ। ऐसा ही विरोध मांसभक्षण के प्रश्न को लेकर उन्नीसवीं सदी के अन्तिम चरण में पंजाब के आर्यसमाजी क्षेत्रों में हुआ था। इससे उत्तर प्रदेश की आर्यप्रतिनिधिसभा अछूती न रही । स्वामी प्रकाशानन्द सदृश कतिपय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्य-विद्वानों ने इस समय मांसभक्षण को वेदानुकूल प्रतिपादित करना प्रारम्भ कर दिया था।[३१३] इसके विपरीत पण्डित गंगाप्रसाद उपाध्याय जिनके सम्पादन में ट्रैक्ट्स आर्यसमाज चौक प्रयाग से निकलते थे, उन्होंने मांसभक्षण के विरोध में पुष्ट प्रमाण को प्रस्तुत करना प्रारम्भ किया। उन्होंने मांसभक्षण का समर्थन करने वाले पण्डितों को शास्त्रार्थ के लिए चैलेन्ज भी किया।[३१४]

उत्तर प्रदेश के जिन आर्य विद्वानों ने मांसभक्षण के विरुद्ध लेख लिखे व अन्य प्रकार से आन्दोलन किया, उनमें पं. रुद्रदत्त शर्मा, पं. ज्वालादत्त शर्मा, पं.गंगाप्रसाद उपाध्याय एम.ए, पं. तुलसीराम स्वामी, स्वामी महानन्द सरस्वती और पं. भूमित्र शर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं। इन विद्वानों के प्रचार के कारण उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा ने सन्-१८९३ ई० के बुलन्दशहर अधिवेशन में एक प्रस्ताव द्वारा मांसभक्षण को वेद विरुद्ध माना।[३१५] आर्यसमाज चौक, प्रयाग से मांसभक्षण और मद्यपान के विरोध में ट्रैक्ट्स भी वितरण किए जाते थे उनमें हमारा भोजन, जीवरक्षा, नशा आदि महत्त्वपूर्ण था।[३१६] इन ट्रैक्टों में मांसभक्षण व मद्यपान के विरोध में वैज्ञानिक तर्क के साथ ही शाकाहारी होने की प्रेरणा समाज को दिया गया है। उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव में मांसभक्षण व मद्यपान का विरोध होने पर उत्तर प्रदेश के सभी आर्यसमाजों में सदैव इसका विरोध किया गया।

**आर्यसमाज और प्राकृतिक विपदा–** उत्तर प्रदेश आर्यसमाज के कार्यकर्तागण देश के किसी भी भाग में प्राकृतिक आपदाएँ (दुर्भिक्ष, भूकम्प व बाढ़ आदि) और महामारियाँ आयीं तो उसमें ज़नता की अथक सेवा की। आगरे में सन्-१८९९ ई० को घोर दुर्भिक्ष के कारण बहुत से बच्चे अनाथ हो गए थे, उनकी रक्षा के लिए आगरा आर्यसमाज ने १० बच्चों से अपने अनाथालय का प्रारम्भ किया था। स्वामी मंगलदेव का इसकी स्थापना में प्रमुख कर्तृत्व था।[३१७] १०बच्चों से शुरू हुए इस अनाथालय में सन्-१९२९ ई० तक बच्चों की संख्या-२८४ तक पहुँच गई थी जो बाद में और अधिक हो गयी।[३१८]

सन्-१९१७ ई० में गढ़वाल मण्डल भीषण अकाल की चपेट में आ गया था। स्वामी श्रद्धानन्द मई सन्-१९१७ ई० में इस घटना की जानकारी प्राप्त करने के लिए गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक और ब्रह्मचारियों के साथ गढ़वाल पहुँचे। प्रथम अपील में स्वामी श्रद्धानन्द को ४६,००० रूपया सहायता कार्य के लिए प्राप्त हुआ। उन्होंने इससे पीड़ित लोगों की खूब सहायता की।[३१९] महात्मा हंसराज के नेतृत्व में दूसरा जत्था इस मण्डल में सफलतापूर्वक कार्य किया।[३२०]

सन्-१९१५ ई० में गोमती नदी में भयंकर बाढ़ आयी, जिससे तिहाई लखनऊ शहर जलमग्न हो गया था, हजारों मकान गिर गए थे और वहाँ के निवासी पूर्णतया असहाय हो गए थे। इस अवसर पर लखनऊ आर्यसमाज ने भोजन, वस्त्र आदि से लोगों की सहायता की और बाढ़पीड़ितों को आर्यसमाज में आश्रय प्रदान किया।[३२१] सन्-१९१८ ई० में देहरादून में इन्फ्लूएन्जा का प्रकोप हुआ और शीघ्र ही उसने महामारी का रूप धारण कर लिया था। रोग पीड़ित लोगों की सेवा के लिए देहरादून आर्यसमाज ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



"आर्यसेवकमण्डली" गठित कर सेवा कार्य किया।[३२२]सन्-१९३३ ई० के बिहार भूकम्प में असंख्य नर-नारी और बच्चे देखते ही देखते पृथ्वी के परतों में दबकर विलीन हो गए। उत्तर प्रदेश के ३२ कार्यकर्ताओं ने लगभग एक मास रहकर पीड़ितों की सहायता की। इसमें उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा के प्रधान डॉ. बाबूराम, मंत्री बांबू उमाशंकर, लाला दीवानचन्द्र उपकुलपति आगरा विश्वविद्यालय व दयानन्द कालेज कानपुर के प्रधानाचार्य, श्री देशबन्धु अधिकारी, हृदयरामजी वकील (फतेहपुर), श्री पं. धुरेन्द्र शास्त्री, पं. वेदव्रतजी वानप्रस्थी (स्वामी अभेदानन्द) आदि प्रमुख थे।[३२३]

बिहार के ही सदृश क्वेटा में (३१ मई सन्-१९३५ ई०) भूकम्प आया था। समृद्ध क्वेटा नगर बरबाद हो गया था। क्वेटा में दो आर्यसमाजें थीं और दोनों ही बहुत समृद्ध दशा में थे। उस भूकम्प में आर्यसमाज के मन्दिर गिर गए और पं. भीमसेन विद्यालंकार और श्री इन्द्र वेदालंकार दोनों भूकम्प के भेंट चढ़ गए।[३२४] इसमें उत्तर प्रदेश, आर्यप्रतिनिधिसभा ने धन संग्रह करके भेजा था।[३२५]

सन्-१९४३ ई० बंगाल दुर्भिक्ष पीड़ितों की सहायता के लिए उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा ने प्रान्त में स्थापित आर्यसमाजों से धन संग्रह करके भेजा। लखनऊ आर्यसमाज ने दुर्भिक्ष पीड़ितों की सहायता के लिए धन संग्रह किया। जनसेवा के प्रयोजन से लखनऊ आर्यसमाज द्वारा 'असहाय निधि' और 'आर्यरक्षासमिति' की स्थापना की गयी थी।[३२६]

इस प्रकार आर्यसमाज द्वारा उत्तर प्रदेश में चलाए गए सामाजिक क्षेत्रों में आन्दोलनों के फलस्वरूप भारतीय समाज में अपने प्राचीनकालिक कीर्तिपूर्ण सांस्कृतिक परम्पराओं के प्रति जागृति आनी प्रारम्भ हुई। आर्यसमाज ने गौरवपूर्ण अतीत की मूल्यवान सम्पदा को पुनः समाज में स्थापित करने का अथक प्रयास किया। इस दिशा में, आर्यसमाज ने प्रान्त में शुद्धिआन्दोलन, नारी-जागरण, जात-पाँत विरोध व अछूतोद्धार आन्दोलन चलाया। इसके साथ ही इसके सामाजिक कार्यक्रमों में गोरक्षा, आर्यभाषा का प्रचार प्रसार, मांसभक्षण व मद्यपान का विरोध तथा प्राकृतिक आपदाग्रस्त लोगों के बीच जनसेवा कार्य आदि सम्मिलित थे।

आर्यसमाज द्वारा चलाए गए इस चौमुखी आन्दोलन के परिणामस्वरूप उत्तर प्रदेश में आर्य संस्कृति का प्रचार प्रसार बड़ी तेजी से हुआ। मुस्लिम व इसाई संस्कृति में हिन्दुओं का अधिक संख्या में जाना बहुत कम हुआ और हिन्दू धर्म से पृथक् हुए विधर्मियों का पुनः हिन्दू-धर्म में बहुत अधिक मात्रा में प्रवेश हुआ। नारी को सम्मान, उन्नति और शिक्षा प्राप्ति का निर्वाध अधिकार मिला, अछूतों में हीनता के स्थान पर स्वाभिमान की भावना जागृत हुई और गुण, कर्म एवं स्वभावानुसार सामाजिक प्रतिष्ठा भी मिली। आर्यसमाज सामाजिक समता की स्थापना के लिए प्रान्त में सतत तत्पर था। इस कार्य में इसे अभूतपूर्व सफलता मिली। आर्यसमाज ने मानवीय विचाराधारा में एक क्रान्ति सा उत्पन्न कर दिया था जिसके कारण हिन्दू संगठन में नव चेतना संचार के साथ ही समाज में व्यापक परिवर्तन हुआ।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## सन्दर्भ :


१. रामधारी सिंह 'दिनकर', संस्कृति के चार अध्याय, पृ. ५४५
२. जे. पी. मिश्र, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ. ४५५
३. शम्भुशरण दीक्षित, राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. ५७
४. इन्द्र विद्यावाचस्पति, आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. २९७
५. एनी बेसेण्ट, हिन्दू धर्म और आचार, अनु० अम्बिकादत्त उपाध्याय, पृ. ३
६. कल्याण, परिशिष्टांक-२, पृ. ४६५
७. रामविलास शर्मा, इतिहास और समकालीन परिदृश्य, भाग १, पृ. १२१ स्वाधीनता संग्राम - बदलते परिप्रेक्ष्य
८. लाला लाजपत राय, दि आर्यसमाज, अनु० भवानी लाल भारतीय, पृ. १७२
९. वही, पृ.१७२-७३
१०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २८५
११. सी. एफ. एण्ड्रूज- दी इण्डियन रेनेसाँ, पृ. १२२; देखें- लाल लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. २९१
१२. वही, पृ. १७३-७४
१३. सत्यकेतु विद्यालंकार, आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. १५६
१४. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. १९२
१५. वही, पृ. २५२
१६. ई. ए. एच. ब्लण्ट, सेंसस ऑफ इण्डिया १९११, यूनाइटेड प्रॉविन्सेज़ ऑफ आगरा एण्ड अवध, पृ. १४६-४७
१७. वही, पृ. १४६
१८. आर. सी. मजुमदार, ब्रिटिश पैरामाउण्टेसी एण्ड इण्डियन रेनेसाँ, प्राथम भाग, पृ. ४१९
१९. ई. ए. एच. ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. १४६
२०. वही
२१. आर. सी. मजुमदार, हिस्ट्री आफ दि फ्रीडम मूभमेंट इन इण्डिया, प्रथम भाग, पृ. २६५
२२. निष्काम परिवर्तन पत्रिका, स्वर्णजयन्ती वर्ष, अप्रैल १९९४, पृ. ३
२३. आर्यसन्देश, ७ अप्रैल १९९६, पृ. ७
२४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ६१०
२५. वही, पृ. ६१७
२६. शिवदयालु, इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर-प्रदेश, प्रथम भाग, पृ. ८६
२७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ५६१
२८. संयुक्त-प्रान्त की जनगणना रिपोर्ट, सन्-१९११, पृ. १३४; देखें- लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. १९३-९४
२९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६१
३०. वही, पृ. ५६२
३१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८६
३२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २२२
३३. हरविलास शारदा, लाईफ ऑफ दयानन्द सरस्वती, पृ. २२३
३४. गुलशनस्वरूप सक्सेना, आर्यसमाज मूभमेंट इन इण्डिया, पृ. ४९; देखें- हिन्दू सभा वार्ता, शुद्धि विशेषांक, १७ सितम्बर १९९०, पृ. ३७


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५५१
३६. हिन्दू-सभा वार्ता, शुद्धि विशेषांक, १७ सितम्बर १९९०, पृ. ७०-७१
३७. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ४९
३८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २२३
३९. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५२२-२३
४०. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. १९४-९५
४१. ई.ए.एच.ब्लण्ट, पूर्वोद्धृत, पृ. १४७
४२. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६२
४३. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ६१
४४. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. १९४
४५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.५६२
४६. वही, पृ. ५६२
४७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८६-८७, देखें- आर्यमित्र, ११ जून १९८६, पृ. ८
४८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६२
४८-अ. गुलशन स्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १२४
४९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६२-६३
५०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग,, पृ. १२०
५१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.५६३
५२. हिन्दू-सभा वार्ता, १७ सितम्बर १९९०, पृ. २५-२६; देखें- भवानीलाल भारतीय, आर्यसमाज के बीस बलिदानी, पृ. २४;- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८७
५३. अखिल भारत हिन्दू महासभा स्मारिका, जुलाई १९९७, पृ. ५३, ६६
५४. वही, मुखपृष्ठ पर अध्यक्षों की सूची।
५५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. १२१; देखें- शुद्धि पत्रिका, जनवरी १९३९
५६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ५७१
५७. आर्यवीर सन्देश, अप्रैल १९९४, पृ. ८
५८. वही, पृ. १३
५९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५१६
६०. वही, पृ. ५१७
६१. वही, पृ. ५१८
६२. हिन्दू-सभा वार्ता, २२ दिसम्बर १९९७, पृ. १२
६३. मोहनदास कर्मचन्द गाँधी, मेरे सपनों का भारत, संग्राहक आर. के. प्रभु, पृ. २५८, यंग इंडिया अंश से २४-१२.३१,
६४. वही, पृ. २७३
६५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १२०
६६. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. ११७
६७. वही, पृ. १९४
६८. हिन्दुओं पर एक और आफत, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय,ट्रैक्ट सं.१५ पृ. ४
६९. वहीं, पृ. ३
७०. वही, पृ. ७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



७१. स्वामी श्रद्धानन्दजी का धर्म बलिदान, पृ. ६
७२. हिन्दुओं पर एक और आफत, पूर्वोद्धृत, पृ. ७
७३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ५४-५५
७४. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १२१
७५. वही, पृ. ६२
७६. वही, पृ. १२१
७७. सेंसस रिपोर्ट आफ इन्डिया १९११, भाग-१६, पृ. १५६
७८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ४५८
७९. लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. ४५
८०. वही
८१. कल्याण, हिन्दू-संस्कृति अंक, पृ. ६२५; मनुस्मृति, ३/५६-५७
८२. विश्वप्रकाश, लाईफ एण्ड टीचिंग ऑफ स्वामी दयानन्द, पृ. १५४-५५
८३. वही, पृ.१५५
८४. विश्वप्रकाश, पूर्वोद्धृत, पृ. १५५
८५. आर्यसेवक, अप्रैल १९७५, पृ. १५
८६. वही
८७. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, भारत की सामाजिक संस्थाएँ, पृ. ३१९
८८. सुधाकुमार, भारतीय संस्कृति की झलक, पृ. २७२
८९. आर. एन. सेठी एवं विनोद चन्द्र पाण्डेय, आधुनिक भारत, पृ. २८४
९०. वही
९१. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. ३२१
९२. जिन्दा लाश, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, पृ. ३-४; देखें- दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, १९९२, पृ. ७६
९३. विधवायें और देश का नाश, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, पृ. ४, ६-८
९४. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ११-१२
९५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. १५७
९६. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १२
९७. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. १८७; देखें- राधाकृष्ण शर्मा, नेशनलिज्म, सोशल रिफार्म एण्ड इण्डियन वोमेन, पृ.२१५
९८. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. १७७
९९. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २८७
१००. अशोक श्रीवास्तव, भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, पृ. १२५
१०१. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, पूर्वोद्धृत, पृ. ५४
१०२. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. १८२
१०३. राधाकृष्ण शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ. १९०; देखें- हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ५११
१०४. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. १८२
१०५. गुलशन स्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ.१२६
१०६. सार्वदेशिक, वर्ष ६, अगस्त १९३२, अंक ५, पृ. ६७२ । देखें- चाँदकरण शारदा, शारदा एक्ट, पृ. १
१०७. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. १८२


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१०८. वही, पृ. ३२१; देखें- चाँदकरण शारदा, शारदा एक्ट, परिशिष्ट-३ में एक्ट सम्बन्धी विवरण
१०९. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. ३२२
१०९-अ. राधाकृष्ण शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ. २०४
११०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८१
१११. वही, पृ. २८८
११२. वही, पृ. २६२
११३. वही
११४. वही
११५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २९०
११६. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १२७
११७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५३१-३३
११८. वही, पृ. ५३५
११९. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. १३५
१२०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५३७; देखें- इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १३४
१२१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५३९
१२२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १३९
१२३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.५३९
१२४. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १२७
१२५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १३६
१२६. वही, पृ. १७०
१२७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५८-५९
१२८. स्वर्णजयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज लल्लापुरा, वाराणसी, पृ. ४५
१२९. राधाकृष्ण शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ. २१९-२०
१३०. वही, पृ. २२३
१३१. वही, पृ. २२४
१३२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५९
१३३. वही
१३४. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २०७
१३५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६०
१३६. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १२१
१३७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६०
१३८. गुलशन स्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १२१
१३९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६०
१४०. शिवदयालु, इतिहास, पूर्वोद्धृत, पृ. ९४
१४१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६०
१४२. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १२२
१४३. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २०७
१४४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६०
१४५. गोपालकृष्ण अग्रवाल, पूर्वोद्धृत, पृ. २४०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


१४६. वही
१४७. वही
१४८. दहेज, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, पृ. ३
१४९. वही
१५०. वही, पृ. ४
१५१. वही, पृ. ५-८
१५२. दुखदायी दुर्व्यसन, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, पृ. ३
१५३. वही, पृ. ७
१५४. गोपालकृष्ण अग्रवाल, पूर्वोद्धृत, पृ. २४०
१५५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २९०
१५६. वही, पृ. २९०
१५७. वही
१५८. स्वर्ण जयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज, लल्लापुरा, वाराणसी, पृ. ४५
१५९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १५६
१६०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ६१
१६१. स्वर्ण जयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज, लल्लापुरा, वाराणसी, पृ. १३
१६२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ६१; देखें- हरविलास शारदा, पूर्वोद्धृत, पृ. ९०
१६३. गंगाप्रसाद उपाध्याय, सोशल रिकन्सट्रक्शन बाई बुद्ध एण्ड दयानन्द, पृ. १०८-९
१६४. स्वर्णजयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज, लल्लापुरा, वाराणसी, पृ. ७
१६५. वही
१६६. वही
१६७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १४८
१६८. गोपाल कृष्ण अग्रवाल, पूर्वोद्धृत, पृ. १७८
१६९. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी, पूर्वोद्धृत, पृ. १३६
१७०. वही
१७१. वही, पृ. १७-१८
१७२. गोपालकृष्ण अग्रवाल, पूर्वोद्धृत, पृ. ३७
१७३. गंगाप्रसाद उपाध्याय, पूर्वोद्धृत, पृ. १०९
१७४. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २७१
१७५. युगान्तर, वर्ष २, संख्या ८, अक्टूबर १९३३, पृ. ५७
१७६. वही, वर्ष २, संख्या ७, सितम्बर १९३३, पृ. ४५
१७७. वही, वर्ष २, संख्या ८, अक्टूबर १९३३, पृ. ४६
१७८. आर्यसमाज के सौ वर्ष (१८७५-१९७५), १९७५, पृ. ७
१७९. कल्याण, हिन्दू संस्कृति अंक, पृ. २१५
१८०. वेद क्या है?, सम्पादक- गंगा प्रसाद उपाध्याय, १९६४, पृ. ५
१८१. आर्यसमाज के सौ वर्ष, पूर्वोद्धृत, पृ. ७
१८२. दलितोद्धार, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, पृ. १; देखें- दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ-प्रकाश, सितम्बर १९९२, पृ. ५९
१८३. वही, सत्यार्थ-प्रकाश पृ. ५९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१८४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ४४८
१८५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८९
१८६. वही,
१८७. वही, पृ. ४३
१८८. पन्नालाल गुप्त, आर्यसमाज चौक, प्रयाग का संक्षिप्त इतिहास, पृ. १३
१८९. स्वर्णजयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज, लल्लापुरा, वाराणसी, पृ. ४९
१९०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २६२
१९१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ४४८
१९२. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ८९
१९३. वेद क्या है?, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, १९६४, पृ. ५
१९४. सुधाकुमार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५०
१९५. गोपालकृष्ण अग्रवाल, पूर्वोद्धृत, पृ. १८२
१९६. वही, पृ. १८३; देखें- नर्मदेश्वर प्रसाद, जाति-व्यवस्था, पृ. ८४
१९७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २६२
१९८. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. २५०
१९९. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ११६
२००. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६२
२०१. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ७८
२०२. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ.९०
२०३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.२६३
२०४. वही, पृ. २६२-६३
२०५. वही, पृ. २६३
२०६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९०
२०७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६३
२०८. वही, पृ. २६२
२०९. वही, पृ. २६३-६४
२१०. पन्नालाल गुप्त, पूर्वोद्धृत, पृ. १४
२११. अछूतों का प्रश्न, सम्पादक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, १९४९, पृ. ३
२१२. युगान्तर, वर्ष २, संख्या ८, अक्टूबर १९३३, पृ. ५५
२१३. वही, पृ. ५
२१४. वही, पृ. ४६
२१५. वही, अगस्त १९३३, पृ. ४६
२१६. आर्य मित्र, १३ जनवरी १९२१; देखें- गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ११६
२१७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४२
२१८. वही, पृ. १८५
२१९. वही, पृ. २३८
२२०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५८
२२१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. २३८
२२२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५८
२२३. वही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


२२४. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. २१६
२२५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १००
२२६. वही, पृ. १०१, सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५५९
२२७. वही, सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६१
२२८. वही, पृ. ५५८
२२९. वही
२३०. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९०-९१
२३१. वही, पृ. ६५
२३२. सार्वदेशिक, मार्च-अप्रैल १९३२, पृ. ५४०
२३३. वही, पृ. ५४१
२३४. वही
२३५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग पृ. १४०
२३६. वही, पृ. १४१
२३७. वही, पृ. १९१; देखें- अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २१
२३८. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १९१; देखें- वही, पृ. २१
२३९. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १९१
२४०. गणेशप्रसाद शर्मा, फर्रुखाबाद का इतिहास, पृ. ३६०
२४१. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १४१
२४२. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १३४
२४३. सार्वदेशिक, भाग १४, अंक ७, नवम्बर १९३२, पृ. ३२९
२४४. वही
२४५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ६१
२४६. हिन्दू-सभा वार्ता, सोमवार, २२ दिसम्बर १९९७, मुखपृष्ठ पर
२४७. वही
२४८. ट्रैक्टमाला, गंगाप्रसाद उपाध्याय के ट्रैक्टों का संग्रह
२४९. सत्यकेतु विद्यालंकार, द्वितीय भाग, पूर्वोद्धृत, पृ. २७०
२५०. वही, पृ. २६४
२५१. वही
२५२. वही
२५३. वही
२५४. वही, पृ. २६५
२५५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४५
२५६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६५
२५७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ३
२५८. वही, पृ. ४
२५९. वही
२६०. वही
२६१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६७
२६२. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२६३. वही
२६४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६८
२६५. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २७१
२६६. सार्वदेशिक, वर्ष ६, अंक १-२, मार्च-अप्रैल १९३२, पृ. ४८
२६७. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, पूर्वोद्धृत, पृ. १८२
२६८. दयानन्द सरस्वती, गोकरुणानिधि, १९९७, भूमिका पृ. २
२६९. कल्याण, गो सेवा विशेषांक, वर्ष ६९, संख्या १, पृ. ४६
२७०. वही, पृ. १२२
२७१. वही, पृ. १८४
२७२. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, पूर्वोद्धृत, दशम समुल्लास, पृ. २५५
२७३. दयानन्द सरस्वती, गोकरुणानिधि, पूर्वोद्धृत, पृ. ३०
२७४. गणेशप्रसाद शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ. १२५
२७५. भवानीलाल भारतीय, नवजागरण के पुरोधा - स्वामी दयानन्द सरस्वती, पृ. ३९४
२७६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २२७
२७७. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. १४१
२७८. वही, पृ. १४२
२७९. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ५४-५५
२८०. वही, पृ. ९९
२८१. वही
२८२. गोधन, गोरक्षा बलिदान विशेषांक, अप्रैल-मई १९९३, पृ. ३
२८३. रामविलास शर्मा, परम्परा का मूल्यांकन, पृ. २४
२८४. वही, पृ. २०
२८५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३०४
२८६. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, पृ. २६६
२८७. आर्यसमाज के अट्ठाईस नियम के लिए अध्याय-१ का परिशिष्ट-५ देखें
२८८. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, पृ. २४२
२८९. आर्यसन्देश, ७ अप्रैल १९९६, पृ. ५
२९०. आर्यसन्देश, १८ जुलाई १९९३, पृ. १
२९१. श्रीप्रकाश, दयानन्द के सपनों का आर्यसमाज, पृ. ५१
२९२. आर्यसेवक, आर्यसमाज स्थापना शताब्दी, अप्रैल १९७५, पृ. ९
२९३. पन्नालाल गुप्त, पूर्वोद्धृत, पृ. १९
२९४. रजतजयन्ती स्मारिका (१९६८-१९९३), आर्यसमाज साकेत, मेरठ, पृ. ५१
२९५. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, पृ. २४९ के अधार पर
२९६. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ३०३
२९७. श्रद्धानन्द, मातृभाषा का उद्धार, पृ. २
२९८. वही, पृ. ६
२९९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८७
३००. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. ३०४
३०१. वही, पृ.३०४
३०२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ७८-७९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2




३०३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २५९
३०४. वही, पृ. ५०९
३०५. आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, पृ. २०
३०६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पाँचवा भाग, पृ. १३८
३०७. वही
३०८. वही, पृ. १३९
३०९. पन्नालाल गुप्त, पूर्वोद्धृत, पृ. २०
३१०. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ५५
३११. वही, पृ. १४२
३१२. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, १९९२, पृ. १८०
३१३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २२३
३१४. वही, पृ. २२३
३१५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २२३
३१६. ट्रैक्टमाला, गंगाप्रसाद उपाध्याय,
३१७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २९१
३१८. वही, पृ. २९७
३१९. होम पालिटिकल डिपार्टमेंट प्रोसीडिंग (ड़िपोजिट), फाईल सं. १०,९५ सन्-१९२९ (एन.ए.आई.)
३२०. गुलशनूस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १३०
३२१. सत्यंकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८८
३२२. वही, पृ. २८४
३२३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९६- ९७ के आधार पर
३२४. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २०३
३२५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९७
३२६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८८


***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट- १

| क्र.सं. | ट्रैक्ट माला | ट्रैक्ट संख्या | वर्ष |
|---|---|---|---|
| १. | भगवान की याद | ग्राम प्रचारक माला-१ | १९६८ |
| २. | धर्म क्या है ? | ग्राम प्रचारक माला-५ | १९६५ |
| ३. | वेद क्या है ? | द्वितीय माला-१० प्रथमबार-१००० | १९६४ |
| ४. | हमारे बच्चों की शिक्षा | प्रथममाला ट्रैक्ट-२ | जून १९५० |
| ५. | प्राचीन आर्यावर्त्त | प्रथममाला ट्रैक्ट-३ | मई १९५० |
| ६. | हमारा धर्म | प्रथममाला ट्रैक्ट-५ | १९५० |
| ७. | घर की देवी | प्रथममाला ट्रैक्ट-६ | |
| ८. | राजा और प्रजा | प्रथममाला ट्रैक्ट-७ | |
| ९. | हमारे पिछड़े भाई | प्रथममाला ट्रैक्ट-९ तृतीयबार | |
| १०. | सच्ची बात | प्रथममाला ट्रैक्ट-१० | १९४९ |
| ११. | हमारा संगठन | प्रथममाला ट्रैक्ट-७ | १९५० |
| १२. | मुसलमानी मत की आलोचना | प्रथममाला ट्रैक्ट-९ | |
| १३. | रामभक्ति का रहस्य | प्रथममाल ट्रैक्ट-१३ | १९५० |
| १४. | हमारे स्वामी | प्रथममाला ट्रैक्ट-१४ | |
| १५. | कुम्भ माहात्म्य | प्रथममाला ट्रैक्ट-३५ | १९५२ |
| १६. | देवी देवता | प्रथममाला ट्रैक्ट-१७ | मार्च १९२६ |
| १७. | जिन्दा लाश | प्रथममाला ट्रैक्ट-१९ | जनवरी १९५० |
| १८. | हमारा भोजन | प्रथममाला ट्रैक्ट-२० | |
| १९. | दलितोद्धार | प्रथममाला ट्रैक्ट-२१ | दिसम्बर १९४९ |
| २०. | प्रार्थना भजन | प्रथममाला ट्रैक्ट-२४ | |
| २१. | वैदिक सन्ध्या | प्रथममाला ट्रैक्ट-२२ | मार्च १९६१ |
| २२. | वैदिक प्रार्थना | प्रथममाला ट्रैक्ट-२५ पंचमबार | १९५२ |
| २३. | वेदोपदेश | प्रथममाला ट्रैक्ट-२५ | १९५२ |
| २४. | मूर्तिपूजा | प्रथममाला ट्रैक्ट-२७ | |
| २५. | अवतार | प्रथममाला ट्रैक्ट-२८ | १९५२ |
| २६. | आर्यसमाज क्या है? | प्रथममाला ट्रैक्ट-२९ | १९६४ |
| २७. | जीवन रक्षा | प्रथममाला ट्रैक्ट-३० | |
| २८. | दशा | प्रथममाला ट्रैक्ट-३१ | १९४९ |
| २९. | अछूतों का प्रश्न | प्रथममाला ट्रैक्ट-३२ | १९४९ |
| ३०. | ब्रह्मचर्य | प्रथममाला ट्रैक्ट-३३ | |
| ३१. | हमारे चलाने वाला | प्रथममाला ट्रैक्ट-३४ | |
| ३२. | संस्कार | प्रथममाला ट्रैक्ट-३५ | दिसम्बर-१९४९ |
| ३३. | आनन्द का स्तोत्र | प्रथममाला ट्रैक्ट-३६ | जनवरी-१९५० |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



| | | | |
|---|---|---|---|
| ३४. | हिन्दुओं के साथ विश्वासघात | प्रथममाला ट्रैक्ट-३७ | जनवरी-१९५० |
| ३५. | स्वामी दयानन्द की दो भारी भूलें | प्रथममाला ट्रैक्ट-३८ | जनवरी-१९५० |
| ३६. | हिन्दू जाति का भयंकर भ्रम | प्रथममाला ट्रैक्ट-३९ | दिसम्बर-१९४९ |
| ३७. | मुसलमान भाईयों के सोचने योग्य बातें | प्रथममाला ट्रैक्ट-४० | १९४९ |
| ३८. | कलियुग | प्रथममाला ट्रैक्ट-४१ | |
| ३९. | साधु-संन्यासी | प्रथममाला ट्रैक्ट-४३ | १९४९ |
| ४०. | गुरु-माहात्म्य | प्रथममाला ट्रैक्ट-४५ | |
| ४१. | पुंनर्जन्म | प्रथममाला ट्रैक्ट-४६ | |
| ४२. | अद्‌भुत चमत्कार | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-४७ द्वितीयबार ४००० | जनवरी-१९३८ |
| ४३. | पितृ-यज्ञ | प्रथममाला ट्रैक्ट-४८ | १९५० |
| ४४. | स्वामी दयानन्द की सुक्तियाँ | प्रथममाला ट्रैक्ट-५० | |
| ४५. | पंचायत महिमा | प्रथममाला ट्रैक्ट-५२ | दिसम्बर-१९३९ |
| ४६. | वेदों में ईश्वर का स्वरूप | प्रथममाला ट्रैक्ट-५३ | |
| ४७. | यज्ञोपवीत का जनेऊ | प्रथममाला ट्रैक्ट-५४ चतुर्थबार | १९५२ |
| ४८. | धर्म से होने वाली कल्पित हानियाँ | प्रथममाला ट्रैक्ट-५६ | १९५४ |
| ४९. | भेड़िया धसान | प्रथममाला ट्रैक्ट-५७ | |
| ५०. | ईसाइमत समीक्षा (नं.-१) खुदा का बेटा | प्रथममाला ट्रैक्ट-६१ | |
| ५१. | तुम कौन हो ? | प्रथममाला ट्रैक्ट-६२ | १९४९ |
| ५२. | तुम्हारी भाषा क्या है ? | प्रथममाला ट्रैक्ट-६३ | जनवरी-१९५० |
| ५३. | तुम्हारा धर्म क्या है ? | प्रथममाला ट्रैक्ट-६४ | जनवरी-१९५० |
| ५४. | शुद्धि पद्धति | प्रथममाला ट्रैक्ट-६४ प्रथमबार ४००० प्रति | १९४१ |
| ५५. | मुर्दा क्यों जलाना चाहिए | प्रथममाला ट्रैक्ट-६६ प्रथमबार ४००० प्रति | १९४१ |
| ५६. | गाजी मियाँ की पूजा और हिन्दू | प्रथममाला ट्रैक्ट-६७ | |
| ५७. | दिशा शूल | प्रथममाला ट्रैक्ट-६८ | १९५६ |
| ५८. | मौलवी साहब और भगतसिंह | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-१ | |
| ५९. | हिन्दू धर्म का नाश | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-५ | |
| ६०. | हिन्दू जाति की रक्षा के उपाय | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-६ | |
| ६१. | दान की दुर्गति | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-७ | |
| ६२. | विधवाओं और देश का नाश | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-८ आठवींबार | १९५० |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



| | | | |
|---|---|---|---|
| ६३. | दहेज | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-९ | १९३९ |
| ६४. | दुखदायी दुर्व्यसन | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-१० | १९३९ |
| ६५. | मस्जिद के सामने बाजा | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-११ | |
| ६६. | हिन्दू-मुसलमानों के मेल का प्रश्न | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-१२ | १९३९ |
| ६७. | हिन्दुओं का हिन्दुओं के साथ अन्याय | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-१३ | |
| ६८. | श्री स्वामी श्रद्धानंदजी धर्म बलिदान | | |
| ६९. | हिन्दुओं पर एक और आफत | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-१५ | दिसम्बर १९३२ |
| ७०. | आदि हिन्दू कौन हैं ? | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-१७ प्रथमबार | १९३२ |
| ७१. | आर्यसमाज के साप्ताहिक अधिवेशन का अंतिम पाठ | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-१९ तृतीय बार | १९५५ |
| ७२. | हिन्दू संगठन का मूल मंत्र | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-२१ | |
| ७३. | आर्य गीतावली | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-२२ द्वितीय बार ४००० | १९५० |
| ७४. | आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-२३ | |
| ७५. | शिवलिंग पूजा पर शास्त्रार्थ | तृतीयबार | १९४९ |
| ७६. | कीर्तन | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-२५ | १९५५ |
| ७७. | ऋग्वेद का पहला सूक्त | वेदपाठ माला ट्रैक्ट-१ | १९६२ |
| ७८. | ईसाई क्यों बनते हो | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-२७ तृतीय बार | |
| ७९. | कुम्भ का मेला | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-३० | |
| ८०. | सितारों के गुलाम | द्वितीयमाला ट्रैक्ट-२८ प्रथम बार | |
| ८१. | कुम्भ माहात्म्य | प्रथममाला-ट्रैक्ट-१६ छठी बार ५००० | १९६५ |

**ट्रैक्टमाला-** ट्रैक्टों का संग्रह- आर्यसमाज, चौक, प्रयाग। (संख्या-८१) सम्पादक एवं प्रकाशक- गंगाप्रसाद उपाध्याय, एम.ए. आर्यसमाज चौक, प्रयाग, यह ट्रैक्टमाला श्री राजेन्द्र कुमार सिंह, निवासी, बी.-२२/५७,ई-१, विनायका,वाराणसी के पास उपलब्ध है। इन ट्रैक्टों में आर्यसमाज द्वारा उत्तर प्रदेश (संयुक्त प्राप्त) में सामाजिक-पौराणिक व अन्य क्षेत्रों में किए गए कार्यों का विधिवत विवरण (आर्यसमाज की स्थापना से १९४७ तक) शोध कार्यों के अनुरूप उपलब्ध है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट- २

295

।। ओ३म् ।।

दूरभाष : 217905, 216531

800

## आर्य समाज मन्दिर

(पंजीकृत)

गोविन्द नगर, कानपुर ।

### विवाह प्रमाण पत्र

(आर्य विवाह अधिमान्य करण अधिनियम
(एक्ट) १९३७ की धारा २ के अन्तर्गत मान्य)

प्रमाणित किया जाता है कि श्री ..................................................

आयु .................... शारीरिक चिन्ह ..................................................

सुपुत्र श्री ..................................................

पता ..................................................

का विवाह संस्कार तिथि .................................................. वि०/ई० को

श्रीमती/कुमारी ..................................................

आयु .................... शारीरिक चिन्ह ..................................................

सुपुत्री श्री ..................................................

पता ..................................................

के साथ उन दोनो की इच्छानुसार आर्य समाज मन्दिर गोविन्द नगर कानपुर में आर्य पुरोहित श्री .................................................. के द्वारा कराया गया ।

ह० (वर) ..................................... ह० (मन्त्री/प्रधान) .....................................

ह० (वधू) ..................................... ह० (पुरोहित) .....................................

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## पृष्ठ- २

256

600 ॥ ओ३म् ॥ दूरभाष : [217905
[216531

सं०.....................

॥ सत्यमेव जयते नानृतम् ॥

# प्रमाण पत्रम्

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो
विश्वमार्यम् । अघ्नन्तो अपराव्णः ॥
हे मनुष्यो ! तुम ऐश्वर्य को बढ़ाते हुए सारे संसार को आर्य
बनाने में आलस्य तथा प्रमाद को छोड़कर प्रयत्नशील रहो।

मैं इस बात को सहर्ष प्रमाणित करता हूं, कि श्री ____________________

पुत्र/पुत्री ____________________ निवासी ____________________

जिला ____________________ आयु ____________________ वर्ष

सचेतावस्था में स्वेच्छानुकूल इस्लाम/ईसाई मत को त्याग आर्य समाज गोविन्द नगर,

कानपुर की अध्यक्षता में तारीख ____________________ को

श्री ____________________ द्वारा शुद्धि संस्कार करवा

कर वैदिक धर्म को स्वीकार करके आर्य जाति में प्रविष्ट हुए।

इनका नाम श्री ____________________ रखा गया।

शुद्ध होने वाले के हस्ताक्षर

____________________

दिनांक ____________________

मन्त्री/प्रधान
आर्य समाज गोविन्द नगर कानपुर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट- ३

अदीनाःस्याम शरदः शतम्

वैदिक धर्म की जय हो ! आर्य्य वीरो जागो !! संसार के श्रेष्ठ पुरुषो एक होजाओ !!!

## ॥ संयुक्त प्रान्तीय आर्य वीर दल ॥

### शिक्षक प्रमाणपत्र

ज़िला गया (प्रान्त बिहार) नगर गया के निवासी श्री शिवनाथ प्रसाद जी के सुपुत्र श्री विश्वनाथ मिश्र शास्त्री जी को संयुक्त प्रान्तीय आर्य्य वीर दल शिक्षण शिविर बरेली में एक मास रहकर शिक्षक की योग्यता प्राप्त करने पर संयुक्त प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से यह प्रमाण पत्र दिया जाता है।

श्रेणी प्रथम स्थान प्रथम

ता० ५-८- सन् १९४५ ई०

दलपति प्रांत

मन्त्री,

आर्य्य प्रतिनिधि सभा सं० प्रा०

लखनऊ।

Mitra Press—Bareilly

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

## चतुर्थ अध्याय

# शिक्षा के प्रसार में आर्यसमाज का योगदान

वैदिककाल के मूल हिन्दू धर्म को पुनर्जीवित करने एवं आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के विकास के लिए आर्यसमाज ने उत्तर प्रदेश में शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी कार्य किया। लाहौर आर्यसमाज की स्थापना के समय निर्मित दस नियमों में आठवाँ नियम 'अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए' को दृष्टिगत रखते हुए आर्यसमाज के मनीषी चिन्तकों ने शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व सराहनीय कार्य कर एक नवीन शिक्षा प्रणाली को जन्म दिया।

शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज का प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ, जब अराष्ट्रवादी शक्तियाँ, ज़ो अंग्रेजी शिक्षा के फलस्वरूप उत्पन्न हुई थीं और देश में अनियंत्रित ढंग से गतिशील थीं। इस समय अंग्रेजी शिक्षा पाए हुए नवयुवक, जो पाश्चात्य सभ्यता व संस्कृति की बाह्य चमक-दमक से अत्यधिक प्रभावित थे, अपनी स्वदेशी संस्कृति से बिल्कुल विमुख हो चुके थे और अपने देश की सभ्यता से घृणा करते थे।[१] पाश्चात्यवाद के नाम पर ये नवयुवक अराजकतापूर्ण आचरण किया करते थे जैसे- मदिरापान करना, गोमांस खाना तथा अस्वस्थ कामुकता का जीवन व्यतीत करना आदि।[२]

इस प्रकार की निराशापूर्ण एवं असामाजिक स्थिति के बीच इस देश में राष्ट्रीय आन्दोलनों का प्रादुर्भाव हुआ। जिसके फलस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए। इस देश का प्रथम देशी राष्ट्रीय आन्दोलन ब्रह्मसमाज था। जिसने देश की शिक्षा प्रणाली में रुचि दिखाई। जिस समय ब्रह्मसमाज आन्दोलन ने अपना शैक्षणिक कार्य आरम्भ किया था, देश में शिक्षा की स्थिति अस्पष्ट तथा अव्यवस्थित थी। दो प्रकार की संस्थाएँ - देशी संस्थाएँ और मिशनरियों द्वारा संचालित संस्थाएँ मनमानी ढंग से कार्य कर रही थीं। शिक्षा के क्षेत्र में एकरूपता, समन्वय और केन्द्रीय नियन्त्रण नाम मात्र का भी नहीं था।[३]

ब्रह्मसमाज पाश्चात्यवाद का प्रबल समर्थक था। इसके संस्थापक राजा राममोहन राय पूरी लगन के साथ सक्रिय रूप से मिशनरियों को अपना सहयोग दे रहे थे और भारतीय लोगों में पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार का प्रयत्न कर रहे थे।[४] ये अंग्रेजी शिक्षा के महान पथ परिष्कारक थे। उन्होंने न केवल स्वयं इस उद्देश्य से संस्थाएँ कायम की, बल्कि जो अन्य भी ऐसी चेष्टा करते थे उनकी सदैव सहायता करते थे।[५] उनके द्वारा खोला जाने वाला प्रथम अंग्रेजी स्कूल हिन्दू कॉलेज था जिसके अन्य नाम भी थे जैसे- विद्यालय ऐंग्लो इण्डियन कालेज, महापाठशाला व नेटिव हिन्दू कॉलेज आदि। इसे बाद में प्रेसीडेन्सी कॉलेज के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था।[६] यह हिन्दू कॉलेज बंगाल में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारत में अंग्रेजी का प्रथम शिक्षालय था। इसने पाश्चात्य शिक्षा की प्रक्रिया को आरम्भ किया और इस भाँति भारत देश के शैक्षणिक इतिहास में एक नए अध्याय का प्रारम्भ हुआ।[७] इस आन्दोलन का कार्यक्षेत्र मुख्यत: बंगाल तक सीमित था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज उत्तर भारत का सबसे शक्तिशाली आन्दोलन था। इसके द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में नवयुग का प्रारम्भ किया गया। ब्रह्मसमाज की भाँति इसने पश्चिम के आदर्शों से प्रेरणा नहीं ली बल्कि आर्य संस्कृति की कीर्तिपूर्ण परम्पराओं में अपनी आस्था बनाए हुए एक नवीन शिक्षा प्रणाली को जन्म दिया और भारतवासियों में नवीन आशा व आत्मगौरव की भावना जागृत कर नवजीवन का संचार किया। आर्यसमाज की शिक्षण संस्थाओं में संस्कृत भाषा, वेदशास्त्र तथा प्राचीन साहित्य के साथ-साथ आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्यापन की समुचित व्यवस्था थी।[८] इसका उद्देश्य ऐसी राष्ट्रीय शिक्षण संस्थाओं की स्थापना करना था जिसमें अलग से सामान्य शिक्षा की व्यवस्था हो और विद्यार्थियों के मन-मस्तिष्क और हृदय में अपनी संस्कृति के प्रति आत्मगौरव और स्वाभिमान की भावना जागृत हो।[९]

आर्यसमाज द्वारा स्थापित शिक्षण संस्थाओं में दयानन्दऐंग्लोवैदिक (डी.ए.वी.) स्कूल एवं कॉलेज और प्राचीन भारतीय शिक्षा के अनुरूप गुरूकुल प्रणाली प्रमुख थे। ऐसी शिक्षा पद्धति की स्थापना कर आर्यसमाज ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी कदम उठाया था। इसके फलस्वरूप उत्तर प्रदेश में प्राचीन वैदिक वाङ्मय और आधुनिक ज्ञान की समुचित शिक्षा आर्यसमाज के द्वारा स्थापित शिक्षण संस्थाओं 'डी.ए.वी. एवं गुरुकुलों' में प्रारम्भ हुई। इन शिक्षण संस्थाओं का क्रमवत विस्तार भी भारत के विविध भागों में बड़ी तेजी के साथ होता गया। प्रस्तुत अध्याय में सर्वप्रथम उस शैक्षिक वातावरण का संक्षिप्त अध्ययन किया जाएगा जो आर्यसमाज की स्थापना के पूर्व समाज में व्यापत थी।

**आर्यसमाज के पूर्व शैक्षणिक स्थिति-** भारत में ब्रिटिश शासन की पहली सदी (१७५७-१८५८) कुछ रूपों में उसके इतिहास का एक स्मणीय युग है।[१०] इस काल में पश्चिमी शिक्षा बहुत तेजी से फैल रही थी। पहले उल्लेख किया जा चुका है कि दीचर्चमिशनरीजसोसायटी ने यूनाइटेड प्रोविन्स (वर्त्तमान उत्तर प्रदेश) में सन्-१८१३ ई० से अपना कार्य आरम्भ किया और इसी वर्ष सन्-१८१३ ई० के चार्टर एक्ट में एक लाख रुपया, भारत में शिक्षा के प्रसार के लिए ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने ईस्टइण्डियाकम्पनी की सनद में परिवर्तन कर किया था। तब से भारत में शिक्षा के लिए ईस्टइण्डियाकम्पनी का उत्तरदायित्व स्वीकार कर लिया गया था।[११] इस अधिनियम के मुख्य उपबन्धों में से एक उपबन्ध में कहा गया था कि भारत में रहने वाले (अंग्रेजों) तथा वहाँ जाने वाले सभी लोगों को (अंग्रेजी) भारतीयों में उपयोगी ज्ञान, धर्म तथा नैतिक उत्थान के प्रचार का अधिकार होगा। यह भारत में ईसाई धर्म तथा पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार की ओर उठाया गया पहला कदम था।[१२]

सन्-१८३३ ई० में कम्पनी के चार्टर का संशोधन करते समय इसमें इंग्लैण्ड के अतिरिक्त अन्य यूरोपियन देशों के मिशनों को भी भारत में ईसाइयत का प्रचार करने की अनुमति दी गयी। इसके परिणामस्वरूप सन्-१८३३ ई० से सन्-१८५३ ई० तक ब्रिटिश मिशनों के अतिरिक्त अनेक यूरोपियन मिशनों ने ईसाइयत के प्रचार और शिक्षा के प्रसार में प्रमुख रूप से भाग लिया। इनमें जर्मनी और अमरीकी संस्थाएँ प्रमुख थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



उत्तरी भारत में अमेरिकनप्रेसब्रिटेरियन ने अपना विशेष कार्य प्रारम्भ किया। इसकी शाखाएँ सहारनपुर और इलाहाबाद (सन्-१८३६ ई०) में स्थापित हुई।[१३] रामधारी सिंह दिनकर ने कहा कि इन चार्टर एक्टों के फलस्वरूप फिर तो सारा उत्तरी भारत ईसाइयत के प्रहारों के लक्ष्य में आ गया। कैरी, डफ और विल्सन के नेतृत्व में सारा धर्म प्रचारक समुदाय हिन्दू समाज पर टूट पड़ा।[१४]

चर्चमिशनरीजसोसायटी का प्रमुख ध्येय यहाँ ईसाई-धर्म प्रचार के साथ ही हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन कराना था। इस कार्य के निमित्त मिशनरी सोसायटी ने उत्तर प्रदेश में जगह-जगह स्कूल और कॉलेज खोले। इन स्कूलों और कॉलेजों में धर्म परिवर्तन का कार्य धर्म शासक पादरी वर्ग द्वारा बड़ी तेजी के साथ यहाँ किया जा रहा था। अंग्रेजी सभ्यता व संस्कृति के प्रति उच्चता की भावना इन स्कूल व कॉलेजों में पादरी वर्ग द्वारा प्रादुर्भूत की जाती थी। साथ ही हिन्दू धर्म की निन्दा करते हुए इनके देवी-देवताओं के बारे में अपशब्द का प्रयोग पादरी वर्ग द्वारा अपने उपदेशों एवं प्रचार-प्रसार के कार्यों में किया जाता रहा। यहाँ जीसस क्राईस्ट को मुक्ति का दाता बतलाया जाता था।[१५]

चर्चमिशनरीज द्वारा संचालित शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थी अपनी भाषा, साहित्य, कला, रहन-सहन परम्पराओं के प्रति हीन भावना रखने लगते थे और उनमें यह विचारबद्ध मूल हो जाता था कि ब्रिटिश लोग सब दृष्टियों से उनकी तुलना में उत्कृष्ट हैं और भारत पर अंग्रेजी शासन ईश्वरीय विधान का परिणाम है। इन सब शिक्षण संस्थाओं (सरकारी और क्रिश्चियन) में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी भाषा होता था और पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान का पाठ-विधि में प्रमुख स्थान था।[१६]

संयुक्त-प्रान्त में ये ईसाई मिशनरियाँ अनेक शहरों में व्याप्त थे जैसे- मेरठ, बनारस, गोरखपुर, आजमगढ़, लखनऊ, जौनपुर, इलाहाबाद, देहरादून, फैजाबाद अलीगढ़, आगरा आदि।[१७] यहाँ ध्यान देने योग्य है कि बाइबिल का परिचय केवल मिशनरी संस्थाओं से ही नहीं था बल्कि सरकारी स्कूलों और कॉलेजों से भी था। इसमें कुछ स्कूल और कॉलेज प्रमुख रूप से सरकार द्वारा सहायता प्राप्त, जो धर्म शासक पादरी द्वारा संचालित एवं पूर्णतयाः ईसाइयत पर आधारित थे।[१८]

स्पष्ट है कि अंग्रेजी स्कूल और कॉलेजों का प्रादुर्भाव भारतवर्ष में परम्परागत शिक्षण संस्थाओं के बीच हुआ था। ये परम्परागत शिक्षण संस्थाएँ प्राचीन और मध्यकाल से चली आ रही थीं। इन्हें चार बड़े उपवर्गों में बाँटा जा सकता है जैसे- मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने वाले विद्यालय, फारसी के माध्यम से शिक्षा देने वाले मदरसे, संस्कृत की उच्च शिक्षा देने वाले केन्द्र, अरबी, फारसी की उच्च शिक्षा देने वाले मकतब। इस प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था सभी प्रान्तों में विद्यमान थी ।[१९] उत्तर प्रदेश भी इससे अछूता न रहा। इनमें दी जाने वाली शिक्षा पूर्णरूप से व्यावहारिक तथा उपयोगी थी। लिखने-पढ़ने और हिसाब-किताब सिखाने पर अधिक बल दिया जाता था। उत्तर प्रदेश में ये पाठशाला के नाम से प्रसिद्ध थे और इनमें शिक्षा का माध्यम मातृभाषा (हिन्दी) था।[२०]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मातृभाषा के माध्यम से प्रारम्भिक शिक्षा देने वाले विद्यालयों के अतिरिक्त उस समय संस्कृत, अरबी तथा फारसी के माध्यम से इन भाषाओं में विद्यमान उच्चतम साहित्य, व्याकरण, अलंकारशास्त्र, तर्कशास्त्र, दर्शन, आयुर्वेद आदि विभिन्न ज्ञान-विज्ञानों का अध्यापन कराने वाले उच्च शिक्षा के केन्द्र थे।[२१] संस्कृत भाषा में विद्यमान विभिन्न शास्त्रों को पढ़ाने वाले महाविद्यालय पाठशालाएँ कहलाती थीं और अरबी, फारसी की तालीम देने वाले मरकज, मकतब और मदरसे कहलाते थे।[२२] इन शिक्षण संस्थाओं में स्त्रियों तथा शूद्र जातियों को शिक्षा से वंचित किया गया था।[२३] इस समय वेद-वेदांग का अध्ययन बिल्कुल विलुप्त हो चुका था।[२४] उच्च शिक्षा का संगठन साम्प्रदायिक होता था। मुसलमान तथा हिन्दू अपने उच्च शिक्षा के विद्यालय अलग-अलग रखते थे और इनके छात्र उन्हीं जातियों के होते थे। ये विद्यालय अपने धर्म की ही शिक्षा देते थे।[२५] इनका उद्देश्य अधिक उन्नत तथा सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करना था जो कि उन दिनों धार्मिक ग्रन्थों और दर्शन के समकक्ष समझा जाता था।[२६]

भारत में प्रचलित परम्परागत शिक्षा पद्धति के विषय में डॉ० एफ.डब्ल्यू. थामस ने कहा है कि "शिक्षा भारत में कोई विदेशी वस्तु नहीं है। कोई अन्य देश ऐसा नहीं जहाँ शिक्षा की इतने पहले उत्पत्ति हुई हो अथवा उसने इतना स्थायी तथा शक्तिशाली प्रभाव डाला हो।"[२७] इंलैण्ड में सन्-१८०१ से सन्-१८४५ के बीच में इस पद्धति की सहायता से बड़े कम खर्चे में प्राथमिक शिक्षा का विस्तार हुआ।[२८] इस काल में प्रचलित शिक्षा पद्धति भारतीयों के सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन का अंग रही और उस समय के अधिकांश यूरोपीय देशों की अपेक्षा कहीं अच्छी थी।[२९] लेकिन इन शिक्षण संस्थाओं में एकरूपता, समन्वय और केन्द्रीय नियन्त्रण का अभाव था।

शिक्षा की ऐसी दशा के बीच अंग्रेजी शिक्षा का प्रादुर्भाव इस देश में हुआ था। उत्तर प्रदेश के विविध भागों में मिशनरीज सोसायटियों की स्थापना हुई और उनके द्वारा शिक्षण संस्थाएँ संचालित की गयीं। इसके साथ ही ईस्टइण्डियाकम्पनी द्वारा भी प्रान्त में शिक्षण संस्थाएँ जगह-जगह खोली गयीं। अंग्रेजी के माध्यम से शिक्षा का संचालन करने वाले तीन प्रकार के व्यक्ति थे- १. शिक्षित तथा प्रबुद्ध भारतीय, २. मिशनरी, ३. ईस्टइण्डियाकम्पनी।[३०] भारत में अंग्रेजी की शिक्षा देने वाला प्रथम विद्यालय हिन्दू कॉलेज था, जो राजा राममोहन राय जैसे प्रबुद्ध भारतीय द्वारा स्थापित किया गया था।

उत्तर प्रदेश में मिशनरीज सोसायटियाँ कार्य कर ही रहीं थीं। इनके द्वारा संचालित उत्तर प्रदेश के विविध भागों में अंग्रेजी स्कूल व कॉलेजों का वर्चस्व कायम हो गया था। इसमें से सेण्ट जॉन्स कालेज, आगरा; सेण्ट ऐन्ड्र्यू कालेज, गोरखपुर; आक्सफोर्ड एण्ड कैम्ब्रिज हास्टल- इलाहाबाद, इसमें उच्च हाईस्कूल के छात्र म्यूर सेन्ट्रल कॉलेज आगरा, आजमगढ़, बनारस, गोरखपुर, जौनपुर, लखनऊ और मेरठ आदि शहरों के सम्मिलित होते थे।[३१] इस प्रकार उत्तर प्रदेश में विविध चार्टर एक्टों के फलस्वरूप अंग्रेजी माध्यम के स्कूल और कॉलेजों का विस्तार होता गया। लार्ड मैकाले की भारतीयों के लिए शिक्षा सम्बन्धी विंचारधारा भारत में अत्यधिक फलदायक सिद्ध हुई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



मैकाले ने कहा था कि हमें अपनी समस्त शक्ति लगाकर ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि हम भारतवासियों की एक ऐसी श्रेणी बना सकें जिसमें व्यक्ति जाति और रंग में तो भारतीय ही रहें परन्तु रुचि, विचार और भाषा से पूर्ण अंग्रेज हों।[३२] लार्ड विलियम बैटिंक की सरकार ने ७ मार्च, १८३५ ई० के प्रस्ताव द्वारा लार्ड मैकाले का दृष्टिकोण अपना लिया।[३३] इसके अनुसार अंग्रेज सरकार का उद्देश्य भारतवासियों में यूरोपीय साहित्य व विज्ञान का प्रसार करना हो गया और शिक्षा के हेतु कम्पनी का जो धन स्वीकृत होता था, केवल अंग्रेजी शिक्षा के प्रयास में व्यय करना निश्चित हो गया। इससे शिक्षा के माध्यम के विवाद का अन्त हो गया तथा अंग्रेजी राज्यभाषा घोषित हो गयी।

बम्बई, मद्रास और उत्तर पश्चिमी प्रान्त (वर्त्तमान उत्तर प्रदेश) की प्रान्तीय सरकारों ने इस नीति एवं योजना को अनुमोदित किया।[३४] तब लार्ड मैकाले की शिक्षा सम्बन्धी योजनाएँ समस्त उत्तर प्रदेश के विविध भागों में क्रियान्वित की जाने लगीं और शिक्षण संस्थाओं में अंग्रेजी भाषा शिक्षा का माध्यम बनी। इस प्रकार आधुनिक शिक्षा का प्रारम्भ कर अंग्रेज वैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय ज्ञान के क्षेत्र में भारत को आधुनिक पाश्चात्य उपलब्धियों के सम्पर्क में ले आए।[३५] जबकि विश्व के बहुत सारे राष्ट्र जब सभ्य जीवन के पथ पर अग्रसर हुए, उसके सदियों पहले भारतीयों ने गणित, रसायन और औषधि विज्ञान में पथ प्रदर्शक का काम किया था।[३६]

ए.आर. देसाई की पुस्तक सोशल बैकग्राउन्ड ऑफ इण्डियन नेशनलिज्म में उल्लेख है कि "विज्ञान जो पूरब के देशों में जन्मा और पश्चिम के देशों में सयाना हुआ, अब सारी दुनियाँ पर छा जाने वाला है।[३७] वैज्ञानिक ज्ञान से विश्व को पथ प्रदर्शक कराने वाले इस देश में इस समय अंग्रेजी शिक्षण संस्थाओं का जाल सा बिछ गया। उत्तर प्रदेश में सन्-१८५१ ई० तक ईसाइ-मिशनरियों द्वारा स्थापित केन्द्रों तथा शिक्षा संस्थाओं के निम्न आँकड़ों[३८] से अंग्रेजी शिक्षा के तीव्रगति से विस्तार का परिचय मिलता है —

**पश्चिमोत्तर प्रान्त**

**उत्तर प्रदेश**

१. केन्द्रों की संख्या ...१९

२. लड़कों के एंग्लो-वर्नाक्युलर स्कूल तथा कॉलेज ..१३

३. उपर्युक्त स्कूलों में छात्रों की संख्या ...१०२९

४. लड़कों के वर्नाक्युलर स्कूल ..४७

५. वर्नाक्यूलर स्कूलों में छात्रों की संख्या ...२६४०

६. लड़कों के बोर्डिंग स्कूलों की संख्या ...१०

७. बोर्डिंग स्कूलों की छात्र संख्या ..२०९

८. लड़कियों के डे स्कूल ..८

९. डे स्कूल में छात्राओं की संख्या ..२१३

१०. लड़कियों के बोर्डिंग स्कूल ..९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



११. लड़कियों के बोर्डिंग स्कूल में छात्राओं की संख्या ..१७३
१२. उपर्युक्त मिशनरी स्कूलों में छात्र छात्राओं की संख्या..४२६४
१३. रविवासरीय स्कूल ..३५०
१४. रविवासरीस स्कूलों की छात्र संख्या ..१६६७१

प्रान्त में सन्-१८५१ ई० तक मिशनरियों द्वारा संचालित शिक्षण संस्थाओं की इस प्रकार की स्थिति थी। आर्यसमाज की स्थापना के समय चार्ल्स वुड की योजना (सन्-१८५४-१८८२ ई० तक) के तहत प्रान्त में अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार हो रहा था। सन्-१८५४ ई० में ईस्टइण्डियाकम्पनी के बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के प्रेसीडेण्ट चार्ल्स वुड ने एक शिक्षा सम्बन्धी योजना बनाकर कम्पनी के डाइरेक्टरों के मण्डल को कार्यान्वित करने के लिए भेजी। यह योजना भारतीय इतिहास में युग प्रवर्त्तक सिद्ध हुई। इसका उद्देश्य अंग्रेजी शिक्षा के साथ-साथ देशी शिक्षा के प्रसार का सुधार करना था।

चार्ल्स वुड की योजनाओं की कुछ बातें मान ली गयीं थीं। इसके अनुसार भारत के तत्कालीन प्रत्येक प्रान्त में शिक्षा विभाग की स्थापना हो गयी। इसका प्रमुख अधिकारी ''डाइरेक्टर ऑफ पब्लिक इन्स्ट्रक्शन'' नियुक्त हुआ। जिसकी सहायता के लिए निरीक्षणगण भी नियुक्त हुए। चार्ल्स वुड की योजनाओं में देश के प्रमुख स्थानों पर विश्वविद्यालयों की स्थापना करना था जिसके तहत लन्दन विश्वविद्यालय (सन्-१८७५) के ढाँचे पर सन्-१८८७ ई०' में उत्तर पश्चिमी प्रान्त (वर्त्तमान उत्तर प्रदेश) में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। ये विश्वविद्यालय केवल परीक्षक संस्थाएँ थीं न कि शिक्षा देने वाली। इनका एक चान्सलर (प्रान्त का गवर्नर) एक वाइस चान्सलर और सदस्य होते थे। सन्-१८५४ ई० से सन्-१८८२ ई० तक के युग में विश्वविद्यालय की शिक्षा में प्रभूत प्रगति हो रही थी। परन्तु प्राथमिक और माध्यामिक शिक्षा में कोई प्रशंसनीय उन्नति नहीं हुई थी।[३९] फिर भी सन्-१८५४ ई०' के शैक्षिक सर्कुलर के अनुसार सन्-१८५६ ई० में चन्दौली में एक तहसील स्कूल और ३८ हल्काबन्दी स्कूल, जिसमें १०३३ छात्र थे, वहाँ आसपास २१९ स्वदेशीय स्कूलों में १३९४ छात्रों की संख्या थी। सन्-१८७० ई० में ७५ हल्काबन्दी स्कूल और २८९ स्वदेशीय स्कूल थे- इसमें ६००० लड़के पंजीकृत थे। मिशनरी और अनुदान प्राप्त अन्य स्कूल इस समय उन्नति कर रहे थे।[४०] इसके बहुत पहले कम्पनी ने संस्कृत शिक्षा के विकास के लिए बनारस में सन्-१७९२ ई० में एक संस्कृत कॉलेज की स्थापना की थी।[४१]

विदित है कि मिशनरी सोसायटी और ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा संचालित शिक्षण संस्थाएँ उत्तर प्रदेश के विविध भागों में स्थापित थे। मिशनरी स्कूलों में छात्रों पर बाइबिल की शिक्षा देने पर बल दिया जाता था और कम्पनी द्वारा संचालित स्कूल धर्मनिरपेक्ष थे और इसमें बाइबिल की शिक्षा जबरदस्ती थोपी नहीं जाती थी। इन दोनों संस्थाओं के बीच आंशिक विवाद कुछ समय तक बना रहा लेकिन चार्ल्स वुड की योजनाओं के बाद मिशनरी सोसाइटी अपने लक्ष्य में सफल हो गया। इससे भारतीय शिक्षा के क्षेत्र में मिशनरी स्कूलों का वर्चस्व कायम हो गया था।[४२]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इस प्रकार के स्कूल और कॉलेज में भारतीय जनमानस का कुछ भाग बड़ी तेजी के साथ आकृष्ट हुआ। इन शिक्षण संस्थाओं में अनेक भारतीयों ने अपने परिवार के बच्चों को प्रवेश दिलाया। फिर भी ये संख्या में कम और जनता से अलग दिखायी देते थे।[४३]

अंग्रेजी शिक्षा के प्रति लालायित समाज का एक तबका सामयिक परिस्थितियों के लिए पाश्चात्य शिक्षा को उपयुक्त मानता था। इसी क्रम में ये भारतीय अपने बच्चों को हाईस्कूल कराने के पश्चात् अंग्रेजी सरकार में नौकरी कराने का भी प्रयास करते थे। यह कार्य अंग्रेजी शासनकाल में निरन्तर चलता रहा।[४४]

लार्ड मैकाले द्वारा भारत में अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से काले अंग्रेज तैयार करने की जो व्यापक योजना बनाई गई थी वह सफलता की ओर तेजी से बढ़ती गयी। मैकाले ने अंग्रेजी भाषा और विज्ञान को ही भारतीयों की उन्नति का एकमात्र मार्ग बतलाया और पूर्व देशीय भाषाओं के ज्ञान को कोई महत्त्व नहीं दिया।[४५] अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार और भारतीयों में इसके प्रति उत्पन्न उत्सुकता को देखकर उसने कहा था कि थोड़ी सी पाश्चात्य शिक्षा से ही बंगाल में मूर्ति पूजने वाला कोई नहीं रह जायेगा।[४६]

डाक्टर डफ ने अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव को देखकर कहा था कि जिस-जिस दिशा में पाश्चात्य शिक्षा प्रगति करेगी, उस उस दिशा में हिन्दुत्व के अंग टूटते जायेंगे और अन्त में जाकर ऐसा होगा कि हिन्दुत्व का कोई भी अंग साबूत नहीं रहेगा।[४७]

शिक्षा के क्षेत्र में उत्पन्न हुई ऐसी योजनाओं और परिस्थितियों के बीच आर्यसमाज प्रारम्भ से ही सचेत था और भारत के प्राचीन गौरव को स्मृत करते हुए उन दिनों डी.ए.वी. कॉलेजों एवं गुरुकुलों की नींव डाली । इन संस्थाओं की पृष्ठभूमि में भारतीयता कूट-कूट कर भरी हुई थी। डी.ए.वी. कॉलेजों में अंग्रेजी पर बल दिया गया और गुरुकुलों में संस्कृत पर। दोनों पद्धति से चलने वाली इन संस्थाओं में माध्यम हिन्दी को रखा गया।[४८] इसमें शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थी अपने धर्म, संस्कृति और परम्पराओं से परिचित होने का अवसर प्राप्त करते थे।[४९] इससे अपने प्राचीन संस्कृति के प्रति गौरव की भावनाओं के साथ-साथ प्राचीन एवं नवीन ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा का समन्वयात्मक विकास हुआ। डॉ० रामविलास शर्मा ने इस संदर्भ में कहा है कि आर्यसमाज के प्रभाव से दो तरह के शिक्षा संस्थान इस देश में कायम हुए, एक तो पुरानी पद्धति से शिक्षा देने वाले गुरुकुल, दूसरे आधुनिक पद्धति से शिक्षा देने वाले डी.ए.वी. स्कूल और कालेज।[५०]

इन दोनों तरह की शिक्षण-संस्थाओं में महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा-पद्धति को क्रियान्वित करने पर विशेष ध्यान दिया गया। अत: यह आवश्यक है कि हम स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शैक्षिक विचारधाराओं से परिचित हों।

**स्वामी दयानन्द के शिक्षा सम्बन्धी विचार** – ईसाइ शिक्षण संस्थाएँ व उनकी नीतियाँ जब भारतीय समाज में बड़ी तेजी के साथ फैल रही थीं, अंग्रेज अध्यापक भारतीयों को उनके सभ्यता व संस्कृति से विमुख करने के लिए निरन्तर प्रयासरत थे। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की आलोचना इन शिक्षण संस्थाओं का प्रमुख विषय था। यदि इस समय कोई भारतीय ढंग की बात करता था तो उसे यहाँ तर्क विरुद्ध, विद्याविरुद्ध, इतिहासविरुद्ध,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


बुद्धिविरुद्ध, प्रमाणशून्य कहानी अथवा मिथ्या कहकर उपहास किया जाता था।[५१] भारतीय मन-मस्तिष्क को ईसाइयत की ओर आकृष्ट करने का भरपूर प्रयत्न विदेशी लेखकों व अध्यापकों द्वारा किया जाता रहा। ऐसे समय में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक विचारधारा को विश्व का पथ परिष्कारक कहा और इस विचारधारा को प्रभावी बनाने के लिए इसे भारतीय जनमानस में प्रचारित करने के ध्येय से शिक्षा विषयक नियम प्रतिपादित किए।

भारतीय जनमानस का एक बहुत बड़ा हिस्सा अपनी मूल धरोहर को छोड़कर पाश्चात्यवादी शिक्षा और दर्शन की ओर अत्यधिक उत्सुकता प्रदर्शित करता था। स्वामी दयानन्द ने उनके बीच वैदिकज्ञान और संस्कृति का प्रचार किया। स्वामी दयानन्द का जीवन दर्शन, व्यवहार व उनकी शिक्षा वेदों पर आधारित थी। उनका आदर्श वाक्य "वेदों की ओर लौट चलो"[५२] था। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि जिस प्रकार प्राचीनकाल में भारत सब देशों का अग्रणी था और मनुस्मृति के शब्दों में सभी देशों का गुरु था, इसी प्रकार वर्तमान समय में भी इस देश को संसार का शिरोमणि देश बनाया जाना चाहिए।[५३] इसके लिए तेजी से बढ़ती हुई भारतीय समाज में ईसाइयत के प्रभाव को कम करने के लिए वे सदैव प्रयत्नशील थे। चर्चमिशनरीसोसायटी के उत्तरी-भारत में सबसे पुराने ईसाई प्रचारक पी.एस. जेंकर ने इस विषय में कहा कि स्वामी जी से बात करने पर ज्ञात हुआ कि वे (स्वामी दयानन्द) सबसे अधिक इस बात से चिन्तित थे कि ईसाइयों के प्रभाव को भारत में किस प्रकार कम किया जाए।[५४]

स्वामी दयानन्द ने वैदिक साहित्य में निहित अक्षय ज्ञान को जनमानस में प्रचारित करने के ध्येय से भारतीय शिक्षा को आधार बनाया तथा अपने संस्कृत साहित्य के मूल धरोहर से भारतीयों को परिचित कराया। यहाँ ध्यान देने योग्य है कि जहाँ एक ओर ईसाइमिशनरियों द्वारा भारत में पाश्चात्य-शिक्षा का बड़ी तेजी के साथ प्रसार किया जा रहा था वहीं दूसरी ओर पाश्चात्य विद्वानों द्वारा भारत की प्राचीन संस्कृत साहित्य की जानकारी के लिए अनुसन्धान कार्य भी जोरों पर किया जा रहा था। जर्मनी का फ्रेडरिक मैक्समूलर (सन्-१८२३-१९००) ने वेदों का भाष्य किया था।[५५] सन्-१८५९ ई० में समस्त प्राचीन संस्कृत साहित्य को तिथिक्रम से ठीक किया। इसके बाद ही उन्होंने ऋग्वेद संहिता का संस्करण किया। इस पुस्तक का भारतवर्ष में बड़ी कृतज्ञता के साथ स्वागत हुआ।[५६]

मैक्सूलमर ने वैदिक वाङ्मय का भरपूर अध्ययन किया और अपना अनुभव व्यक्त करते हुए कहा कि भारतीय संस्कृत साहित्य के विशाल भण्डार के एक कोने से भी हम लोग अभी तक पूर्ण परिचित नहीं हो सके हैं।[५७] आगे उन्होंने कहा कि मैं यूरोपवासी (जो केवल यूनानी, रूसी और यहूदी भाषा में पले हैं) कहाँ के साहित्य से विवेक दृष्टि प्राप्त करें जो हमारे जीवन को अधिक पूर्ण, सर्वतोन्मुखी, अधिक विराट् या यों कहें कि सच्चे अर्थों में मानवीय बनाने के लिए अधिक आवश्यक है, कहाँ से मिलेगा हमें वह तत्त्व जो केवल इसी जीवन के लिए नहीं अपितु एक उत्कृष्ट और शाश्वत जीवन के लिए अनिवार्य है तो वह मैं पुनः भारत की ओर संकेत करूँगा।[५८]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इस सम्बन्ध में विलियम एच. गिलबर्ट ने कहा कि मानव संस्कृति के इतिहास में सभी क्षेत्रों में भारतीयों का अंशदान सबसे अधिक महत्त्व का है। भारतवर्ष से हमने वैराग्य, संन्यास, दर्शनशास्त्र और जीवन के विभिन्न आयामों के विचार ग्रहण किए हैं। समस्त विश्व भारतवासियों का ऋणी है।[५९]

विद्वान् आर्नाल्ड टायन्बी ने कहा है कि मानव इतिहास के भयावह क्षण में केवल भारतीय विचारधारा ही मानव जाति की मुक्ति का एक मात्र मार्ग है। इसमें इस प्रकार की रुझान और भावना है कि जिसमें पूरी मानव जाति को एक कुटुम्ब के रूप में विकसित करना सम्भव हो सकता है।[६०]

इस प्रकार भारतीय संस्कृत साहित्य के अनुसन्धान कार्य से पाश्चात्य विद्वानों को एक नवीन प्रेरणादायक शक्ति प्राप्त हुई। भारत की कीर्ति को विश्वव्यापी बनाने की दिशा में सबसे अधिक प्रयास जर्मनी के विद्वानों ने ही किया था। जर्मनी के दार्शनिकों में से शेलिंग, फिक्टे, हीगेल और शापेनहार कवियों में से गेटे, शीलर, नोवालिस और ब्रण्टेनों तथा इतिहासकारों में से हर्डर और श्लीगल आदि ने भारतीय संस्कृति के प्रति अपना मुक्त अभिनन्दन व्यक्त किया था। इस सूचना पर वे आनन्द से पागल हो उठे कि भारत आदि धर्म की जन्मभूमि है, भारत विश्वधर्म का स्थान है, भारत की भूमि मनुष्यों की सर्वोत्तम जाति की जन्मदात्री एवं सर्वश्रेष्ठ साहित्य, दर्शन और अध्यात्म शास्त्र की क्रीड़ास्थली है।[६१]

दाराशिकोह द्वारा फारसी में अनुवादित उपनिषदों को एक फ्रेंच नवयुवक दुपरोन ने लैटिन में उसका अनुवाद करके "औपनिखत" के नाम से प्रकाशित किया जिसे पढ़कर आर्थर शापेनहार के मुँह से यह उद्गार निकला कि इसने मेरी आत्मा की गहराईयों को हिकलोर दिया है।[६२] यह दुपरोन यहाँ से कोई अस्सी पाण्डुलिपियाँ अपने साथ फ्रांस ले गया था।[६३]

भारत के अतीत का अनुसन्धान कार्य इस प्रकार पहले अंग्रेजों ने आरम्भ किया और निष्कर्ष में पहुँचे कि भारत संसार में सबसे महान देश है। उसकी सभ्यता सबसे पुरानी है और साहित्य और दर्शन की तुलना संसार की किसी भी जाति के दर्शन और साहित्य से नहीं की जा सकती।[६४]

स्वामी दयानन्द ने इसीलिए भारतीय संस्कृति के मूलाधार "वेद" को अपने जीवन का आधार बनाया। यह प्रेरणा स्वामी दयानन्द को अंग्रेजी शिक्षा से प्राप्त नहीं हुई बल्कि पारिवारिक शिक्षा और संस्कारों से प्राप्त हुई थी क्योंकि इनका परिवार सामवेदी औदीच्य ब्राह्मण था। पारिवारिक शिक्षा के कारण ही १४ वर्ष की अवस्था आते-आते स्वामी दयानन्द ने सम्पूर्ण यजुर्वेद को कण्ठस्थ कर लिया था और अन्य वेदों का स्वल्प अभ्यास भी किया था। इनके पिता स्वयं वेदों के महान् विद्वान् थे। स्वामी दयानन्द को अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ।[६५] पारिवारिक व भारतीय प्राचीन शिक्षा पद्धति में अध्ययन करने का उन्हें सौभाग्य मिला था।

पारिवारिक शैक्षिक संस्कारों के कारण ही स्वामी दयानन्द ने पाश्चात्य शिक्षा की ओर ध्यान कभी नहीं दिया और भारतीय संस्कृत साहित्य के अक्षय ज्ञान को प्राप्त करने के लिए

RajGuru·Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे। इसीलिए उनके शिक्षा विषयक मन्तव्यों एवं सिद्धान्तों में भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति (वैदिक शिक्षा) का अनुसरण किया गया।[६६] उनका दृढ़ मत था कि हमारे वर्तमान समाज व शिक्षा की अधोगति का मुख्य कारण वैदिक संस्कृति, परम्पराओं और सभ्यता का उपेक्षा करना है।[६७]

स्वामी दयानन्द की दृष्टि में वर्ग भेदभाव नहीं था, गरीब-अमीर शिक्षित-अशिक्षित सभी समान थे। वैदिक पुनर्जागरण उनके जीवन का लक्ष्य था।[६८] वैदिक शिक्षा और वैदिक विचारधारा को वे केवल भारत में ही नहीं बल्कि अन्य देशों में भी प्रचारित करना चाहते थे।[६९] प्राचीनकाल में सभी को शिक्षा का समान अवसर प्राप्त होता था। वेद का ज्ञान सबके लिए था।[७०] इसलिए उनका मन्तव्य था कि शिक्षा सबके लिए है । समाज के किसी वर्ग को वे शिक्षा से वंचित नहीं रखना चाहते थे। स्त्रियों और शूद्रों को भी वे विद्या ग्रहण का अधिकारी मानते थे।[७१] शिक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण उद्देश्य छात्रों में नैतिक गुणों का विकास मानते थे, जिससे एक अच्छे चरित्र का निर्माण हो सके। उनके मतानुसार नैतिकता का अर्थ "न्यायोचित कार्य" था।[७२] वे मस्तिष्क और शरीर से अधिक चित्त और आत्मा को शिक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण मानते थे।[७३] वे महान् दार्शनिक योगी के साथ-साथ व्यावहारिक शिक्षाशास्त्री भी थे।[७४] ईश्वर, आत्मा एवं विश्व ब्रह्माण्ड की शाश्वत शक्ति में वे पूर्ण आस्था रखते थे।[७५] इसीलिए हिन्दुओं के मानसिक तथा आध्यात्मिक दृष्टिकोण में पूर्ण क्रान्ति लाना ही उनका लक्ष्य बन गया था।[७६] उन्होंने मानसिक और आध्यात्मिक ज्ञान के विकास के लिए प्राचीन शिक्षा पद्धति की योजना समाज के सम्मुख प्रस्तुत की।

स्वामी दयानन्द ने गुरुकुलीय पद्धति द्वारा गुरु-शिष्य परम्परा की प्रवृत्ति का उद्धार किया।[७७] ज्ञातव्य है कि महर्षि दयानन्द ने स्वयं जिन शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की थी उनके लिए उन्होंने "गुरुकुल" नाम का प्रयोग नहीं किया था। पर उन्होंने जिस शिक्षा पद्धति का अपने ग्रन्थों में प्रतिपादन किया था, ...और प्राचीन भारत में पठन-पाठन के लिए जिस प्रकार के आरण्यक आश्रम व आचार्यकुल विद्यमान थे, उन्हें दृष्टि में रखकर आर्यसमाज द्वारा गुरुकुलों की स्थापना की परम्परा का प्रारम्भ हुआ । इसमें महर्षि के शिक्षा-विषयक मन्तव्यों को क्रियान्वित करने का प्रयत्न किया गया।[७८]

शिक्षा विषयक विचारों का निरूपण करते हुए स्वामी दयानन्द ने भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति को अपने सम्मुख रखा था। प्राचीन भारत के आचार्यकुलों, आरण्यक आश्रमों और विद्यापीठों के आधार पर उन्होंने शिक्षा के सम्बन्ध में जो सिद्धान्त प्रतिपादित किए थे, वे निम्नलिखित है-

१- बालकों और बालिकाओं की शिक्षा के लिए पाठशालाओं (गुरुकुलों व आचार्यकुलों) में भेजना माता-पिता के लिए अनिवार्य होना चाहिए।

२- लड़कों और लड़कियों की पाठशालाएँ पृथक् एवं एक-दूसरे से दूर होनी चाहिए। महर्षि सहशिक्षा के विरोधी थे। उनके मत में कन्याओं की शिक्षण संस्थाओं में सब शिक्षक,कर्मचारी व सेवक स्त्रियाँ होनी चाहिए और पुरुषों की शिक्षण संस्थाओं में पुरुष।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३- शिक्षण संस्थाओं (गुरुकुलों) में सब विद्यार्थियों को एक समान भोजन, वस्त्र, निवास तथा शिक्षा दी जानी चाहिए, चाहे कोई राजकुमार व राजकुमारी हो और चाहे दरिद्र की सन्तान हो। शिक्षा के काल में विद्यार्थियों में धनी व निर्धन, ब्राह्मण व शूद्र, छूत व अछूत आदि का कोई भी भेद न कर सबके प्रति एक सदृश व्यवहार किया जाना चाहिए।

४- शिक्षण संस्था (गुरुकुल) में प्रवेश के पश्चात् बालकों व बालिकाओं का अपने माता-पिता तथा परिवार के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहना चाहिए। न माता-पिता अपनी सन्तान से मिल सके और न पत्र-व्यवहार द्वारा उससे सम्पर्क कर सकें। महर्षि को यह अभिप्रेत था कि सात-आठ वर्ष की आयु हो जाने पर बालक एवं बालिकाएँ पूर्णतया आचार्य व शिक्षक वर्ग के प्रभाव में रहें, ताकि पारिवारिक वातावरण से पृथक् होकर व अपना स्वतन्त्र रूप से विकास कर सकें।

५- शिक्षण संस्थाएँ (गुरुकुल) नगरों व ग्रामों से दूर होनी चाहिए। महर्षि के मत में विद्याभ्यास के काल में विद्यार्थियों का शहरों व ग्रामों के वातावरण से दूर रहना आवश्यक है, ताकि वे नागरिक जीवन के आकर्षणों से मुक्त रहते हुए अपना सब ध्यान विद्याध्ययन में लगा सकें। पर महर्षि को यह अभिप्रेत नहीं था कि विद्यार्थी सांसारिक जीवन और उसकी समस्याओं से सर्वथा अपरिचित रहें। इसीलिए उन्होंने यह व्यवस्था की थी कि गुरुकुलों के विद्यार्थी अपने अध्यापकों के निरीक्षण में नगरों व ग्रामों में आ-जा सकें।

६- गुरुकुल के विद्यार्थियों का जीवन तपस्यामय होना चाहिए। ब्रह्मचर्य व्रत का अविकल रूप से पालन करना उनके लिए अत्यन्त आवश्यक है। ब्रह्मचारियों और ब्रह्मचारिणियों का जीवन तपस्वी, इन्द्रिय-संयमी, लोभरहित, पवित्र, सन्तुष्ट और भक्तिमय होना चाहिए। यमों और नियमों के पालन को महर्षि ने ब्रह्मचर्यव्रत के लिए बहुत उपयोगी माना है।

७- शिक्षण संस्थाओं (गुरुकुलों) में गुरुओं का अपने शिष्यों के साथ वही संबंध होना चाहिए, जो माता-पिता का सन्तान के साथ होता है। परन्तु शिष्यों को लाड़-चाव करने के महर्षि विरुद्ध थे। शिष्यों के हित की दृष्टि से कभी-कभी यह आवश्यक हो जाता है कि उन्हें कुमार्ग से हटाने के लिए ताड़ना का आश्रय लिया जाए।

८- शिक्षण संस्थाओं में जो व्यक्ति अध्यापन का कार्य करें, उन्हें न केवल विद्वान् ही होना चाहिए, अपितु यह भी आवश्यक है कि वे धार्मिक तथा सदाचारी भी हों। गुरु वर्ग का विद्वान् तपस्वी, धार्मिक तथा सदाचारी होना महर्षि की दृष्टि में आवश्यक है।[७९]

महर्षि के शिक्षा विषयक सिद्धान्तों में शिक्षा सबके लिए व अनिवार्य, बिना भेदभाव के समान शिक्षा व्यवस्था, बालक-बालिकाओं के लिए अलग-अलग स्कूलों एवं कॉलेजों की व्यवस्था, बालक और बालिकाएँ (सात-आठ वर्ष की आयु होने पर) शिक्षक वर्ग के प्रभाव में पारिवारिक वातावरण से पृथक् होकर रहें, शिक्षण संस्थाओं को नगरों व ग्रामों से दूर रखने का विचार, गुरुकुल के विद्यार्थियों का जीवन तपस्यामय व ब्रह्मचर्यमय होने पर बल, शिष्यों को कुमार्ग से हटाने के लिए सख्ती पर बल, आचार्य को विद्वान् के साथ ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


साथ तपस्वी, धार्मिक तथा सदाचारी होना आदि प्रमुख विषयों का समावेश था। इस प्रकार स्वामी दयानन्द की शैक्षणिक विचारधारा में प्रजातांत्रिक स्वरूप का स्पष्ट होना है। स्वामी दयानन्द स्कूल के पूर्णत: प्रजातांत्रिक संगठन का समर्थन करते थे।[८०]

शिक्षा विषयक सिद्धान्तों के साथ ही उन्होंने पठन-पाठन विधि के विषय में भी अपने विचार निरूपित किए थे। आर्यजगत् में इस पठन-पाठन विधि को आर्षपाठविधि कहा जाता है।[८१] आर्षपाठविधि में धर्म का स्थान प्रधान व सर्वोपरि था। इसके साथ ही साथ सांसारिक जीवन के लिए उपयोगी विधाओं के पठन-पाठन का भी उसमें समावेश था।[८२]

स्वामी दयानन्द ने संस्कृत में उपलब्ध समस्त राष्ट्रीय वाङ्गमय को आर्ष और अनार्ष श्रेणियों में विभक्त किया था। उनके अनुसार आर्षग्रन्थों की रचना उन मेधावी, विमल-प्रज्ञा के धनी उदारशय युक्त ऋषियों ने की है जिन्हें मानव कल्याण ही सर्वांश अभीष्ट था।[८३] इसीलिए स्वामी दयानन्द ने पठन-पाठन विधि का प्रावधान किया था। आर्यजगत् में इसी को आर्षपाठविधि कहा जाता है।[८४] आर्षपाठविधि में आत्मा, परमात्मा और प्रकृति के तत्त्वों को जानकर उनसे यथायोग्य उपकार लेने का प्रावधान है।[८५] इस पाठविधि से सृष्टि नियामक परमेश्वर का ज्ञान विद्यार्थियों को कराकर अध्यात्मिकता की ओर उन्मुख करना लक्ष्य था ताकि उनमें नास्तिकता का कुसंस्कार जागृत न हो सके और अपनी संस्कृति, सभ्यता एवं परम्पराओं के प्रति निष्ठा की भावना दृढ़ता के साथ बनी रहे।

**आर्षपाठविधि–** स्वामी दयानन्द द्वारा निर्धारित आर्षपाठविधि में २१ वर्ष की अवधि तक प्रमुख विषयों के अध्ययन का प्रावधान किया गया था।[८६] उन्होंने कहा कि जब ५-५ वर्ष के लड़का-लड़की हों तब देवनागरी अक्षरों का ज्ञान माता-पिता द्वारा करवा देना चाहिए, साथ ही अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों का भी।[८७] आठ वर्ष की आयु प्राप्त करने पर बालक-बालिकाओं को पाठशाला या गुरुकुल में भेज देना चाहिए।[८८] गुरुकुल में जाकर छात्र-छात्राओं को सबसे पहले संस्कृत भाषा और व्याकरण के अध्ययन करने का विधान किया गया था। इसके लिए स्वामी दयानन्द ने पाणिनिमुनि कृत ''शिक्षा'' और ''अष्टाध्यायी'' का आश्रय लेना समुचित माना है।[८९]

विषय के अध्ययन के लिए अवधि के साथ पाठ्यक्रम का निर्धारण भी स्वामी दयानन्द द्वारा किया गया था। वे निम्नलिखित हैं -[९०]

१- पाणिनि का स्वरशास्त्र- छात्रों द्वारा सीखी जाने वाली यह प्रथम विद्या है ताकि वे शब्दों का सही उच्चारण कर सकें।
२- ज्ञान और व्याकरण का विज्ञान- अवधि-३ वर्ष।
३- निघण्टु और निकार्ता (वेदों के शब्दकोश और दर्शन का अध्ययन)- अवधि ६ से ८ माह।
४- छन्द-शास्त्र (कविता के नियम)-अवधि ४ माह।
५- मनुस्मृति, वाल्मीकि रामायण, विदुरनीति और महाभारत अवधि १ वर्ष।
६- छ: शास्त्र (दर्शन)- ऋषियों की टिप्पणियों के साथ- अवधि ३ वर्ष।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



७- चार उपशास्त्र- (अ) आयुर्वेद (औषधि-विज्ञान), (ब) प्रशासन-शास्त्र, (स) गन्धर्व वेद (संगीत-शास्त्र तथा उसकी कला), (द) अथर्ववेद (व्यावसायिक तथा तकनीकि विज्ञान और उनकी कलाएँ), अवधि-२ वर्ष।

८- ज्योतिष-शास्त्र (अंकगणित, बीजगणित, भूगोल, खगोल और भू-गर्भ विद्या), अवधि-२ वर्ष।

इस प्रकार स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित आर्षपाठविधि में धार्मिक विषयों का स्थान सर्वोपरि था। साथ ही इसमें व्यावहारिक प्रशिक्षण भी दिए जाने का प्रावधान किया गया था। आलोचकों का मत है कि शिक्षा के ऐसे आदर्श का समर्थन करते हुए स्वामी दयानन्द आश्चर्यपूर्ण ढंग से आधुनिक समाज की भौतिक दशाओं से अनभिज्ञ थे। शिक्षाशास्त्री के रूप में वे कल्पना प्रधान व्यक्ति थे, वें एक अव्यावहारिक द्रष्टा थे।[११] किन्तु यहाँ यह स्पष्ट है कि स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा प्रणाली में अध्यात्मिक शक्ति की जागृति पर विशेष बल, चरित्र निर्माण और ब्रह्मचर्यव्रत का कठोरता के साथ पालन, समानता के सिद्धान्त आदि का समावेश था, जिसके फलस्वरूप आगे आर्यसमाज के चिन्तकों ने स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित शिक्षा पद्धति को अपने शैक्षिक योजनाओं में प्रमुखता के साथ प्रस्तुत किया। डी.ए.वी एवं गुरुकुलों में स्वामी दयानन्द के शैक्षिक विचारों को आर्यसमाज के अनुयायियों ने रखने का अथक प्रयास किया। लेकिन आगे उनमें आपसी मतभेद व विरोध की भावनाओं का भी जन्म हुआ।

**उत्तर प्रदेश में स्वामी दयानन्द के बाद आर्यसमाज और शिक्षा –** शिक्षा के विकास में आर्यसमाज ने जो विशाल एवं क्रान्तिकारी कार्य किया है उसका हमारे देश की राष्ट्रीय जागृति तथा सामाजिक, धार्मिक, बौद्धिक चेतना और नव निर्माण में गौरवपूर्ण स्थान रहा है। इसके मूल में स्वामी दयानन्द द्वारा दिया गया आदर्श वाक्य ''वेदों की ओर लौट चलो'' सदैव आर्यसमाज में प्रेरणा का स्रोत रहा। शिक्षा के क्षेत्र में दी गयी उनकी नवीन प्रेरणा के फलस्वरूप ही भारत में डी.ए.वी. एवं गुरुकुल शिक्षण संस्थाओं का जन्म हुआ।

वैसे देखा जाए तो आर्यसमाज का वास्तविक शैक्षणिक कार्य स्वामी दयानन्द की मृत्यु के पश्चात् प्रारम्भ हुआ था। आर्यसमाज आन्दोलन के नेताओं ने अनुभव किया कि राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के बिना देश में वांछित सांस्कृतिक पुनर्जागरण सम्भव नहीं है। इसके लिए एक नवीन शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है। उनका मानना था कि सामयिक काल में प्रचलित सरकारी शिक्षा प्रणाली (पाश्चात्य शिक्षा) भारतीय समाज के लिए अनुपयुक्त है तथा क्रिश्चियन शिक्षणालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को अपने धर्म, संस्कृति तथा परम्पराओं का ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। संस्कृत और आर्यभाषा की पढ़ाई उसमें नहीं होती थी। ऐसी स्थिति में उत्तर प्रदेश के विविध भागों में आर्यसमाज द्वारा शिक्षा के प्रसार के लिए गुरुकुल व डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं के साथ ही कन्या शिक्षण संस्थाएँ, उपदेशक विद्यालय, आर्यस्कूल एवं कॉलेज, संस्कृत विद्यालय, आर्यडिबेटिंगक्लब की स्थापना की गयी। आर्यडिबेटिंगक्लब का उद्देश्य आर्य युवकों में वक्तृत्वकला का विकास करना था, जिससे वे अपने भाषणों द्वारा आर्यसमाज के शैक्षणिक कार्यक्रमों को जन-जन तक पहुँचा सकें।[१२] यह आर्यडिबेटिंगक्लब का स्थान बाद में आर्यकुमारसभा ने ले लिया था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



क्रिश्चियन मिशनों की प्रभावशीलता को कम करने और भारतीयों में आर्य संस्कृति को जागृत करने के ध्येय से भारतीय संस्कृति की संरक्षता में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का जन्म हुआ। डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं की स्थापना आर्यसमाज का शिक्षा के क्षेत्र में प्रथम प्रयास था।[९३] महर्षि दयानन्द की मृत्यु के बाद उनके आदर्शों को चिरस्थायी रूप प्रदान करने के निमित्त आर्यसमाज के चिन्तकों ने शिक्षा के प्रसार, जन-जागृति और समाज-सेवा के दृष्टिकोण से डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का निर्माण किया । सर्वप्रथम लाहौर में सन्-१८८५ ई० में दयानन्दऐंग्लोवैदिककॉलेजट्रस्ट एवं मैनेजमेंट सोसायटी की स्थापना आर्यसमाज के महान् कार्यकर्ताओं द्वारा की गयी एवं इसे "समिति पंजीकरण अधिनियम-१८६०" के अन्तर्गत सन्-१८८४ ई० में पंजीकृत कराया गया। यह एक आन्दोलन का शुभारम्भ था जो आज देश-विदेश में डी.ए.वी. आन्दोलन के नाम से जाना जाता है।[९४]

लाहौर में १ जून सन्-१८८६ ई० को पहला डी.ए.वी. स्कूल खोला गया था।[९५] भारतीय शिक्षा के इतिहास में १ जून १८८६ ई० का दिन बड़े महत्त्व का है क्योंकि इसी दिन इस संस्था की स्थापना हुई थी जो आगे चलकर डी.ए.वी. आन्दोलन का अग्रेसर सिद्ध हुआ जिसके अन्तर्गत सम्पूर्ण भारत में विशेषत: पंजाब और उत्तरी प्रान्तों में अनेक दयानन्दऐंग्लोवैदिकस्कूल और कॉलेज खोले गए।[९६]

लाहौर डी.ए.वी. स्कूल देश की प्रथम संस्था थी जिसका प्रबन्ध पूर्णत: भारतीयों के हाथों में था। आर्थिक दृष्टि से यह सरकारी अनुदान, राजकीय उदारता या कुलीन वर्ग की सहायता पर निर्भर नहीं था। शासकीय शिक्षा प्रणाली के विपरीत इसकी विचारधारा निश्चय ही राष्ट्रवादी थी।[९७] डी.ए.वी. के कार्यकर्ताओं में भारतीय दर्शन, संस्कृति एवं जीवन दर्शन के प्रति अपार विश्वास था ।[९८] इसके आमुख में लिखा है कि सन्तुलित विचार वाले सभी व्यक्ति यह स्वीकार करेंगे कि शिक्षा का सबसे अच्छा उपयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि इसके स्वर तथा स्वरूप को राष्ट्रीय बनाया जाए।[९९] इस प्रकार लाहौर में स्थापित प्रथम डी.ए.वी. स्कूल का बड़ी तेजी के साथ उत्थान हुआ। इसके फलस्वरूप उत्तर भारत में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थानों का जाल सा बिछ गया। उत्तर प्रदेश भी इससे अछूता न रहा। यहाँ भी अनेक डी.ए.वी. स्कूल और कालेजों का विस्तार हुआ। यहाँ शिक्षा के प्रसार में आर्यसमाज का योगदान विषय पर विचार करने के पूर्व यह आवश्यक है कि लाहौर में स्थापित डी.ए.वी. स्कूल के योजनाओं एवं पृष्ठभूमि पर विचार किया जाए क्योंकि इसी आधार पर उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं की योजनाओं को क्रियान्वित किया गया। इससे प्रान्त में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का चौमुखी विकास हुआ।

**लाहौर में स्थापित डी.ए.वी. स्कूल की पृष्ठभूमि–** आर्यसमाज द्वारा स्थापित अग्रणीय संस्था लाहौर का दयानन्द ऐंग्लोवैदिकस्कूल था ।[१००] ८ नवम्बर सन्-१८८३ ई० के दिन महर्षि दयानन्द सरस्वती की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए दयानन्द ऐंग्लोवैदिकस्कूल तथा कॉलेज की स्थापना का जो प्रस्ताव लाहौर में आयोजित सार्वजनिक सभा द्वारा स्वीकृत किया गया था, उससे आर्य जनता में अत्यधिक उत्साह का संचार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हुआ।[१०१] इसके फलस्वरूप लाहौर में डी.ए.वी. स्कूल का जन्म हुआ। यह स्कूल निरन्तर वृद्धि करता गया और सन्-१८८६ ई० में यह कालेज का रूप ग्रहण कर लिया।[१०२] सन्-१८९४ ई० में यहाँ बी.ए. की कक्षाएँ आरम्भ की गयीं और अगले वर्ष संस्कृत में एम.ए. की कक्षाएँ शुरू हुई। सन्-१८९६ ई० में यहाँ इंजीनियरिंग क्लास[१०३] और सन्-१८९७ ई० में दर्जी क्लास खुला। सन्-१८९९ ई० में आयुर्वेदिक शिक्षा का विभाग भी खोला गया।[१०४] इस कालेज में सन्-१९०० ई० में ३५५ छात्र पंजीकृत हुए, सन्-१९१४ ई० में ९६१ छात्र कालेज में तथा स्कूल में १७३७ छात्र थे।[१०५] इस प्रकार लाहौर डी.ए.वी. स्कूल निरन्तर विकसित होता गया और इसमें व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा का भी समुचित प्रबन्ध किया गया था।

लाहौर डी.ए.वी. स्कूल के लिए महात्मा हंसराज ने अपना जीवन अर्पित कर दिया था और इस कार्य में लाला लाजपत राय भी सहयोगी बनकर समाज सेवा एवं डी.ए.वी. कॉलेज के लिए अर्पित हो गए थे।[१०६] सन्-१८८६ ई० के फरवरी महिना के अन्तिम दिनों में लाहौर आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव रखा गया था। इस अवसर पर भाई भगवती, लाला लाजपत रायं एवं पं० गुरुदत्तर्जी के बड़े प्रभावशाली भाषण हुए और दयानन्द कालेज के स्थापनार्थ जनता को प्रेरित किया गया था। इसी समय महात्मा हंसराज ने २८ फरवरी १८८६ ई० के दिन वेदी पर जाकर सारा जीवन अवैतनिक प्रिंसिपल के रूप में कार्य करने की घोषणा की।[१०७] उन्होंने २२ वर्ष की आयु में जो महान् व्रत लिया था, वह ५२ वर्ष तक निर्बाध गति से चलता रहा। वे २५ वर्ष डी.ए.वी. स्कूल और डी.ए.वी. कालेज लाहौर में अवैतनिक मुख्याध्यापक और प्रथम प्रिंसिपल के रूप में कार्य करते रहे।[१०८]

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि मिशनरी स्कूलों में भारतीय संस्कृति और सभ्यता की आलोचना करना ईसाई शिक्षकों का मुख्य कार्य था। मिशनरी स्कूल में ही महात्मा हंसराज का नाम लिखा दिया गया था। वहाँ के हेडमास्टर साहब ने भारतीय सभ्यता का खण्डन किया। उन्होंने कहा कि आर्यों के पुरखे पत्थरों के पूजने वाले थे, उनकी सभ्यता सबसे गिरी हुई थी और उनके धर्म के कुछ भी तत्त्व नहीं हैं। बालक हंसराज ने इसका प्रबल विरोध किया और वे खड़े होकर हेडमास्टर की बातों के विरुद्ध कहना आरम्भ किया। इसी के बाद हंसराज ने दृढ़ निश्चय किया था कि वैदिकधर्म प्रचार बहुत जोर से होना चाहिए।[१०९] यह निश्चय ही उनके जीवन एवं प्रथम डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना का आधार बना।

पंजाब की वीर भूमि को ही यह गौरव प्राप्त है कि जिसने आर्यसमाज को स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, लाला देवराज और लाला लाजपत राय जैसे चारों महापुरुषों को एक काल में प्रदान किया।[११०] जिन्होंने आर्यसमाज आन्दोलन को एक नयी दिशा दी। फलस्वरूप पंजाब में डी.ए.वी., गुरुकुल शिक्षण संस्थाओं के साथ ही कन्या महाविद्यालय का जन्म हुआ। लाहौर में ही आर्यसमाज के दस नियम निर्मित किए गए थे जो सर्वत्र आर्यसमाजों के लिए मान्य हुए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


लाहौर डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना के निमित्त इस समय एक उपसमिति गठित हुई थी। उसमें लाला लालचन्द (उपसमिति के प्रधान), लाला मदन सिंह, लाला जीवनदास, पं० गुरुदत्त विद्यार्थी, भाई जवाहर सिंह (उपसमिति का सचिव) जैसे आर्यसमाज के कार्यकर्ता थे।[१११] उपसमिति के प्रधान द्वारा कालेज की योजना का प्रारूप तैयार कर विविध आर्यसमाजों के पास विचारार्थ भेजा गया था। इस प्रारूप में ऐंग्लो वैदिक कालेज की स्थापना की आवश्यकता को इस प्रकार दर्शाया गया था- "हम एक ऐसी शिक्षण संस्था की स्थापना करना चाहते हैं, जिसमें वर्तमान शिक्षा पद्धति के गुणों एवं लाभों को कायम रखते हुए उसकी त्रुटियों को दूर किया गया हो। इस शिक्षण संस्था का मुख्य उद्देश्य यह होगा कि राष्ट्रभाषा और अन्य लोकभाषाओं के अध्ययन को प्रोत्साहित कर शिक्षित वर्ग और अशिक्षित जनता के बीच के भेद को दूर कर सबको परस्पर सम्बद्ध कर दिया जाए, प्राचीन संस्कृत के अध्ययन पर जोर देकर नैतिक और आध्यात्मिक ज्ञान का प्रसार किया जाए, अनुशासित जीवनचर्या द्वारा शक्ति सम्पन्न व सही आदतों के निर्माण में सहायता की जाए, अंग्रेजी साहित्य के गम्भीर परिचय को प्रोत्साहित किया जाए, भौतिक एवं व्यावहारिक विज्ञानों के ज्ञान के प्रसार द्वारा देश की भौतिक उन्नति में सहायक हुआ जाए।"[११२]

इस प्रकार उपसमिति द्वारा बनाए गए प्रारूप में प्राचीन संस्कृत साहित्य के अध्ययन पर बल देते हुए सामयिक शिक्षा प्रणाली के गुणों के साथ ही आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन को डी.ए.वी. की योजनाओं में आत्मसात करने पर बल दिया गया। इसमें प्राच्य और पाश्चात्य विद्याओं तथा ज्ञान-विज्ञान में ऐसे संतुलन को स्थापित करने का प्रयत्न किया गया था। जिससे क़ि विद्यार्थियों को दोनों के लाभ पूर्ण रूप से प्राप्त हो जाए।[११३]

आर्यसमाज द्वारा अपनाए गए शिक्षा में ऐसे सुधारवादी दृष्टिकोण के फलस्वरूप डी.ए.वी. आन्दोलन का विराट् स्वरूप कायम हुआ। इससे उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का अभूतपूर्व विस्तार हुआ।

**उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. आन्दोलन–** उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. आन्दोलन पंजाब के समान ही उन्नीसवीं सदी के अन्त होने से पूर्व ही आरम्भ हो गया था। वैसे ऐंग्लोवैदिकस्कूल की स्थापना करने का विचार आर्यजगत् में स्वामी दयानन्द के जीवनकाल में ही आना प्रारम्भ हो गया था। सन्-१८८२ और सन्-१८८३ ई० के पूर्व भाग में पंजाब और पश्चिमोत्तर प्रदेश (उत्तर प्रदेश) के आर्य समाचारपत्रों में ऐंग्लोवैदिकस्कूल की आवश्यकता पर लेख मिलते हैं। सन्-१८८२ ई० के मई मास में ऐंग्लोवैदिकस्कूल की चर्चा सिद्ध करती है कि दो बातें पहले ही मानी जा चुकी थीं। एक ऐसे शिक्षणालय की आवश्यकता जो वैदिक ग्रन्थों की शिक्षा दे सके और वह शिक्षणालय ऐसा होना चाहिए कि जिसमें अंग्रेजी भाषा और पश्चिम की अर्वाचीन विद्याओं की शिक्षा का प्रबन्ध हो।[११४]

स्वामी दयानन्द की मृत्यु के बाद आर्यसमाज के चिन्तकों ने ऐंग्लोवैदिकस्कूल की योजना को "स्वामी दयानन्द की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए स्मारक के रूप में शिक्षणालय स्थापना करने के कार्यक्रम को कार्यरूप में परिणित किया। प्रारम्भ में स्मारक की चर्चा कहीं पाठशाला के रूप में फलीभूत हुई तो कहीं स्कूल के रूप में परिणत हुई। उत्तर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



प्रदेश के मेरठ जिले में सुशिक्षा प्रचारिणी नाम की सभा और आर्य पाठशाला तथा प्रयाग में किसी न किसी रूप में पाठशाला की स्थापना का कार्य जारी रहा। पंजाब में स्मारक की चर्चा तीन स्थानों पर आरम्भ हुई थी, परन्तु लाहौर के सिवा अन्य किसी स्थान पर वह फलीभूत न हो सकी।[११५]

इस प्रकार लाहौर में जिस भाँति सन्-१८८४ ई० में डी.ए.वी. कॉलेज ट्रस्ट एण्ड सोसायटी का निर्माण किया गया था, वैसे ही कुछ वर्ष पश्चात् सन्-१८९२ ई० में इसी नाम से एक सोसायटी संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) में भी स्थापित की गयी थी। शुरू में इसका कार्यालय मेरठ में था, जिसे सन्-१९०६ ई० में कानपुर ले जाया गया। सन्-१९६२ में इस सोसायटी का नामकरण "दयानन्दशिक्षासंस्थान" बाबू वीरेन्द्र स्वरूपजी की प्रेरणा से कर दिया गया।[११६]

डी.ए.वी. कॉलेज ट्रस्ट एण्ड मैनेजिंग सोसायटी के उद्देश्य लाहौर की भाँति निम्नलिखित निर्धारित किए गए थे-

१- संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) में महर्षि दयानन्द सरस्वती के स्मारक के रूप में एक ऐंग्लोवैदिककॉलेज की स्थापना करना। इस कॉलेज के अन्तर्गत स्कूल, महाविद्यालय और छात्रावास होंगे-

क- आर्यभाषा के अध्ययन को प्रोत्साहित तथा उन्नत करना।

ख- संस्कृत तथा वेदों के अध्ययन को प्रोत्साहित तथा उन्नत करना।

ग- वैदिकधर्म के प्रचार-प्रसार की सुविधाओं को जुटाने के लिए आवश्यक साधनों की व्यवस्था करना।

घ- अंग्रेजी साहित्य और सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक विज्ञानों के अध्ययन को प्रोत्साहित तथा उन्नत करना।

२- ऐंग्लोवैदिककॉलेज के साथ प्राविधिक शिक्षा की भी व्यवस्था करना।

इस प्रकार डी.ए.वी. कॉलेज कमेटी की प्रथम नियमावली जो लाहौर में तैयार की गयी थी इसमें डी.ए.वी. के उद्देश्य निर्धारित करने के साथ ही सदस्यों की योग्यता, अधिकार, कर्त्तव्य एवं स्कूल-कॉलेज खोलने सम्बन्धी नियमों का प्रावधान किया गया है। साथ ही इसकी विशेषता यह है कि मैनेजिंग कमेटी द्वारा जो रिजोल्यूशन पास किया जाए या मीटिंग की कार्यवाही की जाए उसकी रिपोर्ट आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों को भेजना आवश्यक था।

उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. कॉलेज ट्रस्ट एण्ड मैनेजिंग सोसायटी के निर्माण में निम्नलिखित कार्यकर्ताओं का प्रमुख योगदान रहा- श्रीलक्ष्मणस्वरूप प्रधान-देहरादून, यमुनाप्रसाद पाण्डेय- कानपुर, लाला बलदेवसहाय, कानपुर, बाबू आनन्दस्वरूप, मुंशी ज्वालाप्रसाद आदि। इन आर्य सज्जनों के प्रयत्न से सन्-१८९२ में इस सोसायटी की रजिस्ट्री हुई। सोसायटी द्वारा सन्-१८९३ ई० में एक स्कूल मेरठ में खोला गया था, जो उत्तर प्रदेश का प्रथम डी.ए.वी. शिक्षणालय था। बाद में इस शिक्षणालय को सन्-१९०४ ई० में देहरादून स्थानान्तरित कर दिया गया। वहाँ के सज्जन श्री पूर्णसिंह नेगी ने स्कूल के लिए न केवल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


एक विशाल भवन और छात्रावास ही तैयार करा दिया था, अपितु लगभग दो लाख रुपए की सम्पत्ति भी स्कूल के लिए डी.ए.वी. सोसायटी को प्रदान कर दी थी।[११७] मेरठ में जो डी.ए.वी. स्कूल खोला गया था उसका निरन्तर विकास होता गया। यह छोटा सा स्कूल सन्-१९२२ ई० में पूर्ण इण्टरमीडिएट कालेज हो गया और सन्-१९४६ ई० में डिग्री कालेज हुआ। सन्-१९५० ई० में यह पोस्ट ग्रेजुएट कालेज हुआ जिसे आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध कर दिया गया।[११८]

जिस समय यह संस्था इण्टरमीडिएट कालेज का रूप प्राप्त कर चुका था उस समय इसके प्रिंसिपल लक्ष्मणस्वरूप थे, उस समय यहाँ फिजी और आईलैण्ड के विद्यार्थी आकर्षित हुए।[११९] श्री लक्ष्मणस्वरूप जी प्रयाग विश्वविद्यालय के प्रथम एम.ए. उत्तीर्ण करने वालों में से एक थे तथा सरकार ने आपको डिप्टी कलेक्टर भी बनाया।[१२०] मेरठ में स्थापित प्रथम डी.ए.वी. स्कूल की समाज में लोकप्रियता के फलस्वरूप उत्तर प्रदेश के विविध भागों में अन्यत्र डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का क्रमवत तीवग्रति से विस्तार होता गया।

डी.ए.वी. स्कूल और कॉलेजों के साथ पृथक छात्रावासों की व्यवस्था का प्रारम्भ सोसायटी द्वारा की गयी थी क्योंकि इन शिक्षण संस्थाओं में दूर-दूर से विद्यार्थी अध्ययन के लिए आते थे। उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं के प्रति समाज में जागृति आनी प्रारम्भ हुई क्योंकि इन शिक्षण संस्थाओं में वैदिकधर्म और भारतीय संस्कृति के वातावरण में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने की व्यवस्था थी। यहाँ ध्यान देने योग्य है कि डी.ए.वी. कालेज मैनेजिंग कमेटी द्वारा अपनी शिक्षण संस्थाओं में जिस पाठ-विधि को अपनाया गया था, वह सरकार द्वारा स्वीकृत थी। सरकारी तथा क्रिश्चियन शिक्षणालयों में भी यही पाठ-विधि प्रयुक्त की जाती थी।[१२१] लेकिन इसके मूल में एक महत्त्वपूर्ण अन्तर यह था कि इन शिक्षण संस्थाओं का वातावरण प्राचीन भारतीय संस्कृति के अनुरूप था।

डी.ए.वी. शिक्षणालयों के विद्यार्थियों को वे सब लाभ प्राप्त होते थे, जो सरकारी व क्रिश्चियन शिक्षण संस्थाओं में पढ़ने से प्राप्त किए जा सकते थे। सरकार तथा सरकारी संस्थाओं में नौकरी प्राप्त कर सकने और वकालत सदृश पेशों को अपना कर जीवन में सम्मानित स्थान प्राप्त करने के सब अवसर डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं के विद्यार्थियों को भी उपलब्ध थे।[१२२]

डी.ए.वी. आन्दोलन के विषय में सन्-१९४७ ई० के पूर्व जन्मे आर्यसमाज के महान् कार्यकर्ताओं ने जो डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं से जुड़े भी रहे अपने अनुभव के आधार पर बताया कि डी.ए.वी. शिक्षणालयों में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को वैदिक संस्कृति के साथ ही आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की शिक्षाओं की जानकारी प्राप्त होती थी। यहाँ के विद्यार्थी जो छात्रावासों में रहते थे सन्ध्या हवन आदि धार्मिक कृत्यों में सम्मिलित हुआ करते थे। ये विद्यार्थी आर्यसमाज के सिद्धान्तों में आस्था रखते हुए अनुशासित जीवन व्यतीत किया करते थे। आर्यसमाज द्वारा चलाए गए आन्दोलन में अपने शिक्षकों के दिशा निर्देशों के अनुरूप ये विद्यार्थी सम्मिलित भी हुआ करते थे। हैदराबाद सत्याग्रह में डी.ए.वी. से जुड़े उत्तर प्रदेश के अनेक विद्यार्थी सम्मिलित हुए थे। इन विद्यार्थियों में राष्ट्रीयता, देशभक्ति और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



भारतीय संस्कृति के प्रति अपार श्रद्धा व प्रेम की भावनाएँ होती थीं। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में इन विद्यार्थियों का अपूर्व योगदान रहा।

इस प्रकार के निर्दिष्ट विचार डी.ए.वी. डिग्री कालेज, कानपुर से जुड़े संस्कृत अध्यापक डॉ० विजयपाल शास्त्री (आयु-७६ वर्ष), श्रीसूर्यबली पाण्डेय (आयु-८५ वर्ष), जौनपुर, देवीदास आर्य (आयु-७६ वर्ष) कानपुर, श्रीहरवंश लाल कपूर (आयु-७४ वर्ष), डी.ए.वी. आर्यप्रादेशिकसभा के संचालव-नई-दिल्ली, श्रीबुद्धदेवजी (आयु-७२ वर्ष) वाराणसी, आर्यस्माज लल्लापुरा-व्यवस्थापक, श्रीराजाराम आर्य (आयु-७६ वर्ष) डी.ए.वी. डिग्री कॉलेज वाराणसी में सेवक पद पर कार्य कर चुके आर्यसमाजी, डॉ० सच्चिदानन्द शास्त्री (आयु-७२ वर्ष) सार्वदेशिकआर्यप्रतिनिधिसभा मंत्री, डॉ० सम्पूर्णानन्द (आयु-७३) वर्ष-१९४७ के पूर्व डी.ए.वी. इण्टर कॉलेज से हाईस्कूल उत्तीर्ण, आदि ने प्रकट किए।

**पाठ्यक्रम** – डी.ए.वी. के पाठ्यक्रमों में अनेक विषयों का समावेश था जिसमें हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, अंकगणित, भूगोल, उर्दू (विकल्प), इतिहास, भौतिकी विज्ञान, स्वास्थ्य शिक्षा आदि विषयों की पढ़ाई होती थी।

डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं में पाठ-विधि वही रखा गया था जो सरकारी स्कूल और कालेजों में था। लेकिन यहाँ संस्कृत और मातृभाषा के शिक्षा के साथ ही धर्म की शिक्षा भी अनिवार्य रूप से दी जाती थी।[१२३] महर्षि दयानन्द ने प्राचीन भारतीय शिक्षा-पद्धति को सम्मुख रखकर जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया था, इन संस्थाओं द्वारा उन्हें केवल आंशिक रूप से ही क्रियान्वित किया गया।[१२४]

इन्हीं कारणों का परिणाम यह हुआ कि डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं के पाठ-विधि को लेकर आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं में भारी मतभेद हुआ । इसमें वेद तथा संस्कृत शिक्षण का क्या स्तर हो,[१२५] ऐंग्लो और वैदिक का कितना अंश पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किए जाएँ आदि विषय प्रमुख था। इसके फलस्वरूप गुरुकुल प्रणाली का जन्म हुआ। फिर भी डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं द्वारा उत्तर प्रदेश में वैदिकधर्म एवं संस्कृति का अभूतपूर्व प्रचार-प्रसार किया गया। इसके साथ ही डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं के विद्यार्थियों को आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से परिचय भी प्राप्त हुआ।

डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं में सामान्य शिक्षा के साथ ही वेद-वेदांगों की उच्च शिक्षा के लिए पृथक् रूप से व्यवस्था भी की गई थी। संस्कृत शिक्षा व वेद-वेदांगों के अध्ययन के लिए जो पाठ-विधि तैयार की गई थी।[१२६] उसका विवरण निम्नवत् है-

| | | |
|---|---|---|
| **मिडिल स्कूल** | - | अर्थ सहित अष्टाध्यायी तथा मनुस्मृति, रामायण और महाभारत के चुने हुए भाग। |
| **हाईस्कूल** | - | वेदांग प्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के कतिपय अंश। |
| **एफ०ए०** | - | निरुक्त के प्रथम चार अध्याय, पिंगल सूत्र और न्यायशास्त्र। |
| **बी०ए०** | - | वैशेषिक, योग और सांख्यदर्शन, प्रथम छः उपनिषद् और निरुक्त के शेष अध्याय। |

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**एम०ए०** - पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा, महाभाष्य, दस उपनिषदों में से चार उपनिषदें, ऋग्वेद और यजुर्वेद के कुछ सूत्र।
एम०ए० के पश्चात् अध्ययन के लिए-ब्राह्मण ग्रन्थ और वेद।

स्पष्ट है कि डी.ए.वी. के पाठ-विधि का जो निर्धारण आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा किया गया था उसमें प्राच्य और पाश्चात्य शिक्षा का अपूर्व सामंजस्य था। इसमें अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को दोनों विधाओं का अपूर्व लाभ प्राप्त होता था। भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति के अध्ययन से इन विद्यार्थियों में अपने धर्म, परम्पराओं और सभ्यता के प्रति आत्मगौरव की भावना का जन्म हुआ। इसके फलस्वरूप डी.ए.वी. से जुड़े विद्यार्थी एवं शिक्षकों में अपने देश को अंग्रेजी उपनिवेश से स्वतन्त्र कराने की अभूतपूर्व प्रेरणा जाग्रत हुई। अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोह पत्रिका में उल्लेख है कि क्रान्तिकारी डी.ए.वी. कालेज के कक्षा-कक्षों में तख्त पोशों के नीचे छिपा करते थे। भारत-छोड़ो आन्दोलन (सन्-१९४२) के समय व इसके पूर्व डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं में घुस-घुसकर पुलिस ने लाठी एवं गोली चलाई। सन्-१९३० ई० में कानपुर में हुतात्मा सालिगराम को डी.ए.वी. कालेज में घुसकर मार डाला गया था।[१२७]

इस प्रकार डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं में स्वदेशी शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ स्वदेशी संस्कृति व स्वराज्य प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयास जारी रहा। इसके लिए आर्यसमाज ने सदैव संघर्ष किया। आर्यसमाज के महान् विचारक डी० वाल्बे ने स्पष्ट विचार व्यक्त किया है कि डी.ए.वी. का योगदान केवल शिक्षा तक ही सीमित नहीं था बल्कि राष्ट्रीय कार्यकलापों की प्रत्येक गतिविधियों में था।[१२८] उत्तर प्रदेश में डी.ए.वी. आन्दोलन के विकास का अनुमान इस आधार पर लगाया जा सकता है। इस प्रान्त के विविध भागों में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का तीव्रगति से विस्तार हुआ। सन्-१९४७ तक प्रान्त में स्थापित डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं के निम्न विवरणों से समाज में इसके प्रभाव व चौमुखी विकास का परिचय प्राप्त होता है।

**उत्तर प्रदेश में स्थापित डी.ए.वी. विद्यालय (डिवीजन के अनुसार)** – उत्तर प्रदेश में सन्-१८९२ ई० में डी.ए.वी. कॉलेज ट्रस्ट एण्ड सोसायटी का निर्माण हो जाने पर इस सोसायटी से जुड़े आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं ने प्रथम डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना (१८९३ ई०) मेरठ में की। इसके प्रति समाज में उत्सुकता व इसके प्रभाव को देखकर आर्यसमाज के लोगों ने उत्तर प्रदेश के विविध भागों में डी.ए.वी. शिक्षा संस्थानों की स्थापना की। उनमें से स्थापित (सन्-१९४७ तक) कुछ प्रमुख डी.ए.वी. शिक्षणालयों का विवरण निम्नवत है-

**मेरठ डिवीजन-** इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम डी.ए.वी. स्कूल जो सन्-१८८३ ई० में खोला गया था उसे सन्-१९०४ ई० में बाबू ज्योतिस्वरूप के प्रयत्न से देहरादून ले जाया गया। यह निरन्तर विकसित होता गया। इसके विकास का पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है। यही स्कूल आगे चलकर डी.ए.वी. इण्टर व पोस्टग्रेजुएट कालेज हुआ। इसी तरह डी.ए.वी. पोस्टग्रेजुएट कालेज मुजफ्फरनगर व डी.ए.वी. पोस्टग्रेजुएट कालेज, बुलन्दशहर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



बना।[१२९] एक डी.ए.वी. इण्टर कालेज, प्रेमनगर, देहरादून में सन्-१९४७ ई० को स्थापित हुआ था। इसकी स्थापना प्रेमनगर के शरणार्थी (भारत-विभाजन के फलस्वरूप पाकिस्तान से विस्थापित यहाँ के शरणार्थी) कैम्प के बच्चों की शिक्षा के लिए जूनियर हाईस्कूल के रूप में हुई थी।[१३०]

**मेरठ डिवीजन-** इसके अन्तर्गत अलीगढ़ जिले में डी.ए.वी. कालेज अलीगढ़ की स्थापना हुई। इस संस्था ने सन्-१९१३ ई० में हाईस्कूल की मान्यता प्राप्त की और इसे राजा महेन्द्रप्रताप सिंह की प्रदत्त भूमि में ले जाया गया।[१३१] ज्ञानसठ में डी.ए.वी. स्कूल सन्-१९४६ ई० में खोला गया था । यह मुस्लिम बाहुल्य कस्बा था और सन्-१९४६ ई० में यहाँ विशाल पैमाने पर श्री मां० मंगतसिंह के नेतृत्व में जिला आर्य सम्मेलन का आयोजन हुआ था।[१३२] जिसके फलस्वरूप ही डी.ए.वी. स्कूल का जन्म हुआ था।

**आगरा डिवीजन-** इसके अन्तर्गत आगरा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा, एटा आदि जिले सम्मिलित थे।[१३३] आगरा जिले में सन्-१९१७ ई० में डी.ए.वी. इण्टर कालेज, हींग की मण्डी में बाबू नाथमल के प्रयत्न से खोला गया।[१३४] प्रारम्भ में इसका कोई अपना भवन नहीं था। आर्यसमाज मन्दिर में इसकी कक्षाएँ लगनी प्रारम्भ हुईं। बाद में इसका भवन हुआ और आगरे डिवीजन के डी.ए.वी. कालेजों में एक स्थान बना । इस मण्डल में स्थित फिरोजाबाद शहर में डी.ए.वी. इण्टर कालेज की स्थापना आर्यसमाज फिरोजाबाद तथा श्री श्रीमद्दयानन्द विद्यालय, फिरोजाबाद ट्रस्ट द्वारा सन्-१९४३ ई० में की गयी थी।[१३५]

**अलीगंज एवं एटा-** इसमें डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना आर्यसमाज के कर्मठ नेता श्रीबाबूराम गुप्त के पुत्र रामेश्वरदयाल गुप्त (जो डी.ए.वी. कालेज के ग्रेजुएट थे) ने की। यह अलीगंज मुस्लिम जमींनदार का केन्द्र रहा।[१३६] मैनपुरी जिले में खूबचंद चतुर्वेदी, पं० राधाकृष्ण, शंभूदयाल शुक्ल, युगलकिशोरजी आदि के पुरुषार्थ से एक स्कूल खोला गया जो बाद में दयानन्द उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बना।[१३७] आर्यसमाज नामनेर की स्थापना सन्-१९०६ ई० में हुई थी। इस समाज के संस्थापकों में पं० तुलसीराम, पं० टीकाराम, पं० छीतरसिंह, श्रीप्रियालाल आदि प्रमुख थे। बाद में सन्-१९३३ के लगभग आर्यसमाज के उत्साही कार्यकर्ताओं में प्यारेलाल, श्यामसुन्दर लाल, कालिकाप्रसाद, भगवानदास खन्ना, रामभरोसे लाल, रामनारायण, कैलाशनाथ आदि प्रमुख थे । इन महानुभावों के अथक प्रयास से सन्-१९४० ई० में ऐंग्लोवैदिकमिडिलस्कूल की स्थापना हुई।[१३८]

**इलाहाबाद-मण्डल-** इसके अन्तर्गत कानपुर डी.ए.वी. कालेज का महत्त्वपूर्ण स्थान था। इस कालेज की स्थापना सन्-१९०७ ई० में मैनेजिंग कमेटी सोसायटी द्वारा सर्वप्रथम एक रात्रि पाठशाला के रूप में हुई थी। सन्-१९१७ ई० में यहाँ दिन में पढ़ाई होने लगी और यह इस समय हाईस्कूल का रूप प्राप्त किया।[१३९] इस समय रायबहादुर बाबू आनन्दस्वरूपजी सोसायटी के प्रधान थे।[१४०] कानपुर के आर्यसज्जनों ने यहाँ डी.ए.वी. शिक्षणालय की स्थापना के उद्देश्य से अभूतपूर्व कार्य किया। इसी प्रयोजन से बाबू वंशीधर ने २५,००० रूपए नकद ५० एकड़ भूमि तथा अपनी जायदाद की कुल आमदनी डी.ए.वी. सोसायटी को दान कर दी। सोसायटी ने ६ नवम्बर १९१६ ई० की बैठक में कानपुर में डी.ए.वी.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


कालेज खोलने का प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया था। जिसके फलस्वरूप ८ जुलाई १९१९ ई० के दिन महात्मा हंसराज ने कानपुर में डी.ए.वी. कालेज का उद्घाटन किया और कॉलेज के प्रथम प्रिंसिपल श्री दीवानचन्द्र नियुक्त हुए। वह डी.ए.वी. कालेज लाहौर के लाईफ मेम्बर थे और वहाँ पाश्चात्य दर्शन फिलासफी के प्रोफेसर थे। ये यहाँ सन्-१९१९ ई० से लेकर सन्-१९४० ई० तक प्रिंसिपल रहे।[१४१] आपके प्रयास से डी.ए.वी. कालेज कानपुर ने अभूतपूर्व प्रगति की।

प्रारम्भ में इस कालेज में विद्यार्थियों की संख्या-७० और प्राध्यापकों की संख्या-१०, सन्-१९४० ई० में छात्रों की संख्या-७७२, प्राध्यापकों की संख्या-३६ हो गई। सन्-१९२७ ई० में यह डी.ए.वी. कॉलेज इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के साथ सम्बद्ध हुआ और सन्-१९२७ में ही आगरा यूनिवर्सिटी की स्थापना हो जाने पर यह इस यूनिवर्सिटी से सम्बद्धता प्राप्त किया। सन्-१९२९ ई० में आगरा युनिवर्सिटी से सम्बद्ध कॉलेजों में कानपुर का डी.ए.वी. कॉलेज ही एकमात्र ऐसा विद्यालय था जहाँ आर्ट्स, साइन्स, कामर्स और लॉ की फैकल्टियाँ विद्यमान थीं[१४२] इस कॉलेज ने आर्यसमाज, कानपुर को अनेक उच्चकोटि के विद्वान् एवं कर्मठ कार्यकर्ता, लेखक एवं व्याख्याता दिए जैसे पं० मुंशीराम, पं० सूर्यदेव शर्मा आदि।[१४३]

**बनारस मण्डल-** यहाँ डी.ए.वी. हाईस्कूल की स्थापना सन्-१९१२ ई० में हुई।[१४४] इस स्कूल के संस्थापक श्री गौरीशंकर प्रसाद एडवोकेट थे।[१४५] आर्यसमाजी पारिवारिक पृष्ठभूमि होने के कारण सन्-१९३८ ई० में कृष्णानन्दजी डी.ए.वी. इण्टर कॉलेज में प्रवक्ता पद पर नियुक्त हुए और अपने साथियों के अहर्निश परिश्रम से वहाँ आर्यविद्यासभा की भूमि पर एक स्नातक स्तर की कोचिंग कक्षाएँ प्रारम्भ की। तदनन्तर उसे ही डिग्री कालेज का स्वरूप प्रदान किया गया। महाविद्यालय में ही आपकी नियुक्ति प्राचार्य के पद पर हो गयी।[१४६] १० जनवरी सन्-१९१९ ई० में इस स्कूल के संस्थापक गौरीशंकर प्रसाद द्वारा एक पत्र स्कूल के लिए जमींन की व्यवस्था के उद्देश्य से लिखा गया था। उन्होंने इसके लिए कालेज के उद्देश्य को चित्रित किया कि-निष्पक्ष रूप से धार्मिक शिक्षा, अंग्रेजी, संस्कृत और देशीभाषा स्तर की शिक्षा शामिल है। इस स्कूल को मैट्रिकुलेशन स्तर तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्धता प्रदान की गयी थी और सरकार द्वारा इसे २५० रूपया मासिक अनुदान के साथ ३१०० रूपया भवन निर्माण के लिए भी दिया गया था। इसका विवरण गौरीशंकर प्रसाद के पत्र दि० १ अप्रैल १९२० में उपलब्ध है।[१४७] बनारस मण्डल में ही डी.ए.वी. इण्टर कॉलेज गाजीपुर की स्थापना सन्-१९१२ ई० में हुई थी।[१४८]

**गोरखपुर मण्डल-** इसमें गोरखपुर, बस्ती और आजमगढ़ जिले सम्मिलित थे।[१४९] गोरखपुर में, सन्-१९२९ ई० में डी.ए.वी. इण्टर कॉलेज की स्थापना श्री उमाशंकर द्वारा की गयी थी।[१५०] डी.ए.वी. स्कूल का बीजारोपण आजमगढ़ में सन्-१९२५ ई० में हुआ जो बाद में विकसित होते-होते डिग्री कालेज का रूप प्राप्त किया।[१५१] इस स्कूल की स्थापना सेठ रामगोपाल द्वारा की गयी थी।[१५२]

**लखनऊ मण्डल-** इसके अन्तर्गत डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना सन्-१९१८ में हुई थी।[१५३] यह आगे समयान्तर में डिग्री कालेज का रूप धारण किया। इस स्कूल की स्थापना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



का निश्चय लखनऊ आर्यसमाज ने सन्-१८९२ ई० में ही कर लिया था और इसके लिए एक कमेटी भी बनायी थी। उसी का परिणाम डी.ए.वी. स्कूल था।[१५४] इस स्कूल के प्रथम-प्रधानाध्यापक पं० विश्वम्भरनाथ काक नियुक्त किए गए और २५ वर्ष तक इस पद पर रहकर इस संस्था की उन्नति के लिए लगन के साथ प्रयत्न करते रहे।[१५५] बाद में यह डी.ए.वी.स्कूल स्नातकोत्तर कालेज के रूप में विकसित हो गया।

**उत्तराखण्ड-** इसके अन्तर्गत पार्वत्य क्षेत्र गढ़वाल, टिहरी, उत्तरकाशी, चमोली, पिथौरागढ़ आदि थे। गढ़वाल में महात्मा हंसराज की प्रेरणा से आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश ने गढ़वाल में १७ डी.ए.वी. पाठशालाएँ खोलीं तथा पं० अर्जुनदेवजी भारती को इसका संचालक बनाकर भेजा। दुगड्डा में इसका केन्द्र स्थापित किया गया था। यहाँ चैलूसैण में ईसाइ मिशन के मुकाबले डी.ए.वी. स्कूल स्थापित किया गया। जिसके प्रभाव स्वरूप २९ वर्षो का मिशन स्कूल उखड़ गया। दुगड्डा में ही एक इण्टर कालेज की स्थापना भी हुई थी क्योंकि यहाँ ६ अगस्त-१९४५ ई० को पं० वेदव्रत एवं ब्र० बालकराम ने भूख हड़ताल "आर्य उपदेशकों पर हमले के कारण" आरम्भ की जो एक मास तक डी.ए.वी. के प्रांगण में चलता रहा।[१५६]

**फैजाबाद मण्डल-** इसके अन्तर्गत फैजाबाद, गोंडा, बहराइच, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, बाराबंकी आदि जिले सम्मिलित थे। यहाँ गोंडा में डी.ए.वी. इण्टर कालेज, बलरामपुर की स्थापना श्री सुन्दरलाल अग्निहोत्री के द्वारा गोंडा वर्ष-१९४१ ई० में की गयी थी। सामान्य शिक्षा के साथ-साथ यहाँ धर्म शिक्षा की भी व्यवस्था थी।[१५७] ज्ञातव्य है कि डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं में साामान्य शिक्षा धर्म-शिक्षा के साथ-साथ तकनीकी शिक्षा का भी ज्ञान कराया जाता था। इसके तकनीकी स्वरूप हेतु दिसम्बर १८८९ ई० में लखनऊ आर्यसमाज द्वारा एक टेक्निकल कॉलेज की स्थापना का निश्चय किया गया जो कुछ वर्ष पश्चात् टेलरिंग स्कूल में क्रियान्वित हो गया।[१५८]

इस प्रकार डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का उत्तर प्रदेश में चौमुखी विकास से आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार यहाँ तीव्रगति से हुआ। वैदिकधर्म, भारतीय संस्कृति और प्राचीन नैतिक मान्यताओं के अनुरूप डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का वातावरण होने के कारण भारतीय जनमानस में अपने धर्म, संस्कृति, मान्यताओं, परम्पराओं और सभ्यताओं के प्रति आत्मगौरव की भावना जाग्रत हुई। प्रान्त में डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं के अतिरिक्त आर्यसमाज ने शिक्षा के प्रसार के लिए आर्यडिबेटिंगक्लब नाम की एक संस्था की स्थापना की। इसके उद्देश्यों पर पूर्व में चर्चा की जा चुकी है। आर्य परिवारों के लगभग सभी युवक इस आर्यडिबेटिंगक्लब के सदस्य हुआ करते थे। आर्यसमाज द्वारा आयोजित होने वाले सभी धार्मिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों में इस क्लब का प्रतिनिधित्व हुआ करता था।[१५९]

**आर्यडिबेटिंगक्लब –** आर्यडिबेटिंगक्लब की स्थापना प्रारम्भ में सन्-१८८७ ई० में नवयुवकों की टोली द्वारा हुआ था। जो बाद में सन्-१९०५ ई० में नारायणप्रसाद वैद्य, अम्बाप्रसाद और बृजनाथ मित्तल एडवोकेट के प्रयत्न से यह "आर्यकुमारसभा" का रूप लिया।[१६०] इसके बाद इस क्लब या सभा का प्रभाव आर्यसमाज में बढ़ता गया। जिसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



फलस्वरूप समाज द्वारा इस क्लब के स्थापना का क्रम उत्तर प्रदेश के विविध भागों में प्रारम्भ हुआ। इसकी एक शाखा डी.एन. शास्त्री के प्रयास से मेरठ कालेज में स्थापित की गई। डी.एन. शास्त्री गुरुकुल वृन्दावन के पुराने स्नातक और इस कालेज में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे।[१६१] आर्यडिबेटिंगक्लब के संचालन करने, आर्य युवकों को भाषण देने तथा वाद-विवाद में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करने तथा स्वयं भी यदा-कदा भाग लेने में श्रीकालीचरण, मास्टर नन्दकिशोर तथा श्रीआनन्द प्रियजी अत्यधिक रुचि लेते थे। आर्यसमाज लालकुर्ती ने भी सन्-१९२६ ई० में अपने अन्तर्गत "आर्यडिबेटिंगक्लब" की स्थापना क़ी थी। यह डिबेटिंगक्लब आर्यसमाज के प्रत्येक शैक्षणिक कार्यक्रमों में आगे बढ़कर उत्साह से भाग लिया करता था।[१६२]

इस तरह नवयुवकों में जागृति उत्पन्न करने तथा उन्हें धर्म, देश और समाज की सेवा के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से उत्तर प्रदेश में सबसे पहले मेरठ में आर्यकुमारसभा की स्थापना सन्-१९०६ ई० में हुई थी। इसके बाद बिजनौर (१९०९ ई०), नजीबाबाद (१९०९ ई०), चन्दौसी (१९१२ ई०), हरदोई (१९१५ ई०), मवाना कलां (१९१६ ई०), गाजियाबाद (१९१६ ई०), मुरादाबाद (१९१६ ई०), नरही लखनऊ (१९२३ ई०), आगरा (१९२३), कॉठ (१९२४), भूड़-बरेली (१९२८ ई०), बलिया (१९२६ ई०), मुट्ठीगंज-प्रयाग (१९२९ ई०), करोली (१९३२ ई०), बदायूँ (१९३५ ई०), इस्लामनगर (१९३६ ई०), सरायतरीन (१९३६ ई०), नवाबगंज (१९३८ ई०), हापुड़ (१९३९ ई०), सदरबाजार लखनऊ (१९३९ ई०), बस्ती (१९४० ई०), शेरकोट (१९४० ई०), बेरी, एटा (१९४० ई०), आजमगढ़ (१९४० ई०),[१६३] आदि में हुई। लल्लापुरा बनारस (८ दिसम्बर १९३५ई०)- श्रीगौरीशंकरप्रसाद एडवोकेट बनारस की अध्यक्षता में स्थापित इस "आर्यकुमार सभा" के प्रथम प्रधान श्रीअवधबिहारीलाल वकील, उपप्रधान-श्रीबदलराम आर्य, मंत्री-श्रीरामकृष्णआर्य, कोषाध्यक्ष-श्रीछन्नूलाल तथा पुस्तकाध्यक्ष-श्रीरामनारायण जी चुने गए। यही सभा आर्यसमाज लल्लापुरा, बनारस के रूप में परिवर्तित हो गयी, जिसकी स्थापना ५ मार्च १९४३ ई० को हुई।[१६४] प्रान्त में आर्यकुमार सभाओं को संगठित करने का प्रयत्न प्रो० सुधाकर, श्री बलभद्र, प्रो० सिद्धेश्वर जी एम.ए. आदि महान् आर्य कार्यकर्ताओं ने किया। आर्यकुमार सभाओं पर नियन्त्रण रखने के उद्देश्य से भारतवर्षीय आर्यकुमारपरिषद् की स्थापना भी हुई। इसकी स्थापना में उत्तर प्रदेश के यशस्वी आर्यनेता महात्मा नारायणस्वामी, पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय, पं० विष्णुभास्कर केलकर, पं० गंगाप्रसादजी (टिहरी) एवं स्वामी ध्रुवानन्दजी सरस्वती ने इस परिषद् की अध्यक्षता की।[१६५]

इस प्रकार आर्यसमाज प्रान्त में शिक्षा के विकास में सदैव तत्पर था। इसके लिए इसने जगह-जगह आर्यकुमार सभाओं की स्थापना, डी.ए.वी. स्कूल एवं कालेजों की स्थापना, तकनीकि शिक्षा की व्यवस्था और पुत्री पाठशाला आदि खोलने का कार्य किया। उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा ने सन्-१९२८ ई० के अप्रैल मास में एक प्रान्तीय आर्यविद्यासभा का निर्माण किया। इस सभा का उद्देश्य आर्यसमाज की संस्थाओं को नियम और नियन्त्रण में लाना था। आर्यविद्यासभा ने आर्यकन्या पाठशालाओं के लिए नियम उपनियम बनाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



प्रकाशित किए और कन्या पाठशालाओं के लिए शिक्षिकाएँ तैयार करने के उद्देश्य से एक अध्यापिका श्रेणी की योजना बनायी।[१६६]

कन्याओं की शिक्षा की लिए उत्तर प्रदेश के विविध भागों में आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं ने अनेक कन्या विद्यालय खोले। आर्यसमाज के शैक्षिक योजनाओं में लड़का एवं लड़कियों के लिए अलग-अलग शिक्षणालय स्थापित करने की योजना का प्रावधान पहले ही कर लिया गया था। इसीलिए प्रारम्भ में डी.ए.वी. लड़कों के लिए खोला गया था और कन्याओं के लिए प्रान्त में अनेक कन्या स्कूल और कालेजों की स्थापना की गयी। उत्तर प्रदेश में कन्याओं की शिक्षा के लिए आर्यसमाज के कार्यकलाप का अध्ययन समीचीन है।

**आर्यसमाज और स्त्री-शिक्षा–** भारतीय नवजागरण के इतिहास में आर्यसमाज द्वारा नारी जाति के उत्थान में किया गया योगदान सदैव अविस्मरणीय है। आर्यसमाज ने नारी जाति में अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति जागृति लाने के ध्येय से प्रान्त में शिक्षा का प्रसार किया । इसका यह मानना था कि शिक्षित नारी ही अपने अधिकारों के प्रति मूलरूप से जागरूक रह सकती है। इसीलिए आर्यसमाज ने भारतीय जनमानस में कन्याओं की शिक्षा के प्रति जागरूकता लाने का अथक प्रयास किया और उत्तर प्रदेश के विविध भागों में आर्यकन्या शिक्षण संस्थाओं को स्थापित किया। उत्तर प्रदेश में आर्यकन्या शिक्षण संस्थाओं के विषय का अध्ययन करने के पूर्व यह जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है कि आर्यसमाज द्वारा सर्वप्रथम कन्या विद्यालय खोलने की योजना कैसे क्रियान्वित की गयी।

**आर्यकन्याविद्यालय का प्रादुर्भाव–** आर्यसमाज जिस समय अपने अस्तित्व में आया, उस समय पुरुषों की संख्या के अनुपात में अत्यन्त न्यून प्रतिशत नारी सरकारी स्कूलों, ईसाइ प्रचारकों तथा अन्य निजी संस्थाओं द्वारा स्थापित विद्यालयों में किसी न किसी रूप में शिक्षा प्राप्त की थी, परन्तु भारतीय नारी को शिक्षित करने का यह कार्य नगण्य सा ही हुआ था।[१६७] शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज की उपलब्धि को देखकर लाला लाजपत राय ने कहा कि शिक्षा के विकास से भिन्न जिन संस्थाओं ने पंजाब तथा संयुक्त प्रान्त में उल्लेखनीय कार्य किया है, उनमें आर्यसमाज को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इसके द्वारा किए गए शिक्षा के प्रचार से नारी के प्रति पुरुष वर्ग के दृष्टिकोण में एक उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ।[१६८]

आर्यसमाज प्रारम्भ से ही वैदिक संस्कृति का पक्षधर था और इसके आदर्शों के अनुरूप अपना सिद्धान्त निर्धारित कर इस देश में अभूतपूर्व आन्दोलन चलाया। प्राचीन भारत में सिद्धान्त और व्यवहार में समान रूप से समाज में नारी को पुरुषों के तुल्य धरातल पर ही प्रतिष्ठित किया गया था और लड़के और लड़कियाँ दोनों को ही शिक्षा ग्रहण करने का तुल्य अधिकार था।[१६९] इसीलिए आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी पुत्र एवं पुत्री दोनों के लिए शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया था।[१७०] आर्यसमाज ने इस विचारधारा को दृष्टिगत रखते हुए लड़के और लड़कियों के लिए अलग-अलग शिक्षण संस्थाएँ खोलीं। लड़कों के लिए डी.ए.वी. स्कूल और कॉलेज और लड़कियों के लिए आर्यकन्याशिक्षणसंस्थाएँ (कन्या गुरुकुल और पुत्री पाठशालाएँ) आदि खोले गए थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज और स्त्री-शिक्षा के विकास का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि आर्यसमाज द्वारा स्त्री-शिक्षा के लिए स्थापित की जाने वाली पहली संस्था जालन्धर में कन्या पाठशाला थी। अपनी अनेक विशेषताओं के कारण यह अपने युग की एक अतीव महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय संस्था थी और ऐसी अन्य शिक्षा संस्थाओं के लिए आदर्श समझी जाती थी। इसने कन्याओं में शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ समाज सुधार और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने की भावना उत्पन्न की।[१७१] इस पाठशाला की स्थापना सन्-१८९१ में लाला देवराजजी के भरसक प्रयत्नों के फलस्वरूप हुई। इसमें महात्मा मुंशीराम का योगदान भी अपूर्व रहा।[१७२]

इन्द्र विद्यावाचस्पति ने इस सम्बन्ध में कहा है कि जालन्धर आर्यजनों के नेताओं में लाला देवराज तथा लाला मुंशी रामजी प्रमुख थे। इन दोनों के नेतृत्व में जालन्धर आर्यसमाज ने कन्या विद्यालय खोलने का निश्चय किया।[१७३] फलस्वरूप कन्या पाठशाला का जन्म हुआ। इसमें प्रधान श्रेय लाला देवराज को दिया जाता है क्योंकि लाला मुंशीराम तो कुछ समय बाद बालकों की शिक्षा के लिए स्थापित किए जाने वाले गुरुकुल कांगड़ी के स्वप्न को साकार करने में संलग्न हो गए, किन्तु लाला देवराज ने अपना सारा जीवन कन्याओं की शिक्षा में लगा दिया।[१७४]

यह कन्या पाठशाला जो सन्-१८९१ ई० में आर्यसमाज द्वारा खोली गयी थी उसका निरन्तर तीव्रगति से विकास होता गया। सन्-१८९३ ई० में इसमें ५५ छात्राएँ थीं, सन्-१८९५ ई० में कन्याओं के लिए साथ ही एक छात्रावास (कन्याआश्रम) खोल दिया गया जो कि इस दिशा में भारत में एक अपूर्व प्रयत्न था। सन्-१८९६ ई० में इस पाठशाला का नाम कन्या महाविद्यालय हो गया और कन्या महाविद्यालय मुख्य-सभा के नाम से इसकी प्रबन्धकर्तृ सभा की रजिस्ट्री हुई।[१७५] यहाँ कहा जा सकता है कि जिस प्रकार डी.ए.वी. स्कूल लाहौर की स्थापना ने देश भर के आर्यसमाजों में बालक शिक्षा के लिए बलवती प्रेरणा जागृत की उसी प्रकार जालन्धर के प्रथम कन्या पाठशाला ने देशभर के आर्यजनों का ध्यान कन्या शिक्षा के विकास की ओर आकृष्ट किया। जिसके परिणामस्वरूप कन्या शिक्षण संस्थाओं की स्थापना विविध प्रान्तों में तीव्रगति से प्रारम्भ हुई। उत्तर प्रदेश में भी प्रायः सभी बड़े-बड़े नगरों की आर्यसमाजों के साथ कन्या पाठशालाओं की स्थापना हुई।

**उत्तर प्रदेश में आर्यकन्या शिक्षण संस्थाएँ डिवीजन के अनुसार–** उत्तर प्रदेश में आर्यकन्या शिक्षण संस्थाओं के विकास का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि महर्षि दयानन्द के जीवनकाल में ही एक आर्यकन्या पाठशाला की स्थापना मेरठ में हो गई थी।[१७६] यह सन्-१८८१ ई० में मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत हापुड़ में स्थापित हुआ था। यह पाठशाला सन्-१९१४ ई० में हाईस्कूल, सन्-१९४९ ई० में इण्टरमीडिएट कालेज बना और सन्-१९५९ ई० में यह आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्धता प्राप्त कर डिग्री कॉलेज तथा यहाँ डिग्री कक्षाएँ (कला वर्ग) प्रारम्भ हुई।[१७७]

आर्यसमाज द्वारा प्रान्त में इसके बाद अनेक कन्या गुरुकुल एवं पुत्री पाठशालाओं की स्थापना की गयी। कन्या गुरुकुलों के विषय में अगले अध्याय में विचार किया जाएगा। यहाँ पुत्री पाठशालाओं की स्थापना के विषय में अध्ययन किया जाना समीचीन है। उत्तर प्रदेश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



के विविध भागों में आर्यसमाज द्वारा पुत्री पाठशालाओं की स्थापना देहरादून, सहारनपुर, रुड़की, मुजफ्फरनगर, मथुरा, मैनपुरी, शाहजहाँपुर, पीलीभीत, एटा; इटावा, प्रयाग, झाँसी, बनारस, मिर्जापुर, लखनऊ, आगरा, बुलन्दशहर, अलीगढ़, गोरखपुर, देवरिया, बहराइच, फैजाबाद, सुल्तानपुर आदि विविध नगरों में की गयी। इनमें से स्थापित हुई कुछ प्रमुख आर्यकन्या पाठशालाओं (डिवीजन वाईज) का विवरण निम्नलिखित है—

**मेरठ डिवीजन–** इस डिवीजन के अन्तर्गत देहरादून में सन्-१९०२ ई० में महादेवी कन्या पाठशाला की स्थापना हुई।[१७८] इसके संस्थापक बाबू ज्योतिस्वरूप थे। बाबू ज्योतिस्वरूप (एडवोकेट) निरन्त आर्यसमाज देहरादून (सन्-१८९४ को छोड़कर) के प्रधान रहे। इस पाठशाला की स्थापना बाबू ज्योतिस्वरूप की धर्मपत्नी श्रीमती महादेवी की प्रेरणा के फलस्वरुप हुई थी।[१७९] यह पाठशाला निरन्तर विकसित होता गया। यहाँ सन्-१९१४ ई० में हाईस्कूल, सन्-१९३९ ई० में इण्टर की कक्षाएँ आरम्भ हुई तथा सन्-१९५८ ई० में डिग्री की कक्षाएँ प्रारम्भ की गयीं और यह आगे आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्धता प्राप्त की।[१८०]

आर्यसमाज द्वारा महिलाओं की ट्रेनिंग के लिए देहरादून में दयानन्दमहिलाट्रेनिंगकालेज, की स्थापना की गयी थी। यह कालेज पहले मेरठ में एक रात्रि पाठशाला के रूप में खोला गया जो सन्-१९०४ ई० में देहरादून स्थानान्तरित कर दिया गया था।[१८१] देहरादून में ही रामप्यारी आर्यकन्या इण्टर कॉलेज खुडवुडा की स्थापना हुई।[१८२] मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत आर्यकन्या इण्टर कॉलेज, मेरठ सिटी (स्थापना सन्-१९१३ ई०-१२ कन्याओं के साथ एक शिक्षक) में खोला गया। इसे जूनियर हाईस्कूल सन्-१९३६ ई०, हाईस्कूल सन्-१९५४ ई० तथा इण्टर सन्-१९५९ ई० की मान्यता प्राप्त हुयी।[१८३] आर्यकन्या हायर सेकेण्डरी स्कूल, मेरठ सदर, भागीरथी आर्यकन्या पाठशाला, लालकुर्ती मेरठ- श्रीमती कलावती देवी द्वारा इस शिक्षण संस्था की स्थापना सर्वप्रथम सावित्री देवी के घर में की गई थी।[१८४]

चावला देवी आर्यकन्या पाठशाला, ब्रह्मपुरी, मेरठ, श्रीगुलाब देवी कन्या पाठशाला (सन्-१८९४ ई०), कन्या पाठशाला खिरवाँ जलालपुर, मेरठ, शम्भूदयाल आर्यकन्या इण्टर कालेज और आर्यकन्या वैदिक इण्टर कालेज, गाजियाबाद,[१८५] आर्यकन्या विद्यालय, मुजफ्फरनगर (स्थापना सन्-१९०५ जो समयान्तर में इण्टर कालेज बना, श्रीमती राजकली देवी प्रधानाचार्या के अनथक परिश्रम से इस विद्यालय का विकास हुआ), उच्चतर माध्यमिक वैदिक पुत्री पाठशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (संचालन- आर्यविद्यासभा, इस शिक्षणालय के निर्माण में पं० बूटारामजी का प्रयत्न प्रशंसनीय रहा), आर्यकन्यापाठशाला, दूधली, मुजफ्फरनगर आदि।[१८६]

सहारनपुर जिले के अन्तर्गत, आर्यकन्याउच्चतरमाध्यमिकविद्यालय रुड़की, आर्यकन्या इण्टर कालेज, गंगोह (स्थापना- सन्-१९१४ ई०), आर्यकन्या पाठशाला इण्टर कालेज, खालापार, आर्यकन्या हायर सेकेण्डरी स्कूल बहादराबाद आदि थे।[१८७] बुलन्दशहर जिले के अन्तर्गत- आर्यकन्या इण्टर कालेज, आर्यकन्या इण्टर कालेज, गुलावटी (स्थापना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



तिथि आर्यसमाज गुलावटी के जन्म सन्-१९२५ से), आर्यकन्या इण्टर कालेज, खुर्जा आदि की स्थापना हुई।[१८८]

**आगरा मण्डल-** इस मण्डल के अन्तर्गत आगरा, फर्रुखाबाद मैनपुरी, इटावा, एटा आदि जिले सम्मिलित थे।[१८९] बीसवीं सदी के प्रथम चरण में आगरा उच्च शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था।[१९०] यहाँ आगरा आर्य समाज नगर की संरक्षकता में सेकसरिया आर्यकन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय स्थापित हुआ। इसी प्रकार इस डिवीजन के अन्तर्गत कन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, फिरोजाबाद[१९१], नारायण आर्यकन्या पाठशाला (अन्तरंग सभा, १ फरवरी १९२३ ई० के निर्णय से खोला गया- उसकी पाठविधि के निर्माण के लिए गठित कमेटी के सदस्य- रामदुलारे लाल, बाबू लालमनजी, पं० गणेशप्रसाद शर्मा, पं० प्यारेलालजी मिश्र, पं० शीतला प्रसादजी हेडमुदर्रिस आदि में से थे,[१९२] यही नारायण आर्यकन्या पाठशाला इण्टर कालेज बना।

इटावा जिले में आर्यसमाज इटावा के संरक्षकता में ज्वालाप्रसादउच्चतर माध्यमिक विद्यालय (समयान्तर में इण्टर कालेज बना), श्यामा आर्यकन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, मर्थना आदि स्थापित थे। इटा जिले में देवरी प्रह्लादपुर में सन्-१९४७ ई० में आर्यकन्या पाठशाला की स्थापना हुयी।[१९३]

**रूहेलखण्ड मण्डल–** इसके अन्तर्गत बरेली, मुरादाबाद, बिजनौर, शाहजहाँपुर, बदायूँ, पीलीभीत आदि जिले सम्मिलित थे।[१९४] बरेली जिले के अन्तर्गत स्त्री सुधार उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, बिहारीपुर (सन्-१९०२ ई० में पुत्री पाठशाला) आदि कन्याओं के विद्यालय स्थापित थे।[१९५] मुरादाबाद जिले में आर्यकन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, स्टेशनरोड, (समयान्तर में इण्टर कालेज), आर्यकन्या पाठशाला, चन्दौसी (पाठशाला का पृथक ट्रस्ट था जिसके प्रधान श्रीबाबूश्यामबिहारीलाल जौहरी थे, बाद में यह पाठशाला इण्टर कालेज बना।[१९६]

बिजनौर जिले में सन्-१९०० ई० में आर्यकन्यापाठशाला, नजीबाबाद की आधारशिला रखी गई। रानी फूल कुंवारी यहाँ की प्रंथम छात्रा थीं। यह पाठशाला समयान्तर में आर्यकन्या इण्टर कालेज, नजीबाबाद बना। इसी प्रकार आर्यवैदिककालेज, नगीना, सन्-१९४० ई० में वैदिककन्यापाठशाला भोजपुर खेड़ी, कन्या पाठशाला गोहावर, आर्यकन्यावैदिकविद्यालय नहटौर, वैदिक पाठशाला सैन्द्वार, आर्यकन्या जूनियर हाईस्कूल बिजनौर आदि कन्याओं के विद्यालय स्थापित थे ।[१९७] शाहजहाँपुर जिले में आर्यकन्या पाठशाला और आर्यमहिलाविद्यालय की स्थापना हुई थी, जो बाद में इण्टर कालेज का रूप प्राप्त किया। इस विद्यालय के लिए स्व० अनोखेलालजी पेशकार की धर्मपत्नी श्रीमती गौरीदेवी द्वारा सन्-१९४१ ई० में अपने पति की स्मृति में ४००० रूपए का दान दिया गया था।[१९८]

बदायूँ जिले के अन्तर्गत पार्वतीआर्यकन्याउच्चतरमाध्यमिकविद्यालय की स्थापना सन्-१९०६ ई० में मुंशी सकटूमलजी ने अपनी धर्मपत्नी श्रीमती पार्वती देवी के नाम पर किया था। समयान्तर में यह इण्टर कालेज बना। बिलसी में एक उच्चतर माध्यमिक आर्यकन्या विद्यालय स्थापित हुआ था जो बाद में इण्टर कालेज का रूप प्राप्त किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज, आर्यनगर (इस्लामानगर) के अधीन एक आर्यकन्या विद्यालय तथा जूनियर हाईस्कूल भी स्थापित हुआ था। दोनों विद्यालयों की भूमि श्रीमती गंगादेवी तथा श्रीमती केतकी कुँवारीं द्वारा दान दिया गया था।[१९९] पीलीभीत जिले में कन्याओं की शिक्षा के लिए आर्यकन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय (सन्-१९०५ ई०), आर्यकन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, पूरनपुर में स्थापित किए गए थे।[२००]

**इलाहाबाद मण्डल–** इस मण्डल के अन्तर्गत इलाहाबाद, कानपुर, फतेहपुर, बाँदा, हमीदपुर, झाँसी, जालौन आदि जिले सम्मिलित थे।[२०१] इलाहाबाद जिले में आर्यकन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, चौक (स्थापना १३ नवम्बर सन्-१९०७ ई०) इलाहाबाद, आर्यकन्या पाठशाला, मुट्ठीगंज (स्थापना सन्-१९०५ ई०) आर्यसमाज द्वारा स्थापित किया गया था। इन दोनों विद्यालयों ने समयान्तर में इण्टर कालेज का रूप लिया।[२०२] प्रो० कृष्णचन्द्र (आर्यसमाज चौक के प्रधान, सन्-१९०४) ने सर्वश्री लक्ष्मी नारायण जी रईस, रामदीनजी वैश्य, डॉ० गनपत सहाय सिविल सर्जन, रामजी भार्गव आदि के सहयोग से आर्यकन्या पाठशाला (सन्-१९०५) स्थापित किया था। यह छोटी सी संस्था जानसेनगंज स्थित एक किराए के मकान में प्राइमरी कक्षाओं से प्रारम्भ की गयी थी। और इसके लिए २८ मई सन्-१९१३ ई० को मुट्ठीगंज में एक विशाल भवन क्रय कर लिया गया था। तब से यहीं कक्षाएँ चलने लगीं। सन्-१९३४ ई० में पाठशाला के प्रबन्धक पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय के अथक प्रयत्नों से इसे हाईस्कूल की मान्यता प्राप्त हुई। जुलाई-१९३४ ई० में कक्षा-९ और जुलाई-१९३५ ई० में कक्षा-१० की कक्षाएँ यहाँ प्रारम्भ हुईं। सन्-१९४१ ई० में श्रीमती रत्नकुमारी एम. ए. मुख्याध्यापिका यहाँ नियुक्त हुई थीं। सन्-१९५० ई० में इसे इण्टर की मान्यता मिल गयी और सन्-१९६० ई० में डिग्री कालेज हेतु भवन निर्माण कार्य यहाँ प्रारम्भ हो गया।[२०३]

कानपुर जिले में आर्यसमाज रेल बाजार में कुछ वर्षों तक कन्या पाठशाला चलने का उल्लेख मिलता है। कानपुर का प्रसिद्ध कन्या विद्यालय आर्यकन्या इण्टर कालेज, गोविन्दनगर की स्थापना (जूनियर हाईस्कूल सन्-१९५९) सन्-१९४७ के बाद हुई।[२०४] फतेहपुर जिले में आर्यसमाज अमोली के कर्मठ कार्यकर्ता श्री रामेश्वरदयालजी ने सन्-१९४६ ई० में आर्यकन्या पाठशाला की स्थापना की। झांसी जिले में, आर्यकन्या पाठशाला सिपरी बाजार, आर्यसमाज सीपरी बाजार के जन्म (स्थापना सन्-१९१२ ई०) से स्थापित है जो आगे उच्चतर माध्यमिक विद्यालय का रूप प्राप्त किया।[२०५] इसी जिले में सन्-१९१४ में एक और आर्यकन्या पाठशाला स्थापित हुई थी। पाठशाला की संस्थापिका श्रीमती दुर्गादेवीजी (प्रधान-स्त्री आर्यसमाज) रहीं।[२०६]

**बनारस मण्डल–** इसके अन्तर्गत गाजीपुर, बनारस, मिर्जापुर, बलिया, जौनपुर आदि जिले सम्मिलित थे।[२०७] बनारस मण्डल के अंतर्गत आर्यकन्या पाठशाला, मिर्जापुर में मास्टर नन्हूलालजी द्वारा (सन्-१९०६ ई०) स्थापित की गयी थी। यह विधिवत् १ मार्च १९१० ई० को आर्य परिवार के ही केवल ११ बालिकाओं को लेकर उत्कर्ष की ओर अग्रसर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



हुई। यहाँ सन्-१९१४ ई० में ७० बालिकाएँ शिक्षा प्राप्त करने लगीं थीं। इसमें श्रीमती सरस्वती देवी सर्वप्रथम प्रधान अध्यापिका नियुक्त हुईं। जिस समय इस विद्यालय की स्थापना हुई, उस समय पूरे जनपद में कोई विद्यालय नहीं था। पं० ज्वालाप्रसादडिप्टी कलेक्टर इसके सर्वप्रथम अध्यक्ष चुने गए थे। यह पाठशाला २४ जुलाई १९४६ को हाईस्कूल और सन्-१९५० ई० में इण्टर की मान्यता प्राप्त की।[२०८]

**गोरखपुर मण्डल–** इस मण्डल के अन्तर्गत गोरखपुर, बस्ती, आजमगढ़ जिले सम्मिलित थे।[२०९] गोरखपुर जिले में आर्यकन्याउच्चतरमाध्यमिकविद्यालय की स्थापना सन्-१९१८ में हुई थी।[२१०] बस्ती जिला नेपाल राज्य की सीमा से लगा हुआ उत्तर प्रदेश का ऐतिहासिक जिला है। इस जिले में कन्या पाठशाला गजाधरपुर (स्थापना तिथि सन्-१९३७ ई०), कन्या पाठशाला, बढ़नी की स्थापना आर्यसमाज बढ़नी के कर्मठ कार्यकर्ता श्री काशीराम के उद्योग से की गयी थी। यह पाठशाला बीच में टूट गयी थी, पुनः सत्यवती देवी के पुरुषार्थ से इसे चालू की गई। यहाँ एक कन्या पाठशाला, मेंहदावल में भी स्थापित हुआ था।[२११]

**कुमायूँ, लखनऊ और फैजाबाद मण्डल–** कुमायूँ मण्डल- नैनीताल में अल्मोढ़ा, गढ़वाल, लखनऊ मण्डल में, लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, हरदोई, खीरी, फैजाबाद मण्डल में फैजाबाद, गोंडा, बहराइच, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, बाराबंकी आदि जिले सम्मिलित थे।[२१२] नैनीताल में पहली पुत्री पाठशाला आर्यसमाज द्वारा सन्-१९१२ ई० में स्थापित हुई थी। पाठशाला के संरक्षक पं० गोविन्द वल्लभ पन्तजी थे। काशीपुर में आर्यसमाज के कर्मठ कार्यकर्ताओं ने एक कन्या विद्यालय स्थापित किया था। विद्यालय को कुछ वर्ष पश्चात इसे सरकार को दे दिया गया। यहीं सन्-१९४५ ई० में पं० लालमणिजी के इच्छापत्र के अनुसार एक कन्या पाठशाला खोली गयी थी।[२१३]

लखनऊ जिले में २० अक्टूबर १९२३ ई० को कन्याओं की शिक्षा हेतु श्री विश्वंभर नाथ श्रीवास्तव द्वारा आर्यकन्या पाठशाला, सिविल लाइन्स नरही में स्थापित किया गया जो विकसित होकर सरस्वती विद्यालय इण्टर कालेज का रूप प्राप्त किया।[२१४] हरदोई जिले में सन्-१९०६ ई० में एक कन्या विद्यालय की स्थापना हुई जो समयान्तर में आर्यकन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के रूप में विकसित हो गया।[२१५]

फैजाबाद जिले में बालिकाओं की शिक्षा के लिए सर्वप्रथम प्रबन्ध आर्यसमाज ने किया। इसके लिए महात्मा नारायण स्वामी के लघु भ्राता बा० ज्वालाप्रसादजी पेशकार ने सन्-१९३९ ई० में अपना एक मकान, वाटिका तथा २०००/- रूपए दान देकर आर्यकन्या पाठशाला को जन्म दिया। बाद में इस पाठशाला को श्यामलाल राजे कन्या पाठशाला कर दिया गया।[२१६] टाण्डानगर में, बसन्त पंचमी के पावन पर्व पर सन्-१९४४ ई० में आर्यकन्या विद्यालय की स्थापना हुई। विद्यालय प्रारम्भ करने हेतु श्री राम बहादुर, श्रीत्रिलोकनाथ कपूर ने टाण्डा में स्थित अपना भवन प्रदान किया। जिससे विद्यालय सुचारु रूप से प्रारम्भ हो सका। यह कन्या विद्यालय बाद में १४ अगस्त सन्-१९४७ ई० को टाण्डा नगर के मध्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



में स्थित मिडिल स्कूल, जहाँ बालकों के लिए आठवीं कक्षा तक शिक्षा का साधन जिला परिषद् फैजाबाद द्वारा उपलब्ध था, बाद में इसे स्थानान्तरित कर दिया गया।[२१७]

इस प्रकार आर्यसमाज नारी शिक्षा के प्रसार के लिए प्रान्त में निरन्तर जागरूक था और जगह-जगह आर्यकन्या पाठशालाओं की स्थापना की। समाज में "स्त्रीशूद्रौ नाधीयताम"- स्त्री और शूद्र वेद पढ़ने का अधिकारी नहीं है,[२१९] की भावना पारम्परिक रूप में विद्यमान थी। आर्यसमाज ने प्रान्त में इसके लिए जगह-जगह प्रचार-प्रसार किया और अपने शिक्षणालयों में समानता का अवसर प्रदान करते हुए नारी और शूद्रों को अपनी संस्थाओं में प्रवेश कराने के लिए जनसामान्य को आकृष्ट किया। इसने अस्पृश्य वर्ग की अपनी संस्थाओं में शिक्षित ही नहीं किया बल्कि पुरोहित का कार्य भी कराया। इससे धीरे-धीरे स्त्रियों और शूद्रों में अभूतपूर्व जागृति आनी प्रारम्भ हुई तथा इनमें अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति अपूर्व जागरूकता आयी। आर्यसमाज ने अपनी शिक्षण संस्थाओं में सभी के लिए वेद पढ़ने का द्वार खोल दिया।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पं० महेशप्रसाद मौलवी (आर्यसमाजी, कायस्थ) अपनी पुत्री कल्याणी देवी को वेद और कर्मकाण्ड विभाग में प्रवेश दिलाना चाहा तो उन्हें पर्याप्त विरोध का सामना करना पड़ा था। अन्ततः मदनमोहन मालवीयजी के हस्तक्षेप से यह समस्या सुलझी और प्रथम बार एक ब्राह्मणेतर कन्या को वेद की कक्षा में प्रवेश मिला।[२२०] इस प्रकार आर्यसमाज ने शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किया। जिसके अन्तर्गत वेदशास्त्रों के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था, अंग्रेजी-भाषा और पाश्चात्य विज्ञानों के अध्ययन को प्रोत्साहित करना, नैतिक और धार्मिक शिक्षा देना, स्त्री और शूद्रों के लिए शिक्षा में समान अवसर प्रदान करना, तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था करना, प्रान्त में जगह-जगह आर्यशिक्षणसंस्थाओं की स्थापना करना आदि महत्त्वपूर्ण कार्य सम्मिलित थे।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## सन्दर्भ :


१. शम्भूशरण दीक्षित, राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, पृ. ५७
२. वही, पृ. ११
३. वही, पृ. २७
४. वही, पृ. ३२
५. रमेशचन्द्र मजुमदार, भारत का बृहत् इतिहास, पृ. १८२
६. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. २९
७. वही, पृ. ३०
८. सत्यकेतु विद्यालंकार, आर्यसमाज का इतिहास, तृतीय भाग, पृ. १०४
९. गुलशनस्वरूप सक्सेना, आर्यसमाज मूभमेंट इन इण्डिया, पृ. ९१
१०. रमेशचन्द्र मजुमदार, पूर्वोद्धृत, पृ. १८१
११. बी. एन. लूनिया, भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास, पृ. ३९७-९८
१२. वीरकेश्वर प्रसाद सिंह, भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन तथा सांविधानिक विकास, पृ. २८
१३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ८०-८१
१४. रामधारी सिंह 'दिनकर', संस्कृति के चार अध्याय, पृ. ५२३
१५. रमेशचन्द्र मजुमदार, दि वेदिक एज, पृ. ४१९
१६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, चौथा भाग, पृ. १०३
१७. अध्यान तीन का पृ. संख्या
१८. रमेशचन्द्र मजुमदार, पूर्वोद्धृत, पृ. ४१९
१९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ. ५७
२०. वही, पृ.५७-५८
२१. वही, पृ.५९
२२. वही
२३. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. १८
२४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ६०
२५. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृं. १७
२६. वही, पृ. १५
२७. एफ. डब्ल्यू. थामस, हिस्ट्री एण्ड प्रॉस्पेक्ट्स ऑफ ब्रिटिश एजूकेशन इन इण्डिया, पृ. १; शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. १५
२८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ६१
२९. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. १४
३०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५७
३१. ई. एच. ब्लण्ट, सेंसस ऑफ इण्डिया, १९११, पृ. १४६
३२. ए. आर. देसाई, सोशल बैकग्राउन्ड ऑफ इण्डियन नेशनलिज्म, अनु० प्रयागदत्त त्रिपाठी, पृ. ११७
३३. बी. एल. ग्रोवर एवं यशपाल, आधुनिक भारत का इतिहास- एक नवीन मूल्यांकन, पृ. ३४४
३४. बी. एन. लूनिया, पूर्वोद्धृत, पृ. ३९९


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



३५. ए. आर. देसाई. पूर्वोद्धृत, पृ. ११०
३६. वही, पृ. १०९
३७. वही, पृ. ११०
३८. शेरिंग, दि हिस्ट्री ऑफ प्रोटेस्टैण्ट मिशन्स इन इण्डिया, पृ. ४४२-४७; देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ. ८४
३९. बी. एन. लूनिया. पूर्वोद्धृत, पृ. ४००-४०१ के आधार पर
४०. एच. आर. नेविल, गजेटियर ऑफ बनारस, पृ. १७१
४१. वही, पृ. १७०
४२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ८५-८६
४३. ए. आर. देसाई, पूर्वोद्धृत, पृ. १७६
४४. क्षेत्रीय अभिलेखागार, वाराणसी, बाक्स नं० ४, सूची नं० १२, फाईल नं. १९, विभाग द्वितीय, दिनांक २८ जुलाई १९३७; बाक्स नं० ५, फाईल नं. १२३, विभाग द्वितीय, १९४२
४५. पी. ई. राबर्ट्स, ब्रिटिशकालीन भारत का इतिहास, अनु० रामकृष्ण शर्मा 'केवल', पृ. २२५
४६. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५२४
४७. वही
४८. आर्यसेवक, अप्रैल १९७५, पृ. ४१
४९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, चौथा भाग, पृ. १०३
५०. रामविलास शर्मा, स्वाधीनता संग्राम - बदलते परिप्रेक्ष्य, पृ. ९२
५१. स्वर्णजयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज लल्लापुरा, वाराणसी, पृ. ४०
५२. बी. आर. पुरकेट, इण्डियन रेनेसाँ एण्ड एजूकेशन फ्राम राममोहन टू विवेकानन्द, पृ. १०६
५३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, चौथा भाग, पृ. २७०
५४. वही, पृ. २७१
५५. मैक्समूलर, इण्डिया, ह्वाट कैन इट टीच अस, हिन्दी रूपान्तरण हम भारत से क्या सीखें, अनु० कमलाकर तिवारी एवं रमेश तिवारी, पृ. १०
५६. वही, पृ. १२
५७. वही, पृ. ८
५८. गोपाल कृष्ण अग्रवाल, भारतीय सामाजिक संस्थाएँ, पृ. ३६
५९. हिन्दुत्व अंक, १४ नवम्बर १९९३, पृ. ७
६०. वही
६१. रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५१६
६२. स्वर्णजयन्तीस्मारिका, आर्यसमाज लल्लापुरा वाराणसी, पृ. ३६; देखें- रामधारी सिंह 'दिनकर', पूर्वोद्धृत, पृ. ५११
६३. वही, पृ. ५११
६४. वही, पृ. ५१०
६५. बी. आर. पुरकेट, पूर्वोद्धृत, पृ. १०७
६६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ. १०६
६७. बी. आर. पुरकेट, पूर्वोद्धृत, पृ. १०६-१०७
६८. वही, पृ. १०६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



६९. विश्वप्रकाश, लाईफ एण्ड टीचिंग ऑफ स्वामी दयानन्द, पृ. ३१२
७०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ४८
७१. वही, पृ.१०४
७२. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ५९
७३. बी. आर. पुरकेट, पूर्वोद्धृत, पृ. १०७
७४. वही, पृ. १०९
७५. विश्वप्रकाश, पूर्वोद्धृत, पृ. २८४
७६. लाला लाजपत राय, दि आर्यसमाज, अनु० भवानीलाल भारतीय, पृ. १६३
७७. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, पृ. ७९
७८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ११०
७९. वही, पृ. १०६-७
८०. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ६१
८१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १०८
८२. वही, पृ. १०९
८३. आर्यसन्देश, ९ मई १९९३, पृ. २
८४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १०८
८५. आर्यसेवक, सितम्बर-अक्टूबर १९८५, पृ. ४९
८६. वही, पृ. ४६
८७. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, १९९२, पृ. २१
८८. आर्यसेवक, सितम्बर-अक्टूबर १९८५, पृ. ४७
८९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १०९
९०. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ६०; देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १०९
९१. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ६१
९२. शताब्दी स्मारिका, आर्यसमाज जवाहरनगर (लालकुर्ती) मेरठ,अक्टूबर १९८८, पृ.४ व ५
९३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १२३
९४. हरगुलाल गुप्त, आर्यजगत के भागीरथ श्री दरबारीलाल, विश्लेषणात्मक जीवनी, पृ. ८०; देखें- सत्यप्रकाश सरस्वती (संपादक) दयानन्द कमेमोरेशन, पृ. ५९
९५. आर्यपत्रिका (इंगलिश वीकली), लाहौर, २० जून १८८८; देखें- गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९२
९६. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ६२
९७. वही, पृ. ६३
९८. हरगुलाल गुप्त, पूर्वोद्धृत, पृ. ८२
९९. शम्भुशरण दीक्षित, पूर्वोद्धृत, पृ. ६३
१००. वही, पृ. ६२
१०१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत,तृतीय भाग, पृ. १२६
१०२. दीवानचन्द, महात्मा हंसराज जी जन्म शताब्दी उपहार, पृ. ३३
१०३. वही, पृ. ३९
१०४. दीवानचन्द, पूर्वोद्धृत, पृ. ५७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१०५. दयानन्दऐंग्लोवैदिककालेज रिपोर्ट १९०१-१९०२, पृ. १८; रिपोर्ट ऑफ दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज १९१४, पृ. ४
१०६. महात्मा हंसराज जीवनी, पृ. २६
१०७. राजेन्द्र 'जिज्ञासु', महात्मा हंसराज, पृ. ११
१०८. महात्मा हंसराज जीवनी, पूर्वोद्धृत, पृ. ३१; देखें- सत्यप्रकाश सरस्वती, पूर्वोद्धृत, पृ. ६०
१०९. विश्वप्रकाश, आर्यसमाज के निर्माता, पृ. ४५
११०. महात्मा हंसराज जीवनी, पूर्वोद्धृत, पृ.२६
१११. इन्द्र विद्यावाचस्पति,आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. १५३
११२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १२६; देखें- लाला लाजपत राय, पूर्वोद्धृत, पृ. २२१
११३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १२७;देखें- स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती, पूर्वोद्धृत, ६०
११४. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १५२
११५. वही, पृ. १५१
११६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५४५
११७. वही, पृ. ३२६; देखें- गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९३
११८. प्रॉस्पेक्टस एण्ड हैण्डबुक, डी. ए. वी. कॉलेज, देहरादून, १९७७-७८, पृ. १; देखें- गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९३
११९. वही, पृ. ९४
१२०. शिवदयालु, इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश, प्रथम भाग, पृ. १६८
१२१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३०५
१२२. वही
१२३. वही, चौथा भाग, पृ. १०३
१२४. वही, तृतीय भाग, पृ. ११५
१२५. भवानीलाल भारतीय, आर्यसमाज के बीस बलिदानी, पृ. ५३
१२६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १५३
१२७. अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह स्मारिका, पृ. १३५
१२८. स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती, पूर्वोद्धृत, पृ. ६५
१२९. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९४
१३०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५५५
१३१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ५०
१३२. वही, पृ. २६
१३३. अध्याय-२ के परिशिष्ट-१ में डिवीजन वाईज शहरों की सूची
१३४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६३; देखें- आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. २६
१३५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६३
१३६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ७३
१३७. वही, पृ. ७६
१३८. वही, पृ. ६९
१३९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३२६
१४०. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१४१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३२६-२७; इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत,, द्वितीय भाग, पृ. २१०
१४२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३२७
१४३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ८६
१४४. किसलय, डी. ए. वी. इण्टर कालेज का पत्रिका (वर्ष १९९७-९८) स्वर्ण जयन्ती विशेषांक, पृ. ५८
१४५. स्मारिका हिन्दी हास्य-मन्दाकिनी के भगीरथ श्रीकृष्णदेव प्रसाद गौड़ 'बेढ़ब बनारसी' (१९९४-९५), पृ. ५
१४६. कौस्तुभजयन्ती स्मारिका, आर्यसमाज छावनी भोजूबीर, वाराणसी, १९९९, पृ. ६-७
१४७. क्षेत्रीय अभिलेखागार वाराणसी में उपलब्ध फाईल - बाक्स नं० १७, सूची नं० ६, फाईल नं० ६५, विभाग ८, दिनांक १० जनवरी १९१९, से उदधृत- 'गौरीशंकरप्रसाद सेक्रेटरी के दिनांक १ अप्रैल १९२० का पत्र भी उपलब्ध है।'
१४८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६२
१४९. देखें- अध्याय-२ का परिशिष्ट-१
१५०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६२
१५१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १०७
१५२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५५९
१५३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १६५
१५४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २८७
१५५. वही, पृ. ५५९
१५६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. २, ३, ४
१५७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ५६२
१५८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८७
१५९. शताब्दीस्मारिका, आर्यसमांज जवाहरनगर लालकुर्ती, मेरठ, अक्टूबर, १९८८, पृ. ४
१६०. चन्द्रप्रकाश (संपादक), मेरठ आर्यसमाज के सौ वर्ष, पृ. १०८
१६१. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. १०८
१६२. शताब्दी स्मारिका, लालकुर्ती मेरठ, पूर्वोद्धृत, पृ. ४
१६३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २६९, २९२
१६४. भवानीलाल भारतीय, काशी में महर्षि दयानन्द, पृ. ७९
१६५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ. १०१-१०२
१६६. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २०८; देखें- प्रदेशीय विद्यार्य सभा, उत्तर प्रदेश, नियम एवं उपनियम, पृ. १
१६७. लाल लाजपत राय, दि आर्यसमाज, अनु० भवानीलाल भारतीय, पृ.१८६
१६८. वही, पृ. १८७
१६९. वही; देखें- लाला लाजपत राय, दि आर्यसमाज, वाई.एम.भाटिया द्वारा सम्पादित, पृ.४५
१७०. जयदेव वेदालंकार, महर्षि दयानन्द की साधना और सिद्धान्त, पृ. ११५
१७१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ. २३३
१७२. अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोहस्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २२१; देखें- ब्र० जगदीश विद्यार्थी, अमर सेनानी स्वामी श्रद्धानन्द, पृ. ५७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



१७३. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २२५
१७४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २३४
१७५. अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोहस्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २२१
१७६. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २२५
१७७. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९४
१७८. नियमावली, महादेवी कन्या पाठशाला कॉलेज, देहरादून (१९७५-७६), पृ. १; देखें- गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९४
१७९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २८४
१८०. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९५
१८१. वही
१८२. आर्यप्रादेशिकसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. २६
१८३. गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९५
१८४. शताब्दी स्मारिका, आर्यसमाज जवाहरलाल (लालकुर्ती), मेरठ, अक्टूबर १९८८ पृ. २७
१८५. इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश, द्वितीय भाग, पृ. ३४, ३५, ४२; देखें- आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. २८
१८६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. २३-२४; देखें- गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ९७
१८७. आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. २८ देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत,द्वितीय भाग-पृ. १५,१७,१९
१८८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ४४; देखें- आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. २७-२८
१८९. देखें- अध्याय २ का परिशिष्ट-१
१९०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २९१
१९१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ६५-६६
१९२. गणेशप्रसाद शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ. ३५२-५३
१९३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ७४, ७३
१९४. देखें- अध्याय-२ का परिशिष्ट-१
१९५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १३८
१९६. वही, पृ. १४०-४१; देखें- आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. २८
१९७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १५९-६४; देखें- आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त,. पृ. १९
१९८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १५१
१९९. वही, पृ. १५४, १५६; देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ. ६५७
२००. आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. ३९; देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ६५७
२०१. देखें- अध्याय-२ का परिशिष्ट-१
२०२. आनन्द ज्योति, वार्षिक पत्रिका (सन्-१९९६-९७), आर्य कन्या इण्टर कालेज, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद, पृ. १३, १५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



२०३. पन्नालाल गुप्त, पूर्वोद्धृत, पृ. २७-२८, ३०
२०४. स्वर्णजयन्ती समारोह स्मारिका, आर्यसमाज गोविन्दनगर, १९९७-९८, पृ. १
२०५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. ९२, १३१
२०६. वही, पृ. १३२
२०७. देखें- अध्याय-२ का परिशिष्ट-१
२०८. आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश का ११०वाँ वार्षिक वृत्तान्त, पृ. ४०
२०९. देखें- अध्याय-२ का परिशिष्ट-१
२१०. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १११
२११. वही, पृ. ११६-१७
२१२. देखें- अध्याय-२ का परिशिष्ट-१
२१३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत,द्वितीय भाग, पृ. ९
२१४. वही, पृ. १६७
२१५. वही, पृ. १७२
२१६. वही, पृ. १२४
२१७. स्मारिकास्थापनाशताब्दीसमारोह (१८९२-१९९१ ई०) आर्यसमाज टाण्डा (फैजाबाद), नवम्बर १९९१, पृ. ९२-९३
२१८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १२१
२१९. आर्यसंदेश, रविवार, ७ अप्रैल १९९६, पृ. १७
२२०. भवानीलाल भारतीय, काशी में महर्षि दयानन्द, पृ. ६३

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट-१

## डी.ए.वी. कॉलेज कमेटी की प्रथम नियमावली

Rulas for the Dayanand Anglo-Vidic Collage Committee

That a society for establishing in the Punjab an anglo Vedic College Institution in Honour of Swami Dayanand Saraswati, be Constituted and Registered under Act. xxi of 1860.

II. That the said a society be designated dayanand Anglo-Vedic College Trust and Management Society.

III. 1. To Establish in the Punjab an Anglo-Vadic College Institution which shall include a school, a college and boarding-House, as memorial in honour of swami Dayanand Saraswati with the following joint Purposes, Viz.,

(a) To encourage, Improve and enforce the study of Hindi literature.

(b) To encourage, and enforce the study of classical sanskrit and Vedas.

(c) To encourage and enforce the study of English literature, and Science, both theoretical and applied.

2. To Provide Means for giving Technical education, in connection with anglo-Vadic collage Institution as for as it is not inconsistent with the proper accomplishment of the 1st object.

IV. The following persons shall be deemed members of this society :-

(a) All Persons who have contributed a donation of Rs. 100/- or more and are members of any Arya samaj which has contributed Rs. 1000/- or more to Society.

(b) Members of the Managing Committee (to be constituted as hereafter provided) of the Society as long as they hold such memberaship.

(c) Members of the executive committee (formed in accordance with the upaniyams) of any Arya Samaj which has contributed Rs. 1000/- or more to the society, while holding office in the executive committee.

V. The Management committees of the society will be composed of the following classes of the persons :-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



(a) Representatives of any Arya Samaj which has contributed Rs.1000/- of more.

**Proviso 1.** That a majority consisting of 3/4th of the actual of the managing committee may relax the rule in the case any Arya Samaj for special reasons relating to the betterment of the committee.

**Proviso 2.** That any Arya Samaj may waive its Privilege of representation or full representation on account of its failure to secure the services of a competant and respectable member or for some other reason.

**Proviso 3.** The member of representatives which as Arya Samaj is entitled to send under this clause will vary according to the amout of its contribution, there being one represantstive for the first 1000 rupees contributed in excess of the first 1,000 rupees.

(b) One representative of Education.

(c) One representative of Medicine.

(d) One representative of Engineering.

(e) One representative of Nobility.

(f) One representative of Law.

(g) One representative of Science.

(h) One representative of Learning.

VI. The representative mentioned in clause (a) shall be nominated by the members of the executive committee of the Arya Samaj of which he is a representative.

VII. The members mentioned in clause (a) to (h) of Rule V shall be nominated by the members mentioned in clause (a) subject to the provision that in no case should the aggregate number of members nominated numerical under these clauses exceed one third of the whole estrength of the committee.

Provided also nomination may not be made under any of the clauses (b) to (h) Rule V in case a fit representative of a class mentioned in any of these clauses has been previously elected under clause (a) of the same rule.

VIII. The Samajic representative must be an Arya Sabhasad but need

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



not be a registered member of the particular Arya Samaj by which he is elected.

IX. The Managing Committee will dissolve and be elected every three Years in accordance with the foregoing provisions. for the appointment of members.

X. The following Circumstances shall be deemed sufficient to cause a vacancy in the managing committee :-

(a) Death of a member.

(b) Resignation by a member.

(c) Continued absence from three successive meeetings of the committee without sufficient cause.

(d) Cessation of membership in the Arya Samaj caused by exclusion. Voluntary relinquishment or otherwise, when, reported by the Arya Samaj of which he was a representative.

(e) Insanity

(f) Conviction of an offence which in the opinion of the managing committee renders the offender unfit to serve on the committee.

On the occurrence of a vacancy in the managing committee from any of the causes mentioned above a new representative of the same class be elected or appointed in accordance with the foregoing provisions prescribed therefore.

XI. The managing committee shall frame its own rules of business.

XII. The financial control shall rest with the managing committee subject to the general control of the society.

XIII. The managing committee shall appoint its own office bearers. It shall also have power to dismiss or suspend its own office bearers. Provided that no such dismissal or suspension shall that place unless a majority consisting of 3/4th of the actual number of the managing committee has concurred therein . Both the secretary and the president shall belong to clasus (a) Rule 5.

XIV. The election of office-bearers appointed under rule 13 shall be annual.

XV. The Power of the managing committee shall be regulated from time

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



to time by resolutions passed at the meetings of the society.

XVI. An annual general meeting of the members of the society shall be held in the month of at the locality of the college.

X VII. Special meetings of the society shall be convened by the Secretary of the managing committee when so required to do by at least 1/4th numbers of the society or whenever the managing committee thinks fit.

XVIII. Bye-Laws and regulations may be framed form time to time by the managing committee subject to confirmation at the next meeting of the society.

XIX. Subject to the control of the society the following powers shall be exercised and duties Performed by the first managing committee appointed, under these rules :-

1. To decide locality of the institution.
2. To frame a memorandum of association for the purpose of registration in accordance with these rules.
3. To register the society under Act. xxi of 1860.
4. To invest the funds of the society in the name of society in any or all of the following securities :-
   (a) Government Pro-notes.
   (b) Land.
   (c) Deposit in some Bank.
5. To Collect.
6. To take staps for the speedy opening of the Institution.
7. To frame and issue a scheme of studies for the institution in accordance with the objects stated in rule III.
8. To spend any money which may be necessary for carrying out the objects of the society and for the exercise of powers and the performance of duties specified under this rule. Provided that in no case shall the committee have power to disburse any sums out of the capital fund.
9. To keep the records of the society.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



XX. The managing committee shall be bound to send a copy of the resolutions passed in any meeting to the Arya Samaj having a representative on the committee and also to submit a copy of its accounts every three months to the same.

XXI. Any Arya Samaj will have the privilege of sending one or more representatives to the managing committee in accordance with rule -V, as soon as it has completed the donations of Rs: 1,000 or more.

---

डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ.१६५ से १६९.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट- २

Scheme of study for each class in Dayanand Anglo Vadic Schools.

| Lower Primary Department | Upper Primary Department | Middle Department | Upper Department |
|---|---|---|---|
| 1st Class | 4th class | 7th class | 9th class |
| 1. Hindi Reading & writing | 1. Hindi | 1. Sanskrit | 1. Sanskrit |
| | 2. Sanskrit | 2. Arithmetic | 2. Mathematics |
| | 3. English | 3. English | 3. English |
| | 4. Arithmetic | 4. Geography | 4. Geography |
| | 5. Geography | 5. History | 5. History |
| 2. Class | 6. Urdu (opt.) | 6. Physical Science | 6. Physical Science |
| 2. Arithmetic Tables | | 7. Urdu (Opt.) | 7. Sanitation |
| 3rd Class | 5th class | 8th class | 10th class |
| 1. Hindi Reading & Writing | 1. Hindi | 1. Sanskrit | 1. Sanakrit |
| 2. Sanskrit | 2. Sanskrit | 2. Arithmetic | 2. Mathematics |
| 3. Arithmetic | 3. English | 3. English | 3. English |
| 4. Geography | 4. Arithmetic | 4. Geography | 4. Geography |
| | 5. Geography & Urdu (opt.) | 5. History | 5. History |
| | | 6. Physical Science | 6. Physical Science |
| | 6th Class | 7. Urdu & sanitation (Opt.) | 7. Sanitation (opt.) |
| | 1. Hindi | | |
| | 2. Sanskrit | | |
| | 3. Arithmetic | | |
| | 4. English | | |
| | 5. Geography | | |
| | 6. Urdu (opt.) | | |

---

गुलशन स्वरूप सक्सेना- आर्यसमाज मूभमेंट इन इण्डिया, पृ.१९०-९१.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

## पंचम अध्याय

# आर्यसमाज और परम्परागत गुरुकुल प्रणाली

आर्यसमाज अपने स्थापना काल के प्रारम्भ से ही प्राचीन भारत के गौरवशाली सांस्कृतिक इतिहास को भारतीय जनमानस में दृढ़ता के साथ प्रस्तुत करने का निरन्तर प्रयास करता रहा। इस प्रयास के अनन्तर आर्यसमाज ने सांस्कृतिक जागरण के लिए विविध आन्दोलन चलाए। आर्यसमाज का मानना था कि वेदों और शास्त्रों के इस देश में यह उचित नहीं है कि यूरोपियन शिक्षा, साहित्य तथा जीवन पद्धति को अपनाया जाए। इसलिए इसके संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भारतीय जनमानस के बीच एक शैक्षिक योजना प्रस्तुत की, जो प्राचीन शिक्षा पद्धति पर आधारित है। इसके पूर्व के अध्याय में स्वामी दयानन्द के शैक्षिक विचारों का विशद् विवरण दिया जा चुका है।

स्वामी दयानन्द के शैक्षिक योजनाओं के आधार पर आर्यसमाज ने भारत के विविध प्रान्तों में शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रान्तिकारी कार्य किया। जिसके फलस्वरूप लड़कों के लिए डी.ए.वी. स्कूल और कॉलेज तथा लड़कियों के लिए पुत्री पाठशालाओं (आर्यकन्या स्कूल और कॉलेज) का जन्म हुआ। ये दोनों तरह के शिक्षण संस्थाओं में सहकारी पाठविधि एवं सरकारी अनुदान की व्यवस्था का प्रबन्ध किया गया था। फिर भी इन शिक्षण संस्थाओं में वेद शास्त्रों का अध्ययन, भारतीय संस्कृति के अनुरूप शैक्षिक वातावरण,भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के प्रति उत्साह एवं कार्य योजनाओं का अपूर्व संगम था।

गुरुकुल युग के सूत्रपात का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि डी.ए.वी. के कार्य योजनाओं को लेकर पंजाब में आर्यसमाजी कार्यकर्ताओं के बीच उग्र मतभेद उत्पन्न हुआ। जिसके फलस्वरूप सन्-१८९४ ई० में पंजाब में आर्यसमाजियों का दो दल बन गया-एक, कॉलेज पार्टी-हंसराज और दूसरा गुरुकुल पार्टी, जिसके नेता मुंशीराम बने।[१] इसके पूर्व के अध्याय में इस विषय का उल्लेख किया जा चुका है। महात्मा हंसराज के नेतृत्व में डी.ए.वी. आन्दोलन तथा महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) के नेतृत्व में गुरुकुल आन्दोलन का इस देश में जन्म हुआ। शीघ्र ही यह दोनों आन्दोलन विविध प्रान्तों में तीव्रगति से फैलता गया। डी.ए.वी. आन्दोलन के विषय में पहले उल्लेख किया जा चुका है।

उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज द्वारा चलाए गए गुरुकुल आन्दोलन के फलस्वरूप लड़कों की शिक्षा के लिए गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार; गुरुकुल विश्वविद्यालय, वृन्दावन; गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर; निःशुल्क गुरुकुल महाविद्यालय, अयोध्या के साथ ही अन्य स्थानों में गुरुकुलों का जन्म हुआ। लड़कियों की शिक्षा के लिए आर्यसमाज ने कन्या गुरुकुल-हाथरस; कन्या गुरुकुल, देहरादून; तथा कन्या गुरुकुल, कनखल आदि खोला। प्रान्त में स्थापित गुरुकुल एवं इसकी पृष्ठभूमि का अध्ययन प्रस्तुत अध्याय में सम्मिलित किया गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**गुरुकुल योजना की पृष्ठभूमि–** आर्यसमाज द्वारा परम्परागत गुरुकुल युग की योजना की पृष्ठभूमि पंजाब में तैयार हुई और उत्तर प्रदेश में इसे पूर्णरूपेण क्रियान्वित किया गया। विदित है कि डी.ए.वी. के शैक्षणिक नीति को लेकर पंजाब में आर्यसमाजियों के दो दल हो गए थे। पहले दल का नेतृत्व महात्मा हंसराज ने किया जो डी.ए.वी. की शैक्षणिक नीति का प्रबल पक्षधर बना रहा और इसका खूब विस्तार किया।

प्रारम्भ से ही डी.ए.वी. की योजनाओं में सम्मिलित रहे पं० गुरुदत्त का विचार प्राचीन गुरुकुलीय पद्धति की योजना को साकार रूप देने का था। इनका मानना था कि आर्यसमाज के कॉलेजों में वेद-वेदांगों की शिक्षा को प्रधानता दी जाए और स्कूल के बोर्डिंग में गुरुकुलोचित नियम लागू किए जाएँ।[२] जब तक पं० गुरुदत्त जीवित (१८ मार्च १८९०) रहे ।[३] वे डी.ए.वी. कॉलेज की स्कीम में गुरुकुल की भावना को स्थान देने का यत्न करते रहे । परन्तु उन्हें विशेष सफलता नहीं मिली।[४] गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति की योजना को बाद में महात्मा मुंशीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) ने साकार किया।

पं० गुरुदत्त की भाँति मुंशीराम भी प्रारम्भ में डी.ए.वी. कॉलेज की संचालन व्यवस्था में सहभागी रहे । कुछ समय बाद उन्हें यह अनुभव हो गया कि डी.ए.वी. शिक्षा प्रणाली में संस्कृत भाषा, वैदिक एवं आर्षशास्त्रों के अध्ययन को अंग्रेजी की तुलना में गौण स्थान दिया जा रहा है । तब उनके मन में ऋषि दयानन्द द्वारा उपदिष्ट गुरुकुलशिक्षाप्रणाली को मूर्त रूप देने का विचार आया।[५] उनका मानना था कि डी.ए.वी. कॉलिज शिक्षा पद्धति की त्रुटियों को दूर कर आर्यपुत्रों के लिए गुरुकुल ही सिद्ध होंगे।[६]

पं० मुंशीराम ने प्रारम्भ में गुरुकुल की योजना को साकार रूप देने के लिए "सद्धर्म प्रचारक पत्र" में लेख लिखने आरम्भ किए और अपने भाषणों के द्वारा आन्दोलनों को आगे बढ़ाया। फलस्वरूप ३ अक्टूबर १८९७ ई० को रात्रि में गोविन्दपुर आर्यसमाज के उत्सव पर आर्य भाईयों की एक सभा हुई। इस सभा में सर्वश्री मुंशीराम, रामभजदत्तजी चौधरी, सीतारामजी लाहौर निवासी, केसरीमलजी दीनानगरी, मुंशी मुकुन्दरामजी, श्रीगोविन्दपुरी आदि सज्जनों ने भाग लिया और सर्वसम्मति से निश्चय किया कि "आर्य पुरुषों की यह कान्फ्रेंस श्रीमती आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब की सेवा में यही निवेदन करना अत्यन्त आवश्यक समझती है कि गुरुकुल शीघ्र ही खोला जाए।"[७]

गुरुकुल खोलने के सम्बन्ध में पंजाब आर्यप्रतिनिधि सभा ने २६ नवम्बर १८९८ ई० के अधिवेशन में गुरुकुल खोलने और ऋषि दयानन्द के अधूरे वेद-भाष्य को पूरा करने के सम्बन्ध में प्रस्ताव पारित किए और निश्चय किया कि दोनों कार्यों के लिए आठ-आठ सहस्र रूपया एकत्र हो जाने पर ये कार्य आरम्भ किए जाएँ। इस समय गुरुकुल की योजना तैयार करने का काम मुंशीरामजी को सौंप दिया गया।[८] मुंशीरामजी ने इस कार्य के लिए अथक प्रयास किया और अन्ततः अपूर्व सफलता भी उन्हें प्राप्त हुई। पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा आठ हजार रूपए गुरुकुल खोलने के लिए जो निर्धारित किया गया था, मुंशीराम ने ४० सहस्र रूपया एकत्र किया।[९] इस सफलता के अभिनन्दन स्वरूप दिनांक ८ अप्रैल १९०० ई० को लाहौर आर्यसमाज ने इनके सम्मान में जुलूस निकाला तथा अभिनन्दन पत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पेश कर उन्हें ''महात्मा'' पद से विभूषित किया तब से ये लाला मुंशीराम के स्थान पर महात्मा मुंशीराम कहलाने लगे।[१०]

२६ दिसम्बर १९०० ई० को प्रतिनिधि सभा के साधारण अधिवेशन में गुरुकुल के पहले नियम स्वीकृत किए गए थे। गुजरांवाला के लाला रलाराम उन दिनों आर्यप्रतिनिधिसभा के प्रधान थे। उनके हस्ताक्षरों से गुरुकुल की प्रथम नियमावली प्रकाशित हुई, उसमें २० पृष्ठों की भूमिका थी।[११] लाला रलाराम भी उन नेताओं में से एक थे जो डी.ए.वी. कॉलेज की शिक्षा पद्धति से असन्तुष्ट थे और निरन्तर डी.ए.वी. स्कूल और कॉलेज में संस्कृत, हिन्दी तथा वेद-वेदांगों को विशेष स्थान प्रदान करने के लिए प्रयासरत थे। सन्-१८९१ ई० में उन्होंने डी.ए.वी. कॉलेज में पृथक वेद विभाग खोलने का प्रस्ताव किया था। किन्तु उन्हें उस समय सफलता नहीं मिली। अन्त में महात्मा पार्टी की आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा वह अपने विचारों को क्रियान्वित करा सके। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के विषय में उनका प्राय: वही मन्तव्य था, जो लाला मुंशीराम का था।[१२]

**गुरुकुल की प्रथम नियमावली–** २६ दिसम्बर सन्-१९०० ई० को आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा जो गुरुकुल के निमित्त नियमावली स्वीकृत की गयी थी; वह अत्यन्त महत्व का है। इसमें गुरुकुल की स्थापना के निम्नलिखित आठ कारण बताए गए उसका मुख्य संक्षिप्त अंश निम्नलिखित है—

१-वेद आर्यसमाज के प्राण हैं। विशाल संस्कृत साहित्य का आरम्भ बिन्दु या मूल स्रोत वेद ही हैं। वेद के अध्ययन के लिए गुरुकुल की आवश्यकता है।

२-संस्कृत का अध्ययन तब तक पूर्ण नहीं हो सकता, जब तक कि अंगों तथा उपांगों के साथ वेदों का अध्ययन न किया जाए। संस्कृत शिक्षा की कोई ऐसी योजना, जिसमें वैदिक साहित्य को समुचित स्थान प्राप्त न हो, बिना प्राण के शरीर के समान है। अत: ऐसे शिक्षणालय की आवश्यकता है, जिसमें संस्कृत साहित्य के साथ-साथ वैदिक साहित्य का अध्ययन-अध्यापन हो।

३-संस्कृत के अध्ययन का प्रारम्भ करना देशभक्ति का कार्य है। भारत की शिक्षा पद्धति सच्चे अर्थों में तभी राष्ट्रीय हो सकती है, जब यहाँ के शिक्षणालयों में संस्कृत का अध्ययन हो। ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में जिस शिक्षा प्रणाली को प्रचलित किया गया है, वह भारतीयों में देशभक्ति का विनाश कर रही है और उन्हें 'मानसिक दास' बना रही है। आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा की एक ऐसी योजना तैयार की जाए जो सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय हो। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि विदेशी भाषा तथा नए ज्ञान-विज्ञान को ग्रहण न किया जाए। हमें अंग्रेजी,आधुनिक विज्ञानों, पाश्चात्य दर्शन, अर्थशास्त्र और राजनीति आदि का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। आगे कहा गया है कि संस्कृत ही भारत की प्राचीन साहित्यिक भाषा है। इसके द्वारा ही भारत का मानसिक विकास हुआ है। इसके कदम से ही आज भारत में अध्यात्मशास्त्र, नीति, विज्ञान तथा कला का पारम्परिक ज्ञान सुरक्षित है। जब तक भारत के छात्रों के विचार का माध्यम उनके प्राचीन पूर्वजों की यह साहित्यिक वाणी नहीं हो जाती, भारत में मानसिक राष्ट्रीयता का उदय होना असंभव है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



४-ब्रह्मचर्य शिक्षा का मुख्य आधार है। ब्रह्मचर्य के बिना शिक्षा,बिना नींव या आधार के समान होती है। इसलिए एक ऐसी शिक्षण संस्था को स्थापित करना बहुत आवश्यक है, जो नगरों से दूर स्थित हो और जहाँ विद्यार्थी ब्रह्मचर्य के नियमों का पूर्ण रूप से पालन कर सकें।

५-सरकार द्वारा भारत में परीक्षाओं की जो पद्धति प्रचलित की गई है, वह वास्तविक विद्वता के मार्ग में बाधक है। अत: कोई संस्था, जो सरकारी यूनिवर्सिटियों की परीक्षाएँ भी दिलाना चाहे और साथ ही यह भी चाहे कि उसके विद्यार्थी वेदशास्त्रों के भी पण्डित हों, कभी सफल नहीं हो सकती। गुरुकुल इन सरकारी परीक्षाओं से अपने को पृथक् रखेगा।

६-गुरुकुल का शिक्षक कोई अनुभवहीन युवक नहीं होगा। सामान्यतया: वह परिपक्व आयु का ऐसा विद्वान् होगा, जिसने जीवन के ऊँच-नीच देख लिए होंगे और जो शान्त होकर एक व्यवस्थित अवस्था को पहुँच गया होगा। ऐसा विद्वान् ही अपने अनुभव से बालकों व किशोरवय के छात्रों को लाभ पहुँचाने में समर्थ हो सकेगा। विद्यार्थी सारा समय ऐसे अध्यापकों की देख-रेख व निरीक्षण में रहेंगे।

७-शिक्षा सबके लिए नि:शुल्क होनी चाहिए। गुरुकुल में किसी से शिक्षा की फीस नहीं ली जाएगी।

८-पाश्चात्य विद्वानों ने प्राचीन भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में जो खोज की है और उसके आधार पर जो इतिहास ग्रन्थ लिखे हैं, वे इतिहास विषयक भारतीय मन्तव्यों के अनुरूप नहीं हैं। आवश्यकता इस बात की है कि पुरातत्त्व सम्बन्धी सामग्री एवं प्राचीन ऐतिहासिक अनुश्रुति तथा साहित्य का विवेचनापूर्वक अध्ययन कर भारत के प्राचीन इतिहास को सही रूप में प्रस्तुत किया जाए। गुरुकुल द्वारा यह महत्त्वपूर्ण कार्य भी सम्पन्न किया जाएगा।[१३]

इस प्रकार आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा जो नियमावली स्वीकृत की गयी थी उनमें वेद-वदांगों के अध्ययन-अध्यापन, संस्कृत शिक्षा, जिसमें वैदिक साहित्य को समुचित स्थान प्राप्त हो, भारत की शिक्षा पद्धति को राष्ट्रीय बनाने की योजना, आधुनिक ज्ञान-विज्ञान, अंग्रेजी भाषा, पाश्चात्य दर्शन, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि का अध्ययन की आवश्यकता, चिरकाल से विस्मृत ब्रह्मचर्य की परम्परा को शिक्षा का आधार बनाना, गुरु और शिष्य के बीच सम्बन्ध पिता और पुत्र के समान, सामयिक परीक्षा पद्धति के दोषों से गुरुकुल को मुक्त रखना, प्राचीन भारतीय इतिहास में अनुसन्धान कार्य करने की आवश्यकता आदि नियम प्रतिपादन किए गए थे। इसी आधार पर गुरुकुल स्थापना की योजना पंजाब में आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा बनाई गई थी। शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज द्वारा प्रस्तुत गुरुकुल-योजना के मूल तत्त्वों में महर्षि दयानन्द के शैक्षिक विचारों का समावेश था। प्राचीन भारत की शिक्षा पद्धति को दृष्टि में रखकर गुरुकुल योजना को क्रियान्वित करने का विचार आर्यसमाज का मुख्य ध्येय था।

इस ध्येय के निमित्त स्वामी दयानन्द के परम शिष्य स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी त्यागानन्द, स्वामी ब्रह्मानन्दजी दण्डी आदि ने उत्तर प्रदेश में अनेक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



गुरुकुलों की स्थापना की जो पाश्चात्य प्रणाली, विदेशी भाषा-माध्यम आदि से सर्वथा दूर और दासता की भावनाओं के स्थान पर पूर्ण स्वतन्त्रता की उज्जवल भावनाओं का छात्रों में संचार करने तथा स्वसंस्कृति, स्वधर्म एवं स्वाभिमान को जाग्रत करने वाले हैं। उत्तर प्रदेश में सर्वप्रथम गुरुकुल की स्थापना सन्-१८९८ ई० में सिकन्दराबाद (जिला बुलन्दशहर-मेरठ डिवीजन) में स्वामी दर्शनानन्द (पहले पं० कृपाराम) द्वारा की गयी थी।[१४]

महात्मा मुंशीराम के अथक प्रयास से आर्यप्रतिनिधिसभा, पंजाब द्वारा उत्तर प्रदेश में द्वितीय गुरुकुल का आरम्भ मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत गंगा के किनारे कांगड़ी ग्राम (हरिद्वार) में २ मार्च १९०२ को किया गया।[१५] यहाँ पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा उत्तर प्रदेश में स्थापित गुरुकुल कांगड़ी के विकास का अध्ययन समीचीन है।

**गुरुकुल कांगड़ी का विकास–** उत्तर प्रदेश में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना के पूर्व दिनांक १९ मई १९०० ई० को पंजाब की आर्यजनता ने सबसे पहले "गुजराँवाला में वैदिक पाठशाला पहले से ही विद्यमान थी" इसी के साथ गुरुकुल की स्थापना कर दी। भक्त आनन्दस्वरूप की वाटिका में पाँच कमरों का निर्माण कर उनमें विद्यार्थियों (ब्रह्मचारियों) के निवास के लिए आश्रम भी खोल दिया गया था। लाला मुंशीराम ने अपने दोनों पुत्र-हरिश्चन्द्र और इन्द्रचन्द्र को इस गुरुकुल में प्रविष्ट भी कराया। ये गुरुकुल के पहले ब्रह्मचारी थे। इनके अतिरिक्त अन्य परिवारों के २० बालक और गुरुकुल में प्रविष्ट हुए।[१६] एक नवीन योजना के निमित्त खोले गए इस गुरुकुल के प्रारम्भ में २२ विद्यार्थियों की संख्या होना महत्त्वपूर्ण है।

गुरुकुल के इन ब्रह्मचारियों को माता-पिता से पृथक् आचार्य की देखरेख में रहना था। इसका प्रावधान गुरुकुल के नियमावली में ही कर दिया गया था। भारत के प्राचीन आचार्यकुलों के ब्रह्मचारियों के समान इन्हें सादा तपोमय जीवन बिताना था। ब्रह्मचर्य आश्रम के अनुरूप शिक्षा योजना ही गुरुकुल का ध्येय था। गुजराँवाला में स्थापित गुरुकुल में आचार्य पद पर पंडित गंगादत्तजी को नियत किया गया। साथ ही पं० विष्णु मित्र, महाशय भक्तराम और मास्टर सुन्दरसिंह की नियुक्ति अध्यापक के रूप में की गई। इस प्रकार यहाँ गुरुकुल का कार्य आरम्भ हो गया था।[१७]

महात्मा मुंशीराम गुरुकुल के लिए उपयुक्त स्थान-'जहाँ शहरों के कोलाहल से दूर किसी नदी के तट पर एक़ान्त स्थान हो' की खोज में थे। यह स्थान उत्तर प्रदेश में मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत स्थित कांगड़ी ग्राम महात्मा मुंशीराम के अनुकूल प्राप्त हुआ। यहाँ गुरुकुल की स्थापना होने की अनुकूल परिस्थितियाँ बनीं। मुंशी अमन सिंह का अपूर्व त्याग इसमें महत्त्वपूर्ण है। यहाँ गंगा पार मुंशी अमनसिंह की जमीनदारी थी। उन्होंने कांगड़ी ग्राम तथा अपनी कुल जमींनदारी (बारह सौ बीघा भूमि) गुरुकुल को देना स्वीकार किया।[१८] महात्मा मुंशीराम ने इस रमणीक स्थल में गुरुकुल को लाने का निश्चय किया। इसके फलस्वरूप हरिद्वार में गुरुकुल कांगड़ी का जन्म हुआ।

सन्-१९०२ ई० में गुजराँवाला का गुरुकुल हरिद्वार में गंगा के दूसरे पार अपने स्थान पर लाया गया और सन्-१९१२ ई० में पहली बार स्नातकों का प्रथम वर्ग गुरुकुल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust, Funding IKS-MoE-Grant-2



जनता को अर्पित किया गया। जिसमें महात्मा मुंशीराम के दोनों पुत्र, हरिश्चन्द्र और इन्द्रचन्द्र भी सम्मिलित थे।[१९] सन्-१९०६ ई० तक गुरुकुल में केवल सात श्रेणियाँ थीं, जिनमें प्रधानतया संस्कृत व्याकरण और साहित्य की शिक्षा दी जाती थी, यद्यपि भूगोल, गणित, वस्तुपाठ आदि की सामान्य शिक्षा भी इनकी पाठविधि में सम्मिलित था। इस समय यहाँ संस्कृत के अध्यापकों में पं० गंगादत्तजी शास्त्री, पं० भीमसेन शर्मा, पं० दौलतराम, पं० पद्मसिंह शर्मा, पं०विष्णुमित्रजी, पं० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ आदि प्रमुख थे। बनारस के पं० काशीनाथ शास्त्री, जो भारतीय दर्शन शास्त्र के महान् विद्वान् थे, उनके यहाँ आने से गुरुकुल की संस्कृत शिक्षा असाधारण रूप से समृद्ध हुई।[२०]

सन्-१९०६ ई० से गुरुकुल कांगड़ी में उच्च कक्षाएँ प्रारम्भ करने की योजना बनायी गयी तथा डॉ०भारद्वाज (इंगलैण्ड से एलोपैथी की उच्च डिग्री प्राप्त), रामदेव (जालन्धर के एक स्कूल में हेडमास्टर हो गए थे), गोवर्धन (गवर्नमेंट कॉलिज लाहौर के बी.ए.) आदि आर्यसमाज में आस्था रखने वाले गुरुकुल में आए। आर्यसमाज के इन कार्यकर्ताओं ने आधुनिक पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान को गुरुकुल की पाठविधि में सम्मिलित कराने पर विशेष बल दिया। यहीं से गुरुकुल में उन प्रवृत्तियों का सूत्रपात हुआ, जिन्हें 'आधुनिक' व 'नवीन' कहा जा सकता है।[२१]

गुरुकुल कांगड़ी के इतिहास में सन्-१९०६ से सन्-१९१० तक का काल संक्रान्ति का युग था। इस काल में गुरुकुल-'विद्यालय' और 'महाविद्यालय' में विभक्त हो गया। विद्यालय स्तर पर १० तक की कक्षाएँ रखी गयीं और महाविद्यालय में ४ कक्षाएँ।[२२] इसी अवधि में गुरुकुल के पाठ्यक्रम में नवीनता के प्रश्न को लेकर पं० गंगादत्तजी, पं० भीमसेन, पं० नरदेवजी और पं० पद्मसिंह शर्मा आदि गुरुकुल कांगड़ी से पृथक हो गए और गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में आकर कार्य करने लगे थे।[२३]

सन्-१९१२ ई० में दस वर्षों तक विद्यालय की और ५ वर्षों तक महाविद्यालय की दीक्षा और शिक्षा समाप्त करके सबसे ऊँची श्रेणी के दो ब्रह्मचारी स्नातक हुए। उन्हें 'विद्यालंकार' और 'वेदालंकार' की उपाधि प्रदान की गई। यहाँ दीक्षांत संस्कार की विधि गुरुकुल की विद्वत्मण्डली ने आर्ष ग्रन्थों के आधार पर संकलित की थी।[२४] ये गुरुकुल के प्रथम दो स्नातक ब्रह्मचारी-ब्र० हरिश्चन्द्र और ब्र० इन्द्रचन्द्र जो महात्मा मुंशीराम के पुत्र थे, इन्द्रचन्द्र, इन्द्र विद्यावाचस्पति के नाम से विख्यात हुए जो बाद में प्रसिद्ध लेखक, वक्ता एवं राजनैतिक कार्यकर्ता बने, सार्वदेशिक सभा के प्रधान हुए तथा इस गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता बने।[२५]

सन्-१९१२ ई० में गुरुकुल महाविद्यालय का शिक्षक वर्ग निम्नलिखित था।[२६] १. महात्मा मुंशीरामजी आचार्य, २. श्रीरामदेवजी बी.ए., एम.आर.ए.एस., उपाचार्य तथा उपाध्याय पाश्चात्य दर्शन, ३. पं० शिवशंकर काव्यतीर्थ उपाध्याय, वेद, ४. श्री बालकृष्ण एम.ए. उपाध्याय इतिहास तथा अर्थशास्त्र, ५. प्रो० महेशचरण सिंह एम.एस.सी. उपाध्याय, कृषि ६. प्रो० सेवाराम एम.ए. उपाध्याय, आंग्ल-भाषा, ७. प्रो० ताराचन्द्र गाजरा एम.ए. सहायक उपाध्याय आंग्ल-भाषा, ८. श्री लक्ष्मण बी.ए. उपाध्याय, गणित, ९. पं० योगेन्द्रनाथ दर्शनाचार्य उपाध्याय, भारतीय दर्शन।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



इस समय (सन्-१९१२ ई०) गुरुकुल कांगड़ी में तीन सौ के लगभग ब्रह्मचारी शिक्षा प्राप्त करने लगे थे। महाविद्यालय की पक्की इमारत बनकर तैयार हो गया था, बड़े ब्रह्मचारियों के लिए छात्रावास (आश्रम) भी पृथक् बनाया गया था। इसके अतिरिक्त शिक्षकों, कर्मचारियों और कर्मकारों के लिए परिवारगृह, व्यायामशाला, धर्मशाला, गौशाला, स्नानगृह आदि का निर्माण भी हो चुका था।[२७]

इस प्रकार यह गुरुकुल निरन्तर विकसित होता गया। सन्-१९१७ ई० में ब्रह्मचारियों की कुल संख्या ३४० हो गई थी, जिसमें २७६ ब्रह्मचारी विद्यालय विभाग में थे और ६४ महाविद्यालय विभाग में।[२८] इसी वर्ष महात्मा मुंशीराम ने संन्यास ग्रहण किया और स्वामी श्रद्धानन्द बनें, तो गुरुकुल के आचार्य प्रो० रामदेवजी बनाए गए।[२९]

सन्-१९२१ ई० में गुरुकुल कांगड़ी को विश्वविद्यालय का रूप दिया गया।[३०] इस सन्दर्भ में विवरण प्राप्त होता है कि पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा २२ मार्च, १९२१ ई० को एक प्रस्ताव स्वीकृत किया गया था। जिसका विवरण निम्नलिखित है- शिक्षा सम्बन्धी क्षमता को बढ़ाने के लिए आवश्यक प्रतीत होता है कि वर्तमान गुरुकुल को एक ऐसे विश्वविद्यालय के रूप में परिणित किया जाए, जिससे भिन्न-भिन्न विषयों की शिक्षा दी जा सके। इसके लिए निश्चय हुआ कि इस विश्वविद्यालय के साथ निम्नलिखित महाविद्यालय सम्बन्धित होंगे-(१) वेद महाविद्यालय, (२) साधारण महाविद्यालय, (३) आयुर्वेदिक महाविद्यालय, (४) कृषि महाविद्यालय, (५) व्यवसाय महाविद्यालय।

इस प्रकार गुरुकुल को विश्वविद्यालय का रूप देने के लिए निर्दिष्ट संगठन का निर्माण किया गया। इसमें आयुर्वेदिक, कृषि और व्यवसाय महाविद्यालय को उचित धन प्राप्त होने पर खोलने की योजना के साथ ही कांगड़ी के बाहर खोलने का प्रावधान किया गया। इसमें विश्वविद्यालय के प्रबन्ध आदि के लिए एक विद्यासभा बनाने की योजना भी विद्यमान थी।[३१] इसी वर्ष (सन्-१९२१ ई०) स्वामी श्रद्धानन्द के गुरुकुल से चले जाने पर पं० विश्वम्भरनाथ (पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा और उसी अन्तरंग सभा के सदस्य थे) को उनके स्थान पर मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किया गया।[३२]

सन्-१९२३ ई० में गुरुकुल में शिक्षा पटल (Board of Studies) बनाया गया। इस समय तक पाठविधि के निर्धारण करने का कार्य कॉलेज कौंसिल किया करती थी। सब प्राध्यापक इसके सदस्य हुआ करते थे। शिक्षा पटल के निम्नलिखित सदस्य होते थे- (१) आर्यप्रतिनिधिसभा पंजाब का प्रधान, (२) गुरुकुल कांगड़ी का मुख्याधिष्ठाता, (३) गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के प्रत्येक महाविद्यालय के अध्यक्ष, (४) गुरुकुल कांगड़ी का आचार्य, (५) प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा द्वारा निर्वाचित छः व्यक्ति, जिनमें से कम से कम तीन शिक्षा के विशेषज्ञ हों, (६) गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के उपाध्यायों (प्राध्यापकों) द्वारा निर्वाचित तीन प्रतिनिधि, (७) गुरुकुल कांगड़ी के स्थायी सेवकों और दयानन्द सेवा सदन के सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक प्रतिनिधि, (८) गुरुकुल के स्नातकों का एक प्रतिनिधि। मुख्याधिष्ठाता (गवर्नर, वाईसचांसलर या उपकुलपति भी कहा जाता है)[३३] को ही शिक्षा पटल का प्रधान बनाने का उसमें प्रावधान किया गया तथा पटल का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



एक मंत्री नियुक्त किए जाने की भी व्यवस्था की गयी थी, जिसे "प्रस्तोता" कहा जाता था। गुरुकुल के प्रथम प्रस्तोता पं० महानन्द सिद्धान्तालंकार थे।[३४]

सन्-१९२४ ई० में हरिद्वार के पास भयंकर बाढ़ आयी। जिससे गुरुकुल की सारी सम्पत्ति नष्ट हो गयी। जिसके फलस्वरूप गुरुकुल को यहाँ चलाना सम्भव नहीं था जिससे सन्-१९३० ई० में गुरुकुल को नए स्थान में (कनखल-ज्वालापुर मार्ग के दक्षिण में ६०० बीघे जमींन में) स्थापित किया गया तथा साथ ही एक फार्मेसी भी बनायी गयी।[३५] यही फार्मेसी "जिसमें आयुर्वेदिक औषधियाँ बनाये जाने की एवं इसके व्यापार करने की व्यापक योजना थी" आगे चलकर गुरुकुल की आमदनी का साधन बनी। गुरुकुल के आर्थिक स्थिति को संभालने वाला सबसे बड़ा स्तम्भ फार्मेसी ही हुआ।[३६]

सन्-१९३५ ई० में गुरुकुल के प्रबन्ध एवं संचालन के लिए पृथक् विद्यासभा का संगठन कर दिया गया था।[३७] इस समय पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा जो संगठन बनाया गया था उसमें निम्नलिखित सदस्य हुआ करते थे जो निम्नलिखित हैं।

(१) विद्यासभा के कुल सदस्यों की संख्या-२७ का प्रावधान किया गया।
(२) इन २७ सदस्यों में से कम से कम १८ पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा के सदस्य होते थे।
(३) प्रतिनिधि सभा के निम्नलिखित पदाधिकारी अपने पद के कारण विद्यासभा के सदस्य थे, जैसे- (क) सभा का प्रधान, (ख) सभा के तीनों उप-प्रधान, (ग) सभा का मन्त्री, (घ) सभा का कोषाध्यक्ष।
(४) इन छः पदाधिकारियों के अतिरिक्त कम से कम बारह व्यक्ति आर्यप्रतिनिधिसभा, पंजाब द्वारा विद्यासभा के लिए निर्वाचित किए गए सदस्य।
(५) गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल का आचार्य, कन्या गुरुकुल का मुख्याधिष्ठाता, कन्या गुरुकुल की आचार्या।
(६) गुरुकुल कांगड़ी और कन्या गुरुकुल के छात्रों के संरक्षकों का एक प्रतिनिधि।
(७) गुरुकुल के स्नातकों और स्नातिकाओं के तीन प्रतिनिधि, जिनमें से एक अवश्य ही स्नातिका हो।
(८) गुरुकुल के उपाध्याय (प्राध्यापक) वर्ग का एक प्रतिनिधि।

इस प्रकार आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा विद्यासभा जैसे संगठन का निर्माण कर गुरुकुल कांगड़ी का सुचारु रूप से संचालन किया गया। प्रतिनिधि सभा का यह निर्णय अति महत्त्वपूर्ण था। इसी वर्ष पं० चमूपति द्वारा गुरुकुल से त्यागपत्र दे दिया गया था।[३८] गुरुकुल में इन्होंने सन्-१९२४ ई० में अपना सेवा कार्य प्रारम्भ किया था, सन्-१९३४ ई० में आचार्य और सन्-१९३७ ई० में इनका देहान्त हो गया।[३९]

सन्-१९३५ ई० में पं० चमूपति द्वारा गुरुकुल से त्यागपत्र देने के फलस्वरूप विद्यासभा ने उनके स्थान पर पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार को मुख्याधिष्ठाता नियुक्त किया और पं० देवशर्मा विद्यालंकार को आचार्य। ये दोनों गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक थे। प्राध्यापक के रूप में भी चिरकाल से गुरुकुल के साथ इनका सम्बन्ध था। पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार सन्-१९३५ से सन्-१९४२ ई० तक गुरुकुल के प्रमुख पदाधिकारी व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



संचालक रहे। अपने इस सात वर्षों के कार्यकाल में इन्होंने आर्थिक दृष्टि से गुरुकुल को पर्याप्त रूप से आत्मनिर्भर बना दिया था।[४०]

सन्-१९४२ ई० में पं० सत्यव्रत द्वारा गुरुकुल से त्यागपत्र देने पर विद्यासभा ने पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति को मुख्याधिष्ठाता नियुक्त करने का विचार बनाया लेकिन उनका गुरुकुल में रहना संभव नहीं था। इस बीच गुरुकुल का सब प्रबन्ध और संचालन स्वामी अभयदेव (पं० देवशर्मा विद्यालंकार) के हाथों में आ गया। आप गुरुकुल कांगड़ी के यशस्वी स्नातक एवं वेदों के अच्छे ज्ञाता थे।[४१] जिसके फलस्वरूप पं० बुद्धदेव विद्यालंकार को उसका आचार्य नियुक्त किया गया। वह भी देर तक गुरुकुल में कार्य नहीं कर सके। मई १९४३ ई० में उन्होंने आचार्य पद से त्यागपत्र दे दिया। अन्त में उनके स्थान पर पं० प्रियव्रत वेदवाचस्पति गुरुकुल के आचार्य नियुक्त हुए और सन्-१९६८ ई० तक आचार्य के रूप में गुरुकुल का संचालन करते रहे।[४२]

यहाँ ध्यान देने योग्य है कि गुरुकुल कांगड़ी का संचालन आर्यप्रतिनिधिसभा, पंजाब द्वारा ही सदैव किया जाता रहा लेकिन इसके द्वारा नियुक्त मुख्याधिष्ठाता, आचार्य उपाचार्य आदि उत्तर प्रदेश के आर्यसमाजी एवं गुरुकुल के स्नातक ही हुआ करते थे। गुरुकुल आयोग के रिपोर्ट में उल्लेख है कि गुरुकुल का संचालन आर्यप्रतिनिधिसभा, पंजाब द्वारा होता है और सभा के दो मुख्य कार्य हैं-प्रचार तथा शिक्षा । प्रचार के लिए अन्तरंग सभा बनी हुई है। शिक्षा के लिए दो प्रकार के संगठन हैं। आर्यसमाज के स्कूल, पुत्री पाठशालाएँ आदि का नियन्त्रण करने के लिए अलग संगठन है, गुरुकुलों का संचालन करने के लिए एक अलग संगठन है जिसका नाम ''विद्या सभा'' है।[४३]

प्रो० वाचस्पति उपाध्याय गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार के समकुलपति रह चुके हैं, लालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रीयसंस्कृतविद्यापीठ, नई-दिल्ली के कुलपति पद पर मृत्यु पर्यन्त कार्यरत रहे हैं। उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी के विषय में जानकारी प्रदान करते हुए तत्सम्बन्धी गुरुकुल आयोग की रिपोर्ट के साथ ही स्मारिका भी मुझे उपलब्ध कराया। आपने बताया कि गुरुकुल की सादगी, ब्रह्मचर्यमय़ जीवन, ब्रह्मचारियों का आश्रमवास, आर्य संस्कृति के अनुरूप वातावरण, संस्कृताभ्यास आदि विशेषताओं का आर्यसमाज के शैक्षिक योजनाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। नैतिक तथा धर्म प्रधान चरित्र का निर्माण गुरुकुल का प्रधान लक्ष्य था। गुरुकुल कांगड़ी का जो स्वरूप अब तक रहा है उसमें पूर्वीय तथा पाश्चात्य साहित्य का समन्वय इसकी विशेषता रही है।

**गुरुकुल वृन्दावन विश्वविद्यालय–** पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा गुरुकुल खोलने का प्रयास अभी बन ही रहा था कि स्वामी दर्शनानन्दजी (पहले पं० कृपाराम) ने उत्तर प्रदेश में सर्वप्रथम गुरुकुल की स्थापना की। आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथियों में स्वामी दर्शनानन्द का स्थान शीर्षस्थ है।[४४] इन्होंने सन्-१८९८ ई० में सिकन्दराबाद में प्रथम गुरुकुल की स्थापना की। इसके बाद बदायूँ, ज्वालापुर तथा रावलपिण्डी के निकट ''चोहा भक्ताँ'' में गुरुकुल की स्थापना की।[४५] उत्तर प्रदेश में यह प्रथम गुरुकुल था जिसका संचालन उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा ने किया। दिनांक १ दिसम्बर, सन्-१९०५ ई० को इसके समुचित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विकास के लिए उत्तर प्रदेश की आर्यप्रतिनिधिसभा ने इस गुरुकुल का संचालन अपने हाथ में लिया।[४६] तब से इसके तत्वावधान में इसका संचालन होता रहा।

गुरुकुल की भावी योजनाओं को क्रियान्वित किए जाने के दृष्टिकोण से सिकन्दराबाद में स्थानाभाव के कारण १७ सितम्बर १९०७ ई० को आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश ने इसका स्थानान्तरण फर्रुखाबाद में कर दिया, परन्तु यहाँ भी समस्या का समाधान होना उचित नहीं प्रतीत हुआ जिसके फलस्वरूप उचित स्थान की प्राप्ति के लिए वृन्दावन में यमुना नदी के किनारे शहर से दूर एकान्त स्थान में १६ दिसम्बर १९११ ई० को यह गुरकुल पं० भगवानदीन मिश्रजी (मुख्य अधिष्ठाता) के नेतृत्व में यहाँ आकर प्रारम्भ हुआ। वृन्दावन में यह स्थान मुरसान के प्रसिद्ध देशभक्त क्रान्तिकारी राजा महेन्द्रप्रताप शास्त्रीजी का था। उन्होंने इसे गुरुकुल के लिए दान कर दिया। इसमें आर्य नेता कुँवर हुकम सिंहजी तथा पूज्य स्वामी विश्वेश्वरानन्दजी का अथक प्रयास था।[४७]

इस प्रकार यह गुरुकुल अपने जन्म के प्रारम्भ से ही निरन्तर धीरे-धीरे प्रगति करता रहा और अन्त में विश्वविद्यालय का स्वरूप प्राप्त किया। प्रारम्भ में सन्-१९०५ ई० में ब्रह्मचारियों की संख्या-५७ थी, सन्-१९०७ ई० में अनेकविधि परिस्थितियों के कारण ५७ से ३७ रह गयी, सन्-१९०८ ई० में ७०, सन्-१९११ ई० में ९२, इनमें से केवल ८२ वृन्दावन आए और ९ वहाँ से अपने घर चले गए थे।[४८]

सन्-१९१३ ई० में गुरुकुल के कार्य को मुंशी नारायणप्रसाद ने संभाला था।[४९] और आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा मुख्याधिष्ठाता के पद पर उनकी नियुक्ति हुई।[५०] उनके संचालकत्व में गुरुकुल वृन्दावन में महाविद्यालय विभाग की पढ़ाई शुरू हो गई थी। आर्यप्रतिनिधिसभा की अन्तरंग सभा ने २२ जून सन्-१९१४ ई० को अपनी बैठक में यह निश्चिय किया कि महाविद्यालय की पढ़ाई का कार्य चार वर्ष हो। तदुपरान्त स्नातक परीक्षा हो। महाविद्यालय में ऐसे विषयों की शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जावे जिनमें विशेष यन्त्रादि साधनों की आवश्यकता न पड़े। सम्प्रति निम्नलिखित विषयों का प्रावधान किया गया— (१) वेद सांगोपांग (प्रत्येक दशा में), (२) संस्कृत साहित्य, (३) अंग्रेजी, (४) पूर्वीय व पश्चिमीय फिलॉसफी, (५) प्राचीन व अर्वाचीन इतिहास, (६) अर्थशास्त्र, (७) आर्य भाषा साहित्य, (८) कम्प्रेटिव स्टडी ऑफ रिलीजन, आवश्यकता पड़ने पर और विषय बढ़ा दिए जाने को प्रस्तावित किया गया।[५१]

सन्-१९१८ ई० में इसके फलस्वरूप दो ब्रह्मचारियों (धर्मेन्द्रनाथ और द्विजेन्द्रनाथ) ने गुरुकुल की शिक्षा पूर्ण कर ली थी। इसी वर्ष इन ब्रह्मचारियों का दीक्षान्त संस्कार हुआ और इन्हें क्रमशः ''तर्कशिरोमणि'' और ''सिद्धान्तशिरोमणि'' की उपाधियाँ प्रदान की गईं। ये गुरुकुल वृन्दावन के प्रथम स्नातक थे। गुरुकुल वृन्दावन इस समय सुव्यवस्थित रूप प्राप्त कर चुका था। उसके द्वारा स्नातकों को उपाधियाँ दी जाने के कारण उसे विश्वविद्यालय की स्थिति प्राप्त हो गई थी।[५२] इस गुरुकुल में सन्-१९१५-१६ ई० के लगभग आयुर्वेदिक प्रयोगशाला की स्थापना भी हुई थी।[५३]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सन्-१९१९ ई० में मुंशी नारायणप्रसाद ने गुरुकुल वृंदावन के कार्य से अवकाश लिया[५४] और सन्-१९२० ई० में वानप्रस्थ में प्रवेश किया और १० मई सन्-१९२२ ई० को आपने एक बहुत बड़ा यज्ञ करके संन्यास दीक्षा स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज से ली। अब आप नारायणप्रसाद से नारायणस्वामी हो गए।[५५] गुरुकुल वृन्दावन के निर्माण का सारा श्रेय आपको था[५६] क्योंकि प्रारम्भ में सन्-१८९९ ई० में आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश की अन्तरंग सभा द्वारा गुरुकुल के लिए बीस हजार रूपए जमा करने का प्रस्ताव रखा गया था। यह प्रस्ताव मुंशी नारायणप्रसाद द्वारा ही प्रस्तुत किया गया था और इस धनराशि को एकत्र करने में उनका विशेष कर्तृत्व रहा।[५७] फलस्वरूप गुरुकुल वृन्दावन की योजनाएँ तीव्र गति से क्रियान्वित हुयीं। महात्मा नारायण स्वामी के विषय में इन्द्र विद्यावाचस्पति ने कहा कि यदि हम आर्यसमाज की जीवन यात्रा के मार्ग पर व्यक्तियों के नाम का साइनबोर्ड लगाना चाहें तो पहला साईनबोर्ड महर्षि दयानन्द के नाम का लगेगा, दूसरा आर्यपथिक लेखरामजी के नाम का, तीसरा स्वामी श्रद्धानन्दजी के नाम का और चौथा महात्मा नारायणस्वामीजी के नाम का लगना चाहिए।[५८] महात्मा नारायणस्वामी का आर्यसमाज आन्दोलन के चौमुखी विकास में अतुलनीय योगदान रहा। महात्मा नारायणस्वामी द्वारा गुरुकुल वृन्दावन से अवकाश ग्रहण करने के उपरान्त, इसी वर्ष (सन्-१९१९) गुरुकुल का चार्ज प्रो० ज्वालाप्रसाद को दिया गया।[५९] इस समय ब्रह्मचारियों की संख्या (स्वामी नारायणप्रसादजी के काल में)-१५० थी।[६०]

सन्-१९१८ ई० से सन्-१९२४ ई० तक जो ब्रह्मचारी शिक्षा पूर्ण कर स्नातक बने, वे सब फर्रुखाबाद से वृन्दावन आए थे। उन स्नातकों की संख्या २३ थी। इनमें सन्-१९१८ ई० में धर्मेन्द्रनाथ तर्क शिरोमणि और द्विजेन्द्रनाथ सिद्धान्त शिरोमणि, सन्-१९१९ ई० में श्रीवृहस्पति वेद शिरोमणि, श्रीविद्याधर आयुर्वेद शिरोमणि, सन्-१९२० ई० में (१) श्री रमेशचन्द्रजी सिद्धान्त शिरोमणि, (२) रुद्रदेवजी वेद शिरोमणि, (३) धृतिमानजी आयुर्वेद शिरोमणि, सन्-१९२१ ई० में रामचन्द्रजी सिद्धान्त शिरोमणि, गौतमजी आयुर्वेद शिरोमणि, विश्वपतिजी आयुर्वेद शिरोमणि आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।[६१] गुरुकुल महाविद्यालय, वृन्दावन की नियमावली व पाठविधि में इस विषय में उल्लेख है कि उपाधि प्रमाणपत्र, स्नातक परीक्षा पास करने पर निम्न विषयों में "शिरोमणि" सहित उपाधि प्रदान होगी- (१) वेद, (२) सिद्धान्त, (३) आयुर्वेद, (४) तर्क[६२] विद्यालय विभाग में पढ़ाए जाने वाले विषयों के विवरण के लिए परिशिष्ट-१ देखा जा सकता है। इसमें कक्षा एक से लेकर कक्षा दस तक विषयवार विवरण उपलब्ध है। साथ ही इसमें महाविद्यालय विभाग के अनिवार्य विषय व ऐच्छिक विषयों का विवरण भी है।

इस नियमावली में परीक्षाओं के विषय में उल्लेख है कि ९वीं श्रेणी तक परीक्षा संबंधी सब नियमादि निर्धारण गुरुकुलाचार्य द्वारा होगा और वार्षिक परीक्षा का परिणाम शिक्षोपसभा में पेश होगा। दसवीं श्रेणी तक की पढ़ाई समाप्त करने पर महाविद्यालय में प्रविष्ट होने के लिए एक परीक्षा होगी जिसका नाम अधिकारी परीक्षा होगा। अधिकारी परीक्षा गुरुकुल की दशम श्रेणी में नियत विषयों में नियत पाठविधि में होना निश्चित किया गया था। इस परीक्षा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



को पास करने के उपरान्त महाविद्यालय में प्रवेश का प्रावधान था।[६३] यहाँ ध्यान देने योग्य है कि जिस प्रकार गुरुकुल कांगड़ी के स्नातकों को "अलंकार" (विद्यालंकार, वेदालंकार, सिद्धान्तालंकार, और आयुर्वेदालंकार) की डिग्रियाँ दी जाती थीं वैसे ही यहाँ स्नातकों को "शिरोमणि" डिग्री देने की व्यवस्था थी।

सन्-१९३७-३८ ई० में गुरुकुल वृन्दावन में ब्रह्मचारियों की संख्या एकाएक अधिक हो गयी थी। इसमें आवागढ़ (जिला एटा) के राजा श्रीसूर्यपाल सिंह ने २०० विद्यार्थी अपने व्यय से प्रवेश कराए थे। जिसके कारण वहाँ ब्रह्मचारियों की संख्या में असाधारण वृद्धि हुई।[६४] इस समय गुरुकुल वृन्दावन के मुख्याधिष्ठाता आचार्य वृहस्पति शास्त्री थे। ये सन्-१९२७ ई० से सन्-१९३८ ई० तक गुरुकुल के आचार्य एंवं मुख्याधिष्ठाता रहे।[६५] लेकिन राजा सूर्यपाल ने जब आर्यसमाज से कुछ मतभेदों के कारण अपने राज्य के बालकों को गुरुकुल से हटा लिया तो ब्रह्मचारियों की संख्या केवल ४० रह गयी थी।[६६]

इस प्रकार गुरुकुल वृन्दावन उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज का पहला गुरुकुल था जो आर्यप्रतिनिधिसभा, संयुक्त प्रान्त द्वारा संचालित था। यह समयान्तर में निरन्तर विकसित होता गया और अन्त में विश्वविद्यालय का रूप प्राप्त किया। महात्मा नारायण स्वामी के बाद जिनके हाथों में गुरुकुल वृन्दावन का संचालन रहा उसमें पं० शिवनारायण शुक्ल (१९२२-२५), बाबू श्रीराम (१९२५-२९), बाबू घासीराम (१९२९-३१), पं० वृहस्पति वेद शिरोमणि (१९३४-३७), श्री कर्णसिंह छोंकर (१९४०-४५) आदि प्रमुख थे।[६७] गुरुकुल वृन्दावन के धार्मिक वातावरण, शिक्षा पद्धति, उत्तम आश्रमव्यवस्था के कारण देश के बाहर से भी यहाँ अध्ययन के लिए विद्यार्थी आए। फीजी के श्री कमलाप्रसाद मिश्र सन्-१९३६ ई० में स्नातक हुए थे। समयान्तर में वे लटौका (फीजी) के प्रसिद्ध पत्रकार हुए और आर्यसमाज तथा हिन्दी की सेवा में संलग्न रहे।[६८]

गुरुकुल वृन्दावन के स्नातक रहं चुके श्री ब्रह्मदेव शास्त्री (आयु-८१ वर्ष) जो वर्तमान में लाल निवास, रामनगर, जलमार्ग, ऐशबाग, लखनऊ-४, निवास कर रहें हैं। उन्होंने बताया कि गुरुकुल वृन्दावन का आर्य संस्कृति की संरक्षता में अतुलनीय योगदान रहा। यहाँ का वातावरण सदा राष्ट्रीय और धार्मिक भावनाओं से ओतप्रोत था। साथ ही इसमें समन्वयात्मक शिक्षा-पद्धति की योजनाएँ क्रियान्वित की गयीं थीं। इसकी लोकप्रियता इतनी अधिक थी कि बहुत से आर्य परिवार अपने बालकों को वैदिकधर्म और आर्यसंस्कृति के वातावरण का ज्ञान प्राप्त करने के निमित्त इस संस्था में प्रवेश कराते थे। देश-देशान्तर में गुरुकुल वृन्दावन का नाम था। यहाँ गुरुकुल वृन्दावन का अधिकांशत: विवरण श्री नरदेवजी स्नातक के लेख में उद्धृत है। गुरुकुल वृन्दावन, गुरुकुल कांगड़ी के बाद उत्तर प्रदेश में सन्-१९४७ ई० तक अनेक गुरुकुलों का जन्म हुआ। वह निम्नलिखित हैं-

१. गुरुकुल सूर्यकुण्ड, बदायूँ (सन्-१९०३ ई० में स्वामी दर्शनानन्द द्वारा स्थापित किया गया था)
२. गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर (सन्-१९०७ ई० में स्वामी दर्शनानन्द द्वारा स्थापित)
३. आर्यमहाविद्यालय, किरठल, मेरठ-(सन्-१९२० ई० में स्वामीविचारानन्द द्वारा स्थापित)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



४. श्री निःशुल्क महाविद्यालय, अयोध्या (सन्-१९२५ ई० में स्वामी त्यागानन्द द्वारा स्थापित)
५. दयानन्द महाविद्यालय गुरुकुल, डौरली, मेरठ (सन्-१९२५ ई० में शंकर लालजी द्वारा स्थापित)
६. गुरुकुल विरालसी, मुजफ्फरनगर (सन्-१९२९ ई० में स्वामी दर्शनानन्दजी द्वारा स्थापित)
७. श्री घनश्याम दास आर्य वैदिक महाविद्यालय, देवरिया (सन्-१९२९ ई० में स्थापित)
८. गुरुकुल घासीपुरा, मुजफ्फरनगर (सन्-१९३४ ई० में स्वामी कल्यादेव महाराज द्वारा स्थापित, यह समयान्तर में आयुर्वेदिक कॉलेज बना)
९. काशी गुरुकुल (जे.पी. चौधरी द्वारा स्थापित, बाद में यह बन्द हो गया, स्थान-धूपचण्डी)
१०. महर्षि दयानन्द सरस्वती संस्कृत गुरुकुल महाविद्यालय, गाजियाबाद, (सन्-१९३६ ई० में स्थापित, सन्-१९४० में यह बन्द हो गया)
११. श्री सूरभारतीनिगम विद्यापीठ, गुरुकुल गिलौला, ब्रहराइच (सन्-१९४३ ई० में स्वामी त्यागानन्दजी द्वारा स्थापित)
१२. गुरुकुल महाविद्यालय, रुद्रपुर, तिलहर, शाहजहाँपुर, (सन्-१९४५ ई० में स्थापित, संस्थापक पं० सत्यदेव शास्त्रीजी थे)[६९]

इस प्रकार उत्तर प्रदेश के विविध भागों में आर्यसमाज के कर्मठ कार्यकर्ताओं के द्वारा गुरुकुलों की स्थापना की गयी। उनमें से कुछ प्रमुख गुरुकुलों का विवरण निम्नलिखित है-

**गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर (हरिद्वार)** – मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत सहारनपुर जिले में गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का आर्यसमाज के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वामी दर्शनानन्दजी सरस्वती ने वैशाख अक्षय तृतीया सम्वत् १९६४ विक्रमी (सन्-१९०७ ई०) को इस संस्था की स्थापना अनुकूल मुहूर्त में विशाल पर्वतमाला से अलंकृत ज्वालापुर में की थी।[७०] वैदिकधर्म, संस्कृति एवं सभ्यता के प्रचार-प्रसार में गुरुकुल महाविद्यालय का अपूर्व योगदान रहा है। इस गुरुकुल महाविद्यालय के विकास में स्वामी दर्शनानन्दजी के साथ पं० गंगादत्त शास्त्री (बाद में स्वामी शुद्धबोध तीर्थ हुए) सहयोगी रहे।[७१] और इस संस्था के प्रथम आचार्य बने थे।[७२] वे यहाँ विद्याध्ययन के साथ आचार-विचार पर प्रचुर बल देते थे। साथ ही उनका व्याकरण शास्त्र में विशेष रुचि और आर्षग्रन्थों पर परम आस्था थी। पाणिनिकृत अष्टाध्यायी पर उन्होंने भाष्य भी लिखा।[७३]

यहाँ ध्यान देने योग्य है कि ये पं० गंगादत्त वही आचार्य थे, जिन्होंने गुरुकुल कांगड़ी से सन्-१९०७ ई० में यहाँ नवीन विषयों के समावेश होने के कारण विदा लिए थे और बाद में यहाँ आए थे। इनके आने के पूर्व बाबू सीताराम के अथक प्रयास से पं० भीमसेन शर्मा (आगरा) अपने शिष्य पं० दिलीपदत्त शर्मा (बुलन्दशहर) के साथ ज्वालापुर गुरुकुल में आ गए थे।[७४] ये पं० भीमसेन शर्मा भी गंगादत्त की भाँति गुरुकुल कांगड़ी छोड़े थे। इनके अतिरिक्त गुरुकुल कांगड़ी छोड़कर यहाँ आने वालों में पं० काशीनाथ शास्त्री, पं० नरदेव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



शास्त्री तथा पद्मसिंह शर्मा आदि विद्वान् थे।[७५] बाबू सीतारामजी ने अपनी ज्वालापुर की भूमि गुरुकुल के लिए दानस्वरूप दिए थे। स्वामी दर्शनानन्दजी द्वारा सबसे पहले गुरुकुल हरिद्वार रेलवे स्टेशन के सामने एक बाग में किराए पर स्थान लेकर स्थापित किया गया था।[७६] जो बाद में बाबू सीताराम द्वारा गुरुकुल के लिए दान दी गयी भूमि प्राप्त होने पर यह स्थायी रूप से ज्वालापुर की भूमि में (सन्-१९०७ के अन्त में) स्थापित हुआ।[७७]

पं०भीमसेन शर्मा और पं०गंगादत्त के प्रयास से १८ अप्रैल १९०८ ई० के दिन ''गुरुकुल महाविद्यालय सभा'' का व्यवस्थित रूप से गठन कर लिया गया था और चौधरी महाराज सिंह इस सभा के प्रधान चुने गए और पं०तुलसीराम इसके मंत्री हुए।[७८] इस प्रकार गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के सुव्यवस्थित विकास के निमित्त प्रबन्धकर्त्री सभा व्यवस्थित रूप प्राप्त कर लिया। यह गुरुकुल महाविद्यालय धीरे-धीरे समयान्तर में विकसित होता गया। सन्-१९०८ ई० में जहाँ विद्यार्थियों की संख्या केवल ११ थी, वहीं सन्-१९१० ई० के पूर्वार्द्ध में ३५ हो गयी। आचार्य गंगादत्त की सहायता करने वालों में और वृद्धि हुई। इनमें पं०नरदेव शास्त्री, पं०भीमसेन शर्मा, मास्टर रामदयाल तथा पं०पद्मसिंह शर्मा (चाँदपुर बिजनौर) के नाम उल्लेखनीय हैं।[७९] पं०पद्मसिंह शर्मा द्वारा सन्-१९०८ ई० में ''भारतोदय'' नामक समाचार पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया गया था। इस पत्र के चिरकाल तक ये सम्पादक रहे।[८०]

गुरुकुल ज्वालापुर में गुरुकुल कांगड़ी और गुरुकुल वृन्दावन की भाँति यहाँ भी आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना हुई थी और इसका पाठ्यक्रम पृथक् रूप से बनाया गया जिसकी परीक्षाएँ भी प्रथक् रूप से ली जाती थीं। ये परीक्षाएँ आयुर्वेदरत्न, आयुर्वेदभास्कर और आयुर्वेदाचार्य की होती थी।[८१] इसके अतिरिक्त गुरुकुल ज्वालापुर, विद्यालय की अन्तिम परीक्षा उत्तीर्ण करने पर ''विद्यारत्न'' तथा ''विद्याभास्कर'' की उपाधियाँ प्रदान की जाती थीं। जिसे बाद में आगरा विश्वविद्यालय ने विद्याभास्कर की डिग्री को बी.ए. के समकक्ष मान्यता प्रदान की।[८२] इसके साथ ही यहाँ महाविद्यालय विभाग में ब्रह्मचारियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती गई । सन्-१९१५ ई० में छात्रों की संख्या ७१ थी जो बढ़कर सन्-१९३३ ई० में १८९ हो गई। सन्-१९१३ ई० में यहाँ अध्यापकों की संख्या १५ थी जो सन्-१९३१ ई० में २० तक पहुँच गयी।

सन्-१९२० ई० में विद्यालय के प्रबन्ध के लिए यहाँ विद्यासभा का गठन भी हुआ था। जिसके अधिवेशन आवश्यकतानुसार होते रहते थे । छात्रों के लिए आर्यकिशोर सभा, विद्वत्कला परिषद आदि नाम की सभाएँ थीं। जिनमें छात्र बोलने तथा लिखने का अभ्यास करते थे।[८३] सन्-१९४८ ई० के वार्षिक विवरण में 'विद्याभास्कर' तथा 'विद्यारत्न' उपाधि प्राप्त स्नातकों की संख्या १३० थीं। इस सूची में डॉ० सूर्यकान्त शास्त्री, पं० उदयवीर शास्त्री, पं० व्यासदेव शास्त्री, पं० विश्वनाथ शास्त्री आदि अनेक लब्धप्रतिष्ठत विद्वान् सम्मिलित हैं।[८४]

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में आचार्य गंगादत्तजी ने प्रारम्भ में ही कार्यभार संभाला था। वह निरन्तर अपने जीवनपर्यन्त (देहावसान् सन्-१९३३, १६ सितम्बर) इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


महाविद्यालय का संचालन करते रहे। उनके बाद पं० हरिदत्त शास्त्री गुरुकुल महाविद्यालय के आचार्य बनाए गए और ६ मार्च सन्-१९३६ ई० से पं० नरदेव शास्त्री इस पद पर नियुक्त हुए और सन्-१९४६ ई० तक बीच-बीच में कुछ समय के व्यवधान के साथ इस संस्था का कार्यभार संभालते रहे।[८५] ये नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ महाविद्यालय के दूसरे महान् स्तम्भ रहे जिन्होंने दीर्घकाल पर्यन्त इस गुरुकुल के आचार्य एवं कुलपति का पदभार संभाला।[८६] इस प्रकार गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, गुरुकुल कांगड़ी और गुरुकुल वृन्दावन की भाँति आर्यसमाज आर्यसंस्कृति व प्राचीन शिक्षा पद्धति के विकास के लिए सदैव तत्पर था।

**श्रीनिःशुल्क गुरुकुल महाविद्यालय, अयोध्या–** फैजाबाद मंडल के अन्तर्गत अयोध्या निःशुल्क गुरुकुल महाविद्यालय की स्थापना तपोमूर्ति ओजस्वी वक्ता स्वामी त्यागानन्द महाराज ने अपने जीवनकाल में ब्रह्मचर्याश्रम प्रणाली के द्वारा वैदिक ज्ञान से दूर अज्ञानग्रस्त मानव समुदाय के लिए श्रावणीपूर्णिमा सं० १९८२ वि० (सन्-१९२५ ई०) के अवसर पर पुण्यसलिला भगवती सरयू के तट पर विद्यमान भारत प्रसिद्ध पावनी नगरी श्रीरामजन्मभूमि अयोध्या के पश्चिम भूमि पर की।[८७] स्वामी त्यागानन्दजी ने अपने गुरुकुल की स्थापना के आरम्भ से लेकर जीवनकाल के अन्तिम समय (१७ मार्च १९६० ई०) तक निरन्तर सेवा की।[८८] संन्यास ग्रहण करने के पूर्व स्वामी त्यागानन्दजी का नाम मूर्तिनारायण चतुर्वेदी था।[८९] ये देवरिया जिले के कोहरौली ग्राम के निवासी थे।[९०]

निःशुल्क गुरुकुल को सुव्यवस्थित ढंग से संचालित करने के उद्देश्य से सन्-१९३४ ई० में उसके संविधान व नियमावली का निर्माण किया गया और उसे रजिस्टर्ड करा दिया गया। सन्-१९४२ ई० में अयोध्या निःशुल्क गुरुकुल महाविद्यालय से विद्यावारिधि की डिग्री प्राप्त कर चुके श्रीशिवमित्र शास्त्री (आयु-७८ वर्ष) ने इस गुरुकुल के विषय में मुझे प्रमाणिक जानकारी प्रदान किया। इसके अन्तर्गत उन्होंने बताया कि आरम्भ में रुद्रपुर की संस्कृत पाठशाला में स्वामी त्यागानन्द ने गुरुकुल की स्थापना की। उसके पश्चात् उसे रूद्रपुर से वारीग्राम (गोरखपुर) लाया गया। बाद में इसे अयोध्या फैजाबाद के मध्य जालपानाला के पास स्थानान्तरित किया गया जो गुरुकुल अयोध्या के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

सन्-१९३० ई० में श्रीशिवमित्र शास्त्री इस गुरुकुल में प्रवेश पाए। सन्-१९४१ ई० में आचार्य ब्रह्मदेव के निकट रहकर व्याकरण (मध्यमा) द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। श्री शिवमित्र शास्त्रीजी का पूर्व नाम सुरेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव था। गुरुकुल के नियमानुसार सुरेन्द्र प्रसाद के स्थान पर उनका नाम शिवमित्र ब्रह्मचारी रखा गया। तभी से शिवमित्र शास्त्री के नाम से ये विख्यात हैं। काशी-शास्त्रार्थ स्मृति स्थल आनन्दबाग, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी के ये प्रधान भी रह चुके हैं। इन्होंने बताया कि विविध स्तर की परीक्षाओं को उत्तीर्ण कर लेने पर विद्यार्थियों को मेधावी, विद्यावागीश, विद्यामार्तण्ड, विद्यावारिधि और व्याख्यानवाचस्पति की उपाधियाँ प्रदान की जाती थीं। गुरुकुल का वातावरण पूर्णतः धार्मिक होता था और गुरुकुलीय आश्रम पद्धति के अनुसार ब्रह्मचारियों की दैनिक दिनचर्या यहाँ भी थी।

सन्-१९४२ ई० में श्रीशिवमित्र शास्त्री के अध्ययन काल में स्वामी त्यागानन्दजी गुरुकुल के कुलपति थे। इसके लिए श्री शिवमित्र शास्त्रीजी को अयोध्या गुरुकुल द्वारा प्रदत्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



विद्यावारिधि के प्रमाणपत्र में देखा जा सकता है। इस प्रमाणपत्र को अध्याय के अन्त में परिशिष्ट-२ में रक्खा गया है। वर्तमान में इस गुरुकुल के प्राचार्य नागेन्द्र कुमार मिश्र हैं जिन्होंने सम्बन्धित जानकारी प्रदान करते हुए मुझे गुरुकुल स्मारिका भी उपलब्ध कराया।

**दयानन्द महाविद्यालय गुरुकुल डौरली (मेरठ)–** मेरठ डिवीजन के अन्तर्गत हरिद्वार, वृन्दावन और ज्वालापुर में जहाँ गुरुकुल आर्य संस्कृति एवं शिक्षा के विकास के निमित्त तत्पर था। वहीं दयानन्द महाविद्यालय गुरुकुल डौरली की स्थापना श्रावण पूर्णिमा सं०-१९८१ वि० (तद्नुसार सन्-१९२५) में प्रो० शंकरलालजी (एम.ए., एल.एल.बी) के कर कमलों द्वारा की गई। पं० अलगूराम शास्त्री (बाद में वनमंत्री, उत्तर प्रदेश हुए) इसके प्रथम आचार्य बने।[९१] इस संस्था के प्रबन्ध के लिए स्थानीय व्यक्तियों की एक समिति बनाई गयी थी। जिसके प्रधान चौधरी मुख्तार सिंह और मन्त्री पं० शिवदयालु थे। मुख्याधिष्ठाता के पद पर पं० शिवदयालु को ही नियुक्त किया गया।[९२] पं० शिवदयालु निरन्तर २७ वर्ष तक मंत्री व अधिष्ठाता का कार्य करते रहे। चौधरी चरण सिंह, चौधरी मुख्तार सिंह, अयोध्या प्रसादजी आदि ने इसके प्रधान पद को सुशोभित किया।[९३]

गुरुकुल डौरली की अपनी पृथक एवं स्वतन्त्र व्यवस्था थी इसका अपना पाठविधि था। इसमें आर्षग्रन्थों की पढ़ाई पर विशेष ध्यान दिया गया था। पाठ्यक्रम में संस्कृत, व्याकरण, साहित्य, दर्शनशास्त्र और धर्म शिक्षा के साथ-साथ, हिन्दी, गणित, इतिहास, भूगोल, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र और अंग्रेजी भाषा को भी स्थान दिया गया था। इस पाठविधि का निर्माण करते समय गुरुकुल कांगड़ी, काशी विद्यापीठ तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन की पाठविधि को ध्यान में रखा गया था।[९४]

सन्-१९४२ ई० में इस गुरुकुल के प्रमुख कार्यकर्ता स्नातक व ब्रह्मचारी स्वतन्त्रता संग्राम के कारण जेल गए थे। इस समय सामयिक सरकार ने गुरुकुल डौरली को क्रान्तिकारियों का केन्द्र कहकर अवैध घोषित कर दिया था।[९५] सन्-१९४७ ई० तक अन्य गुरूकुलों की भाँति यह गुरुकुल भी सरकारी नियन्त्रण से मुक्त रहकर स्वतंत्र रूप से प्राचीन भारत की शिक्षा पद्धति पर आधारित होकर स्वदेशी शिक्षा व आर्य संस्कृति का प्रचार-प्रसार कर रहा था। सन्-१९४७ ई० में अपनी सरकार के स्थापित हो जाने पर इसे हायर सेकेण्डरी स्कूल के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।[९६]

**आर्यसमाज और कन्या गुरुकुल–** आर्यसमाज प्रारम्भ से ही बालक और बालिकाओं की शिक्षा के लिए समान अवसर उपलब्ध कराने पर बल देता रहा। बालकों के लिए आर्यसमाज ने जहाँ उत्तर प्रदेश के विविध भागों में गुरुकुल खोला। जिसमें गुरुकुल कांगड़ी, गुरुकुल वृन्दावन, गुरुकुल ज्वालापुर, नि:शुल्कगुरुकुल, अयोध्या आदि महत्त्वपूर्ण था। उसी प्रकार कन्याओं की शिक्षा के लिए उत्तर प्रदेश में अनेक कन्या गुरुकुल आर्यसमाज द्वारा स्थापित किए गए। उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज द्वारा प्रथम कन्या गुरुकुल की स्थापना हाथरस (अलीगढ़) में किया गया।[९७] इसके बाद अन्य स्थानों में आर्यसमाज के कन्या गुरुकुलों की स्थापना हुई। यहाँ सर्वप्रथम कन्या गुरुकुल हाथरस के विषय में जानकारी प्राप्त करना समीचीन है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**कन्या गुरुकुल, हाथरस (अलीगढ़)** – इस गुरुकुल की स्थापना में और इसे पुनरुज्जीवित करने का श्रेय दक्षिण भारत की निवासिनी श्रीमती विद्यावती देवी और माता लक्ष्मी देवीजी को आर्यजगत में प्राप्त है। श्रीमती विद्यावती देवी ने हाथरस के सुप्रतिष्ठित पं० मुरलीधर को दो लाख रूपए धार्मिक कार्य के निमित्त व्यय करने के लिए दिया। पं० मुरलीधर आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध संन्यासी स्वामी दर्शनानन्द (गुरुकुल वृन्दावन और गुरुकुल ज्वालापुर के संस्थापक) की प्रेरणा से कन्या गुरुकुल खोलने का दृढ़ निश्चय किया। जिसके फलस्वरूप हाथरस शहर से पाँच मील तथा सासनी से दो मील की दूरी पर ६ अगस्त सन्-१९०९ ई० में कन्या गुरुकुल की आधारशिला रखी गयी।[९८]

सन्-१९१४ ई० में, दुर्भाग्यवश इस गुरुकुल को चलाने के निमित्त उपयुक्त कार्यकर्ता न मिलने के कारण यह कन्या गुरुकुल बन्द हो गया।[९९] माता लक्ष्मीदेवी के अथक प्रयास से २२ वर्ष तक निष्क्रिय और मृत पड़ी यह संस्था दिनांक २८ जुलाई १९३१ ई० को एक ब्रह्मचारिणी दयावती (श्रीमहेन्द्रप्रताप शास्त्री की भांजी तथा श्रीउमेशचन्द्र स्नातक की बहन) के प्रवेश के साथ ही पुनरुज्जीवित हुई।[१००] महात्मा नारायणस्वामी के कर कमलों द्वारा इस कन्या गुरुकुल का उद्घाटन २६ जुलाई हाथरस अलीगढ़ मार्ग पर स्थित विशाल परकोटे में किया गया।[१०१] यह स्थापना तिथि (सन्-१९३१ ई०) ही सच्चे अर्थों में मान्य हुई।[१०२]

महात्मा नारायणस्वामी द्वारा किए गए उद्घाटन के बाद से यह कन्या गुरुकुल समयान्तर में तीव्रगति से विकसित हुआ और आर्यजगत् में महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया। २३ दिसम्बर, सन्-१९३१ ई० को गुरुकुल का प्रथम उत्सव हुआ तो यहाँ ब्रह्मचारियों की संख्या १ से बढ़कर ४० हो गयी। विद्यालय विभाग सुचारु रूप से चलने लगा था। पं० मथुरादास भार्गव द्वारा प्रस्तुत हाथरस गुरुकुल की रिर्पोट में जुलाई सन्-१९३२ ई० में विवरण मिलता है कि "ब्रह्मचारियों की संख्या ४० और जून-१९३३ ई० में ५८ हो गयी"। इस कन्या गुरुकुल की सफलता से आकृष्ट होकर भारत के सुदूरवर्ती प्रान्तों से विद्याध्ययन के लिए अनेक कन्याएँ यहाँ आने लगीं थीं। सन्-१९३३ ई० में विभिन्न प्रान्तों से आकर शिक्षा प्राप्त करने वाली कन्याओं का विवरण इस प्रकार है- उड़ीसा-3, बिहार-१, संयुक्त-प्रान्त-४१, राजपूताना-२, पंजाब-३, मध्यप्रदेश-५, बम्बई-3। इस रिपोर्ट के अनुसार गुरुकुल में कन्याओं के अभिभावकों से १.१ रूपए मासिक व्यय लिया जाता था जो उनके भोजन, कपड़ों, और पुस्तकों पर व्यय होता था।[१०३]

सन्-१९३१ ई० से सन्-१९४८ ई० तक के बीच इस गुरुकुल की पर्याप्त उन्नति हुई। २४२ कन्याएँ भारत के विभिन्न प्रान्तों से आकर यहाँ शिक्षा ग्रहण करने लगीं थीं।[१०४] सन्-१९३६ ई० में इस कन्या गुरुकुल को अनेक योग्य मेधावी निष्ठावान् अध्यापक, अध्यापिकाओं का सहयोग प्राप्त हुआ। इनमें पं०पूर्णदेव विद्यालंकार, पं० लीलाधर, श्रीमती लक्ष्मी देवी एवं कन्या-गुरुकुल, देहरादून की स्नातिका युगल-सुश्री सुशीला देवी विद्यालंकृता तथा सुखदादेवी विद्यालंकृता के नाम उल्लेखनीय हैं। व्यायाम शिक्षा के लिए इसी वर्ष महात्मा नारायण स्वामी की प्रेरणा से बड़ौदा के प्रसिद्ध व्यायामाचार्य श्रीमाणिराव के शिष्य श्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



रणवीर सिंह यहाँ आए। ये यहाँ ब्रह्मचारिणियों को लेजिम, लाठी, गतका, मुगदर, तलवार, पकटार, बनेंठी आदि का प्रशिक्षण देते थे।[१०५] सन्-१९४२ ई० में गुरुकुल की प्रथम दो स्नातिकाओं (सुश्री राधारानी तथा सुशीला देवी) को विद्याविभूषिता की उपाधि से अलंकृत किया गया था।[१०६]

गुरुकुल हाथरस में अध्ययन-अध्यापन (प्रधानाध्यापिका पद पर सेवाकार्य) कर चुकीं सुश्री कमला स्नातिका (एम.ए., बी.एड., आयु-६८ वर्ष) ने बताया कि स्वामी दयानन्द द्वारा निर्धारित शैक्षणिक आदर्शों और सिद्धान्तों का पालन इस गुरुकुल में किया जाता था। इसमें वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य व पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी। प्राचीन एवं नवीन का अपूर्व यहाँ संगम था। छात्राओं को ब्रह्मचर्य का पालन और उन्हें गुरुकुल में सादा, त्यागमय एवं आदर्शात्मक जीवन व्यतीत करना पड़ता था। गुरुकुल की दैनिक-दिनचर्या आर्यसमाज के गुरुकुलों की भाँति ही हुआ करती थी। प्रात: उठना, प्रात: एवं सायं हवन आदि करना अनिवार्य था।

गुरुकुल का उद्देश्य माता लक्ष्मी देवी की सुपुत्री श्रीमती अक्षय कुमारी शास्त्री के एक लेख में उल्लेखित है। वह इस प्रकार है- गुरुकुल का उद्देश्य कन्याओं को प्राचीन भारतीय वैदिक वातावरण में रखकर भारतीय संस्कृति के अनुरूप सीधा-सादा जीवन बिताते हुए संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, वेद, दर्शन, उपनिषद्, इतिहास, भूगोल, गणित, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, गृहविज्ञान, संगीत तथा व्यायाम आदि की नि:शुल्क शिक्षा देकर योग्य नागरिक बनाया जाना है जो आगे जाकर आदर्श जीवन बिताते हुए धर्म और समाज की सेवा में सहयोग दे सकें। धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा गुरुकुल की विशेषता है।[१०७]

**कन्या गुरुकुल, देहरादून–** कन्या गुरुकुल देहरादून की स्थापना सर्वप्रथम दिल्ली में की गयी थी।[१०८] पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा ने सर्वप्रथम सन्-१८९८ ई० में ही बालक और बालिकाओं के लिए गुरुकुल खोलने की योजना बनाई थी। जिसके फलस्वरूप सन्-१९०२ ई० में लड़कों के लिए गुरुकुल कांगड़ी का जन्म हुआ। लड़कियों के लिए गुरुकुल खोलने की योजना को साकार सेठ रघुमलजी ने किया। सन्-१९२१ ई० में सेठ रघुमलजी ने जो स्वामी श्रद्धानन्द के भक्त थे, कन्या गुरुकुल खोलने के निमित्त एक लाख रूपए दान देने की घोषणा की। फलस्वरूप ८ नवम्बर सन्-१९२३ ई० को आचार्य श्री रामदेवजी और आचार्या विद्यावती सेठ के संरक्षण में कन्या गुरुकुल दिल्ली में स्थापित हुआ।[१०९]

इसकी स्थापना के समय सुश्री विद्यापीठ सेठ इसकी पहली आचार्या तथा पं० विश्वम्भरनाथ पहले मुख्याधिष्ठाता बने। २२ वर्ष तक संस्था की सेवा करने के बाद आचार्य विद्यावतीजी ने अवकाश ग्रहण किया।[११०] इस गुरुकुल के विकास में उनका योगदान अतुलनीय है।

यह कन्या गुरुकुल अपनी स्थापना के तीन वर्ष बाद १ मई सन्-१९२७ ई० को दिल्ली से देहरादून में स्थानान्तरित कर दिया गया।[१११] यह गुरुकुल कांगड़ी का ही एक अन्तरीय अंग था।[११२] यह गुरुकुल कांगड़ी पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा द्वारा संचालित था। यह कन्या गुरुकुल भी पंजाब आर्यप्रतिनिधिसभा के अधीन था।[११३] यह छात्रावासीय संस्था

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


थी।[११४] इसकी लोकप्रियता इतनी अधिक थी कि यहाँ विदेशों में बसे भारतीयों की बालिकाएँ भी अध्ययनरत थीं। सन्-१९३० ई० में यहाँ १३५ छात्राएँ शिक्षा प्राप्त कर रही थीं। उनमें भारत के विविध प्रान्तों के अतिरिक्त भारत के बाहर के देशों की भी छात्राएँ थीं। इसका विवरण निम्नलिखित है- पंजाब-४३, संयुक्त-प्रान्त-३९, गुजरात-१८, दिल्ली-९., मध्य प्रान्त-८, वर्मा-८, फिजी-६, आबदान-४,।[११५]

इस कन्या गुरुकुल में विद्यालय का आठ वर्ष का तथा महाविद्यालय का तीन वर्ष का पाठ्यक्रम था। इसकी पाठविधि का निर्माण और परीक्षाओं का संचालन गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार (प्रस्तोता) द्वारा होता था और महाविद्यालय की शिक्षा पूर्ण करने पर ''विद्यालंकृता'' की उपाधि दी जाती थी।[११६]

सन्-१९३२ ई० में सर्वप्रथम तीन स्नातिकाओं को विद्यालंकृता की उपाधि से यहाँ विभूषित किया गया था।[११७] डॉ० सत्यकेतु विद्यालंकार की पुस्तक आर्यसमाज का इतिहास में उल्लेख है कि पुराने विद्यालंकृता के पाठ्यक्रम के अनुसार पहले चार वर्षों की स्नातिकाओं में सुश्री सुलभा, सुशीलादेवी, शान्तिजी, चन्द्रप्रभाजी, दमयन्तीजी, शान्ताजी तथा सुशीला देवीजी विद्यालंकृता के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें दो आचार्य रामदेव की कन्याएँ थीं।[११८]

सन्-१९३६ ई० में इस गुरुकुल में २१२ छात्राएँ थीं। उनमें भारत और उसके बाहर की भी छात्राएँ थीं। यह गुरुकुल अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के रूप में था और यहाँ शिक्षा निःशुल्क दी जाती थी। इसमें विविध विषयों की पढ़ाई की व्यवस्था की गयी थी। साथ ही प्राचीन और नवीन विचारों का समन्वय था। इस संस्था का उद्देश्य कन्याओं में मानसिक नैतिक और शारीरिक शक्ति का विकास करना था।[११९]

सन्-१९४५ ई० में सुश्री विद्यावती सेठ के अवकाश लेने के बाद श्रीमती चन्द्रवती लखनपाल ने आचार्य पद का भार ग्रहण किया और सन्-१९५१ ई० तक इस पद पर रहकर इस गुरुकुल की अपूर्व सेवा की। आर्यसमाज के इतिहास में कन्याओं की शिक्षा के लिए गुरुकुल देहरादून महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। छात्रावासीय व्यवस्था के अन्तर्गत कन्याओं को रखकर शिक्षा दिलाना उस समय एक कठिन कार्य था। आर्यसमाज ने भारतीय जनमानस का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया। इसमें इसे अपूर्व सफलता प्राप्त हुई।

**कन्या गुरुकुल हरिद्वार (कनखल)–** आर्यसमाज द्वारा कन्या गुरुकुल हाथरस, कन्या गुरुकुल देहरादून, के बाद कन्या गुरुकुल हरिद्वार में स्थापित किया गया। इस संस्था की स्थापना शुद्धि महासभा और अछूतोद्धार कमेटी के सुप्रसिद्ध कार्यकर्ता कर्मवीर श्री ठाकुर संसार सिंह द्वारा मई १९३३ ई० में की गयी।[१२०] उस समय हरिद्वार में स्त्री शिक्षा का घोर विरोध होता था। ऐसी दशा में यहाँ आर्यसमाज के कतिपय कार्यकर्ताओं ने कन्या गुरुकुल की स्थापना करने का एक साहसिक कार्य किया। आर्यसमाज के गुरुकुलों में छात्रावास में रहना अनिवार्य था। कन्याओं के गुरुकुल में भी यह अनिवार्य था। यह एक गम्भीर समस्या थी। फिर भी आर्यसमाज को इस कार्य में अभूतपूर्व सफलता मिली।

दिनांक ७ जनवरी, १९३६ ई० में तीन वर्ष तक अनथक परिश्रम कर ठाकुर संसार सिंह ने इसकी रजिस्ट्री करा दी और कन्या गुरुकुल के अपने सब अधिकार एक सभा बनाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सौंप दिए। इस संस्था में प्रथम पाँच वर्ष तक संस्कृत, हिन्दी और धर्म शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था । इसके बाद सार्वदेशिक सभा की सिद्धान्तरत्न, भास्कर आदि एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विशारद व साहित्यरत्नादि तथा महिला विद्यापीठ की प्रवेशिका, विद्याविनोदिनी आदि परीक्षाओं की तैयारी भी यहाँ करायी जाती थीं।[१२१] इस संस्था का संचालन अन्य गुरुकुलों की भाँति मुख्याधिष्ठाता आयुर्वेद बृहस्पति कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्रीजी करते थे। आचार्या पद पर सन्-१९४२ ई० से आयुर्वेद वाचस्पति श्रीमती चन्द्रावती देवी शास्त्री, एम.एस.सी. (ए.), साहित्यरत्न, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेदालंकृता थीं। उन्हीं के नेतृत्व में इस संस्था ने लोकप्रियता प्राप्त की।

**निष्कर्ष–** इस प्रकार आर्यसमाज द्वारा प्रान्त में कन्या गुरुकुलों की स्थापना कर अभूतपूर्व एवं प्रशंसनीय कार्य किया गया। आर्यसमाज के कन्या गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त ब्रह्मचारिणियाँ जहाँ एक ओर कुशल सद्गृहणियाँ सिद्ध हुई। वहीं दूसरी ओर समाज व राष्ट्र की प्रगति में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

आर्यसमाज व वैदिकधर्म के प्रचार-प्रसार में कन्या गुरुकुलों की अनेक स्नातिकाएँ निरन्तर संलग्न रहीं। आर्यसमाज के गुरुकुलों की मुख्याधिष्ठाता व आचार्या का पद भी यहाँ की स्नातिकाओं ने संभाली। श्रीमती दमयन्ती विद्यालंकृता (कपूर) और सुश्री कमला स्नातिका आदि बहुत दिनों तक देहरादून कन्या गुरुकुल और हाथरस कन्या गुरुकुल की आचार्या व प्रधानाध्यापिका पद को सुशोभित करती रहीं। इसी प्रकार श्रीमती वेदवती विद्यालंकृता, आर्यसमाज की गतिविधियों को आगे बढ़ाने में पर्याप्त सक्रिय थीं। इन्होंने सीतापुर में स्त्री आर्यसमाज की स्थापना की । मेरठ की आर्य स्त्री समाज की प्रधान रहीं। सुधामयी विद्यालंकृता ने आर्यसमाज, समाजसेवा तथा सैनिकों की सेवा का प्रशंसनीय कार्य किया है।[१२२] इन्होंने गुरुकुल कांगड़ी की स्त्री-समाज में मन्त्री एवं प्रधान के रूप में नवजीवन का संचार किया। इस तरह कन्या गुरुकुल की अनेक स्नातिकाएँ समाज व राष्ट्र की सेवा में तत्पर रहीं। आर्यकन्या गुरुकुल, समाज में कन्या शिक्षा के प्रति जागृति लाने का अथक प्रयास किया। जिसके फलस्वरूप अभूतपूर्व जागृति आनी प्रारम्भ हुई।

आर्यसमाज ने अपने गुरुकुलों में प्राचीन शिक्षा पद्धति पर विशेष बल दिया। इसके अन्तर्गत वेद शास्त्रों व संस्कृत साहित्य का अध्ययन-अध्यापन सुनिश्चित किया गया। आर्यभाषा में शिक्षा, संस्कृत भाषा आदि को आर्यसमाज ने शिक्षा का माध्यम बनांया। आर्यसमाज का मानना था कि संस्कृत वाङ्मय भारत की ही नहीं सारी मनुष्य जाति की अमूल्य निधि है। मानव जाति के सांस्कृतिक इतिहास की जानकारी बिना गौरवशाली संस्कृत वाङ्मय की सहायता के नहीं हो सकती। इसीलिए आर्यसमाज ने संस्कृत वाङ्मय के पठन-पाठन पर अपने गुरुकुलों में विशेष बल दिया था एवं चिरकाल से विस्मृत गुरुकुलीय शिक्षा की परम्परा को पुनर्जीवित करने का अथक प्रयास किया। इसके लिए ब्रह्मचर्य की परम्परा को शिक्षा का आधार बनाते हुए प्राचीन आश्रम प्रणाली को लागू किया। नवीन शिक्षा प्रणाली को भी इसने अपने गुरुकुलों में स्थान दिया था, इसके अन्तर्गत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


पाश्चात्य शिक्षा, अंग्रेजी भाषा व आधुनिक ज्ञान-विज्ञान सम्मिलित है।

विशेष रूप से यहाँ यह कहा जा सकता है कि आर्यसमाज ने प्राचीन एवं नवीन दोनों शिक्षा पद्धति को अपनी शैक्षिक योजनाओं में स्थान देकर शिक्षा का समन्वायत्मक विकास किया। इस शिक्षा व्यवस्था में तपश्चर्या, ब्रह्मचर्य का पालन, गुरु-शिष्य परम्परा, नैतिक शिक्षा व चारित्रिक विकास को सर्वोपरि स्थान दिया गया। ऐसी शिक्षा प्रणाली के फलस्वरूप बालक एवं बालिकाओं में अपने गौरवशाली सांस्कृतिक इतिहास के प्रति स्वाभिमान का उदय हुआ। इसके साथ ही ये आधुनिक ज्ञान-विज्ञान एवं पाश्चात्य दर्शन से भी अवगत हुए।

सार्वदेशिक सितम्बर, १९३२ के अंक में उल्लेख है कि आर्यसमाज के गुरुकुलों का यूरोप के विद्वान् बड़ी आदरणीय दृष्टि से देखते हैं। इसका अनुकरण भी उनके यहाँ करने का अथक प्रयास हो रहा है। यूरोप के विद्वान् भारत की प्राचीन संस्कृति की खोज में लगे रहे हैं। भारत की गुरुकुलीय व्यवस्था के अन्तर्गत तक्षशिला, नालन्दा, पाटलिपुत्र आदि शिक्षा केन्द्रों पर विशेष अध्ययन कर नई बातें निकाल रहे हैं। यहीं नहीं वे भारत की प्राचीन संस्कृति, सभ्यता और अध्यात्मवाद पर विमुग्ध हो रहे हैं।[१२३]

इस तरह आर्यसमाज की गुरुकुलीय परम्परा, भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी अनुकरणीय रही। इसके पूर्व आर्यावर्त्त की शिक्षा पद्धति का नाम गुरुकुल शिक्षा पद्धति ही था। भारत में जब यह पद्धति प्रचलित थीं तब भारतवर्ष उन्नति के शिखर पर था। जब से इस पद्धति का प्रचलन अवरुद्ध हुआ तब से भारत की अवनति भी होनी प्रारंभ हो गयी।[१२४] वर्तमान में आर्यसमाज द्वारा प्रस्तुत की गयी शैक्षिक योजनाओं का भारतीय शिक्षा प्रणाली में क्रियान्वयन करना व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के हित में ''मील का पत्थर'' साबित हो सकता है। आज इस दिशा में भारत सरकार प्रयत्नशील है।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



सौंप दिए। इस संस्था में प्रथम पाँच वर्ष तक संस्कृत, हिन्दी और धर्म शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था। इसके बाद सार्वदेशिक सभा की सिद्धान्तरत्न, भास्कर आदि एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विशारद व साहित्यरत्नादि तथा महिला विद्यापीठ की प्रवेशिका, विद्याविनोदिनी आदि परीक्षाओं की तैयारी भी यहाँ करायी जाती थीं।[१२१] इस संस्था का संचालन अन्य गुरुकुलों की भाँति मुख्याधिष्ठाता आयुर्वेद बृहस्पति कविराज योगेन्द्रपाल शास्त्रीजी करते थे। आचार्या पद पर सन्-१९४२ ई० से आयुर्वेद वाचस्पति श्रीमती चन्द्रावती देवी शास्त्री, एम.एस.सी. (ए.), साहित्यरत्न, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेदालंकृता थीं। उन्हीं के नेतृत्व में इस संस्था ने लोकप्रियता प्राप्त की।

**निष्कर्ष–** इस प्रकार आर्यसमाज द्वारा प्रान्त में कन्या गुरुकुलों की स्थापना कर अभूतपूर्व एवं प्रशंसनीय कार्य किया गया। आर्यसमाज के कन्या गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त ब्रह्मचारिणियाँ जहाँ एक ओर कुशल सद्गृहणियाँ सिद्ध हुई। वहीं दूसरी ओर समाज व राष्ट्र की प्रगति में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

आर्यसमाज व वैदिकधर्म के प्रचार-प्रसार में कन्या गुरुकुलों की अनेक स्नातिकाएँ निरन्तर संलग्न रहीं। आर्यसमाज के गुरुकुलों की मुख्याधिष्ठाता व आचार्या का पद भी यहाँ की स्नातिकाओं ने संभाली। श्रीमती दमयन्ती विद्यालंकृता (कपूर) और सुश्री कमला स्नातिका आदि बहुत दिनों तक देहरादून कन्या गुरुकुल और हाथरस कन्या गुरुकुल की आचार्या व प्रधानाध्यापिका पद को सुशोभित करती रहीं। इसी प्रकार श्रीमती वेदवती विद्यालंकृता, आर्यसमाज की गतिविधियों को आगे बढ़ाने में पर्याप्त सक्रिय थीं। इन्होंने सीतापुर में स्त्री आर्यसमाज की स्थापना की। मेरठ की आर्य स्त्री समाज की प्रधान रहीं। सुधामयी विद्यालंकृता ने आर्यसमाज, समाजसेवा तथा सैनिकों की सेवा का प्रशंसनीय कार्य किया है।[१२२] इन्होंने गुरुकुल कांगड़ी की स्त्री-समाज में मन्त्री एवं प्रधान के रूप में नवजीवन का संचार किया। इस तरह कन्या गुरुकुल की अनेक स्नातिकाएँ समाज व राष्ट्र की सेवा में तत्पर रहीं। आर्यकन्या गुरुकुल, समाज में कन्या शिक्षा के प्रति जागृति लाने का अथक प्रयास किया। जिसके फलस्वरूप अभूतपूर्व जागृति आनी प्रारम्भ हुई।

आर्यसमाज ने अपने गुरुकुलों में प्राचीन शिक्षा पद्धति पर विशेष बल दिया। इसके अन्तर्गत वेद शास्त्रों व संस्कृत साहित्य का अध्ययन-अध्यापन सुनिश्चित किया गया। आर्यभाषा में शिक्षा, संस्कृत भाषा आदि को आर्यसमाज ने शिक्षा का माध्यम बनांया। आर्यसमाज का मानना था कि संस्कृत वाङ्मय भारत की ही नहीं सारी मनुष्य जाति की अमूल्य निधि है। मानव जाति के सांस्कृतिक इतिहास की जानकारी बिना गौरवशाली संस्कृत वाङ्मय की सहायता के नहीं हो सकती। इसीलिए आर्यसमाज ने संस्कृत वाङ्मय के पठन-पाठन पर अपने गुरुकुलों में विशेष बल दिया था एवं चिरकाल से विस्मृत गुरुकुलीय शिक्षा की परम्परा को पुनर्जीवित करने का अथक प्रयास किया। इसके लिए ब्रह्मचर्य की परम्परा को शिक्षा का आधार बनाते हुए प्राचीन आश्रम प्रणाली को लागू किया। नवीन शिक्षा प्रणाली को भी इसने अपने गुरुकुलों में स्थान दिया था, इसके अन्तर्गत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



पाश्चात्य शिक्षा, अंग्रेजी भाषा व आधुनिक ज्ञान-विज्ञान सम्मिलित है।

विशेष रूप से यहाँ यह कहा जा सकता है कि आर्यसमाज ने प्राचीन एवं नवीन दोनों शिक्षा पद्धति को अपनी शैक्षिक योजनाओं में स्थान देकर शिक्षा का समन्वायत्मक विकास किया। इस शिक्षा व्यवस्था में तपश्चर्या, ब्रह्मचर्य का पालन, गुरु-शिष्य परम्परा, नैतिक शिक्षा व चारित्रिक विकास को सर्वोपरि स्थान दिया गया। ऐसी शिक्षा प्रणाली के फलस्वरूप बालक एवं बालिकाओं में अपने गौरवशाली सांस्कृतिक इतिहास के प्रति स्वाभिमान का उदय हुआ। इसके साथ ही ये आधुनिक ज्ञान-विज्ञान एवं पाश्चात्य दर्शन से भी अवगत हुए।

सार्वदेशिक सितम्बर, १९३२ के अंक में उल्लेख है कि आर्यसमाज के गुरुकुलों का यूरोप के विद्वान् बड़ी आदरणीय दृष्टि से देखते हैं। इसका अनुकरण भी उनके यहाँ करने का अथक प्रयास हो रहा है। यूरोप के विद्वान् भारत की प्राचीन संस्कृति की खोज में लगे रहे हैं। भारत की गुरुकुलीय व्यवस्था के अन्तर्गत तक्षशिला, नालन्दा, पाटलिपुत्र आदि शिक्षा केन्द्रों पर विशेष अध्ययन कर नई बातें निकाल रहे हैं। यहीं नहीं वे भारत की प्राचीन संस्कृति, सभ्यता और अध्यात्मवाद पर विमुग्ध हो रहे हैं।[१२३]

इस तरह आर्यसमाज की गुरुकुलीय परम्परा, भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी अनुकरणीय रही। इसके पूर्व आर्यावर्त्त की शिक्षा पद्धति का नाम गुरुकुल शिक्षा पद्धति ही था। भारत में जब यह पद्धति प्रचलित थी तब भारतवर्ष उन्नति के शिखर पर था। जब से इस पद्धति का प्रचलन अवरुद्ध हुआ तब से भारत की अवनति भी होनी प्रारंभ हो गयी।[१२४] वर्तमान में आर्यसमाज द्वारा प्रस्तुत की गयी शैक्षिक योजनाओं का भारतीय शिक्षा प्रणाली में क्रियान्वयन करना व्यक्ति, समाज व राष्ट्र के हित में ''मील का पत्थर'' साबित हो सकता है। आज इस दिशा में भारत सरकार प्रयत्नशील है।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## सन्दर्भ


१. महात्मा हंसराज जीवनी, आर्यप्रान्तीयप्रतिनिधिसभा शताब्दी वर्ष, पृ. २७

२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, आर्यसमाज का इतिहास, द्वितीय भाग, पृ. २

३. विश्वप्रकाश, आर्यसमाज के निर्माता, पृ. ४२

४. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ३

५. भवानीलाल भारतीय, आर्यसमाज के बीस बलिदानी, पृ. २०

६. जगदीश विद्यार्थी, अमरसेनानी स्वामी श्रद्धानन्द, पृ. ६०-६१

७. वही, पृ. ६१-६२

८. वही, पृ. ६२ देखें- इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ५

९. जगदीश विद्यार्थी, पूर्वोद्धृत, पृ. ६३

१०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. ११

११. वही, पृ. ४

१२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ. १७७

१३. वही, पृ. १७७-७९

१४. धनपति पाण्डेय, दि आर्यसमाज एण्ड इण्डियन नेशनलिज्म, पृ. १३८

१५. गुलशनस्वरूप सक्सेना, आर्यसमाज मूभमेंट इन इण्डिया, पृ. ९९

१६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत. पृ. १८३

१७. वही

१८. विश्वप्रकाश, आर्यसमाज के निर्माता, पृ. ९३; देखें- जगदीश विद्यार्थी, पूर्वोद्धृत, पृ. ६४

१९. अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दासमारोस्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २१६

२०. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २४

२१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १९२-९३

२२. वही, पृ. १९४

२३. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २५

२४. वही, पृ. २६

२५. वेदालंकार व विद्यालंकार डिग्री को स्नातक माना गया (गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का नियम तथा पाठ्यक्रम - १९६४), मुखपृष्ठ पर अंकित। इतिहास आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश, प्रथम भाग-पृ.१२३

२६. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २६

२७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. १९६

२८. वही, पृ. २०३

२९. अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोहस्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २१६

३०. वही

३१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३३१-३२

३२. वही, पृ. ३३५

३३. अखिलभारतीयस्नातकमंडल (गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी) द्वारा नियुक्त गुरुकुल आयोग की रिपोर्ट, मई १९५८, पृ. १७

३४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३३६-३७


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


३५. अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोहस्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २१६ देखें- सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग, पृ. ३४०
३६. गुरुकुल आयोग की रिपोर्ट, मई १९५८, पृ. २५-२६
३७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३४८
३८. वही
३९. अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोहस्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २१६
४०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३४८-४९
४१. शिवदयालु, इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश, प्रथम भाग, पृ. १९०
४२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ३४९
४३. गुरुकुल आयोग की रिपोर्ट, मई १९५८, पृ. १६
४४. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. ४५
४५. वही, पृ. ४७
४६. अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोहस्मारिका, दिसम्बर १९७५, पृ. २१९
४७. वही, पृ. २१९
४८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २७३-७४, ७६
४९. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १९६
५०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २७८
५१. वही, पृ. ६०६
५२. वही, पृ. २७८
५३. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २३८
५४. भवानीलाल भारतीय, पूर्वोद्धृत, पृ. ७९
५५. राजेन्द्र 'जिज्ञासु', तपोधन महात्मा नारायण स्वामी, पृ. ७
५६. विश्वप्रकाश, पूर्वोद्धृत, पृ. १२१
५७. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २७२
५८. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. १९३
५९. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २७८
६०. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १२०
६१. गुरुकुल महाविद्यालय, वृन्दावन की नियमावली व पाठविधि (सन् १९२१-२२),पृ. ६२
६२. वही, पृ. ४८
६३. वही, पृ. ४४-४५
६४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ६०९ देखें- इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २३८
६५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. २११ देखें- गुलशनस्वरूप सक्सेना, पूर्वोद्धृत, पृ. ५२
६६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. ६१०
६७. वही, पृ. ६०८
६८. वही पृ. ६१०
६९. वही, पृ. ५८३, ५८६, ५८८-८९, ५९३-९४ देखें- शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ.१२६-२८ देखें- गुरुकुल स्मारिका, गुरुकुल महाविद्यालय, रुद्रपुर, तिलहर, शाहजहाँपुर (उत्तर प्रदेश), पृ. १७; देखें- भवानीलाल भारतीय, काशी में महर्षि दयानन्द, पृ. ६२

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



७०. भारतोदय, हीरकजयन्ती विशेषांक, ज्वालापुरीय गुरुकुल महाविद्यालय, फरवरी-मई १९८२, वर्ष-१९७१, अंक-८-११, पृ.४४
७१. स्मारिका, अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह, दिसम्बर १९७५, पृ. २१७
७२. भारतोदय, हीरकजयन्ती विशेषांक, पृ. ३६
७३. वही
७४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८३
७५. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, पृ. २४१
७६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८१
७७. वही, पृ. २८२
७८. वही, पृ. २८४
७९. वही, पृ. २८५; देखें- भारतोदय, हीरकजयन्ती विशेषांक, पृ. ३६-३८
८०. वही, पृ. ३७
८१. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ. २८७
८२. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ. १२५; देखें- इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. २४१
८३. वही, पृ. २४२
८४. वही, पृ. २४१
८५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग पृ.२९१
८६. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१२४
८७. श्रीनि:शुल्कगुरुकुलमहाविद्यालय, अयोध्या का वार्षिक विवरण, सन् १९९८-९९,पृ.३
८८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१२६
८९. श्री नि:शुल्क गुरुकुल महाविद्यालय अयोध्या वार्षिक विवरण, पृ.३
९०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग पृ.५८३
९१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१२८
९२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग पृ.५८६
९३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१२८
९४. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग पृ.५८६
९५. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१२८
९६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग पृ.५८६
९७. सत्यकेतु विद्यालंकार, वही, पृ.४५७
९८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग पृ. ४५७-५८ देखें- स्मारिका, दिस. १९७५, पृ.२२०
९९. वही, पृ.४५८, देखें- वही, पृ.२२०
१००. वही, पृ.४५८
१०१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१३० देखें- इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग-१९
१०२. राधाकृष्ण शर्मा- नेशनलइज्म, सोशल रिफार्म एण्ड इण्डियन वोमेन, पृ.१४४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


१०३. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.४६०
१०४. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१३०
१०५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, तृतीय भाग पृ.४६०
१०६. वही, पृ.४६१
१०७. स्मारिका, अन्तर्राष्ट्रीयआर्यसमाजस्थापनाशताब्दीसमारोह, दिसम्बर १९७५, पृ.२२०-२१
१०८. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१२९
१०९. राधाकृष्ण शर्मा- नेशनलइज्म, सोशल रिफार्म एण्ड इण्डियन वोमेन, पृ.१६०
११०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.४७७
१११. राधाकृष्ण शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ.१६०
११२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ.२३४
११३. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ.१२९
११४. राधाकृष्ण शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ.१६१
११५. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.४७६
११६. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.४७६
११७. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, प्रथम भाग, पृ.१२९
११८. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.४७६
११९. राधाकृष्ण शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ.१६१
१२०. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत, पृ.४८०
१२१. शिवदयालु, पूर्वोद्धृत, पृ.१३१
१२२. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत,पृ.४७८
१२३. सार्वदेशिक अंक- सितम्बर १९३२, पृ.७२२
१२४. आर्यसेवक- सितम्बर-अक्टूबर, १९८५, पृ.५०

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# परिशिष्ट- १

## गुरुकुल महाविद्यालय वृन्दावन की पाठविधि

(सन् - 1921-1922)

### कक्षा- 1

1. संस्कृत - क- वेदांग अष्टाध्यायी मूल प्रथम, द्वितीय, अध्याय कण्ठ करना।
   ख- संस्कृत साहित्य- संस्कृत प्रवेशिका, 22-5 श्लोक कण्ठ करना, श्रुतांकन, स्थान प्रयत्न का ज्ञान।
2. धर्म शिक्षा- क- सन्ध्या, ख- हवन मंत्र कण्ठ करना, ग- ईश्वर प्रार्थना के आठ मंत्र, घ- धर्म शिक्षा प्रथम भाग ( पं. सातवलेकर), ङ- चार छटे हुए भजन कण्ठ करना।
3. आर्य भाषा क- आर्य भाषा पाठावली प्रथम भाग, ख- सुलेख, ग- श्रुतांकन।
4. गणित क- स्लेट कार्य- सरल संकलन (योग) सरल व्यंकलन (बाकी)
   ख- पहाड़े 20 * 10,
5. साधारण ज्ञान- क- गुरुकुल भूमि का भूगोल, ख- आलेख ग- वास्तुपाठ 10 पाठ आकार, परिणाम, रूप, रस, गद्य के । घ- हस्त नेत्र शिक्षण, कागज मोड़ना, रंग भरना मिट्टी के खिलौने बनाना।

### कक्षा- 2

1. संस्कृत क- वेदांग- अष्टाध्यायी तृतीय, चतुर्थ अध्याय कण्ठ करना, पीछे की आवृत्ति।
   ख- संस्कृत साहित्य, 1. संस्कृत-भाषा पाठ्य पुस्तक प्रथम भाग। 25- श्लोक संग्रहीत कंठाग्र, 3. श्रुतांकन।
2. धर्म शिक्षा क- स्वस्तिवाचन कण्ठ करना, ख- धर्म शिक्षा भाग, ग- बाल प्रश्नोत्तरी
3. आर्य भाषा क- आर्य भाषा पाठावली द्वितीय भाग, ख- सुलेख ग- श्रुतांकन।
4. गणित क- स्लेट कार्य सरल गुणा, भाग, भिन्न, जोड़, बाकी ।
   ख- पहाड़े 3/5 गुणा 20. 1-1/4 गुणा 20.
5. साधारण ज्ञान क- मथुरा जिले का भूगोल, ख-आलेख - सरल रेखा-आवृत्त।
   ग- वास्तुपाठ 15 पाठ (मुख्याध्यापक द्वारा निर्धारित)
   घ- कागज मोड़ना, पेंसिल से रंग भरना, मिट्टी के खिलौने बनाना।

### कक्षा- 3

1. संस्कृत क- वेदांग- पंचम षष्टाध्याय अष्टाध्यायी मूल कंठ करना, पिछले पाठ की पुनरावृत्ति, 2-सन्धि विषय। ख- संस्कृत साहित्य- 1. संस्कृत पाठ्य पुस्तक द्वितीय भाग, 2- अनुवाद, श्रुतांकन, 3. पिछले कण्ठस्थ श्लोकों का अर्थ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


2. धर्म शिक्षा — क- शान्ति प्रकरण कण्ठ करना। ख- सन्ध्यासार्थक, ग- धर्म शिक्षा तृतीय पुस्तक (पं. सातवलेकर जी)

3. आर्य भाषा — क- हिन्दी शिक्षावली चतुर्थ भाग, ख सुलेख श्रुतांकन, ग- पत्र लिखना।

4. गणित — क- स्लेट कार्य- मिश्र गुणा, मिश्र भाग, सरल व्यावहारिक प्रश्न, लघुकरण, तोल, माप, अंग्रेजी सिक्कों का ज्ञान। ख- पहाड़े 2-1/2 गुणा 20 1-41/2 गुणा 20.।

5. साधारण ज्ञान — क- संयुक्त प्रान्त का भूगोल, चित्रालेख्य, ख- इतिहास, बाल रामायण, बाल भारत कथाएँ ।

ग- आलेख चक्र रेखा युक्त घ- वास्तुपाठ 18 पाठ ङ मुख्याध्यापक द्वारा निर्धारित, रंगभरना, मिट्टी का खिलौना बनाना, चटाई बुनना।

### कक्षा- 4

1. संस्कृत — क- वेदांग- अष्टाध्यायी मूल-7 व 8वाँ अध्याय मूल कण्ठ करना, 2-नामिक ।

ख- संस्कृत साहित्य, 1. संस्कृत भाषा पाठ्य पुस्तक तृतीय भाग। 20-श्लोक संग्रहीत कंठाग्र, 4. श्रुतांकन।

2. धर्म शिक्षा — क- पंच सहायम विधि सार्थक

ख- व्यावहारभानु।

3. आर्य भाषा — क- हिन्दी प्रवेशिका

ख- सुलेख श्रुतांकन।

ग- निबन्ध ।

4. गणित — क- भूगोल भारत वर्ष चित्रालेख्य ।

ख- इतिहास; सिक्ख मेवाड़ की कथाएँ ।

ग- आलेख- सरल वक्र रेखावृत्ति, वर्गीय 30 आकृति,

घ- वास्तुपाठ 18 पाठ,

ङ- मिट्टी के खिलौने बनाना, रंग भरना, सीना, चटाई बुनना।

### कक्षा- 5

1. संस्कृत — (क) वेदांग- 1- अष्टाध्यायी 1,2,3 अध्याय अर्थ उदाहरण सहित, 2- प्रत्येक गण के चुने हुए धातु सिद्धि सहित, 3- सुवन्त प्रकरण समस्त।

(ख) संस्कृत साहित्य- 1- विदुरनीति 3,4 अध्याय सार्थक, सान्वय, 2-हितोपदेश (संशोधित), 3-अनुवाद-मार्गोपदेशिका प्रथम भाग।

2. धर्म शिक्षा — क- सत्यार्थ प्रकाश 2,5,10वाँ लघुल्लास, ख- सन्ध्या (विशेषार्थ पं.सातवलेकर)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


3. आर्य भाषा — क- हिन्दी लोअर मिडिल रीडर, ख-दयानन्द प्रकाश गाथा, ग-निबन्ध।

4. गणित — क- व्यवहार गणित, प्रतिशतक, सरल ब्याज, ऐकिक नियम।

5. साधारण ज्ञान — क- भूगोल एशिया, ख- इतिहास-भारतवर्ष (ज्ञानोपयोगी भारतवर्ष पूर्वार्द्ध)
ग- आलेख्य, घ- मिट्टी के खिलौने बनाना, सीना, सूत बनाना।

6. अंग्रेजी — क- किंग प्राइमर, ख- राइटिंग।

## कक्षा- 6

1. संस्कृत — (क) वेदांग- 1- अष्टाध्यायी 5,6,7 अध्याय अर्थ उदाहरण सहित (सिद्धि रहित), 2- तृगन्तक समस्त धातु पाठ, 10 लकारों के रूप,।
(ख) संस्कृत साहित्य- संक्षिप्त वैदिक रामायण वैद्यकृत चुने सर्ग। 2- रघुवंश 2,3,5 वाँ सर्ग, 3- अनुवाद- मार्गोपदेशिक द्वितीय भाग आधा, 4- निबन्ध।

2. धर्म शिक्षा — क- सत्यार्थ प्रकाश 3,6ठाँ समुल्लास, ख- हवन मंत्र- सार्थक।

3. आर्य भाषा — क- तुलसीकृत रामायण अयोध्याकाण्ड पूर्वार्द्ध
ख- दयानन्द प्रकाश उत्तरार्द्ध।
ग- निबन्ध

4. गणित — क- अनुपात, समानुपात, दशमलव भिन्न, वर्गमूल, कार्य-सम्बन्धी प्रश्न- साधारण ब्याज, आयत तथा चार मित्तियों का क्षेत्रफल।

5. साधारण ज्ञान — क- भूगोल यूरोप, इतिहास- भारतवर्ष ज्ञानोपयोगी उत्तरार्द्ध पूर्ण, आलेख, सीना, सूत कातना, रंग-भरना।

6. अंग्रेजी — क- मैकमिलन्स न्यू इंगलिस रीडर 1-पार्ट, ख- राइटिंग।

## कक्षा- 7

1. संस्कृत — (क) वेदांग- अष्टाध्यायी छटे अध्याय का चतुर्थ पाद तथा 7,8 अध्याय अर्थ उदाहरण सहित, 2धातु प्रक्रियाएँ, (ख) संस्कृत साहित्य-1 संक्षिप्त महाभारत (वैधकृत) चुने सर्ग, 2- किरातार्जुनीय 1,2,3 सर्ग, पिंगल प्रसिद्ध, 3-छन्दज्ञान, 4- अनुवाद मार्गोपदेशिक द्वितीय भाग, 5- निबन्ध।

2. धर्म शिक्षा — क- सत्यार्थ प्रकाश प्रथम तथा सप्तम. समुल्लास, ख- ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका मूल पुस्तक 1 से 30 पृष्ठ।
ख- ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका (मूल पुस्तक) 1 से 30 पृष्ठ।

3. आर्य भाषा — क- तुलसीकृत रामायण अयोध्याकाण्ड उत्तरार्द्ध पूर्ण,
ख- सत्य हरिश्चन्द नाटक, ग- निबन्ध।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



4. गणित क- चक्रवृद्धि ब्याज, मध्यमा, हानि-लाभ, साझा, समय चल, दूरी के प्रश्न।
ख- बीजगणित प्रारम्भिक चार रीतियाँ।
5. साधारण ज्ञान क- भूगोल शेषपूर्ण।
ख- इतिहास-भारतवर्ष प्रो. बालकृष्ण प्रथम हिन्दू-काल।
6. विज्ञान क- विज्ञान प्रवेशिका प्रथम व द्वितीय भाग पूर्ण।
7. अंग्रेजी क- मैकमिलन्स न्यू इंगलिस रीडर द्वितीय भाग, ख- अनुवाद।

## कक्षा-8

1. संस्कृत क- वेदांग- अष्टाध्यायी 1 से 5 अध्याय सिद्धि शंका समाधान, तार्किक, 2- पठित पाठ की पुनरावृत्ति।
ख- ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका 31 से 70 पृष्ठ।
2. धर्म शिक्षा क- सत्यार्थप्रकाश 8,9 समुल्लास, 3 पठित पाठ की पुनरावृत्ति।
ख- ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका 31 से 70 पृष्ठ।
3. आर्य भाषा क- फाइनल रीडर, ख- छन्दप्रभाकर प्रसिद्ध-2 छन्द, ग- निबन्ध।
4. गणित क- अंकगणित- तत्कालधन, मितीकाटा, मिश्रगणित, अनुपातिक भाग, कण समय समीकरण।
ख- ज्यामिती हाल स्टीवन्स द्वितीयाध्याय ।
ग- बीजगणित -सरल गुणनखण्ड सरल समीकरण, सरल ग्राफ।
5. साधारण ज्ञान क- भूगोल- प्राकृतिक भूगोल, ख- इतिहास- इंगलैण्ड का इतिहास।
6. विज्ञान भौतिकी प्रारम्भिक सिद्धान्त तथा ताप (कांगड़ी)
(ख) रसायन निरेन्द्रियक रसायन पृष्ठ 207तक (कांगड़ी)
7- अंग्रेजी- क- मैकमिलन्स न्यू इंगलिस रीडर तृतीय भाग, ख- ग्रामर, ग- अनुवाद।

## कक्षा-9

1. संस्कृत क- वेदांत- 1- अष्टाध्यायी 5 से 8 अध्याय तक सिद्धि, शंका समाधान वार्तिक, । 2- महाभाष्य न्यान्तिक 1 से 3, 12वाँ सर्ग, 2-उत्तर-रामचरित्र, 3- चम्पू रामायण। 4- अनुवाद आप्टे की पुस्तक पूर्ण, 5- निबन्ध।
2. धर्म शिक्षा क- सत्यार्थ प्रकाश 11, 12वाँ समुल्लास, ख- संक्षिप्त मनुस्मृति, ग- ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका 71 से 120 पृष्ठ।
3. आर्य-भाषा क- हिन्दी नवरत्न तुलसी, सूरदेव कवि, ख- अलंकार प्रबोध, ग- निबन्ध।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



4. गणित क- अंकगणित स्ट्राक बदला। ख- ज्यामिति हाल स्टीवन्स तृतीय अध्याय, ग- बीजगणित विशेष गुणक खण्ड महत्तमसमा., लघुत्तम समापवर्त्य, समीकरण, भिन्न ग्राफ।

5. साधारण ज्ञान क- रोम का इतिहास, ख- भारत का राज्य शासन प्रबन्ध।

6. विज्ञान क- चुम्बक, विद्युत, प्रकाश, ख- हिन्दी केमिस्ट्री पूर्वार्द्ध (प्रो. सिंह)।

7. अंग्रेजी क- मैकमिलन्स न्यू इंग्लिस रीडर चतुर्थ भाग, ख- ग्रामर नैसफील्ड तृतीय भाग ।
ग- इंगलिस पोइटरी पूर्वार्द्ध, घ- अनुवाद ङ- निबन्ध।

### कक्षा-10

1. संस्कृत क- वेदांग- पीछे के पाठित पाठ की पुनरावृत्ति, 2- महाभाष्य नवान्तिक पूर्ण।
ख- संस्कृत साहित्य 1- कादम्बरी पूर्वार्द्ध, 2- अनुवाद, 3- निबन्ध।

2. धर्म शिक्षा क- सत्यार्थप्रकाश पुनरावृत्ति पठित पाठ स्वमन्तव्यामन्तव्य, ख- ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पूर्ण, ग- संक्षिप्त मनुस्मृति पूर्ण, घ- धर्म का आदिस्त्रोत, ङ- आर्याभिविनव।

3. आर्य भाषा क- हिन्दी नवरत्न अन्तिम 6 कवि, ख- निबन्ध।

4. गणित क- अंकगणित पूर्ण, ख- ज्यामिति ज्ञान स्टीवन्स चतुर्थ भाग, ग- बीजगणित।

5. साधारण ज्ञान क- भारतवर्ष के इतिहास की पुनरावृत्ति, ख- भारत का राज्य शासन प्रबन्ध।

6. विज्ञान पीछे पठित की पुनरावृत्ति, ख- हिन्दी केमिस्ट्री (प्रो.महेश सिंह) पूर्ण, ग- क्रियात्मक मौखिक।

7. अंग्रेजी क- राविन्सन कूसो, ख- यूजनाबिल पाथ, ग- इंगलिस पोइटरी पूर्ण, घ- ग्रामर नैसफील्ड तृतीय भाग, ङ- अनुवाद निबन्ध।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## पाठ-विधि

## महाविद्यालय विभाग

### अनिवार्य विषय- 1

1. वेद- 1 निरूक्त पूर्वार्द्ध, 2- सामवेद पूर्वार्द्धिक 1,2,3 अध्याय।
2. उपनिषद्-ईशादि आठ उपनिषद्।
3. दर्शन न्याय वात्सायायन वैशेषिक प्रशस्तवाद।
4. संस्कृत न्याय वात्सायायन, वैशेषिक प्रशस्तवाद।

### द्वितीय वर्ष

1. वेद- 1 निरूक्त उत्तरार्द्ध, सामवेद पूर्वार्द्धिक 4,5,6।
2. उपनिषद- छान्दोग्य
3. दर्शन सांख्यप्रवचन भाष्य (विद्वान-भिक्षु) योग (व्यास भाष्य)
4. संस्कृत निबन्ध।

### तृतीय वर्ष

1. वेद- 1- ऐतरेय ब्राह्मण (प्रथम पंजिका), 2. सामवेद उत्तरार्धिक 1-2 अध्याय।
2. उपनिषद्-वृहदारण्यक।
3. दर्शन- ब्रह्मसूत्र शारीरिक भाष्य, अध्याय- वेदान्त परिभाषा, मीमांसा, शावर भाष्य प्रथमपाद आपोदेवी।
4. संस्कृत निबन्ध।

### चतुर्थ वर्ष

1. वेद 1-ऐतरेय ब्राह्मण (द्वितीय पंजिका)
2. सामवेद उत्तरार्धिक 12 से 22 अध्याय,
3. दर्शन- ब्रह्मसूत्र शंकर भाष्य द्वितीय अध्याय मीमांसा शावर भाष्य 3,4 पाद द्वितीय अध्याय न्यायकुसुमांजलि।
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास।

### ऐच्छिक विषय

वेद- प्रथम, द्वितीय,तृतीय वर्ष।

आयुर्वेद- प्रथम, द्वितीय तृतीय एवं चतुर्थ वर्ष।

आर्यसिद्धान्त- प्रथम, द्वितीय तृतीय एवं चतुर्थ वर्ष।

इंगलिस लिटरेचर- फर्स्ट ईयर, सेकेण्ड ईयर, थर्ड ईयर, फोर्थ ईयर।

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

## परिशिष्ट - 2

संख्या 9

• ओ३म् •

[illegible] गुरुकुलस्य [illegible]

### प्रमाण पत्रम् ।

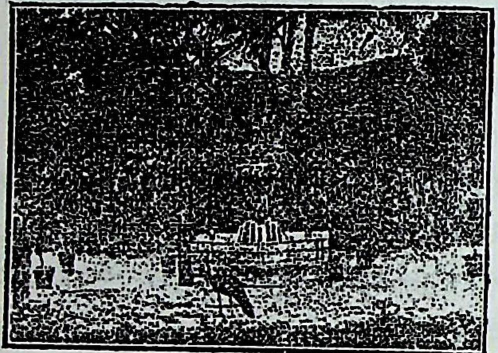

तानि कल्पद्ग ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपोऽतिष्ठत् तप्यमानः
समुद्रे स स्नातो बभ्रुः पिङ्गलः पृथिव्यां बहु रोचते ।

एष ब्रह्मचारी शिवमित्रः (सुरेन्द्रः)
श्री मतः म० शिवनाथ प्रसादस्य पुत्रः नादरीदून — गया निवासी
अब्दे १८८८ — मासे श्रावण तिथौ पूर्णमास्याम् वासरे बुध

वर्णिगुणगौरव समन्वितः द्वादश वर्षाणि गुरोरन्तिके वसन् व्रतचर्यया
अध्यगीष्ट साङ्गां सरहस्यां वेदविद्याम् ।

ततः विद्या वारिधि पदेन समलंकृत्य प्रमाणी क्रियते ।

आचार्येण-
राजानन्द[illegible]-

तिथि श्रावण पूर्णमा सम्वत् १८८८ विक्रमीय

कुलपतिना

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उपसंहार

प्रस्तुत अध्ययन एक भौगोलिक सीमा एवं काल की परिधि में रखकर, आर्यसमाज द्वारा उत्तर प्रदेश के सामाजिक शैक्षणिक क्षेत्रों में किए गए कार्यों का वर्णन तथा मूल्यांकन है। भारतीय समाज एवं शिक्षा के क्षेत्रों में आर्यसमाज द्वारा चलाए गए विराट् आन्दोलन के फलस्वरूप समाज में अभूतपूर्व जागृति आयी। जिससे नए प्रगतिशील विचारों, नई संस्थाओं और नयी भावी आशाओं का सृजन हुआ। इसका कारण आर्यसमाज के सिद्धान्त, मन्तव्य एवं कार्यकर्ताओं के प्रभावशाली कार्य प्रणाली थी। आर्यसमाज का उद्देश्य ''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' वैदिक उद्घोष पर आधारित था। जिसका अभिप्राय सम्पूर्ण संसार को आर्य बनाना है। इस महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज जैसे सुदृढ़ संगठन का निर्माण इस देश में किया था।

आर्यसमाज की स्थापना के पूर्व यद्यपि समाज एवं शिक्षा में जागृति आनी प्रारम्भ हो गयी थी क्योंकि इस देश में विस्मयजनक पुनर्जागरण का प्रादुर्भाव हो चुका था। पुनर्जागरण की प्रथम ज्योति राजा राममोहन राय द्वारा ब्रह्मसमाज आन्दोलन के माध्यम से बंगाल में जलायी गयी थी। राजा राममोहन राय भारतीय नवजागरण के अग्रदूत थे। ब्रह्मसमाज आन्दोलन के पूर्व अठारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध काल में देश की अन्धकारमय स्थिति, धार्मिक-सामाजिक अवनति, सर्वत्र ईसाइयत का तीव्रगति से प्रचार-प्रसार, ईसाई पादरियों द्वारा भारतीय धर्मों की निरन्तर निन्दा, यूरोप के क्रान्तिकारी बुद्धिवादी तार्किक विचारधारा और अंग्रेजी पढ़े-लिखे समाज में हिन्दुत्व की निन्दा ये सब सामयिक परिस्थितियाँ विद्यमान थीं। यहाँ यह कहा जा सकता है कि इन परिस्थितियों के बीच सांस्कृतिक संकट के दौर से यह देश गुजर रहा था। जिसके फलस्वरूप हिन्दुत्व की नींद टूटी और ब्रह्मसमाज आन्दोलन का जन्म हुआ।

ब्रह्मसमाज आन्दोलन १९वीं शताब्दी का प्रथम धार्मिक तथा सामाजिक आन्दोलन था। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य भारतीय धर्म और समाज में सुधार लाना था। यह भारतीय सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में पुनर्जागरण का प्रतीक था। सतीप्रथा का अन्त, स्त्रियों का उद्धार, जातिवाद का विरोध और अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार, इस संस्था के प्रयत्नों का ही परिणाम था। लेकिन यह आन्दोलन यूरोपीय संस्कृति, पाश्चात्य शिक्षा और ईसाई धर्म से अत्यधिक प्रभावित था। केशवचन्द्र सेन के समय यह हिन्दुत्व से इतना अलग और ईसाइयत के इतना समीप जा पहुँचा था कि लोगों को सात्त्विक भ्रम हो गया था कि यह आन्दोलन और कुछ नहीं, संपूर्ण हिन्दू समाज को एक साथ ईसाइयत में दीक्षित करने का आयोजन मात्र है।

धार्मिक क्षेत्रों में यह हिन्दुत्व के समग्र रूप-पुनर्जन्मवाद, अवतारवाद, तीर्थ, मन्दिर और मूर्तिपूजा आदि का समर्थन करने का हिम्मत नहीं कर सका। हिन्दुत्व का जो रूप ब्रह्मसमाज ने लिया। वह ईसाइयत और इस्लाम से अधिक भिन्न नहीं था। राष्ट्रकवि दिनकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


ने इस विषय में कहा है कि यह ईसाइयत और हिन्दुत्व के युद्ध का पहला मोर्चा था। जिसमें हिन्दुत्व कुछ लजाया हुआ और प्रतिपक्षी की प्रबलता से आतंकित था। जिसके फलस्वरूप हिन्दू जनता का अत्यन्त विशाल भाग उनकी ओर उत्साह से नहीं दौड़ा और इसका प्रभाव केवल बंगाल तक ही सीमित रहा। लेकिन निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि ब्रह्मसमाज आन्दोलन ने भारतीय पुनर्जागरण में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ब्रह्मसमाज के नेताओं से ही प्रेरित होकर आर्यसमाज जैसे सार्वभौम संगठन का निर्माण इस देश में किया।

आर्यसमाज आन्दोलन उत्तर भारत का सबसे अधिक सर्वशक्तिशाली संगठित आन्दोलन था। इस आन्दोलन ने हिन्दुओं को जगाकर उनमें प्रगतिशील विचारों को जन्म दिया। जिसके फलस्वरूप भारतीय समाज में अभूतपूर्व जागृति उत्पन्न हुई। उत्तर प्रदेश भी इससे अछूता न रहा। उत्तर प्रदेश में शीघ्र ही यह जन आन्दोलन का रूप धारण कर लिया और इसका प्रभाव क्षेत्र विविध भागों में कायम हो गया तथा जगह-जगह अनेक आर्यसमाजों की स्थापना हुई और सन्-१९४७ ई० तक बारह सौ के लगभग आर्यसमाज उत्तर प्रदेश में स्थापित हुए। स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवनकाल तक उत्तर प्रदेश में ५० आर्यसमाजों की स्थापना का होना इनके व्यक्तित्व का परिचायक है। इन्होंने अपने ऋषि जीवन के २७ वर्षों में से अज्ञातवास एवं अन्य प्रान्तों के ७ वर्षों को छोड़कर शेष २० वर्ष उत्तर प्रदेश में ही व्यतीत किए और यहाँ आर्यसमाज के ध्येय और सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार किया।

स्वामी दयानन्द ने प्राचीन भारत के गौरवशाली सांस्कृतिक इतिहास को भारतीय जनमानस में दृढ़ता के साथ प्रस्तुत करने का अथक प्रयास किया। इनका मानना था कि वेदों और सुप्रसिद्ध शास्त्रों के इस देश में यह उचित नहीं है कि यूरोपियन शिक्षा, साहित्य और जीवन पद्धति को अपनाया जाए। इसीलिए उन्होंने वैदिक चिन्तन के शाश्वत मूल्यों को जीवन के सन्दर्भों में प्रस्तुत कर भारतीय समाज एवं शिक्षा में स्थापित करने का अथक प्रयास किया और देश की सांस्कृतिक विरासत और धर्म; जिसके प्रतीक वेद थे, में अपनी दृढ़ आस्था बनाए रक्खी। लेकिन यहाँ ध्यान देने योग्य है कि राजा राममोहन की भाँति स्वामी दयानन्द ने भी धार्मिक क्षेत्रों में मूर्तिपूजा, अवतारवाद व तीर्थयात्रा आदि का प्रबल विरोध किया। जिसके कारण आर्यसमाज आन्दोलन अपने स्थापना काल के प्रारम्भ से लेकर वर्तमान समय तक इन बिन्दुओं पर सदैव विरोध करता रहा है।

इस प्रकार धार्मिक क्षेत्रों में आर्यसमाज आन्दोलन ने ब्रह्मसमाज की भाँति ही कार्य किया। राष्ट्रकवि दिनकर ने कहा है कि यही कारण हुआ कि यद्यपि दयानन्द और राममोहन राय ने हिन्दू विचारों की दिशा में महान् क्रान्ति उपस्थित की, किन्तु हिन्दू जनता का अत्यन्त विशाल भाग उनकी ओर उत्साह से नहीं दौड़ा। इन दोनों ने जिस हिन्दुत्व की रक्षा की, वह हिन्दुत्व का खण्ड मात्र था।[१] स्वामी दयानन्द के साथ ही विविध आन्दोलनों में कार्य कर चुके आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् एवं महान् कार्यकर्ताओं ने आर्यसमाज से अलग होकर समाज व राष्ट्र की अपूर्व सेवा की। उनमें पं० भीमसेन शर्मा 'आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी', स्वामी सहजानन्द एवं पं० शंकरनाथ आदि प्रमुख थे।[२] स्वामी श्रद्धानन्द व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



महात्मा नारायण स्वामी आर्यसमाज के प्रमुख विद्वान् एवं कार्यकर्ता थे। इन्हें प्रारम्भ में स्वामी दयानन्द के सान्निध्य में न आने के लिए सचेत किया गया था- स्वामी श्रद्धानन्द को उनकी माताजी द्वारा और स्वामी नारायणप्रसाद को स्कूल के ही संस्कृत अध्यापक द्वारा।[3]

मैक्समूलर, रामकृष्ण परमहंस एवं उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द, थियोसॉफिस्ट आन्दोलन व उसकी मुख्य नेता श्रीमती ऐनी बेसेन्ट आदि ने मूर्तिपूजा, अवतारवाद, तीर्थाटन व पुनर्जन्मवाद को हिन्दू धर्म की आभ्यान्तरिक शक्ति माना। हिन्दू धर्म को प्रत्यक्ष अनुभूति या साक्षात्कार का धर्म माना क्योंकि हिन्दुत्व का मूलाधार विद्या और ज्ञान नहीं, सीधी अनुभूति है। इस प्रकार आर्यसमाज एवं उसके संस्थापक द्वारा जो धार्मिक क्षेत्रों में कार्य किया जा रहा था। उससे आर्यसमाज आन्दोलन कुछ कमजोर अवश्य हुआ। जिसके कारण हिन्दुत्व के समग्र भाग का समर्थन भी प्राप्त नहीं कर सका। फिर भी आर्यसमाज के द्वारा समाज सुधार संबंधी कार्य व शिक्षा के क्षेत्र में दी गयी नवीन प्रेरणा आज भी प्रासंगिक एवं अनुकरणीय है।

यहाँ स्पष्ट करना आवश्यक है कि ब्रह्मसमाज आन्दोलन यूरोपीय संस्कृति, शिक्षा एवं वैज्ञानिक विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित था। लेकिन आर्यसमाज आन्दोलन का प्रेरणास्त्रोत पाश्चात्य शिक्षा एवं अंग्रेजियत न होकर प्राचीन भारतीय गौरवशाली वैदिकधर्म व संस्कृति पर आधारित था। आर्यसमाज अधिक राष्ट्रवादी और विदेशी धर्मों के प्रति अधिक आक्रामक था। क्योंकि इस समय क्रिश्चिएनिटी और इस्लाम दोनों हिन्दुत्व पर सांघातिक आक्रमण कर रहे थे। स्वामी दयानन्द द्वारा चलाए गए आर्यसमाज आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य जैसा कि विदित है हिन्दू धर्म को ईसाई धर्म और इस्लाम के आक्रमण से बचाना और दूसरा वैदिककाल के मूल हिन्दू धर्म को पुनर्जीवित करके पौराणिक युग के विकृत हिन्दू धर्म में सुधार करना था। आर्यसमाज ने पहले उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शुद्धि आन्दोलन और दूसरे उद्देश्य के लिए नवीन शिक्षा प्रणाली को क्रियान्वित करने के निमित्त उत्तर प्रदेश में व्यापक आन्दोलन चलाए।

प्रस्तुत अध्ययन में भारतीय नवजागरण काल के पूर्व की दशा से प्रारम्भ करते हुए स्वतन्त्रता प्राप्ति तक के बीच, आर्यसमाज द्वारा समाज एवं शिक्षा के क्षेत्र में किए गए योगदान की विवेचना की गई है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आर्यसमाज के समाज सुधार सम्बन्धी कार्यक्रम भारतीय संस्कृति एवं परम्परा के सातत्य की रक्षा करते हुए भारतीय समाज को आधुनिकीकृत करता है। जिसके फलस्वरूप उत्तर प्रदेश में एक नवीन परिवर्तनोन्मुख समाज एवं नवीन शिक्षा प्रणाली का आविर्भाव हुआ।

भारतीय समाज एवं शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज ने जो प्रशंसनीय कार्य किया है। उसका हमारे देश की राष्ट्रीय जागृति, सांस्कृतिक चेतना की जागृति और नवनिर्माण में बड़ा गौरवपूर्ण स्थान रहा है। आर्यसमाज आन्दोलन को स्वामी दयानन्द द्वारा दी गयी नवीन प्रेरणा एवं उनकी योजना का इसमें प्रमुख स्थान है। सामाजिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में स्वामी दयानन्द के बाद आर्यसमाज आन्दोलन सदैव उनके संदेशों से प्रेरणा प्राप्त करता रहा। स्वामी दयानन्द का आदर्श वाक्य "वेदों की ओर लौट चलो" आर्यसमाज का सदैव प्रेरणा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



स्रोत बना रहा। उत्तर प्रदेश के नवजागरण तथा सांस्कृतिक पुनरुत्थान में आर्यसमाज द्वारा जो योगदान किया गया है। उसके मूल में वैदिक आदर्श प्रमुख थे।

आर्यसमाज ने अपने सुदृढ़ एवं सशक्त संगठन के माध्यम से प्रान्त में प्रचलित सामाजिक कुरीतियों, प्रथाओं एवं सामयिक सांस्कृतिक संकट की स्थिति से जन साधारण को अवगत कराते हुए इससे त्राण दिलाने का अथक प्रयास किया। इसके लिए आर्यसमाज ने साप्ताहिक बैठकों, वार्षिक अधिवेशनों, महासम्मेलनों, व्याख्यानों, शास्त्रार्थों एवं ट्रैक्ट्स वितरण आदि के कार्यक्रमों का सहारा लिया। आर्यसमाज के सुदृढ़ संगठन में आर्योपप्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश आर्यप्रतिनिधिसभा एवं सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा आदि महत्वपूर्ण थे। प्रान्त में स्थापित स्वायत्तशासी आर्यसमाजों पर नियन्त्रण रखने एवं प्रतिनिध्यात्मक शक्ति प्रदान करने के उद्देश्य से ऐसे संगठन का निर्माण आर्यसमाज द्वारा किया गया था। यह संगठन एक-दूसरे से प्रतिनिध्यात्मक रूप से सम्बद्ध थे।

उत्तर प्रदेश में आर्यसमाज द्वारा जो सामाजिक क्षेत्रों में आन्दोलन चलाए गए थे उसमें धर्मान्तरित हिन्दुओं को शुद्धि संस्कार द्वारा आर्य बनाने, महिलाओं में उनके अधिकारों के प्रति जागरूकता पैदा करने, वेश्यावृत्ति एवं दहेज प्रथा का विरोध, विधवा विवाह को प्रोत्साहन, जात-पाँत विरोध तथा अछूतोद्धार,सामूहिक सहभोज, गौ-सेवा एवं सुरक्षा, मातृभाषा का प्रसार एवं अन्य जनहितकारी कार्यक्रम सम्मिलित थे।

शुद्धि कार्यक्रम के अन्तर्गत आर्यसमाज ने "जो लोग हिन्दू धर्म को त्यागकर ईसाई या मुसलमान बन गए थे या जो जन्मना ईसाई या मुसलमान थे" उन्हें हिन्दू धर्म में प्रविष्ट कराने के लिए आक्रामक आन्दोलन चलाए। जिसके अन्तर्गत शुद्धि सभाओं की स्थापना, व्याख्यान, शास्त्रार्थ, सामयिक पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रचार, ट्रैक्ट्स वितरण, पाठशालाओं के माध्यम से शुद्धि क्षेत्र में विद्यादि का प्रचार, कार्य आदि सम्मिलित थे। सभाओं में राजपूतशुद्धिसभा, अखिलभारतीयहिन्दूशुद्धिसभा आदि प्रमुख थे। आर्यसमाज द्वारा चलाए गए शुद्धि आन्दोलन का लगभग सारे हिन्दू समाज में उसका हृदय से स्वागत किया गया और इस कार्य में, आर्यसमाज को प्राप्त हुआ।

इस प्रकार हिन्दुओं को स्वधर्म में प्रविष्ट कराने के लिए आर्यसमाज ही ऐसी संस्था थी जो यह कार्य पूरे जोश एवं उत्साह के साथ करती थी। इस कार्य में आर्यसमाज को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। आर्यसमाज द्वारा लाखों की संख्या में नवमुस्लिम राजपूतों को शुद्ध किया गया और हजारों की संख्या में अस्पृश्य कहलाने वाले लोगों को विधर्मी होने से बचाया गया था। साथ ही अनेक जन्मजात मुस्लिम और ईसाईयों को भी धर्म परिवर्तन कराकर आर्य धर्म में प्रविष्ट कराया गया। इसमें आर्यसमाज ने स्वामी श्रद्धानन्द जैसे आर्यसमाज के तपस्वी नेता को खोया और इसे कट्टरपंथी मुल्लाओं और प्रसिद्ध ईसाई पादरियों के साथ सीधे संघर्ष करना पड़ा था। लेकिन इस आन्दोलन के फलस्वरूप भारतीय जनमानस में अपने धर्म एवं अपनी गौरवमयी संस्कृति के प्रति अभूतपूर्व चेतना व स्वाभिमान जागृत हुआ। साथ ही हिन्दुओं के धर्मान्तरण पर व्यापक अवरोध भी उत्पन्न हुआ। आर्यसमाज का यह प्रयास सार्थक सिद्ध हुआ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


आर्यसमाज ने नारी जागरण के लिए अथक प्रयास किया। स्त्रियों के प्रति रूढ़िवादी समाज का दृष्टिकोण संकुचित था। इस समय स्त्रियों की दशा अत्यन्त सोचनीय थी। इसमें शिक्षा का अभाव, पर्दा प्रथा, बहु विवाह, बाल विवाह, विधवाओं के विवाह का निषेध, सती प्रथा, दहेज प्रथा आदि अनेक सामाजिक प्रचलन स्त्रियों के उत्थान में बाधक थे। आर्यसमाज ने इस ओर अपना ध्यान आकृष्ट किया और व्यापक आन्दोलन चलाए। जिसके परिणामस्वरूप स्त्रियों के प्रति भारतीय जनमानस में व्यापक परिवर्तन हुआ और नारी स्वतन्त्रता, समानता एवं उनके अधिकारों के प्रति जागरूकता आयी।

आर्यसमाज ने नारी जागरण के निमित्त प्राचीन वैदिकयुग के समय स्त्रियों की स्थिति से प्रेरणा प्राप्त कर, समाज को एक नयी दिशा दी और नारी शिक्षा के प्रति विशेष ध्यान दिया। आर्यसमाज ने पुरुषों के समान स्त्रियों को भी शिक्षा का समान अवसर प्रदान किया। इसके लिए उत्तर प्रदेश के विविध भागों में जगह-जगह आर्यकन्या शिक्षण संस्थाएँ एवं कन्या गुरुकुलों की स्थापना की। इससे कन्याओं में अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति अभूतपूर्व जागृति उत्पन्न हुई। आर्यसमाज के सभाओं, वार्षिक अधिवेशनों, महासम्मेलनों एवं शताब्दी महोत्सवों में बहुत सी महिलाओं ने भाग लिया। ये इनमें पदाधिकारियों की हैसियत से भी सम्मिलित हुआ करती थीं। इससे इनमें उत्पन्न हुई अपूर्व जागरूकता का बोध होता है।

आर्यसमाज का मानना था कि स्त्रियों के उत्थान में विवाहजन्य दोष ही बाधक हैं। इसके लिए आर्यसमाज ने अपने अथक प्रयास से शारदा एक्ट एसेम्बली में पास करवाया। जिसमें विवाह के समय वर की आयु-१८ वर्ष व कन्या की आयु-१५ वर्ष का प्रावधान किया गया था। आर्यसमाज ने विधवा-विवाह के लिए समाज को प्रोत्साहित किया और कई जगह विधवा आश्रमों की स्थापना की, बाल विवाह जैसी प्रथाओं के प्रचलन का वृहद विरोध किया। जिसके फलस्वरूप समाज में विधवा पुनर्विवाह अधिक संख्या में हुए और बाल विवाहों के प्रति समाज सचेत हुआ।

गढ़वाल के नायक जाति में प्रचलित वेश्यावृत्ति की कुप्रथा के प्रति आर्यसमाज ने ही सन्-१९२८ ई० में एक कानून पास करवाया था। जिसके कारण नायक स्त्रियों के वेश्यावृत्ति में जाने का प्रवाह रुक गया था। इस प्रकार आर्यसमाज द्वारा नारी जागरण के निमित्त किए गए प्रयास के फलस्वरूप स्त्रियों में अपने कर्त्तव्यों एवं अधिकारों के प्रति अभूतपूर्व चेतना जागृत हुई। उन्हें समानता का अवसर प्राप्त हुआ। आर्यसमाज का स्त्रियों के प्रति इस प्रकार के प्रगतिशील दृष्टिकोण समाज के लिए प्रेरणादायक हैं।

आर्यसमाज ने अपने सामाजिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत जात-पाँत का व्यापक पैमाने पर विरोध किया। स्वामी दयानन्द ने जन्मना जाति-पाँतवाद, अस्पृश्यता और छुआछूतवाद को भारतीय समाज के लिए भयंकर कलंक बताया और उन्होंने उसी समय कहा कि राष्ट्र से यदि इन कलंकों को दूर नहीं किया गया तो विदेशी सम्प्रदायों का आतंक इस देश में बढ़ता जाएगा। स्वामी दयानन्द के ये संदेश आर्यसमाज को निरन्तर आगे प्रेरित करता रहा। इसके लिए आर्यसमाज ने जन्मना जाति व्यवस्था का खण्डन किया और गुण कर्म स्वभावानुसार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



वर्ण व्यवस्था का समर्थन किया। आर्यसमाज ने जातपाँत को जड़ से समाप्त करने के निमित्त अपनी शिक्षण संस्थाओं में, नाम के अन्त में "आर्य" लगाने का प्रचलन आरम्भ किया। यह सभी जाति, वर्ग व सम्प्रदायों के लिए इन शिक्षण संस्थाओं में "आर्य" टाइटिल लगाना अनिवार्य था। इसके साथ ही यहाँ शास्त्री, सिद्धान्तालंकार, वेदालंकार, शिरोमणि आदि टाइटिल लगाए जाते थे। इस प्रकार के प्रचलन से जन्मना जाति का परिचय प्राप्त नहीं होता और गुण कर्मानुसार समाज में आदरभाव प्रकट होता है। इससे व्यक्ति, समाज व राष्ट्र को एकजुट किया जा सकता है।

आर्यसमाज ने जातिपाँत व अछूतोद्धार के विरुद्ध जो आन्दोलन चलाए उनमें अछूत वर्ग के बच्चों के लिए कल्याणी पाठशालाओं की स्थापना भी की गई। इनमें समानता के नियम प्रतिपादित किए गए थे। सामूहिक सहभोज के कार्यक्रम, सम्मेलन तथा समारोह का आयोजन, व्याख्यान एवं ट्रैक्ट्स का वितरण, अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन, गढ़वाल में अछूतोद्वार आन्दोलन आदि प्रमुख रूप से सम्मिलित थे। इसके फलस्वरूप समाज में व्यापक जागृति आनी प्रारम्भ हुई। आर्यसमाज के प्रयास से ही आर्य विवाह बिल एवं सन् १९४७ ई० में अस्पृश्यता निवारण कानून बना। आर्यसमाज ने अछूत वर्ग को वेद पाठ करने, संस्कृत पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार एवं यज्ञोपवीत धारण कराए, सार्वजनिक कूपों से पानी भरने का अधिकार दिलाया और पुरोहित वर्ग का कार्य करने के लिए प्रेरित किया। इससे अछूतवर्ग में हीनभावना के स्थान पर स्वाभिमान के उदय के साथ ही उनमें व्यापक चेतना का जन्म हुआ। आर्यसमाज द्वारा इस दिशा में किए गए प्रयास आज भी सार्थक सिद्ध हो रहे हैं।

इस प्रकार आर्यसमाज उत्तर प्रदेश में जहाँ वैदिकधर्म के प्रचार के लिए निरन्तर प्रयासरत था। वहाँ शुद्धि-आन्दोलन, नारी जागरण व जातपाँत विरोध के लिए वृहद् आन्दोलन चलाया। जिससे समाज में व्यापक परिवर्तन के साथ ही प्रगतिशील विचारों का जन्म हुआ और भारतीय जनमानस सामाजिक न्याय एवं समता की ओर अग्रसर हुआ। इसके साथ ही आर्यसमाज ने अन्य समाजहितकारी कार्यक्रम भी इस प्रान्त में किए। जिसके अन्तर्गत गौ-रक्षा, आर्य भाषा का प्रचार, मांसभक्षण, मद्यपान का विरोध तथा प्राकृतिक आपदा के समय प्रभावित लोगों की सहायता आदि सम्मिलित थे।

आर्यसमाज की स्थापना के समय बने अट्ठाईस नियमों में पाँचवाँ नियम आर्यभाषा (हिन्दी) व संस्कृत भाषा के महत्त्व को दर्शाता है। आर्यसमाज का मानना था कि संस्कृत साहित्य अक्षय ज्ञान के भण्डार हैं और इसकी जानकारी के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान आवश्यक है। इसीलिए आर्यसमाज ने संस्कृत भाषा की ओर विशेष ध्यान दिया। आर्यभाषा को राष्ट्रभाषा बनाने का पहला उपदेश स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ही दिया था और राष्ट्र के लिए एक भाषा की बात कही थी। स्वामी दयानन्द के पदचिन्हों पर चलते हुए आर्यसमाज ने हिन्दी भाषा को अपनाया और उत्तर प्रदेश में जितने सामयिक पत्र निकलते थे। वे प्रायः आर्यभाषा में ही होते थे। उर्द के गढ़ में आर्यसमाज ने आर्यभाषा का जोरदार प्रचार किया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


भारत में पहला शिक्षणालय, जिसमें राष्ट्रभाषा के माध्यम से शिक्षा देने का सफल परीक्षण किया गया। वह उत्तर प्रदेश का गुरुकुल कांगड़ी था।

आर्यसमाज की संस्थाओं में हिन्दी का प्रमुख स्थान था। जिसके फलस्वरूप आन्दोलन के लिए इन संस्थाओं में पृष्ठभूमि तैयार हो गयी थी। १० दिसम्बर १९४६ ई० को संविधान सभा की बैठक में आर्यसमाज के श्री धुलेकर ने हिन्दी का प्रश्न उठाया था और अपना भाषण आर्यभाषा हिन्दी में ही दिया था। श्री धुलेकर के वकालत पर ही संविधान सभा के स्थायी अध्यक्ष डा० राजेन्द्रप्रसाद ने भी अपना भाषण पहले हिन्दी में ही दिया था। इस प्रकार आर्यसमाज पहले से ही आर्यभाषा की उपयोगिता को समझते हुए इसके प्रचार-प्रसार के कार्यों पर विशेष बल दिया। आर्यसमाज के गुरूकुलों में हिन्दी भाषा के माध्यम से शिक्षा का विधान किया गया था। जिसके फलस्वरूप जनसामान्य में हिन्दी का प्रवेश हुआ। जिससे आर्यभाषा का प्रचार-प्रसार प्रान्त में तीव्रगति से हुआ। इसका श्रेय आर्यसमाज को जाता है।

शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज का योगदान सर्वपरिचित और प्रसिद्ध है। इसके द्वारा किए गए योगदान के फलस्वरूप हमारे देश की राष्ट्रीय जागृति तथा सामाजिक, धार्मिक, बौद्धिक चेतना में अपूर्व परिवर्तन आया। शिक्षा विषयक कार्यों के अन्तर्गत आर्यसमाज ने वैदिककाल के चिन्तन को पुनर्जीवित करने के ध्येय से एक नवीन शिक्षा प्रणाली की योजना भारतीय समाज के सम्मुख प्रस्तुत की। इस योजना के फलस्वरूप समाज में डी.ए.वी. एवं गुरुकुल आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ। इन शिक्षण संस्थाओं के प्रति भारतीय जनमानस तीव्रगति से आकृष्ट हुआ और अपने बालक-बालिकाओं को यहाँ अध्ययन के लिए भेजने लगा था। सरकार के बाद सबसे अधिक शिक्षण संस्थाएँ आर्यसमाज की हैं। उसके डी.ए.वी. स्कूल, संस्कृत पाठशालाएँ और गुरुकुल आज भी सर्वत्र फैले हुए हैं।

शिक्षा के सन्दर्भ में आर्यसमाज का विचार था कि हमारी शिक्षा प्रणाली पाश्चात्य साहित्य, भाषा व विज्ञानों को ग्रहण कर सकती है। किन्तु उसकी आत्मा भारतीय संस्कृति के अनुरूप ही होनी चाहिए। भारतीय संस्कृति का इतिहास, प्राचीन और नवीन मान्यताओं और आदर्शों के बीच सामंजस्यपूर्ण रहा है। आर्यसमाज ने भी अपनी शैक्षिक योजनाओं में प्राचीन वैदिक शिक्षा पद्धति को प्रधानता देते हुए आधुनिक ज्ञान-विज्ञान, पाश्चात्य शिक्षा और अंग्रेजी भाषा की शिक्षा आदि को सम्मिलित किया। इसमें प्राच्य और पाश्चात्य विद्याओं तथा ज्ञान-विज्ञान में ऐसे संतुलन को स्थापित करने का प्रयत्न शामिल था, जिससे कि विद्यार्थियों को दोनों के लाभ पूर्ण रूप से प्राप्त हो जाए।

आर्यसमाज द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में दी गयी नवीन योजना आज भी समाज के लिए प्रेरणादायक है। आधुनिक सभ्यता जिसकी विशेषताएँ हैं-वैज्ञानिक स्वभाव, मानववादी भावना, जीवन के प्रति प्रवृत्तिमार्गी तथा धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण, जिसके कारण सदियों पुराने रीति-रिवाजों की अवहेलना हो रही है और सर्वत्र अशान्ति व विक्षोभ का वातावरण बना है। इसके लिए यह आवश्यक है कि ऐसे आदर्शों, प्रवृत्तियों और संस्थाओं को विकसित किया जाए जो विश्व चेतना को आत्मा की रचनात्मक अभिव्यक्ति दे सके। इसके लिए

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



आर्यसमाज की शैक्षिक योजना ही समाज के लिए सार्थक सिद्ध हो सकती है ''जिसमें प्राच्य एवं नई विचारधारा का समन्वय है''।

इस प्रकार आर्यसमाज द्वारा उत्तर प्रदेश में समाज एवं शिक्षा के क्षेत्रों में किए गए योगदान के फलस्वरूप अपने गौरवशाली सांस्कृतिक धरोहर के प्रति भारतीय जनमानस में अपूर्व आस्था के साथ ही स्वाभिमान का उदय हुआ। जिससे भारतीय समाज एवं शिक्षा के क्षेत्रों में अभूतपूर्व जागृति प्रस्फुटित हुई।

## सन्दर्भ

१. राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर', संस्कृति के चार अध्याय, पृ. ५७०
२. इन्द्र विद्यावाचस्पति, आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग, पृ. १५८
देखें-सार्वदेशिक, मार्च-अप्रैल, सन् १९३२, पृ. ५३९
३. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पूर्वोद्धृत, द्वितीय भाग, पृ. ८
देखें-राजेन्द्र जिज्ञासु, तपोधन महात्मा नारायण स्वामी, पृ. ६

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# ग्रन्थानुक्रमणिका

## मूल-स्रोत

## (Original Sources)


### स्मारिकाएँ एवं स्मृतिग्रंथ

**अखिल भारत हिन्दू महासभा स्मारिका,** जुलाई-१९९७,

**आर्यसमाज स्मृतिग्रंथ,** स्थापना शताब्दी (१८७५-१९७५), काकड़वाड़ी बम्बई, सम्पादक आचार्य श्रीवैद्यनाथजी शास्त्री, प्रकाशक नटवरलाल कालीदास भावसार, बी.पी. रोड. आर्यसमाज लेन, बम्बई-१९७५,

**कौस्तुभ जयन्ती स्मारिका** (१९२४-१९९९), प्रधान सम्पादिका डॉ. माधुरी रानी 'तर्केत्सुका', आर्यसमाज छावनी, भोजूबीर, वाराणसी, १९१९,

**गुरुकुल स्मारिका,** स्मृति अंक, शहीद ब्रह्मदत्त बलिदान समिति, गुरुकुल महाविद्यालय, रुद्रपुर तिलहर, शाहजहाँपुर (उत्तर-प्रदेश), १९८८,

**स्मारिका, अन्तर्राष्ट्रीय आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह,** दिसम्बर १९७५, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, दयानन्द रामलीला मैदान, नई-दिल्ली ।

**स्मारिका, स्वर्ण जयन्ती समारोह** १९९७-९८, आर्यसमाज गोविन्द नगर, स्त्री आर्यसमाज व आर्यकन्या इण्टर कॉलेज, गोविन्दनगर, कानपुर का ५०वाँ संयुक्त वार्षिकोत्सव के अवसर पर प्रकाशित ।

**स्मारिका, हिन्दी हास्य-मन्दाकिनी के भगीरथ,** श्रीकृष्ण प्रसाद गौड़ 'बेढ़ब बनारसी' जन्म शताब्दी वर्ष १९९४-९५,

### पत्र-पत्रिकाएँ

**अखण्ड ज्योति,** संस्थापक वेदमूर्ति पं. श्रीराम शर्मा आचार्य, अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा; जून-१९९२,

**आज,** दैनिक समाचार पत्र, ज्ञानमण्डल लिमिटेड के लिए ज्ञानमण्डल यंत्रालय, संत कबीर मार्ग, वाराणसी से प्रकाशित, ६ अगस्त १९९५, प्रो. वंशीधर त्रिपाठी का लेख

**आनन्द ज्योति,** प्रधान सम्पादिका श्रीमती हीरामनी अग्रवाल, वार्षिक पत्रिका १९९६-९७, आर्यकन्या इण्टर कालेज, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद ।

**आर्यकुमार,** भारतवर्षीय परिषद् का मुखपत्र, सम्पादक सत्यप्रकाश गोयल, मुरादाबाद; वर्ष ३१, १९५३,

**आर्यपत्र,** वैदिक तत्त्वज्ञान और धर्म का प्रचारक पत्र, लाहौर; फरवरी-१९३३, माघ, विक्रमी सम्वत् -१९८९, भाग-१४, अंक-१०; दिसम्बर-१९३३ आर्यप्रभा, विद्यालय पत्रिका (सन्-१९९४-९५, १९९५-९६) आर्यकन्या इण्टर कॉलेज, गोविन्दनगर, कानपुर।

**आर्यपत्रिका** (इंगलिश वीकली), लाहौर, २० जून-१८८८आर्यमर्यादा (साप्ताहिक),


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


आर्यप्रतिनिधिसभा, पंजाब का मुखपत्र, आर्यमर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त-भवन, चौक, किशनपुरा,जालन्धर से आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित; ४अक्टूबर-1983 **शिवरात्रि विशेषांक,** ८ मार्च-१९९२,

**आर्यमित्र,** आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश का मुखपत्र, आगरा; १३ जनवरी-१९२१, ११ जून १९८९ स्वत्वाधिकारिणी आर्यप्रतिनिधिसभा उत्तर प्रदेश के लिए भगवानदीन आर्यभाष्कर प्रेस, ५ मीराबाई मार्ग, लखनऊ, विश्वम्भरदयाल गुप्ता द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

**आर्यवीर सन्देश** (त्रैमासिक), आर्यवीरदल, उत्तर प्रदेश का मुखपत्र, सार्वदेशिक आर्यवीर दल उत्तर-प्रदेश, वर्ष १, अंक २, अप्रैल-१९९४ ।

**आर्यसन्देश** (साप्ताहिक), दिल्ली आर्यप्रतिनिधिसभा का मुखपत्र, सार्वदेशिक प्रेस, पटौदी हाऊस, दरियागंज, नई-दिल्ली; हैदराबाद-सत्याग्रह, अर्धशताब्दी, स्मृति अंक, वर्ष-१३, अंक ४३, रविवार, १९ अगस्त १९९०; वर्ष १६, अंक ३१, ९ मई-१९९३, विक्रमी सम्वत् २०५०; १८ जुलाई,१९९३; रविवार ७ अप्रैल-१९९६ ।

**आर्यसेवक,** आर्यप्रतिनिधिसभा, मध्यप्रदेश व विदर्भ का मासिक मुखपत्र, नागपुर; आर्यसमाज स्थापना शताब्दी विशेषांक, अप्रैल १९७५, सम्पादक विश्वम्भर प्रसाद शर्मा; सितम्बर-अक्टूबर १९८५, गुरुकुलीय शिक्षा-पद्धति विशेषांक, सम्पादक काशीनाथ शास्त्री।

**उत्तर-प्रदेश - एक परिचय,** हिन्दी मासिक प्रतियोगिता, नवम्बर-१९९४ ।

**कल्याण,** सम्पादक हनुमान प्रसाद पोद्दार, चिम्मनलाल गोस्वामी, गीता-प्रेस, गोरखपुर; **हिन्दू-संस्कृति अंक,** चौबीसवें वर्ष का विशेषांक १९२४; गो सेवक विशेषांक, वर्ष ६९, संख्या-१ ।

**किसलय,** वार्षिक पत्रिका (वर्ष १९९६-९७); स्वतन्त्रता के पचास वर्ष - स्वर्ण जयन्ती विशेषांक (१९९७-९८) डी. ए. व्री. इण्टर कॉलेज की मुखपत्रिका, वाराणसी ।

**गोधन,** गोरक्षा बलिदान विशेषांक, अप्रैल-मई १९९३, भारत गो-सेवक समाज का मुखपत्र, ३, सदरथाना रोड, दिल्ली।

**टंकारा पत्रिका,** सम्पादक, युद्धिष्ठिर मीमांसक, महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट, टंकारा प्रकाशन,अजमेर; वर्ष-६, अंक १, नवम्बर-१९६४,

**दि थियोसाफिस्ट,** अक्टूबर-१८७९,

**पंचाल,** सम्पादक ए. एल. श्रीवास्तव, पंचालशोध संस्थान, ५२/१६ शबकरपट्टी, कानपुर; खण्ड-७, वर्ष-१९९४,

**पाञ्चजन्य,** भारत प्रकाश (दिल्ली) लिमिटेड, २९ रानी झांसी मार्ग, नई-दिल्ली; हिन्दुत्व अंक, १४ नवम्बर-१९९३,

**भारतोदय,** मासिक सचित्र पत्र, ज्वालापुरीय गुरुकुल महाविद्यालय, सहारनपुर (उत्तर-प्रदेश); हीरक जयन्ती विशेषांक, फरवरी-१९८२ माघ ज्येष्ठ विक्रमी संवत् २०३८-३९

**युगान्तर** (मासिक), क्रान्तिकारी सचित्र पत्र, हास्पिटल रोड, लाहौर; वर्ष २, संख्या ६, अगस्त-१९३३, वर्ष २, संख्या ७, सितम्बर १९३३, वर्ष २ संख्या ८, अक्टूबर १९३३

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**शुद्धि पत्रिका,** सम्पादक गौरीशंकर,सरस्वती प्रकाशन,प्रयाग; वर्ष ५,अंक ४,जनवरी-१९३९,
**सार्वदेशिक** (साप्ताहिक), सार्वदेशिकआर्यप्रतिनिधिसभा, नई-दिल्ली का मुखपत्र; सार्वदेशिकआर्यप्रतिनिधिसभा, महर्षि दयानन्द भवन, नई-दिल्ली; अगस्त-१९३२; वर्ष ६, अंक १ एवं २, मार्च-अप्रैल १९३२; भाग-१४, अंक ७, नवम्बर-१९३२; श्रावणी अंक, २० अगस्त-१९६७।
**हिन्दू सभा वार्ता** (साप्ताहिक), हिन्दू-महासभा भवन, मन्दिर-मार्ग, नई-दिल्ली; शुद्धि विशेषांक, सम्पादक आर्य बालाराव सावरकर, दिनांक-१७ सितम्बर-१९९०; अधिवेशन विशेषांक, सम्पादक शिवसरन, १८ जुलाई-१९९४; २२ दिसम्बर-१९९७, प्रधान सम्पादक दिनेशचन्द्र त्यागी ।

## वार्षिक-विवरण

**दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कॉलेज रिपोर्ट,** १९०१-१९०२; १९१४,
**गुरुकुल आयोग की रिपोर्ट,** अखिल भारतीय स्नातक मण्डल गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी, मई-१९५८ ।
**वार्षिक विवरण** १९९६-९७, आर्य-अनाथालय, फिरोज छावनी, आर्यप्रादेशिकप्रतिनिधि सभा, नई-दिल्ली द्वारा संचालित ।

## अन्य विवरण-ग्रन्थ

**आर्यसमाज की उपलब्धियाँ,** १४ अप्रैल १९७५, आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह समिति, सार्वदेशिक-आर्यप्रतिनिधिसभा, महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई-दिल्ली।
**काशीशास्त्रार्थ,** वैदिक यन्त्रालय, अजमेर, विक्रमी सम्वत् २००२, ग्यारहवीं बार पुनर्मुद्रित मदनमोहन सेठ, वैदिक-वैजयन्ती (सभा के पच्चीस वर्षों की रिपोर्ट)
**संयुक्त-प्रान्त की जनगणना रिपोर्ट,** सन्-१९११,
११वें सार्वदेशिक-आर्य महासम्मेलन अलवर (राजस्थान) की झाकियाँ, आयोजन १९ मई से २१ मई, १९७२ ।

## नियमावली

**आर्यसमाज के नियम-उपनियम,** प्रकाशक-सार्वदेशिक-आर्यप्रतिनिधिसभा, १९८५,
**ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम हरिद्वार की नियमावली,** गोस्वामी ब्रजनाथ शर्मा के प्रबन्ध से, दी कॉरोनेशन प्रेस, शीतला गली, आगरा, नवम् बार, १९१७ ।
**गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का नियम तथा पाठ्यक्रम** - १९६४,
**गुरुकुल महाविद्यालय, वृन्दावन की नियमावली व पाठविधि** (सन् १९२१-२२)
**गुरुकुल महाविद्यालय वृन्दावन की नियमावली,** पाठविधि तथा संक्षिप्त विवरण, शिवनारायण आचार्य तथा मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल वृन्दावन, २० मार्च १९७९ ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2




**नियमावली,** महादेवी कन्या पाठशाला कॉलेज, देहरादून (१९७५-७६)

**प्रादेशीय विद्यार्य सभा,** उत्तर प्रदेश (आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश के अन्तर्गत) के नियम एवं उपनियम, प्रकाशक- मंत्री, प्रदेशीय विद्यार्य-सभा, उत्तर-प्रदेश ।

प्रॉस्पेक्टस एण्ड हैण्डबुक, डी. ए. वी. कॉलेज, देहरादून, १९७७-७८,

**अन्य**

आर्यसमाजप्रतिनिधिसभा, उत्तर प्रदेश के समस्त आर्यसमाज़ों की संशोधित सूची

श्रीकाशीविश्वनाथपंचागम्, ऋषीकेश-पंचांग, सम्पादक ऋषीकेशोपाध्याय, ऋषीकेश पंचांग कार्यालय, भदैनी, वाराणसी; सन् १९९४-९५, श्री संवत् २०५१, शक-१९१६,

**ग्रन्थ**

**रघुबीर शास्त्री,** ईसाईयों की प्रचार प्रणाली, आर्यप्रतिनिधिसभा, पंजाब, गुरुदत्त भवन, जालंधर।

**दयानन्द सरस्वती,** आत्मकथा, स्वामी दयानन्द द्वारा स्वहस्तलिखित, आत्मकथा दयानन्द सरस्वती, महर्षि दयानन्द निर्वाण-शताब्दी संस्करण, पुनर्मुद्रित-१९८३ ई०, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मन्दिर-मार्ग, नई-दिल्ली ।

**सत्यार्थ-प्रकाश,** आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४५५ खारी बावली, दिल्ली, ३९वाँ संस्करण, सितम्बर, १९९२ गोकरुणानिधिं, ज्ञान सागर, वैदिक साहित्य प्रचार केन्द्र, महर्षि दयानन्द गो-संवर्द्धन केन्द्र, गाजीपुर, दिल्ली, १९९७ ।

**शिवदयालु (सम्पादक),** इतिहास, आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर-प्रदेश (१८८६-१९६२), प्रथम एवं द्वितीय भाग, आर्यसमाज की प्रग़तियों एवं आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर-प्रदेश का ७५ वर्षीय इतिहास, हीरक-जयन्ती समिति आर्यप्रतिनिधिसभा, उत्तर-प्रदेश,लखनऊ ।

**चाँदकरण शारदा,** शारदा एक्ट अथवा बाल-विवाह निषेधक कानून, वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर, विक्रमी संवत्-१९९५।

**दीवानचन्द्र,** महात्मा हंसराज जी जन्म-शताब्दी उपहार, आर्यप्रतिनिधिसभा, मंदिर-मार्ग, नई-दिल्ली ।

**श्रद्धानन्द,** मातृभाषा का उद्धार, हरियाणा साहित्य संस्थान, गुरुकुल-झज्जर (रोहतक), हिन्दी-साहित्य सम्मेलन के १९१३ के चतुर्थ-सम्मेलन के अध्यक्ष पद से दिया गया हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का भाषण उर्दू-लिपि में छपा था। उनकी पुस्तक और लेखों का संग्रह कुलियाते संन्यासी नामक उर्दू-पुस्तक (१९२६) के अंश से हिन्दी में श्री जगन्नाथ द्वारा रूपान्तरित ।

**अनाम लेखक,** महात्मा हंसराज जीवनी, आर्यप्रादेशिकप्रतिनिधिसभा, डी. ए. वी. प्रबन्धकर्ती समिति, आर्यप्रादेशिकप्रतिनिधि उपसभा, हरियाणा, विक्रमी संवत् २०५१ ।

**ट्रैक्ट्माला,** (सम्पादक गंगाप्रसाद उपाध्याय, ट्रैक्ट् विभाग, आर्यसमाज, चौक, प्रयाग का प्रकाशन)


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**ट्रैक्ट्माला,** ८१ ट्रैक्टों का संग्रह, (यह ट्रैक्ट् माला श्री राजेन्द्र कुमार सिंह निवासी - बी.२२/ १५७ ई-१ विनायका, वाराणसी, के पास उपलब्ध है)
अछूतों का प्रश्न, प्रथम माला, ट्रैक्ट् संख्या ३२, १९४९,
आर्य समाज क्या है ? संशोधित संस्करण १९६४,
जिन्दा लाश, प्रथम माला, १९ जनवरी १९५०,
दलितोद्धार, प्रथम माला, ट्रैक्ट् संख्या २१, दिसम्बर १९४९,
दहेज, द्वितीय माला, ट्रैक्ट् संख्या ९, १९३९,
दुखदायी दुर्व्यसन, ट्रैक्ट् संख्या १०, १९३९,
विधवायें और देश का नाश, द्वितीय माला, ८वीं बार, १९५०,
वेद क्या है? द्वितीय माला, ट्रैक्ट् संख्या १०, १९६४,
श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी का धर्म बलिदान,
हिन्दुओं पर एक और आफत, द्वितीय माला, ट्रैक्ट् संख्या -१५,

## प्राथमिक स्रोत (Primary Sources)

**आर्यसमाज के मनीषी एवं चिन्तक जिनका प्रस्तुत शोधकार्य हेतु साक्षात्कार लिया गया-**

१. श्री अशोक त्रिपाठी (आयु-४८ वर्ष, प्रधान, आर्योपप्रतिनिधिसभा, वाराणसी ।
२. डॉ. इन्द्रदेव पाठक (आयु-६२ वर्ष, प्रबन्ध सम्पादक आर्यमित्र, उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधिसभा, लखनऊ)
३. सुश्री कमला स्नातिका (आयु-६८ वर्ष, हाथरस कन्या गुरुकुल, हाथरस)
४. प्रो. कैलाशनाथ सिंह (आयु-५८ वर्ष, प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश)
५. श्री नन्दलाल आर्य (आयु-४४ वर्ष, प्रधान आर्यसमाज लल्लापुरा, वाराणसी)
६. डॉ. नागेन्द्र कुमार मिश्र (आयु-४२ वर्ष, प्राचार्य, नि:शुल्क महाविद्यालय, अयोध्या)
७. श्रीमती दमयन्ती विद्यालंकृता (आयु-७० वर्ष, देहरादून कन्या गुरुकुल)
८. श्री देवीदास आर्य (आयु-७८ वर्ष, संस्थापक व प्रधान, कानपुर आर्यसमाज, गोविन्द नगर)
९. डॉ. पुष्पावती देवी (आयु-७२ वर्ष, कन्या गुरुकुल की संचालिका, वाराणसी)
१०. श्री प्रमोद आर्य (आयु-४० वर्ष, मंत्री, आर्यवीर दल पूर्वी उ०प्र० एवं जिला सभा के कोषाध्यक्ष, आर्यसमाज मन्दिर, भोजूबीर, वाराणसी)
११. श्री बुद्धदेव आर्य (आयु-७२ वर्ष, लल्लापुरा आर्यसमाज, व्यवस्थापक, वाराणसी)
१२. श्री ब्रह्मदेव शास्त्री (आयु-८१ वर्ष, गुरूकुल वृन्दावन के स्नातक वर्तमान निवास लखनऊ)
१३. श्री रामप्रसाद शास्त्री (आयु-५८ वर्ष, पुरोहित, आर्यसमाज चौक, प्रयाग, इलाहाबाद)
१४. प्रो. वाचस्पति उपाध्याय (आयु-५६ वर्ष, गुरुकुल काँगड़ी समकुलपति रह चुके, कुलपति,लालबहादुरशास्त्री राष्ट्रीयसंस्कृत विद्यापीठ, नई-दिल्ली) ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


१५. डॉ. विजयपाल शास्त्री आयु ७६ वर्ष, मंत्री, आर्य समाज, मेस्टन रोड, कानपुर।
१६. श्री शिवमित्र शास्त्री (आयु-७८, नि:शुल्क गुरुकुल, वर्तमान निवास भदैनी, वाराणसी, अयोध्या के स्नातक सन्-१९४५)
१७. डॉ. सच्चिदानन्द शास्त्री (आयु-७० वर्ष, मंत्री, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, नई-दिल्ली)।
१८. श्री सूर्यबली पाण्डेय (आयु-८५ वर्ष, पूर्व प्रधान व मंत्री, आर्यसमाज, जौनपुर, किला रोड)।
१९. श्री सुरेशचन्द्र शास्त्री (आयु-४८ वर्ष, प्रधान, गंगाप्रसाद उपाध्याय, टैक्ट-विभाग, आर्यसमाज, चौक, प्रयाग)
२०. श्री हरवंशलाल कपूर (आयु-७३ वर्ष, डी.ए.वी. मैनेजिंग सोसायटी, नई दिल्ली)

## ORIGINAL SOURCES

1. The Theosophist Monthly Patrika (Adyar, Madras), October 1879, December 1879, Novembar 1880, Edited and Published by Madam.H.P. Blavatsky.
2. Glimpses of the 11th sarvadeshik Arya Mahasammelan Alwar (Rajasthan) Held from 19th to 21st may 1972. Published by- Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha New Delhi-1.
3. Census of India- 1911, Volume xv, United Provinces of Agra and Oudh, Part I. Report by E.A.H. Blunt I.C.S. Superintendent Census Operations, Allahabad. 1912.
4. Meerut- A Gazetteer- H.R. Neville, Government Press, United Provinces Allahabad 1904.
5. By Judicial Criminal Department Notification No.6.349, Year-1909, Available in Ragional Archives, Varanasi O/22-23 shashtri Nagar, Sigra, Varanasi.
6. Exemptions under Arms Act File, Department XVIII. File No. 17, 26 Sept. 1894, Nainital Divisionwise District of North-West Province and Oudh. Available in Regional Archives, Varanasi.
7. Home Politcal Department procee, (Deposit), file No. 10,95 Year-1929, N.A.I. Available in Varanasi Regional Archives. O/22-23 Shastri Nagar, Sigra, Varanasi.
8. H.R. Neville- Gazetteer of Banaras. Allahabad, 1909.
9. Available in Regional Archives, Varanasi-File No-19. Department No. II.Box. No. 4, List No. 12, Year-28, July 1937.
10. Available in Regional Archives, Varanasi- File No. 123, Department No. II. Box. 5. Year-1924.
11. Deyanand Commemoration, Year-1983, Edited by - Swami Styaprakash Saraswati, Mahereshi Dayanand Death centenary Celebrations, Published by Paropkarini Sabha, Dayanand Asharam, Kesharganj. Ajmer.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



## द्वितीयक स्रोत (Secondary Sources)


**अजीतकुमार शुक्ल,** उत्तर-प्रदेश में पर्यटन उद्योग, तिवारी पब्लिकेशन, शाहदरा, दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९९१,

**अशोक श्रीवास्तव,** भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास (१२००-१९०००), पूर्वांचल प्रकाशन, बक्शीपुर, गोरखपुर, प्रथम संस्करण, १९९७,

**आदित्यपाल सिंह एवं वेदव्रत आलोक,** महर्षि दयानन्द सरस्वती अपना जन्मचरित, अदिति प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, २ सितम्बर १९८७,

**आर. एन. सेठी एवं विनोदचन्द्र पाण्डेय,** आधुनिक भारत, प्रकाशन केन्द्र, रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ, १९८५,

**इन्द्र विद्यावाचस्पति,** आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग तथा द्वितीय भाग, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, बलिदान भवन, श्रद्धानन्द बाजार, नई-दिल्ली, १९५७, विक्रमी संवत्-२०१३,

**ए. आर. देसाई,** सोशल बैकग्राउन्ड ऑफ इण्डियन नेशनलिज्म, अनुवादक प्रयागदत्त त्रिपाठी, दी मैकमिलन कम्पनी ऑफ इण्डिया लिमिटेड, नई-दिल्ली-बम्बई-कलकत्ता-मद्रास के लिए एस. जी. बसानी द्वारा प्रकाशित, प्रथम हिन्दी संस्करण, १९७६,

**एच. आर. नेविल, गजेटियर ऑफ बनारस,** एफ. डब्ल्यू. थामस, हिस्ट्री एण्ड प्रॉस्पेक्टस ऑफ ब्रिटिश एजूकेशन इन इण्डिया,

**एम. एल. दशोरा,** संगठन सिद्धान्त एवं व्यवहार, हिमांशु पब्लिकेशन, प्रकाश हाउस, अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९९४,

**एम. एस. जैन,** आधुनिक भारत का इतिहास, वाइली ईस्टर्न, नई-दिल्ली, १९८५,

**एनी बेसेन्ट,** हिन्दू-धर्म और आचार, अनुवादक-अम्बिकादत्त उपाध्याय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, १९५७,

**के. सी. यादव,** आटोबायोग्राफी ऑफ स्वामी दयानन्द सरस्वती

**गोपालकृष्ण अग्रवाल,** भारतीय सामाजिक संस्थाएँ, चौदहवाँ पूर्णतया संशोधित एवं परिवर्तित संस्करण, १९८५, आगरा बुक स्टोर, पचकुइयाँ. आगरा,

**गणेशप्रसाद शर्मा,** फर्रुखाबाद का इतिहास

**घासीराम,** महर्षि दयानन्द का जीवन चरित, आर्षसाहित्य मण्डल लिमिटेड, अजमेर, विक्रमी संवत्-१९९०,

**चन्द्रप्रकाश** (संपादक), मेरठ आर्यसमाज के सौ वर्ष,

**ब्र० जगदीश विद्यार्थी**

**अमरसेनानी स्वामी श्रद्धानन्द,** आर्यकुमारसभा, किंग्सवे (रजि०) दिल्ली, १९६९,

**जयदेव वेदालंकार,** महर्षि दयानन्द की साधना और सिद्धान्त,

**जे. पी. मिश्र,** आधुनिक भारत का इतिहास (सन् १७०७-१९४७ तक), उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, १९७४,


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



**जे. टी. एफ. जोर्डन्स,** दयानन्द सरस्वती हिज लाईफ एण्ड आइडियाज- दिल्ली आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे, कलकत्ता, मद्रास, आस्ट्रेलियन यूनिवर्सिटी कैनवरा-1978 नेशनल

**दयानन्द सरस्वती,** पंचमहायज्ञविधि, भाषा-भाष्यकार वेदानन्द सरस्वती।

**दीनानाथ सिद्धान्तालंकार,** आर्यसमाज के आदर्श पुरुष, प्रथम भाग, प्रकाशक आर्यप्रादेशिकप्रतिनिधिसभा, मंदिर मार्ग, नई-दिल्ला।

**देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय,** दयानन्द चरित (बंगला), हिन्दी अनुवादक घासीराम, कलकत्ता, १९३२,

**धनपति पाण्डेय,** आधुनिक भारत का इतिहास, द्वितीय खण्ड (१८५७ से १९४७ तक), मीनाक्षी प्रकाशन, बेंगमबूज, मेरठ,

दि आर्यसमाज एण्ड इण्डियन नेशनलिज्म,

**नर्मदेश्वर प्रसाद,** जाति व्यवस्था,

**नारायण स्वामी,** महर्षि दयानन्द की विशेषताएँ, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४५५ खारी बावली, दिल्ली, मार्च-१९९८,

**पन्नालाल गुप्त,** आर्यसमाज, चौक, प्रयाग का संक्षिप्त इतिहास,

**पी. ई. रॉबर्ट्स,** ब्रिटिश कालीन भारत का इतिहास, अनुवादक रामकृष्ण शर्मा, 'कमल', एस. चन्द एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, रामनगर, नई दिल्ली, १९७४

**पुखराज जैन,** भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन तथा भारतीय संविधान, साहित्य भवन हास्पिटल रोड, आगरा, सप्तम संस्करण, १९८४।

**बलदेव उपाध्याय,** भारतीय-धर्म और दर्शन, चौखम्भा ओरियन्टलिया, गोकुल भवन, के. ३७/१०९, गोपाल मंदिर लेन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, १९७७ (भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति के स्वरूप एवं तथ्यों का प्रतिपादक, प्रामाणिक ग्रन्थ)

**बी. एन. लूनिया,** भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता, आगरा, संशोधित संस्करण-१९७८ (लेखक द्वारा अंग्रेजी भाषा में लिखी इवोल्यूशन ऑफ इण्डियन कल्चर नामक पुस्तक के आधार पर उक्त पुस्तक है)

**बी. एल. ग्रोवर एवं यशपाल,** आधुनिक भारत का इतिहास एक नवीन मूल्यांकन (१७०७ ई. से वर्तमान समय तक), एस. चन्द एण्ड कम्पनी, रामनगर, नई दिल्ली, छठा संस्करण, १९८८,

**भवानीलाल भारतीय,** नवजागरण के पुरोधा दयानन्द सरस्वती, वैदिक पुस्तकालय, परोपकारिणी तथा दयानन्दाश्रम कैसरगंज, अजमेर, प्रथम संस्करण, दयानन्द सरस्वती की प्रथम निर्वाण शताब्दी, १९८३,

आर्यसमाज के बीस बलिदानी, विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८, नई सड़क, दिल्ली, १९९७

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


काशी में महर्षि दयानन्द, मंत्री आर्यसमाज लल्लापुरा, वाराणसी, प्रथम संस्करण, दिसम्बर १९९८ ई० ।

**महेशप्रसाद मौलवी,** महर्षि दयानन्द कहाँ और कब, आलिम फाजिल बुक डिपो, ११५, मुहतशिमगंज, इलाहाबाद, १९४३ ई० ।

**मोहनदास कर्मचन्द गाँधी,** मेरे सपनों का भारत, अप्रैल, जीवणजी डाह्याभायी देसाई, नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद, अप्रैल-१९६० ई०,

**मैक्समूलर,** इण्डिया ह्वॉट कैन इट टीच अस, हिन्दी रूपान्तरण हम भारत से क्या सीखें?, अनुवादक कमलाकर तिवारी एवं रमेश तिवारी, इतिहास प्रकाशन संस्थान, इलाहाबाद-१९६४ ई०,

**यदुवंश सहाय,** महर्षि दयानन्द, लोकभारती प्रकाशन, १५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, अप्रैल-१९७१ ई०,

**रजनीपाम दत्त,** आज का भारत, अनुवादक आनन्दस्वरूप वर्मा, एस. जी. वसानी द्वारा दि मैकमिलन कम्पनी इण्डिया लिमिटेड के लिए प्रकाशित, भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद् द्वारा प्रवर्तित इंडिया टुडे का अनुवाद, प्रथम हिन्दी संस्करण, १९७७,

**रवीन्द्रनाथ मुखर्जी,** भारत की सामाजिक संस्थाएँ, सरस्वती सदन, ७ यू. ए. जवाहरनगर, दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९७१ ई०,

**रमेशचन्द्र मजुमदार,** भारत का वृहत् इतिहास, अनुवादक-योगेन्द्र मिश्र (मूल पुस्तक ऐन एडवान्स हिस्ट्री ऑफ इण्डिया मैकमिलन एण्ड कम्पनी लिमिटेड, कलकत्ता) बम्बई-मद्रास-लन्दन, १९७१ ई०,

**राधाकृष्ण शर्मा,** नेशनलिज्म, सोशल रिफॉर्म एण्ड इंडियन वीमेन, प्रथम प्रकाशन वर्ष-१९८१, जानकी प्रकाशन, पटना, नई दिल्ली।

**रामधारी सिंह 'दिनकर'**

संस्कृति के चार अध्याय, उदयाचल, राष्ट्रकवि दिनकर पथ, राजेन्द्र नगर, पटना, प्रथम संस्करण, मार्च १९५६ ई०,

**रामविलास शर्मा,** इतिहास और समकालीन परिदृश्य -१, स्वाधीनता संग्राम बदलते परिप्रेक्ष्य, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९९२ (सन्-१८५७ के स्वाधीनता संग्राम से लेकर हाल के राष्ट्रीय एकता के लिए संघर्ष)

परम्परा का मूल्यांकन, रामकमल प्रकाशन लिमिटेड, ८ नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९८१ ई०,

**लाला लाजपत राय,** दि आर्यसमाज, १९१५ ई०,

आर्यसमाज (ऐतिहासिक परिचय और योगदान), अनुवादक भवानीलाल भारतीय, आर्यसमाज, अजमेर, १९६७, सन् १९१५ में लिखित पुस्तक दि आर्यसमाज का हिन्दी रूपान्तरण

**लेखराम,** महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित, अनुवादक श्री कविराज रघुनन्दन सिंह 'निर्मल', सम्पादक भवानीलाल भारतीय, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४५५ खारी बावली, नई-दिल्ली (उर्दू से हिन्दी में रूपान्तरण)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**वासुदेव वर्मा,** अठारह सौ सत्तावन और स्वामी दयानन्द, नई दिल्ली, १९७०ई० **विपिन चन्द्र,** भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९७१,

**विश्वप्रकाश,** आर्यसमाज के निर्माता, विजय कुमार वैदिक प्रकाशन मंदिर, १३ लखपतराय लेन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, १९६४,

**वीरकेश्वर प्रसाद सिंह,** भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन तथा संविधानिक विकास, ज्ञानदा प्रकाशन, नई-दिल्ली, १९९४,

**शम्भुशरण दीक्षित,** राष्ट्रीयता तथा भारतीय शिक्षा, एशियन पब्लिशर्स, ६९५ मॉडल टाउन, जालन्धर, प्रथम संस्करण, १९६८ ई०,

**शेरिंग,** दि हिस्ट्री ऑफ प्रोटेस्टैण्ट मिशन्स इन इण्डिया,

**श्री प्रकाश,** दयानन्द के सपनों का आर्यसमाज, डॉ. रत्नाकुमारी स्वाध्याय संस्थान, विज्ञान परिषद् भवन, महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, १९८४ ई०,

**सत्यकेतु विद्यालंकार,** आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम भाग (प्रारम्भ से सन् १८८३ ई. तक), आर्य स्वाध्याय केन्द्र ए १/३२, सफदरजंग इन्क्लेव, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-१९८३; द्वितीय भाग ; आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार सन्-१८८३ से सन्-१९४७ तक, प्रथम संस्करण-१९८४; तृतीय भाग, शिक्षा के क्षेत्र में आर्यसमाज का कार्यकलाप प्रथम संस्करण-१९८३; चौथा भाग, आर्यसमाज और राजनीति-सन्-१८७५ से १९२६ ई० तक प्रथम संस्करण-१९८५; पाँचवा भाग; स्वराज्य संघर्ष में आर्यसमाज का योगदान (१९२६-४७) तथा स्वतन्त्र भारत में आर्यसमाज की गतिविधियाँ, प्रथम संस्करण, सन् १९८७; छठाँ भाग; सातवाँ भाग, प्रथम संस्करण-१९८८ ई०,

**सी. एफ. एण्ड्रूज,** दि इण्डियन रेनेसाँ,

**सीताराम शर्मा,** उन्नीसवीं सदी में भारतीय धार्मिक तथा सामाजिक जागरण, मध्य-प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, प्रथम संस्करण, १९७७ ई०,

**श्रीमती सुधाकुमार,** भारतीय संस्कृति की झलक, सरस्वती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-१९९६ ई०,

**स्वामी श्रद्धानन्द,** कल्याण मार्ग का पथिक, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली, नया संस्करण-१९९१ ई०,

**हरगुलाल गुप्त,** आर्यजगत के भागीरथ श्री दरबारी लाल (विश्लेषणात्मक जीवनी), मोहित पब्लिशर्स एण्ड एजुकेशनल एड्स, सी-४५ प्रीत विहार, नई दिल्ली, १५ जनवरी १९९५,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


# SECONDARY SOURCES

1. **Dr. Dhanpati Pandey** - The Arya Samkaj and Indian Nationalism (1875-1920), Published by S.chand & Co. Pvt. Ltd., H.O. Ram Nagar, New Delhi-55, First Edition 1972
2. **Har Bilash Sarda** - Life of Dayananda Saraswati, Vedic Yantralaya, Ajmer, Year-1946.
3. **Gulshan Swarup Saxena**- Arya Samaj Movement in India (1875-1947), First Edition 1990, Published by Common Wealth Publishers 4378/4B Murari Lal Street Road, New Delhi-110002.
4. **Bawa Arjun Singh** - Swami Dayananda Saraswati : Founder of Arya Samaj, Publication - Lahore 1901.
5. **Vishwa Prakash** - B.A., LL.B. - Life and Teaching of Swami Dayananda, Allahabad-1935, Published by Kala Press, Allahabad-3.
6. **K.C. Yadav** (Ed.) - Autobiography of Swami Dayanand Saraswati, Monohar Publication, New Delhi, Edition- 1976.
7. **Ganga Prasad Upadhyaya** - Social Reconstruction by Buddha & Dayananda, First Published - 1956, Ganga-Gyan-Mandir. Allahabad, India.
8. **J.T.F. Jordens** - Dayanand Saraswati his Life and Ideas, Delhi Oxford University Press, Bombay, Calcutta, Madras, Australian National University Canberra- 1978.
9. **Lala Lajpat Rai** - The Arya Samaj - An account of its origin, Doctrines and Activities, Edited by Dr. S.K. Bhatia, Edition - 1915, Reliance Publishing House, New Delhi.
10. **R.C. Majumdar**- (General Editor) - The History and Culture of the Indian People, British Paramountasy and Indian Renaissance, Part-I, Published by - Bombay- Bharatiya Vidya Bhavan, Chowpatty, Bombay-7, First Edition-1963, Second Edition - 1970.
11. **R.C. Majumdar**- History of the Freedom Movement in India, Part-I, Published-1971, Published by - Farma K.L. Mukhopadhyaya, Calcutta.
12. **Radha Krishna Sharma** - Nationalism, Social Reform and Indian Women, First Published Year-1981, Janki Prakashan, Patna, New Delhi.
13. **A.R. Desai** - Social BackGround of Indian Nationalism, Popular Prakashan, Bombay, Year-1948.
14. **B.R. Purkait** - Indian Renaissance and Education from Rammohan to Vivekanand, Firmaklm Private Limited, Calcutta, First Published Calcutta-1992.
15. **B.D. Mahajan**- Modern Indian History, Edition-1993, Published by S. Chand and Company Ltd., Ram Nagar, New Delhi-110055.

***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


# परिशिष्ट

## आर्यसमाज के प्रति धारणा

१. आर्यसमाज १९वीं शदी का महानतम धार्मिक आन्दोलन है।

**ब्लण्ट, १९११ की जनगणना रिपोर्ट**

२. आर्यसमाज वर्तमान हिन्दू विचारधारा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और मनोरेजक अध्याय है।

**सर हेनरी काटन 'न्यू इण्डिया' पुस्तक से**

३. आर्यसमाज शिक्षित हिन्दुओं के सामने सुनिश्चित सिद्धान्त प्रस्तुत करता है। जिसका मूल स्रोत वेद और आर्य परम्पराएँ हैं। आर्यसमाज सामाजिक और शैक्षणिक उन्नति की ऐसी योजनाएँ प्रस्तुत करता है, जिसके बिना वास्तविक उन्नति सम्भव नहीं है।

**सर हर्बर्ट रिस्ले**

४. आर्यसमाज के साथ मेरी पूर्ण सहानुभूति है।

**जर्मन दार्शनिक मैक्समूलर**

५. संगठित कार्य, दृढ़ता,उत्साह और समन्वयात्मकता की दृष्टि से आर्यसमाज की समता कोई समाज नहीं कर सकता। **सुभाष चन्द्र बोस**

६. आर्यसमाज धार्मिक शक्ति के रूप में समाज सुधार के लिए कार्य कर रहा है। भारत के राष्ट्रीय जीवन में यह बात अत्यन्त महत्त्व की है जिसे भविष्य में भुलाया नहीं जा सकता है। **रामानन्द चटर्जी**

७. आर्यसमाज एक वास्तविकता है जिससे जन साधारण का आश्चर्यजनक उत्थान हुआ है। **यदुनाथ सरदार**

८. आर्यसमाज मेरी माता है। **लाजपत राय**

९. आर्यसमाज ने हिन्दू समाज को भले आदमी के रहने योग्य बनाया।

**राजगोपालाचारी**

१०. जहाँ-जहाँ आर्यसमाज है वहाँ-वहाँ जीवन ज्योति है। **महात्मा गाँधी**

११. आर्यसमाज ने लड़कों और लड़कियों की शिक्षा, स्त्रियों की दशा के सुधार और दलितों को ऊँचा उठाने की दिशा में बड़ा अच्छा कार्य किया है।[१]

**पं. जवाहर लाल नेहरू**

१२. राष्ट्रीय पुनर्जागरण के महान कार्य में आर्यसमाज का योगदान आधुनिक इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित रहेगा।[२] **अटल बिहारी वाजपेयी**

१३. हिन्दू धर्म का भविष्य आर्यसमाज के भविष्य पर निर्भर है।[३]

**पंजाब केसरी लाला लाजपत राय**

१४. आर्यसमाज ने भारत के पुनरूद्धार के लिए ऐतिहासिक भूमिका निभाई है। समाज का अन्धविश्वास दूर करने और विशेषकर शिक्षा के प्रचार में बहुमूल्य योगदान रहा है।[४]

**इन्दिरा गाँधी**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


१५. आर्यसमाज ने शिक्षा तथा समाज सुधार के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया है।[५]

**ज्ञानी जैलसिंह**

१६. मैं एक ऐसी अग्नि को देखता हूँ जो सर्वव्यापक है। यह अप्रमेय प्रेम की अग्नि है जो सब विद्वेष को भस्मसात् करने के लिए प्रज्ज्वलित हो रही है और सर्ववस्तुजात को पवित्र बनाने के लिए पिघला रही है। अमेरिका के प्रशस्त क्षेत्रों, अफ्रीका के बड़े स्थलों, एशिया के शाश्वतिक पर्वतों, यूरोप के विशाल राज्यों और राष्ट्रों में सर्वनाशन, सर्वपावन इस पावक की प्रज्ज्वलित ज्वालाएँ मुझे दिखाई दे रही है। प्रथम इस अग्नि की ध्वनि निम्नतम स्थानों में सुनाई नहीं देती है। आज केवल उसकी चिनगारियाँ आकाश की ओर बढ़ रही है। वाग्मियों, कवियों और पवित्र पुस्तक प्रणेताओं के मनोभानों के रूप में उसकी लपकती हुई ज्वालाएँ यत्र-तत्र दृष्टिगोचर हो रहीं हैं। सनातन आर्यधर्म को उसकी आद्यपवित्र अवस्था प्राप्त कराने के लिए आर्यसमाज नामक अग्निकुण्ड में इस अग्नि का आधान हुआ था और यह भारत में ईश्वर के प्रकाश प्राप्त पुत्र दयानन्द सरस्वती के हृदय में प्रादुर्भाव और प्रज्ज्वलित हुई थी। ईश्वरीय ज्ञान की यह अग्नि दयानन्द से पौरस्त्य विचारों की भूमि भारत की बहुत ही उच्च और उज्ज्वल आत्माओं को प्राप्त हुई....। यह सर्वनाशक अग्नि सब ओर ऐसी प्रचण्डता से प्रज्ज्वलित थी जिसका ध्यान उसके प्रथम प्रकाशन दयानन्द को भी न आया था।.... यह स्वर्णिम अग्नि बढ़ती और फैलती गई।.....।[६]

**डॉ. एण्ड्र्यू जैक्सन डेविड**
**अमेरिका के परोक्षदर्शी विद्वान**

---

१. आर्यसमाज परिचय-सम्पादक-महेन्द्र प्रताप शास्त्री-ए.२३,२४
देखें- मैं कौन हूँ-आर्यसमाज दशाश्वमेध, वाराणसी द्वारा प्रचारित छोटी पुस्तक-३१दिसम्बर १९८५ के अन्तिम पृष्ठ पर अंकित है।

२. आर्यसमाज-सीसामऊ, कानपुर-पृ.२, स्वर्णजयन्ती स्मारिका विशेषांक, नवम्बर १९८५.
देखें- गुलशन स्वरूप सक्सेना-आर्यसमाज मूभमेण्ट इन इण्डिया-पृष्ठ-३, १८७५-१९४७ तक।

३. दी आर्यसमाज  लाला लाजपत राय पृष्ठ-३ (ऐतिहासिक परिचय और योगदान अनुवाद-डॉ.भवानी लाल भारतीय) लाला लाजपतराय द्वारा आंग्ल भाषा में लिखित यह पुस्तक १९१५ का हिन्दी भाषा में रूपान्तरण डा. भवानीलाल भारतीय ने किया है जो आर्यसमाज अजमेर की शताब्दी पर प्रकाशित सन्-१९६७ में हुई।

४. आर्यसमाज-सीसामऊ, कानपुर-पृ. २

५. वही

६. आर्यसमाज परिचय-पृष्ठ- २१-२३
देखे- आर्यसमाज की उपलब्धियाँ -५ अप्रैल १९७५, पृ-३

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

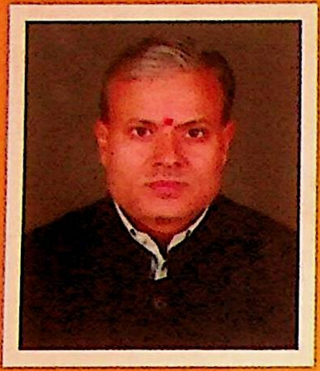


## डॉ० लक्ष्मीकान्त पाठक

वरिष्ठ व्याख्याता

इतिहास-विभाग

रानीपद्मावतीतारायोगतन्त्रआदर्शसंस्कृतमहाविद्यालय

इन्द्रपुर-शिवपुर, वाराणसी, (उ०प्र०)

(राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई-दिल्ली)


| | | |
|---|---|---|
| जन्म-तिथि एवं स्थान | : | ३० जून १९६५, वाराणसी। उ०प्र० |
| माता | : | श्रीमती विद्यावती देवी |
| पिता | : | स्व० महावीर प्रसाद पाठक |
| शिक्षा | : | एम०ए०-नव शिक्षाशास्त्र,<br>काशी विद्यापीठ, वाराणसी<br>बी०एड०-पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर<br>एम०ए०, एम०फ़िल, पीएच०डी०-इतिहास,<br>काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी |
| वृत्ति | : | अध्यापन : वर्ष-१९९२ से कार्यरत |
| विशेष | : | राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में प्रपत्र वाचन |

विविध पत्र-पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, स्मारिकाओं में अनेक लेख प्रकाशित। पूर्वांचल के सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक संस्थाओं के संगठन एवं प्रबन्धन में महत्त्वपूर्ण भूमिका। अनेक संस्थाओं का निरीक्षण एवं संचालन। दूरदर्शन 'शिक्षा का अधिकार' विषयक परिचर्चा में विशेषज्ञ के रूप में आमंत्रित।

**संस्कृति : शोध एवं प्रकाशन**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection